भोजपुरी लोकगाथा

सत्यव्रत सिन्हा
एम० ए०, डी० फिल० (प्रयाग)

१९५७

हिंदुस्तानी एकेडेमी
उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद

(प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा डी० फिल० के लिए स्वीकृत प्रबन्ध)

प्रथम संस्करण १९५७ : २०००

वैनगार्ड प्रेस, इलाहाबाद में मुद्रित

—लोकगाथाओं के

अज्ञात रचयिताओं को—

सत्यव्रत

प्रकाशकीय

हिंदी साहित्य का भण्डार जनपदीय भाषाओं की उपेक्षा के कारण कुछ अपूर्ण सा था। वस्तुतः जनपदीय भाषाओ में ही किसी देश की सम्यता और संस्कृति स्वाभाविक रूप में विद्यमान रहती है। हिंदी के इस क्षेत्र की ओर ध्यान दिलाने का श्रेय पं० रामनरेश त्रिपाठी तथा श्री राहुल साकृत्यायन को है। इसकी उपयोगिता को देख कर विश्वविद्यालयो में भी धीरे धीरे लोक साहित्य से सबधित विषयो पर शोध कार्य होने लगा, और पिछले आठ, दस वर्षों के अन्दर विश्वविद्यालयो की डी० फिल० उपाधि के लिए इस विषय पर कई थीसिस स्वीकृत हुए। डा० सत्यव्रत सिन्हा द्वारा प्रस्तुत यह ग्रथ भी प्रयाग विश्वविद्यालय द्वारा डी० फिल० की उपाधि के लिए स्वीकृत प्रबन्ध है।

लोक साहित्य के एक विशिष्ट अग के वैज्ञानिक अध्ययन के क्षेत्र मे सबधित यह प्रथम प्रयास है। डा० सिन्हा ने लोकगाथाओ की वैज्ञानिक समीक्षा के साथ भोजपुरी प्रदेश की लोकप्रिय लोकगाथाओं का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है, साथ ही विभिन्न जनपदो में प्रचलित लोकगाथाओ के साथ उनकी तुलनात्मक समीक्षा भी प्रस्तुत की है। मेरा विश्वास है कि लोक साहित्य तथा विशेष रूप से लोकगाथाओ के भावी अध्ययन में यह ग्रथ विशेष उपादेय सिद्ध होगा।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
जनवरी, १९५९

धीरेन्द्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष

शुद्धि-पत्र

					अशुद्ध		शुद्ध
पृ०	३	फुटनोट	२	—	लसीपौंड	—	लूसी पौंड
,,	५	,,	१	—	भमिका	—	भूमिका
,,	९	पक्ति	९	—	सिद्धात्न	—	सिद्धान्त
,,	१३	,,	२४	—	उत्यत्ति	—	उत्पत्ति
,,	१४	,,	१२	—	उद्धहरण	—	उद्धरण
,,	१५	,,	२	—	पडता	—	पडती
,,	१७	फुटनोट	१	—	ब्राह्म	—	ब्राह्मण
,,	१९	,,	१	—	उद्भव और	—	स्वरूप
,,	२१	पक्ति	१६	—	दिया	—	दिया[1]
,,	२१	,,	२६	—	थे	—	थ[2]
,,	२३	,,	१	—	वर्णय	—	वर्णन
,,	२३	,,	२	—	साहित्न	—	साहित्य
,,	३१	,,	१६	—	प्राण कालीन	—	पूराकालीन
,,	३५	,,	१२	—	लोकगीतो	—	कविता
,,	४९	,,	१	—	शोभानायका	—	शोभानयका
,,	४९	,,	१	—	वनजार	—	बनजारा
,,	५१	,,	३	—	प्रश्नोत्तर	—	प्रश्नो
,,	५१	,,	३०	—	निवास	—	विश्वास
,,	६६	,,	१६	—	करिंघा	—	करिंघा
,,	६९	,,	७	—	के	—	का
,,	७१	,,	१४	—	अतिरिक	—	अतिरिक्त
,,	८३	,,	११	—	मुसमान	—	मुसलमान
,,	१५७	,,	२३	—	एव	—	एव
,,	१५८	,,	१२	—	वनते हैं	—	वनते हैं[1]
,,	१६०	,,	९	—	खौर	—	और
,,	१६५	,,	१७	—	दिल्ली	—	सुरुजपुर
,,	१६९	,,	१८	—	रखता	—	रखती
,,	१७७	,,	१	—	अवघत	—	अवधूत
,,	१७७	,,	३	—	के	—	का
,,	१८५	,,	२३	—	विपय	—	विपयक
,,	१८७	,,	१६	—	यी	—	भी
,,	२२७	,,	१	—	सप	—	सर्प
,,	२३१	,,	९	—	वतलाले	—	वतलाते
	२३९		१०	—	डवने	—	डूबने

विषय-सूची

वक्तव्य

किसी देश की सास्कृतिक चेतना का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वहाँ के लोक-साहित्य का अध्ययन करना आवश्यक ही नही, अपितु अनिवार्य है। युग-युग का जन जीवन इसमें परिलक्षित होता है। यह मेरा परम सौभाग्य है कि प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष पूज्य डा० धीरेन्द्र वर्मा एम ए डी लिट् ने यह विषय (भोजपुरी लोकगाथा का अध्ययन) मुझे सौंपा। उन्ही से स्फूर्ति पाकर मैंने यह कार्य प्रारंभ किया। लोकगाथा सबधी ग्रन्थो के अभाव में तथा भोजपुरी लोकगाथाओ के सग्रह में मुझे जो कठिनाइयाँ हुई वह तो अपनी अनुभूति का विषय है। गुरुजनो की सतत् प्रेरणा से आज यह कार्य समाप्त हुआ है।

प्रस्तुत प्रबन्ध में दस अध्याय हैं। प्रारम्भ में भूमिका है तथा अन्त में परिशिष्ट।

प्रबन्ध की भूमिका के तीन भाग हैं। भाग 'क' में लोक साहित्य, उसकी महत्ता तथा उसके विभिन्न अगो पर सक्षिप्त रूप से विचार किया गया है। भाग 'ख' और 'ग' में भोजपुरी भाषा और साहित्य तथा भोजपुरी लोक-साहित्य का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

प्रथम अध्याय में लोकगाथा की सैद्धान्तिक विवेचना प्रस्तुत की गई है। साथ ही लोकगाथा की भारतीय परंपरा और लोकगाथा के परपरागत गायको का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है।

द्वितीय अध्याय के तीन भाग है। पहले में, भोजपुरी लोकगाथाओ का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। दूसरे भाग में, भोजपुरी लोकगथाओ के एकत्रीकरण का विवरण दिया गया है तथा तीसरे भाग में, भोजपुरी लोकगाथाओ का अध्ययन की दृष्टि से वैज्ञानिक वर्गीकरण किया गया है। इसके साथ ही भोजपुरी लोकगाथाओ में निहित उद्देश्य की चर्चा भी की गई है।

तृतीय अध्याय में, भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस वर्ग में भोजपुरी की चार लोकगाथाएँ आती है। अतएव प्रत्यक लोकगाथा पर अलग से विचार किया गया है। लोकगाथाओं के अध्ययन का क्रम इस प्रकार है :—१—लोकगाथा का परिचय तथा उनमें निहित प्रमुख तत्त्व, २—लोकगाथा गाने का ढग; ३—लोकगाथा की सक्षिप्त

कथा, ४—लोकगाथा के प्राप्त विभिन्न प्रादेशिक रूप, ५—तुलनात्मक समीक्षा, ६—लोकगाथा की ऐतिहासिकता (इसमें भौगोलिकता का भी समावेश है), ७—लोकगाथा के नायक तथा नायिका का चरित्र चित्रण।

उपर्युक्त क्रम से ही भोजपुरी प्रेमकथात्मक, रोमाचकथात्मक तथा योगकथात्मक लोकगाथाओ का अध्ययन क्रमश: चतुर्थ, पचम तथा षष्ठम अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय में भोजपुरी लोकगाथाओ में संस्कृति एव सभ्यता का चित्र अकन किया गया है। अधिकांश भोजपुरी लोकगाथाएँ मध्ययुगीन सस्कृति से सबध रखती है, अतएव लोकगाथाओ में वर्णित भोजपुरी प्रदेश की सामाजिक व्यवस्था सस्कार, चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था तथा जीवन के विभिन्न अगो पर प्रकाश डाला गया है।

अष्टम अध्याय में 'भोजपुरी लोकगाथा में भाषा और साहित्य' पर विचार किया गया है। इसमें लोकगाथाओ में वर्णित भाषा और साहित्य के विभिन्न अगो पर विचार किया गया है।

नवम अध्याय में 'भोजपुरी लोकगाथा में धर्म का स्वरूप' पर विवेचना की गई है। वस्तुत लोकगाथाओ में धर्म की भावना प्रधान रहती है। भोजपुरी लोकगाथाओ में विभिन्न धर्मों का अद्भुत समन्वय है—इन्हें उदाहरण सम्पन्न कर स्पष्ट किया गया है। इसके साथ ही लोकगाथा में वर्णित अनेक देवी-देवताओ, अप्सरा, गन्धर्व, मत्र, जादू, टोना तथा विश्वासो पर भी विचार किया गया है।

दशम अध्याय में पाच प्रकरण है। पहले प्रकरण में, 'भोजपुरी लोकगाथा में अवतारवाद' की समीक्षा की गई है। भोजपुरी लोकगाथाओ के अधिकांश नायक एव नायिकाए अवतार के रूप में वर्णित है। उदाहरण सहित इस विषय पर प्रकाश डाला गया है।

दूसरे प्रकरण में भोजपुरी लोकगाथा में 'अमानवतत्त्व' की मीमासा की गई है। लोकगाथाओ में अमानवतत्त्व की बहुलता रहती है। इसमें थलचर नभचर, तथा जलचर सभी क्रियावान् रहते है और कथानक में प्रमुख भाग लेते हैं। अतएव भोजपुरी लोकगाथाओ में अमानवतत्त्व का प्रयोग किस रूप में हुआ है, उदाहरण सहित प्रस्तुत किया गया है।

तीसरे प्रकरण में 'भोजपुरी लोकगाथा में कुछ समानता' का विवरण दिया गया है। परपरानुगत मौखिक साहित्य में समानताए मिलनी स्वाभाविक हैं। इस प्रकरण में प्राप्त समानताओ, अभिप्रायो तथा कथानक रूढियो को प्रस्तुत कर के विचार किया गया है।

चौथे प्रकरण में 'भोजपुरी लोकगाथा एक जातीय साहित्य' पर विचार प्रस्तुत किया गया है। ससार के सभी देशो के लोकसाहित्य की विशेषताएं प्राय समान होती हैं। सांस्कृतिक एव भौगोलिक अन्तर होने के फलस्वरूप उनमें कुछ अपनी विशेषताए आ जाती हैं। प्रस्तुत प्रकरण में इसी पर विचार किया गया गया है।

पाँचवा प्रकरण 'उपसहार' है। इसमें लोकगाथाओ के अध्ययन की महत्ता, लोकगाथाओ के सरक्षण का उपाय, लोकसाहित्य विषयक अनेक सस्थाओ का परिचय, तथा राज्य की सहायता से लोकसाहित्य के अध्ययन के लिए केन्द्रीय संस्था की आवश्यकता का निर्देश किया गया है।

अन्तिम परिशिष्ट है। इसके दो भाग हैं। भाग 'क' में भोजपुरी लोकगाथाओं के प्रमुख अश प्रस्तुत किए गए हैं। भाग 'ख' में सहायक ग्रंथो एव पत्र-पत्रिकाओ की सूची दी गई है।

अन्त में उन व्यक्तियों को धन्यवाद देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण करने में सहायता दी है। लोकगाथा की भारतीय परंपरा पर विचार करने के लिए संस्कृत सामग्री की सहायता काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत और पाली के प्राध्यापक आचार्य बलदेव उपाध्याय जी ने दिया है, साथ ही अध्ययन के निमित्त मुझे कई ग्रंथ भी दिये। मैं उनका चिरऋणी हूँ। उन गायकों को मैं कैसे भूल सकता हूँ जिन्होंने दिन-दिन और रात-रात बैठ कर लोकगाथाओ को गागाकर लिखवाया है। लिखाने में कितनी कठिनाई हुई, यह तो उन्हीं को विदित है या मुझे। सचमुच वे धन्य हैं जो इन पवित्र एव ओजस्वी लोकगाथाओं को बड़े जतन से अपने कंठ में सुरक्षित किये हुए हैं। मैं भाई रामजित कानू लालजी अहीर, रामनगीना हजाम तथा जोगी भाई का सादर अभिनन्दन करता हूँ।

पूज्य डा० धीरेन्द्र वर्मा एम० ए० डी० लिट्० तथा पूज्य डा० उदय-नारायण तिवारी एम० ए० डी० लिट्० को मैं किस मुह से धन्यवाद दूं?

उन्ही के चरणों में तो बैठकर यह प्रबन्ध पूर्ण किया गया है। श्रद्धा से नतमस्तक होकर मैं केवल यही कहूँगा—

'रामा हमतऽ सुमिरी गुरू के चरनिया रे ना।
रामा जिन्ह दिहले हमके गयनवा रे ना।।'

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
प्रयाग

सत्यव्रत सिन्हा

भूमिका

(क) लोकसाहित्य

लोकसाहित्य वह लोकरजनी साहित्य है जो सर्वसाधारण समाज की मौखिक रूप में भावमय अभिव्यक्ति करता है। सृष्टि के विकास के साथ ही लोकसाहित्य का उद्भव माना गया है। इस प्रकार लोकसाहित्य मानव समाज के क्रमिक विकास की कहानी हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। लोकसाहित्य, वर्तमान उन्नत एव कलात्मक साहित्य का जनक है। आज का सस्कृत एव परिष्कृत साहित्य व्यक्ति की महत्ता को स्वीकार करता है, लोकसाहित्य जनता जनार्दन को ही अपना प्रभु मानता है। उसमें किसी का व्यक्तित्व नही झलकता अपितु उसमें समस्त समाज की आत्मा मुखरित होती है। इसी कारण लोकसाहित्य के रचयिताओ अथवा कवियो का कही उल्लेख नही मिलता। प० रामनरेश त्रिपाठी लिखते है, "जिस तरह वेद अपौरुषेय माने जाते है, उसी तरह ग्रामगीत भी अपौरुषेय हैं।"[1]

प्रारम्भ में पाश्चात्य-विचारको ने लोकसाहित्य को नृशास्त्र (ॲन्थ्रोपालोजी) के अन्तर्गत रखा था। उन्नीसवी शताब्दी के मध्यान्त में लोकसाहित्य का अध्ययन इतना व्यापक हुआ कि उसे एक अलग विषय मान लिया गया। इसके पश्चात् लोकसाहित्य के छानबीन का कार्य यूरप में धूम से प्रारम्भ हो गया। अनेक विद्वान् एव कवि इस ओर आकर्षित हुए।

लोकसाहित्य के विषय में पाश्चात्य विद्वानो का मत कुछ एकागी-सा रहा है। प्रो० चाइल्ड, श्री किटरेज, सिजविक, गुमेर तथा लूसी पौंड प्रभृति विद्वानो ने लोकसाहित्य का अध्ययन प्रस्तुत करते हुए इसे मनुष्य की आदिम अवस्था की अभिव्यक्ति समझा है तथा असस्कृत समाज का एक विषय माना है। इस प्रवृत्ति के फलस्वरूप पाश्चात्य देशो में 'लोकसस्कृति', 'लोकसभ्यता' इत्यादि शब्दो का जन्म हुआ। 'लोक' (फोक) शब्द का अर्थ गावो अथवा वनो में रहने वाले गॅवार तथा असस्कृत समाज के रूप में प्रयुक्त होने लगा।

१—प० रामनरेश त्रिपाठी—ग्रामसाहित्य (जनपद पत्रिका, अक्टूबर १९५२ पृ० ११)।

भारतवर्ष में भी लोकसाहित्य के अध्ययन के विषय में कुछ लोगों की प्रवृत्ति उपर्युक्त प्रकार की है। यह अन्धानुकरण है। वास्तव मे हमारे देश की परिस्थिति सर्वथा भिन्न है। नगर और गांव के जीवन में जो विशाल अन्तर पाश्चात्य देशो में मिलता था, वैसा अन्तर भारत में कभी नही रहा। प्रधानतया यह गांवो का देश है, इसलिए नगर जीवन (पौरजीवन) के साथ-साथ जनपदीय जीवन (ग्राम जीवन) का महत्व बराबर से रहा है। हमारे ऋषि-मुनि एव गुरुजन नगर से दूर किसी एकात ग्राम अथवा किसी वन में बैठकर चिन्तन करते थे तथा जीवन का सुखमय सन्देश देते थे। उनकी विचारधारा का भावात्मक प्रभाव प्रथमत ग्रामीण जीवन पर पडता था। उसके पश्चात् ही वह विचार अथवा दर्शन पौरनिवासी विद्वत्मडली में जाकर, टीका टिप्पणी पाकर, परिष्कृत एव प्रबल होता था। हमारे ग्राम एव नगर जीवन में केवल यही अन्तर सदा से रहा है। अतएव भारतीय लोकसाहित्य का अध्ययन करते समय हमें उपर्युक्त भावना निकाल देनी चाहिए। वास्तव मे हमारा लोकसाहित्य सस्कृति की उच्चतम भावनाओ को अपनी अपरिष्कृत भाषा में सजो कर रखता है। हमारा 'लोक' पाश्चात्य देशो का 'लोक' नही है अपितु देश की समूची सस्कृति एव सभ्यता ही हमारी लोक-सस्कृति एव लोक-सभ्यता है। प्रत. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन अत्यन्त युक्तिसगत है कि "लोक' शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम्य' नहीं है वल्कि नगरो और गावो में फैली हुई समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नही है।"[१]

लोकसाहित्य का अध्ययन एक अत्यन्त व्यापक विषय है। इसके अध्ययन से हम देश अथवा प्रदेश-विशेष के लुप्त ऐतिहासिक तथ्यो को प्रकाश में ला सकते है। जो विषय हमें एतिहासिक ग्रन्थो में नही प्राप्त होते, वे सहज रूप म लोकसाहित्य में मिल जात ह। लोकसाहित्य में अनेक राजाओ के जीवन की घटनाएं, प्रादेशिक वीरो का जीवन चरित्र तथा सती स्त्रियो के जीवन की घटनाएं वडे मार्मिक रूप में चित्रित रहती है। अतएव इनके सम्यक् अध्ययन से इतिहास के पृष्ठ वढाए जा सकते है।

लोकसाहित्य में भौगोलिक चित्र भी व्यापक रूप में हमें मिलता है। लोकगीतो का परदेशी पति पूरव व्यापार करने के लिए जाता है। वह अनेक नदिया और नगर पार करता है और पुन अपने घर लौटते हुए अपनी पत्नी के लिए

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—लोकसाहित्य का अध्ययन—(जनपद-पत्रिका, अक्टूबर १९५२ पृ० ६५)।

मगह का पान, बनारसी साड़ी, मिर्जापुर का लोटा, पटने की चोली और गोरखपुर का हाथी लाता है। लोकगाथाओ के वीर अनेक नगरो और गढो पर आक्रमण करके विजय प्राप्त करते हैं। इस प्रकार से हम लोकसाहित्य द्वारा नगर, नदी, किला, गढ और प्रसिद्ध व्यापारी केन्द्रो से परिचित होते हैं।

लोकसाहित्य हमें समाज के आर्थिक-स्तर का भी विधिवत् ज्ञान कराता है। लोकसाहित्य में साधारण ग्रामीण समाज का खानपान, रहन-सहन तथा रीतिरिवाज इत्यादि का परिचय मिलता है। लोकगीतो की माता सोने के कटोरे में ही शिशुओ को दूध भात खिलाती है। नायिकाए दक्षिण की चीर, चन्द्रहार, बाजूबन्द और माँगटीका पहनती हैं। भोजन में बासमती चावल, मूँग की दाल, पूड़ी, पूआ और छत्तीस रकम की चटनी ही परोसा जाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि लोकसाहित्य के द्वारा समाज की आर्थिक अवस्था से हम भलीभाति परिचित हो सकते हैं।

नृशास्त्र (अन्थ्रोपालोजी) के लिए लोकसाहित्य में अध्ययन की सामग्री भरी पड़ी है। विभिन्न जातियो और उनके नियमादि का वर्णन लोकसाहित्य में भली भाँति मिलता है। भोजपुरी प्रदेश मे धोबी, नेटुआ, दुसाव, चमार, कमकर, मल्लाह, गोड़, बरकार इत्यादि अनेक जातिया बसती हैं। इन जातिया के अध्ययन के लिए लोकसाहित्य स बढकर कोई विषय नहीं होता।

लोकसाहित्य मे धार्मिक जीवन का ब्योरेवार चित्र मिलता है। देवी-देवताओ की कहानियाँ, अनेक प्रकार के व्रत-उपवास, पूजापाठ, तथा मन्त्र-तंत्र इत्यादि का सागोपाग वर्णन लोकसाहित्य मे प्राप्त होता है। इनसे हम किसी समाज की धार्मिक अवस्था का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकते है।

लोकसाहित्य का सबध भाषा-शास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लोकसाहित्य मे भाषा-शास्त्र के अध्ययन के लिए अक्षयभण्डार भरा पड़ा है। जटिल भावो को व्यक्त करने के लिए लोकसाहित्य मे सरल एव सहज सटीक शब्द भरे पडे हैं। इनसे हम अपने साहित्य का भडार भर सकते है। इन शब्दो की व्युत्पत्ति भी बड़ी रोचक होती है। इन शब्दो के प्रयोग से हम उक्त समाज के बौद्धिक स्तर को भी जान सकते हैं। लोकसाहित्य मे मुहावरे, कहावते तथा सूक्तियो की भरमार रहती है। इन्हे सुसस्कृत साहित्य मे सम्मिलित कर भाषा को प्रभावशाली एव लोकोपयोगी बनाया जा सकता है।

इसी प्रकार से लोकसाहित्य के अध्ययन से हमें नैतिक, मनोवैज्ञानिक, आध्यात्मिक तथा भौतिक-शास्त्र सम्बन्धी तथ्य भी उपलब्ध हो सकते है। लोक-

साहित्य वस्तुत एक अक्षय भडार है। मानवता-सम्बन्धी सभी सामग्री हमें उपलब्ध होती है। इसीलिए तो स्काटलैंड का देश भक्त फ्लैचर कहता है, "किसी भी जाति के लोकगीत उसके विधान से कही अधिक महत्वपूर्ण होता है।"

साधारण रूप से लोकसाहित्य के अध्ययन को हम चार भागो मे विभाजित कर सकते हैं। इसमें प्रथमत लोकगीत का स्थान आता है। लोकगीतो में ग्राम जीवन की सरल अभिव्यजना रहती है। इसमें विशेष सामाजिक सस्कारो, ऋतु, पर्वों तथा देवी-देवताओ से सम्बन्धित भिन्न गीत रहते हैं।

लोकसाहित्य के दूसरे भाग में लोकगाथा का स्थान आता है। इसमें किसी एक व्यक्ति के जीवन का सागोपाग वर्णन रहता है। वस्तुत लोकगाथा एक कथात्मक गीत होती है। इसका विस्तार बहुत बडा होता है। कोई कोई लोकगाथा तो हफ्तो में जाकर समाप्त होती है।

लोकसाहित्य के तृतीय भाग में लोककथा का स्थान आता है। ग्रामीण जीवन से सम्बन्धित, धार्मिक तथा पौराणिक-कथाओ से उद्भूत, तथा विगत सत्य घटनाओ पर आधारित अनेक प्रकार को लोककथाएँ समाज मे प्रचलित रहती हैं। इन्ही कथाओ का समावेश लोकसाहित्य में पूर्ण रूप से रहता है।

चतुर्थ प्रकीर्ण साहित्य है, जिसमे ग्राम जीवन से सम्बन्धित मुहावरो, कहावतो, पहेलियो तथा सूक्तियो का समावेश होता है।

लोकसाहित्य के उपर्युक्त चार अगो के अतिरिक्त ग्राम्य जीवन के अन्य अग भी इसमे आते है। उदाहरण के लिए ग्रामीण प्रहसन, नाटक, रामलीला, तथा भित्ति-चित्र इत्यादि। इस प्रकार हम देखते है कि लोकसाहित्य एक अत्यन्त व्यापक विषय है। इस परपरानुगत साहित्य का अध्ययन बडे ही मनोयोग से होना चाहिए।

ऊपर की पक्तियो में लोकगाथा के अध्ययन से लाभ तथा इसके प्रकारो इत्यादि की सक्षिप्त रूपरेखा देने की चेष्टा की गई है। इससे यह धारणा नही बना लेना चाहिए कि लोकसाहित्य का क्षेत्र अपने प्रकारो में ही सीमित है। यह सत्य है कि लोकसाहित्य उस लोक का साहित्य है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नही हैं। परन्तु उन विशाल पोथियो के रचयिता-विद्वानो, पडितो, सतो तथा भक्तो ने उसी अपढ लोक-विशेष का सहारा लिया है। प्राचीन सस्कृत युग से लेकर प्राकृत और अपभ्रश युग तक, अपभ्रशो के युग से निकल कर जनपदीय साहित्य तक, तथा जनपदीय साहित्य से लेकर वर्तमान हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत उस लोक की स्पष्ट झाँकी साहित्य के विभिन्न

अगो में देख सकते हैं। प्रसिद्ध महाकाव्यो तथा नाटको में लोकसाहित्य की सामग्री का विभिन्न रूपो में समावेश हुआ है। कथासरित्सागर, वैताल पचीसी इत्यादि में वर्णित कथाएं अधिकाश में लोककथाओ के शुद्ध रूप है। प्रसिद्ध महाकाव्यो—रामायण और महाभारत इत्यादि लोकगाथाओ से ही उद्भूत हैं। नाटको के हल्लीश, रासक, प्रेंखण, भाण, भाणिका श्रीगदित इत्यादि प्रकार लोकनाट्य की परम्परा से ही लिए गए है। काव्यगत शैलियो में लोकसाहित्य ने अमूल्य योग दिया है। हिन्दी के प्रसिद्ध चारण, सत एव भक्त कवियो ने लोकसाहित्य में प्रचलित अनेक शैलियो को अपने शिष्ट एवं विचार-प्रवण साहित्य में स्थान दिया है। इन कवियो ने रासो, चाचर, हिंडोला, कहरवा, झूमर, वरवै, सोहर, मगल, वेली, तथा विरुहली इत्यादि लोकगीतो की शैलियो को ग्रहण किया है। अत इससे यह स्पष्ट होता है कि लोकसाहित्य का क्षेत्र किसी भी प्रकार सीमित नही है, यहाँ तक कि आज के गीत (लिरिक) युग में भी लोकगीतो की शैलियां परिलक्षित होती हैं। वास्तव में यह विषय (लोकसाहित्य और शिष्ट साहित्य का अन्योन्य सम्बन्ध) अत्यन्त रोचक है। प्रस्तुत प्रवन्ध की सीमा को देखते हुए इस पर सविस्तार विचार करना शक्य नही। वस्तुत. यह एक पृथक प्रवन्ध का विषय है।

(ख) भोजपुरी भाषा और साहित्य

राष्ट्रभाषा हिन्दी की परिधि में, भोजपुरी का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। बिहार प्रान्त की तीन प्रधान बोलियो—मैथिली, मगही तथा भोजपुरी के अन्तर्गत भोजपुरी बिहार की पश्चिमी और उत्तर प्रदेश के पूर्वी प्रदेश की प्रमुख बोली है। इसके बोलने वालो की सख्या दो करोड से भी अधिक है। यद्यपि प्राचीनकाल में इसमें उन्नत-साहित्य का निर्माण नही हुआ, तो भी इसका विस्तार एव बोलने वालो की सख्या अन्य प्रादेशिक भाषाओ की तुलना में सबसे अधिक है। मराठी, जो कि एक समृद्ध भाषा है, उसके भी बोलने वाले दो करोड से कम ही हैं। आधुनिक समय मे भोजपुरी में साहित्य निर्माण का कार्य तेजी से हो रहा है। अनेक ग्रथ एव पत्र-पत्रिकाए भोजपुरी भाषा में निकल रही हैं। हिन्दी की प्रादेशिक भाषाओ के अन्तर्गत भोजपुरी में खोजकार्य भी विशेष रूप से हुआ है।

भोजपुरी भाषा के नामकरण का इतिहास बडा रोचक है। इसका नामकरण बिहार के शाहाबाद जिले मे बक्सर के समीप 'भोजपुर' नामक गाँव पर हुआ है। बक्सर सब-डिवीजन में 'नवका भोजपुर' तथा 'पुरनका भोजपुर' नामक दो गाव आज भी स्थित है। 'भोजपुर' गाँव का नाम उज्जैनी भोज राजाओ के नाम पर पडा है। मध्यकाल में उज्जैन के भोजवशी राजाओ ने यहाँ आकर राज्य की स्थापना की थी। उज्जैनी राजपूतो का प्रताप समस्त बिहार और उत्तर प्रदेश तक था। उनकी राजधानी का नाम 'भोजपुर' था। अतएव इस गाँव के नाम पर ही यहाँ की बोली का नाम भी 'भोजपुरी' पड गया।[1]

विहार की तीन बोलियो में विस्तार एव व्यापकता की दृष्टि से भोजपुरी अग्रगण्य है। उत्तर में हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में मध्यप्रान्त की सरगुजा रियासत तक इस बोली का विस्तार है। विहार प्रान्त के शाहाबाद, सारन, चपारन, राँची, जयपुर स्टेट, पालामऊ का कुछ भाग तथा मुजफ्फरपुर के उत्तरी पश्चिमी कोने में इस बोली के बोलने वाले निवास करते है। इसी

१—विशेष विवरण के लिए देखिए—

दुर्गाशकर प्रसाद सिह—भोजपुरी लोकगीतो मे करुण रस (भूमिका भाग)।

प्रकार उत्तर प्रदेश के वनारस, मिर्जापुर, गोरखपुर, आजमगढ तथा वस्ती जिले के हरया तहसील में स्थित कुवानो नदी तक भोजपुरी वोलने वालो का आधिपत्य है। इस प्रकार भोजपुरी क्षेत्रफल की दृष्टि से पचास हजार वर्गमील में व्याप्त है।[1]

भोजपुरी एक विस्तृत क्षेत्र की भाषा है, अतएव इसमें विभिन्नता रहना स्वाभाविक है। इसके प्रधानतया तीन भेद हैं। प्रथम आदर्श भोजपुरी जो भोजपुर गाँव के आस-पास तथा शाहावाद, वलिया, गाजीपुर आदि दक्षिणी जिलो में वोली जाती है। इसके भी दो सूक्ष्म भेद हैं। प्रथम दक्षिणी भोजपुरी जिसका उल्लेख ऊपर की पक्ति में किया गया है तथा दूसरा उत्तरी भोजपुरी जो कि गोरखपुर, वस्ती तथा सारन जिलो में वोली जाती है।[2]

भोजपुरी का दूसरा प्रकार पश्चिमी भोजपुरी है जो कि फैजावाद, जौनपुर, आजमगढ तथा गाजीपुर जिले के पश्चिमी भाग में वोली जाती है। पश्चिमी भोजपुरी भारतीय आर्य भाषाओ के पूर्वी समुदाय की सबसे पश्चिमी सीमान्त वोली है जो अवधी आदि से कुछ समानता रखती है।

भोजपुरी का तृतीय भेद 'नगपुरिया' है। छोटा नागपुर तथा उसके आस पास 'नगपुरिया भोजपुरी' वोली जाती है। नगपुरिया पर छत्तीसगढी वोली का अत्यधिक प्रभाव है।

उपर्युक्त तीन भेदों के अतिरिक्त भोजपुरी के अन्य दो प्रकार भी मिलते हैं जिसे 'मधेसी' और 'थारू' कहते हैं। 'मधेसी' संस्कृत के 'मध्य देश' से निकला है, जिसका अर्थ है वीच का देश। यह वोली तिरहुत की मैथिली एवं गोरखपुर की भोजपुरी के वीच वाले उत्तरी प्रदेश में वोली जाती है। मधेसी, चम्पारन जिले में वोली जाती है। मधेसी पर मैथिली का अधिक प्रभाव है।

'थारू' नैपाल की तराई में निवास करने वाले थारु जाति की वोली है। ये लोग वहराइच से चम्पारन तक पाए जाते हैं। इनकी वोली वस्तुत विकृत भोजपुरी है। हाजसन ने इनकी भाषा पर अच्छा प्रकाश डाला है।[3]

१—डा० उदयनारायण तिवारी—भोजपुरी नामकरण, पत्रिका पृ० १६३-६४

२—डा० कृष्णदेव उपाध्याय—'भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन' (अप्रकाशित) पृ० ३०

३—वही

भोजपुरी मे साहित्य का अभाव—यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है। भोजपुरी इतनी सजीव एव व्यापक भाषा होते हुए भी साहित्य-सृजन में प्राय: शून्य-सी है। इसकी सगी बहन मैथिली में सुन्दर साहित्य का निर्माण हुआ परन्तु भोजपुरी में नही। विद्वानो ने इसके दो प्रमुख कारण निर्धारित किए है। प्रथम, प्राचीनकाल में जहाँ बगाल एव मिथिला के ब्राह्मणो ने सस्कृत के साथ साथ अपनी मातृ भाषा को भी साहित्यिक रचना के लिए अपनाया वहाँ भोजपुरी पडितो ने केवल सस्कृत के अध्ययन और अध्यापन पर ही विशेष बल दिया। सस्कृत के अध्ययन का प्राचीन केन्द्र 'काशी' भोजपुरी प्रदेश में ही स्थित है। सस्कृत साहित्य को उत्तरोत्तर परिष्कृत करने में तथा उसके प्रचार को अक्षुण्ण बनाए रखने के कारण भोजपुरी पण्डितो द्वारा मातृ-भाषा की उपेक्षा की गई।

भोजपुरी में साहित्य के अभाव का द्वितीय कारण है राज्याश्रय का अभाव। प्रोफेसर बलदेव उपाध्याय का मत है कि "भोजपुरी साहित्य की अभिवृद्धि न होने का प्रधान कारण है राज्याश्रय का अभाव। भोजपुरी प्रदेश में किसी प्रभावशाली व्यापक एव प्रतापी नरेश का पता नहीं चलता। अधिकतर इसमें किसानो की ही बस्तियाँ है। किसी गुणग्राही नरेश का आश्रय न मिलने से इस भाषा का साहित्य समृद्ध न हो सका।"[१]

उपर्युक्त दोनो मतो में सत्य की मात्रा अवश्य है परन्तु यह मत स्वीकार-कर लेना कि भोजपुरी में साहित्य का सर्वथा अभाव है, नितात असगत होगा। यह अवश्य है कि भोजपुरी में सूर, तुलसी, मीरा तथा विद्यापति के समान कोई प्रतिभावान् व्यक्ति नही उत्पन्न हुआ परन्तु थोडी बहुत मात्रा में साहित्य की रचना सदैव से होती रही है। डा० उदयनारायण तिवारी के मत से कबीर तो भोजपुरी भाषा के ही कवि थे। तुलसी की रचनाओ में भी भोजपुरी भाषा का प्रभाव पडा है। इनके अतिरिक्त प्राचीनकाल में अनेक सत एव इतर कवियों ने भोजपुरी में रचनाएँ की थी जिनमें धरमदास, शिवनारायण, धरनीदास तथा लक्ष्मीसखी इत्यादि प्रमुख हैं। आधुनिक काल में अनेक कवियो ने भोजपुरी में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं जिनमें बिसराम, तेजअली, बाबू रामकृष्ण वर्मा, दूधनाथ उपध्याय, बाबू अम्बिका प्रसाद, भिखारी ठाकुर, मनोरजन प्रसाद सिनहा, राम बिचार पाडे, प्रसिद्ध नारायण सिंह, पण्डित महेन्द्र शास्त्री, श्याम

१—डा० कृष्णदेव उपाध्याय—'भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन' ——— (अप्रकाशित) पृ० १२

बिहारी तिवारी, श्री चचरीक, श्री रघुवीर शरण, तथा रणधीरलाल श्रीवास्तव प्रमुख है।[1]

इनकी रचनाओ के अतिरिक्त दूधनाथ प्रेस, हवडा, गुल्लू प्रकाशन तथा बैजनाथ प्रसाद बुकसेलर, काशी ने भोजपुरी गीतो तथा नाटको के अनेक सग्रह प्रकाशित किए हैं।

भोजपुरी गद्य एव नाटको मे भी कार्य हुआ है, जिनमे श्री राहुल साकृत्यायन, श्री रविदत्त शुक्ल तथा भिखारी ठाकुर का नाम महत्वपूर्ण है।

भोजपुरी भाषा के अध्ययन के क्षेत्र में श्री ग्रियर्सन ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। इनके अतिरिक्त श्री आर्चर, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० उदय नारायण तिवारी, तथा डा० विश्वनाथ प्रसाद का नाम उल्लेखनीय है।

१—वही—पृ० ६६-६६

(ग) भोजपुरी लोकसाहित्य

भोजपुरी भाषा में साहित्य का सृजन भले ही अल्प मात्रा में हुआ हो परन्तु लोक साहित्य का भडार अक्षय है। भोजपुरी जीवन का प्रतिनिधित्व वहाँ का लोक साहित्य ही करता है। यद्यपि कबीर एव तुलसी भोजपुरियो के हृदय-सिंहासन पर विराजमान है परन्तु आल्हा, लोरिकी, बिहुला तथा सोरठी की लोकगाथाएँ किसी भी प्रकार कम महत्व नही रखती है। पर्वों, त्योहारो तथा अनेकानेक उत्सवो पर भिन्न-भिन्न प्रकार के गीत एव कथाएँ अशिक्षित ग्रामीणो का मनोरजन करती हैं। उनके जीवन का दुख-सुख इन्ही लोकगीतो, गाथाओ एव कथाओ में भरा पडा है।

भोजपुरी लोकसाहित्य को हम चार भाग में विभक्त कर सकते ह[१]:—

१—लोकगीत

२—लोकगाथा

३—लोककथा

४—प्रकीर्णसाहित्य

भोजपुरी लोकगीतो में दो प्रकार हैं। प्रथम सस्कार सबन्धी गीत तथा द्वितीय ऋतु सबन्धी गीत। इसके अतिरिक्त देवी देवताओ से सबधित गीत भी हैं। भोजपुरी लोकगीतो के निम्नलिखित प्रकार हैं[१]—

१—सोहर—पुत्र जन्म के अवसर पर गाए जाने वाले गीत।

२—खेलवना—पुत्र जन्म के पश्चात् गाए जाने वाले गीत।

३—जनेऊ के गीत—यज्ञोपवीत तथा मुन्डन सस्कार के गीत।

४—विवाह के गीत—इसमें विवाह सबधी सभी सस्कारो के गीत रहते है।

५—वैवाहिक परिहास के गीत—इसमें परस्पर हास-परिहास तथा गाली देने के गीत रहते हैं।

६—गवना के गीत—द्विरागमन के अवसर पर गाए जाने वाले गीत।

७—छठी माता के गीत—कार्त्तिक शुक्ल में सूर्यषष्ठी व्रत के निमित्त गाये जाने वाले गीत।

१—विशेष विवरण के लिए देखिए—डा० कृष्णदेव उपाध्याय 'भो० लो० का अ०' पृ० १६६-२०२

८—शीतला माता के गीत—चेचक निकलने पर शीतला माता को प्रसन्न करने के गीत।

९—बहुरा—भाद्र कृष्ण चतुर्थी को बहुरा व्रत के अवसर पर गाये जाने वाले गीत।

१०—गोधन—कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को गोधन व्रत मनाया जाता है। गोवर्धनपूजा मे संबंधी गीत इसमें गाए जाते हैं।

११—पिड़िया—गोधन व्रत के दिन कुमारी कन्याएँ भाई की मंगल-कामना के लिए गीत गाती हैं।

१२—बारह मासा—यह विरह गीत है। सावन के गीत, चौमासे के गीत तथा झूले के गीत इसी श्रेणी में आते हैं।

१३—चैता—बसंत के आगमन के साथ पुरुषों द्वारा गाया जाने वाला गीत। इसे घाटो भी कहते हैं।

१४—कजली—वर्षा ऋतु का गीत।

१५—फगुआ—होलिकोत्सव पर गाए जाने वाले गीत।

१६—नागपंचमी—नागपूजा से संबंधित गीत। वर्षा के गीत भी इसमें सम्मिलित रहते हैं।

१७—जंतसार—ग्रामवधूओं द्वारा चक्की चलाते समय का गीत।

१८—बिरहा—अहीर लोगों का यह जातीय गीत है। वीर और शृंगार से ओतप्रोत रहता है।

१९—झूमर—यह एक फुटकर गीत है। नवयुवतियाँ समवेतस्वर में गाती हैं।

२०—सोहनी के गीत—वर्षा के प्रारम्भ में खेतों में हानिकर पौदों और कीड़ों को निकालते समय गाए जाने वाले गीत। इसे स्त्रियाँ ही विशेष रूप से गाती हैं।

२१—भजन—जीवन के रहस्यात्मक एवं क्षणभंगुरता पर प्रकाश डालने वाले गीत।

२२— विविध गीत (क) अलचारी—लाचारी अवस्था में गाए जाने वाले गीत। इसमें विरह प्रधान रहता है।

(ख) पूर्वी—यह भी एक विरह गीत है। पूरब देश जाने का प्रसंग वर्णित रहता है।

(ग) **निर्गुन**—रहस्यवादी गीत। कबीर के निर्गुन से ही इसक
सबध है।

(घ) **पराती**—प्रात काल गाए जाने वाले गीत।

(ङ) **पालने के गीत**—शिशु को बहलाते समय और सुलाते सम
गाए जाने वाले गीत।

(च) **खेल के गीत**—कबड्डी, गुल्लीडडा, आँख मिचौनी, तथा ओका
बोक्का खेलते समय गाए जाने वाले गीत।

(छ) **जानवरो के गीत**—पशुओ को सबोधित करके गाए जा
वाले गीत।

लोकगीतो के पश्चात् लोकगाथाओ (बैलेड्स) का स्थान आता है। समर
भोजपुरी प्रदेश में लोकप्रिय नौ लोकगाथाओ का प्रचार है, जो इस प्रकार है—
आल्हा, लोरिकी, विजयमल, कुवरसिंह, शोभानयका बनजारा, सोरठी, बिहुल
भरथरी तथा गोपीचद। इन लोकगाथाओ का अध्ययन ही लेखक का विषय
अतएव अगले अध्यायो में इनपर विशद् विवेचन प्राप्त होगा।

उपर्युक्त नौ लोकगाथाओ के अतिरिक्त अन्य अनेक छोटी-मोटी लोकगाथ
भोजपुरी प्रदेश में प्राप्त होती हैं, जैसे कुसुमादेवी, भगवतीदेवी तथा लचि
रानी इत्यादि। ये गाथाएँ भोजपुरी प्रदेश में व्यापक नही है, अपितु कि
किसी विशेष जिलो में ही सीमित है। 'लचियारानी' की गाथा निरवाही
गीतों के अतर्गत आती है। इसी कारण इनपर प्रस्तुत प्रबन्ध में प्रकाश न
डाला गया है।

अभीतक भोजपुरी लोकगाथाओ का अध्ययन किसी ने नही किया था
डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने अपनी थीसिस में भोजपुरी लोकगाथाओ के सिद्धान
और विशेषताओ पर सक्षेप में प्रकाश डाला है। बहुत पहले श्री ग्रियर्सन
भी भोजपुरी भाषा के अध्ययन के हेतु कुछ भोजपुरी लोकगाथाओ को एकत्र क
अनेक पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित करवाया था, जिनका विवरण द्वितीय अध्य
में मिलेगा। परन्तु उपर्युक्त प्रयास अति गौण था। इस दिशा में पूर्णरू
अध्ययन करने का प्रयास प्रस्तुत प्रबन्ध में लेखक ने किया है।

भोजपुरी लोककथा का क्षेत्र अगाध है। वस्तुत कथा साहित्य में भार
वर्ष युगो पूर्व से ससार में अग्रणी रहा है। हितोपदेश, वृहत्कथामजरी, क
सरित्सागर, जातक तथा वैतालपचविशतिका इत्यादि कथाग्रन्थो में अनगि
कहानिया भरी पडी है। इसी प्राचीन परपरा में पोपित भोजपुरी लोककथ

आज अति लोकप्रिय है। डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने भोजपुरी लोककथाओ को छ श्रेणी में विभक्त किया है, जो इस प्रकार है[1] –

१—उपदेशात्मक
२—मनोरजनात्मक
३—व्रतात्मक
४—प्रेमात्मक
५—वर्णनात्मक
६—सामाजिक

प्राय समस्त भोजपुरी कहानियाँ उपदेशात्मक है। नमें स्त्रियो के चरित्र, सामाजिक अवस्था, कुटिल लोगो का चरित्र तथा उनसे किस प्रकार वचना चाहिए, वर्णित रहता है। मनोरजनात्मक कहानियो में अधिकाश में जानवरो के ऊपर कहानियाँ रहती हैं। व्रतात्मक कहानियो में स्त्रियो के व्रतो का उल्लेख रहता है। इन कथाओ में व्रत के माहात्म्य को सुन्दर ढग से वतलाया जाता है। प्रेमकथात्मक कथाओ में स्त्रियो का प्रेम, उनका सतीत्व एव वीरता का वर्णन रहता है। वर्णनात्मक कहानियाँ अति लम्वी होती हैं उनमें किसी राजा और उसके वेटे की कहानी रहती है जो कई दिनों में जाकर समाप्त होती हैं। सामाजिक कहानियो में समाज की रूढियो पर व्यग रहता है जैसे, वृद्ध विवाह, गरीवी-अमीरी इत्यादि। इन समस्त प्रकार की लोककथाओ में रोमाच का पुट प्रत्येक स्थान पर रहता है। इनमें देवी, देवता, भूत, पिशाच, चुड़ैल, राक्षस इत्यादि का सर्वत्र उल्लेख रहता है।

प्राय. समस्त भोजपुरी लोककथाओ में वीच-वीच में गीत का रहना अनिवार्य है। भोजपुरी की दो प्रसिद्ध लोककथाओ 'सारगा सदावृक्ष' तथा 'राजा ढोलन' में गीतों का इतना वाहुल्य है कि ये लोकगाथाओ की वरावरी करने लगती है। प्राय: सभी भोजपुरी कथाओ का अत पद्य के साथ ही होता है जैसे—

'ढेला मिहलाइ गइले
पतई उड़िआई गइले
काया ओराइ गइले।'

१—डा० कृष्णदेव उपाध्याय—'भो० लो० का अ०' पृ० ५२६-५३२

वस्तुत. भोजपुरी लोककथाओ का अध्ययन अभी तक व्यवस्थित रूप से नही हुआ है। भोजपुरी लोकसाहित्य में लोककथा का क्षेत्र अत्यन्त समृद्ध एव महत्वपूर्ण है। वास्तव में ये लोककथाएँ देश की परम्परानुगत सस्कृति एव सभ्यता को एक शृखला में बाँधने में सहायक सिद्ध हुई है। अतएव इनका वैज्ञानिक अनुसधान अत्यन्त आवश्यक है।

भोजपुरी लोकसाहित्य के अन्तिम अग में प्रकीर्ण साहित्य का स्थान आता है। किसी भी देश के बौद्धिक स्तर को समझने के लिए प्रकीर्ण साहित्य अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है। डा० उदयनारायण तिवारी का मत है कि "वास्तव में लोकोक्तियाँ अनुभूत ज्ञान की निधि हैं।) शताब्दियो से किसी जाति की विचार-धारा किस ओर प्रवाहित हुई है, यदि इसका दिग्दर्शन करना हो तो उस जाति की लोकोक्तियो का अध्ययन आवश्यक है'।[1]

भोजपुरी प्रकीर्ण साहित्य के चार प्रमुख भाग हैं। प्रथम लोकोक्तियाँ, द्वितीय मुहावरे, तृतीय पहेलियाँ, तथा चतुर्थ सूक्तियाँ।[2]

लोकोक्तियो में सामाजिक तथा धार्मिक अवस्था का सुन्दर चित्र रहता है। उदाहरण स्वरूप.—

'बाभनकुकुर नाऊ, आपन जाति देखि घिर्राऊ,
'चारि कवर-भीतर तब देवता पित्तर'
'तीन कनौजिया तेरह चूल्हा'
'नउवा के नव बुद्धि, ठकुरवा के एक्के'

इस प्रकार ऐतिहासिक एव राजनीतिक अवस्था की द्योतक अनेक लोकोक्तियाँ भोजपुरी में सरक्षित है।

मुहावरो का व्यवहार दैनिक जीवन में प्राय सभी करते है। कुछ भोजपुरी मुहावरो का उदाहरण इस प्रकार है—

खटराग बढावल—	अर्थात् पाखड बढाना।
खोख खखार के वोलल—	स्पष्टवादी होना।
गोघन कुटाइल—	खूब पीटा जाना।

१—डा० उदयनारायण तिवारी—'हिन्दुस्तानी' अप्रैल १९३९ पृ० १५९-२१६

२—डा० कृष्णदेव उपाध्याय—'भो० लो० का अध्ययन' पृ० ५४०-७०

इसी प्रकार धर्म, इतिहास, शकुनविचार, तथा खेती इत्यादि सम्बन्धी अनेक मुहावरे भोजपुरी में भरे पडे हैं।

नगरो तथा गावो में पहेलियो का प्रचार समान रूप से है। इन्हें 'बुझौवल' भी कहते हैं। भोजपुरी में पहेलियो का भडार विशाल है। इनमें परिहास की प्रवृत्ति प्रधान रूप से पाई जाती है। उदाहरण के लिए कुछ पहेलियां इस प्रकार हैं—

'हती चुकी गाजी मियाँ, हतवत पोंछि,
इहे जाले गाजी मिया, धरिहे पोंछि,। उत्तर—सुई तागा

'अकाश गइले चिरई, पाताल मोर वच्चा,
हुचुक्क मारे चिरई पियाव मोर वच्चा ? उत्तर—ढेंकुल

भोजपुरी पहेलियो में गणित के प्रश्न, उपदेश तथा पौराणिक कथा का भी उल्लेख मिलता है।

पहेलियो के पश्चात् सूक्तियो का स्थान आता है। सूक्तियो में खेत वोने का उचित समय, वर्पा विज्ञान, जोताई वोआई, फसल के रोग तथा शरीर और स्वास्थ्य के सवध में वर्णन रहता है। इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार है –

भोजन सवधी— खिचडी के चार यार,
दही पापड घीव अचार।

वायु परीक्षा— जव जेठ चले पुरवाई,
तव सावन धूरि उड़ाई,

वर्पा विज्ञान— जेठ मास जो तपै निरासा,
तव जानो वरखा के आसा।

जोताई— 'तीन कियारी तेरह गोड़, तव देखो ऊखी के पोर,

इसी प्रकार से अन्य उपर्युक्त विपयो पर भोजपुरी में सूक्तियां मिलती है। इनका विशद् अध्ययन अत्यन्त रोचक है।

भोजपुरी लोकसाहित्य के अध्ययन का अभी श्री गणेश ही हुआ है। भोजपुरी लोकगीतो तथा लोकगाथाओ में अवश्य कार्य हुआ है परन्तु अभी अन्य अंगों का अध्ययन नही हो पाया है। वास्तव में भोजपुरी लोकसाहित्य के प्रत्येक अग पर अलग से व्यवस्थित अध्ययन की आवश्यकता है। भोजपुरी लोकगाथाओ का प्रस्तुत अध्ययन तथा डा. कृष्णदेव उपध्याय द्वारा 'भोजपुरी लोकसाहित्य

का अध्ययन' के अतिरिक्त भोजपुरी लोककथाओ तथा प्रकीर्ण साहित्य पर भी अध्ययन प्रारभ होना चाहिए।

वस्तुत भारतवर्ष मे लोकसाहित्य का अध्ययन अभी प्रथम चरण में ही है। अनेक विद्वान् एव उत्सुक विद्यार्थी इस ओर अग्रसर हो रहे है, यह लोकसाहित्य का सौभाग्य है। विश्वास है कि निकट भविष्य में लोक-साहित्य का अध्ययन अपनी चरम-स्थिति पर पहुँच जायगा।

अध्याय १

लोकगाथा

नामकरण—भारतीय आर्य-भाषाओ में उपलब्ध कथात्मक गीतो के लिए कोई एक निश्चित सज्ञा नही प्राप्त होती । यही कारण है कि विभिन्न भाषाओ में इनके भिन्न-भिन्न नाम मिलते है। महाराष्ट्र में इन्हें 'पवाडा' कहते है । यहाँ 'शिवा जी' तथा 'ताना जी' के पवाडे अत्यन्त प्रसिद्ध है । गुजरात मे इस प्रकार के गीतो के लिए 'कथागीतो'[१] नाम प्रयुक्त होता है। राजस्थानी लोकगीत' के लेखक श्री सूर्यकरणपारीक ने इन्हे 'गीत-कथा'[२] नाम से अभिहित किया है । समस्त उत्तरीभारत में लम्बे कथानक वाले गीतो के लिये निश्चित नाम नही दिया गया है। यहाँ गीतो में वर्णित प्रमुख चरित्रो के नाम से ही उनका नामकरण किया जाता है । उदाहरण के लिए, बगाल में राजा गोपीचन्द के गीत को 'गोपीचन्द्रेर गान' कहा जाता है। पजाब मे 'हीरराझा' तथा 'सोनी-महीवाल' से ही कथात्मक गीतो का बोध होता है। भोजपुरी प्रदेश में 'कुवरसिह', 'लोरिकी', 'विजयमल' तथा 'आल्हा' का नाम लेने से इनसे सम्बन्धित गीता का ही भाव स्पष्ट होता है। जब कोई व्यक्ति कहता है, 'आल्हा सुनाओ', तो इसका अर्थ यही होता है कि 'आल्हा का गीत सुनाओ' । श्री जी० ए० ग्रियर्सन ने इस प्रकार के गीतो को 'पापुलर साग'[३] कहा है, परन्तु यह नाम सतोपजनक नही प्रतीत होता । लोकप्रिय गीत तो अन्य भी होते हैं। इनमें प्रचलित लोकगीतो (फोक साग्स) का भी समावेश हो जाता है। अतएव सर्व प्रथम हमारे सम्मुख नामकरण की समस्या उपस्थित होती है।

कथात्मक गीतो अथवा वर्णनात्मक गीतो के लिए भारतीय विद्वानो ने तीन नाम प्रस्तुत किए है, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। ये तीन नाम है, पवाडा, कथागीत, तथा गीतकथा । 'पवाडा' शब्द का प्रयोग उत्तरीभारत

१—श्री झवेरचन्द मेघाणी—लोकसाहित्य, पृ० ५०

२—श्री सूर्यकरण पारीक—राजस्थानी लोकगीत, पृ० ७८

३—श्री जी० ए० ग्रियर्सन—इडियन ऐंटीक्वेरी—वाल १५, १८८५ ई०, पृ० २०७

में बहुत कम होता है। मराठी भाषा में ही यह अधिक प्रचलित है। 'कथागीत' तथा 'गीतकथा' शब्द वस्तुत. एक ही है। इन शब्दो में अनुवाद की स्पष्ट गन्ध आती है। निश्चित रूप से ये अग्रेजी के 'बैलेड' शब्द के भावानुवाद हैं। अग्रेजी में कथात्मक गीतो के लिए 'बैलेड' नाम प्रयुक्त होता है। 'कथागीत' अथवा 'गीतकथा' शब्द प्रयासपूर्वक निर्मित प्रतीत होते हैं तथा इनमें लोक-भावना का भी समावेश नही होता है।

डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने अपने प्रबन्ध (थीसिस) 'भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन' में भोजपुरी के कथात्मक गीतो पर विचार करते हुए इन गीतो को 'लोकगाथा'"[१] नाम से अभिहित किया है। यह नाम वास्तव में सार्थक प्रतीत होता है। प्रथम, यह अनुवाद से परे है, द्वितीय, इसमें लोक-भावना का पूर्ण समावेश है और तृतीय 'लोकगाथा' शब्द भारतीय जीवन और परपरा के निकट पडता है। 'गाथा' शब्द का प्रचार उत्तरी भारत में बहुत होता है। इसमें कथात्मकता एव गेयता—दोनो का समावेश है, साथ ही यह प्राचीन एव परपरानुगत शब्द भी है। सस्कृत के 'अमर कोष' के अनुसार 'गाथा' शब्द का अर्थ है 'पितरगण, परलोक और ऐसे ही अन्यान्य विषयो से सम्बद्ध अनुश्रुतियो पर आधारित पद्य या गीत,[२]। विष्णु- पुराण[३] में भी 'गाथा' शब्द का उल्लेख है, जिससे उपर्युक्त अर्थ स्पष्ट होता है। 'गाथा सप्तशती' तथा 'गाथा नाराशंसी' से भी उपर्युक्त अर्थ की ही पुष्टि होती है।

भोजपुरी लोक जीवन में 'गाथा' शब्द समरस हो गया है। कभी-कभी व्यग में स्त्री के रुदन को भी 'गाथा' कह दिया जाता है। उदाहरण के लिए, 'का रोरो आपन गाथा सुनावतारू'। वैसे भी स्वाभाविक रूप में 'गाथा' शब्द का प्रयोग होता है। यदि कोई व्यक्ति आप बीती घटना सुनाता है तो उसे 'गाथा गाना' कहते हैं, जैसे 'बइठि के आपन गाथा सुनावतारे।'

यहाँ पर एक तथ्य का उल्लेख कर देना आवश्यक है कि भोजपुरी प्रदेश मे भी मराठी के 'पवाडा' शब्द के समान भोजपुरी—'पवारा' शब्द का प्रचलन हैं। परन्तु यह शब्द पवरिया नामक विशेष जाति से सम्बन्ध रखती है। पवरिया लोग 'भाड' अथवा 'जनखो' की जाति के अन्तर्गत आते हैं। पुत्र-जन्म

१—डा० कृष्णदेव उपाध्याय 'भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन', पृ०, ४९२

२—अमरकोप

३—विष्णु-पुराण, अश ३, अक ६.

तथा विवाह के अवसर पर अपने यजमान के यहाँ पहुँचकर पवारा गाते हैं। ये लोग सोहर, झूमर तथा राजा पुरुषोत्तम के गीत गाते हैं। गीत गाते समय ये नाचते हैं तथा तुरही (एक सारगी विशेष), ढोलक और घटी भी बजाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भोजपुरी 'पवारा' शब्द एक विशेप जाति से ही सम्बन्ध रखता है। 'पंवारा' शब्द की व्युत्पत्ति अभी तक संदिग्ध है। भोजपुरी के कथात्मक एव लोकप्रिय गीतो के लिए 'पवारा' शब्द का उल्लेख नही मिलता। वस्तुत: यह एक विशेप जाति-सम्बन्धी शब्द है।

नामकरण की समस्या पर विचार करते हुए हमें अग्रेजी की तत्सबधी सामग्री पर भी विचार करना है। लोक-साहित्य के अध्ययन में भारतीय विद्वानो ने अग्रेजी के लोक-साहित्य का विशेप आश्रय लिया है। अग्रेजी साहित्य के विद्वानो ने गत शताब्दी में ही इस विपय पर विचार करना आरभ कर दिया था। उन लोगो द्वारा निरूपित लोक-साहित्य सबंधी सिद्धान्तो में पर्याप्त व्यापकता है।

अग्रेजी में कथात्मक गीतो को 'बैलेड' कहते हैं। 'बैलेड' शब्द लैटिन भापा के 'बेलारे' शब्द से निकला है[1]। 'बेलारे' का अर्थ है नृत्य करना। स्पष्ट ही प्रारंभ में नृत्य के सहयोग से गाए जाने वाले गीत को ही 'बैलेड' कहा जाता था। परतु कालान्तर मे नर्त्तन वाला अग गौण और न्यून होता गया और मध्ययुग में तो इसका पूर्ण वहिष्कार हो गया। अब केवल कथात्मक गीतो को ही 'बैलेड' कहा जाने लगा। आगे चलकर अग्रेजी साहित्यकार 'बैलेडो' की ओर इतने आकृष्ट हुए कि महाकवि स्कॉट, रैले, वर्ड्सवर्थ, कोलरिज तथा स्विनवर्न इत्यादि कवियो ने प्रचलित 'बैलेडो' के आधार पर अनेक रचनाए की।

अन्य पाश्चात्य देशो में भी 'बैलेड' के उपर्युक्त अर्थ को ही लेकर वहाँ की भापा के अनुरूप नाम दिया गया है[2]। फ्रास में 'बैलेड' नाम ही प्रयुक्त होता है। वैसे वहाँ के बैलेडो और लोकप्रिय गीतो को 'चांनास पापुलेरी' के सामान्य नाम से भी पुकारा जाता है। जर्मनी में बैलेड को 'व्होक स्लाइडर' कहा जाता है, परन्तु वहाँ भी 'बैलेट' नाम प्रचलित है। डेनमार्क में बैलेड को 'फोकेवाइजर' तथा स्पेन में 'रोमैनकेरो कहा जाता है।

ऊपर की अन्वीक्षा से स्पष्ट है कि 'लोकगाथा' एवं 'बैलेड' शब्द समानार्थक है। अत. आगे 'बैलेड' के लिये 'लोकगाथा' शब्द प्रयुक्त होगा।

१—फैंक सिजविक—'ओल्ड बलेड्स', पृ० १

२—इन्साइक्लोपीडिया अमेरिकाना—वाल० ३—बैलेड—समीपोर्ट—पृ० ९८

लोकगाथा की परिभाषा—वैसे तो विभिन्न विद्वानो ने अपने-अपने ढग से ही लोकगाथा की परिभाषा की है, किन्तु उनमें कुछ सामान्य तत्त्व भिन्न शब्दावलियो में स्पष्ट परिलक्षित होते है। इन सामान्य तत्त्वो के निर्धारण के लिए यहाँ कुछ प्रमुख विद्वानो की परिभाषाओ का उद्धरण और विश्लेषण आवश्यक है।

श्री जी० एल० किटरेज के अनुसार लोकगाथा कथात्मक गीत अथवा गीतकथा है[१]। इस मत में लोक गाथा के दो तत्वो—गीत और कथा या दो लक्षणो—गीतात्मकता और कथात्मकता का स्पष्ट निर्देश है। श्री फैंक सिजविक ने लोकगाथा को वह सरल वर्णनात्मक गीत माना है जो लोकमात्र की सपत्ति होती है और जिसका प्रसार मौखिक रूप से होता है[२]। सिजविक के मत में लोकगाथाओ की सरल निरलकारिता, कथात्मकता, गीतात्मकता, तथा व्यक्ति-भावना का अभाव और मौखिकता की ओर निर्देश किया गया है। वस्तुत ये लोकगाथाओ की अनिवार्य विशेषताए है, जिनपर आगे विचार किया जाएगा। प्रो० एफ० बी० गुमेर का कथन है 'लोकगाथा गाने के लिए रची गई एक ऐसी कविता है, जो सामग्री की दृष्टि से सर्वथा व्यक्तिशून्य हो और सभवत उद्भव की दृष्टि से सामुदायिक नृत्यो से सबद्ध हो किन्तु जिसमें मौखिक परपरा प्रधान हो गई हो। । इसके गाने वाले साहित्यिक प्रभावो से मुक्त होते हैं[३]।' इस परिभाषा के प्रमुख तत्व सिजविक के मत में निहित है।

---

१ जी० एल० किटरेज—एफ० जे० चाइल्ड कृत–इगलिश ऐंड स्काटिश पापुलर बैलेड्स की भूमिका, पृ० ११
"ए बैलेड इज ए साग दैट टेल्स ए स्टोरी—टुटेक दी अदर प्वाइन्ट आफ व्यू—
ए स्टोरी टोल्ड इन साग।"

२ फ्रैंक सिजविक—ओल्ड बैलेड्स—भूमिका भाग, पृ० ३
"सिम्पुल नैरेटिव साग्स दैट बिलाग टु दी पीपुल ऐंड आर हैन्डेड आन बाई वर्ड आफ माउथ।"

३ एफ० बी० गुमेर—ए हैन्ड बुक आफ लिटरेचर—बैलेड—पृ० ३७
"ए पोएम मेन्ट फार सिंगिग, क्वाइट इम्पर्सनल इन मैटीरियल, प्राबेब्ली कनेक्टेड इन इट्स ओरिजिन विथ दी कम्यूनल डान्स, बट सबमिटेड टु ए प्रोसेस आफ ओरल ट्रडिशन एमन्ग पीपुल हू आर फ्री फ्राम लिटररी इन्फ्लूएन्सेस ऐंड फेयरली मोनोगेनस इन कैरेक्टर—"

इसमें लोकगाथाओं की उत्पत्ति और उसके ऐतिहासिक विकास के विषय में भी एक तथ्य निहित है। प्रारम्भ में नृत्य की अनिवार्य महत्ता रहती है और तदनन्तर मौखिक परपरा का जन्म होता है। डा० मरे के अनुसार लोकगाथा छोटे पदो में रचित एक ऐसी प्राणमयी सरल कविता है जिसमे कोई लोकप्रिय कथा बहुत ही विशद रीति से कही गई हो[1]।

इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका में लोकगाथा को ऐसी पद्यशैली बताया गया है जिसका रचयिता अज्ञात हो, जिसमें साधारण उपाख्यान का वर्णन हो और जो सरल मौखिक परपरा के लिए उपयुक्त तथा ललित कला की सूक्ष्मताओं से रहित हो[2]। इस परिभाषा मे रचयिता का अज्ञात होना व्यक्ति-भावना की शून्यता का द्योतक है। 'इन्साइक्लोपीडिया अमेरिकाना' में लूसी पौंड के अनुसार लोकगाथा एक साधारण कथात्मक गीत है जिसकी उत्पत्ति सदिग्ध होती है[3]।

इसी प्रकार अन्य अनेक विद्वानो ने लोकगाथा की परिभाषाएँ प्रस्तुत की हैं। सभी ने उपर्युक्त परिभाषाओं को अपनी भाषा में दुहराया है। हैजलिट ने लोकगाथा को गीतकथा बताया है। सिजविक ने पुन इसे एक अमूर्त पदार्थ कहा है। हेन्डर्सन, मार्टिनेन्गो तथा लूसी पौंड आदि विद्वानो ने उपयुक्त मतों का ही प्रतिपादन किया है।

उपर्युक्त परिभाषाओं पर विचार करने मे हमें यह ज्ञात होता है कि सभी विद्वानो ने एक ही तथ्य को अनेक ढगो मे रखा है। किसी ने एक

---

१ डा० मरे—रावर्ट ग्रेव्स कृत—दि इगलिश बैलेड, की भूमिका में पृ० ८
"ए सिम्पुल स्पिरिटेड पोएम इन शार्ट स्टान्ज़ास इन व्हिच सम पापुलर स्टोरी इज ग्रेफिकली टोल्ड।"

२ इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका—बैलेड—पृ० ९९३
'दि नेम गिवेन टु ए स्टाइल आफ वर्स आफ अन्नोन आथरशिप डीलिंग विथ एपिसोड आर सिम्पुल मोटिव रैदर दैन सस्टेन्ड थीम रिटेन इन ए स्टैन्जाइक फार्म मोर आर लेस फिक्स्ड ऐंड सुटेबुल फार दी ओरल ट्रासमिशन ऐंड ट्रीटमेंट गोइग लिटिल आर नथिंग आफ फाइननेस आफ डेलिबरेट आर्ट"।

३ इनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना—वाल ३—बैलेड—९४
"ए बैलेड इज ए सिम्पुल नैरेटिव लिरिक, ए साग आफ नोन आर अननोन ओरिजिन दैट टेल्स ए स्टोरी"

दूसरे के प्रति मतभेद नही प्रगट किया है। अतएव लोकगाथा की परिभाषाओ का यह निष्कर्ष निकलता है कि लोकगाथाओ में गेयता एव कथानक का रहना अनिवार्य है । साथ ही इनके रचयिता अज्ञात होते हैं अथवा यो कहा जाय कि लोकगाथाए व्यक्तित्वहीन होती है। ये सपूर्ण समाज की धरोहर होती है तथा इनका प्रचार जनसाधारण से होता है। इनमें काव्यकला के गुण और सौन्दर्य का नितान्त अभाव रहता है।

लोकगाथा की उत्पत्ति—लोकगाथा की उत्पत्ति के विषय में अनेक विद्वानो ने अपने-अपने अनुमान प्रस्तुत किए हैं, परतु किसी ने प्रामाणिक खोज नही उपस्थित किया है। सभी ने कल्पना और अनुमान से काम लिया है। वास्तव में लोकगाथाओ की उत्पत्ति, एक अत्यन्त जटिल विषय है। कठिनाई का सबसे प्रथम और प्रमुख कारण यह है कि लोकगाथाओ की कही भी हस्तलिखित प्रति नही मिलती। यह अनुमान है कि मानव-सभ्यता के विकास के साथ-साथ नृत्यो, गीतो एव गाथाओ का विकास हुआ होगा। उस समय लेखनकला का विकास नही हुआ था, अतएव हमें मौखिक परपरा का ही इतिहास प्राप्त होता है। मौखिक परपरा के द्वारा ही लोकगाथाओ ने लोकमत की अभिव्यजना की है। मौखिक परपरा के कारण ही लोकगाथाए एक रहस्यात्मक वस्तु बन गई है। महाकवि गेटे ने एक स्थान पर लिखा है, "जातीय गीतो एव लोकगाथाओं की विशेष महत्ता यह है कि उन्हें सीधे प्रकृति से नव्यप्रेरणा प्राप्त होती है। वे उन्मेषित नही की जाती वरन् स्वत. एक रहस-स्रोत से प्रवाहित होती हैं।"[१] 'इन्साइक्लोपीडिया अमेरिकाना' में लूसी पौंड नें इसे लोकहृदय से रहस्यात्मक रीति से प्र वहमान बताया है।[२]

लोकगाथा के उद्भव के ऐतिहासिक अध्ययन में जो दूसरी कठिनाई है, उसका एक मनोवैज्ञानिक कारण है। समाज का उच्चस्तर सामान्य लोकहृदय की निश्छल और निरलकार अभिव्यजना को सदा से असस्कृत, कलात्मकता से

---

१ गेटे—"दी स्पेशल वैल्यू आफ व्हाट वी काल नेशनल साङ्ग ऐंड बैलेड्स इज दैट देयर इन्सपिरेशन कम्स फ्रेश फ्राम नेचर, दे आर नेवर गाट अप, दे फ्लो फ्राम ए रेअर स्प्रिंग" झवेरचन्द मेघाणी—लोक साहित्यनु समालोचन ।

२ इसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना-बैलेड—स्प्रिंगिंग मिस्टीरियसली फ्राम दी हार्ट आफ दी पीपुल्"—पृ० ९४

च्युत तथा गवार मानता था। इस विकृत आदर्शवाद के फलस्वरूप शताब्दियो से मौखिक परपरा में रक्षित लोकगाथाओ की ओर हमारी दृष्टि नही गई । भारतवर्ष में परिस्थिति कुछ दूसरी थी । हमारी धारणा है कि भारतीय साहित्यकार एव मनीषी लोकहृदय को तो भली-भाँति समझते थे, परतु वे देववाणी सस्कृत अथवा राजभाषा को ही उत्तरोत्तर परिष्कृत एव परिमार्जित करने में इतने अधिक व्यस्त थे कि उन्हें दूसरी ओर दृष्टि फेरने का समय ही न मिला । पाश्चात्य देशो में अवश्य ही इसकी उपेक्षा हुई है । एक फ्रेंच विद्वान् का कथन है कि मौखिक साहित्य आधुनिक पाण्डित्य और शिक्षा का मित्र नही होता है । जब एक राष्ट्र में शिक्षा का प्रसार होने लगता है तो वह अपने मौखिक साहित्य का अनादर करने लगता है । अपने मौखिक साहित्य को अपनाने में लोग लज्जा का अनुभव करते हैं और इस प्रकार प्रगतिवान सस्कृति आश्चर्यजनक ढग से मौखिक साहित्य को नष्ट कर डालती है।[1] प्रो० गुमेर ने भी लिखा है कि प्रथमत: लोकगाथाओ को 'बौद्धिकता से बहिष्कृत (इटेलेक्चुअल आउट-कास्ट्स)' समझा जाता था ।[2]

ऐसी परिस्थिति में लोकगाथाओ की उत्पत्ति के विषय मे विचार करना वास्तव में जटिल समस्या है । कि बहुना, यहाँ हम प्रथमत यूरोपीय विद्वानो के मतो की परीक्षा करेंगे ।

यूरप में लोकगाथाओ की उत्पत्ति के विषय में दो प्रधान मत हैं । प्रथम, वे विद्वान जो समस्त लोक (फोक) को ही लोकगाथाओ का रचयिता मानते है । इस मत के अगुआ जैकब ग्रिम है । द्वितीय, वे विद्वान् जो इस मत का प्रतिपादन करते हैं कि जिस प्रकार किसी कविता का रचयिता कवि होता है, उसी प्रकार लोकगाथा का रचयिता भी एक ही व्यक्ति है, परतु ये विद्वान् भी व्यक्ति की व्यक्तित्व हीनता एव लोकगाथाओ पर सम्पूर्ण समाज के अधिकार को स्वीकार करते है । इस मत के मानने वालो में प्रमुख श्लेगल, चाइल्ड, किटरेज तथा विशपपर्सी इत्यादि विद्वान् है । आधुनिक समय में द्वितीय मत ही सर्वमान्य हो चला है । परन्तु विस्तृत विवेचन के लिए हमें उपर्युक्त दो प्रधान मतो को और भी सूक्ष्म-दृष्टि से देखना पडेगा । इस दृष्टि से हमारे सम्मुख छ प्रधान मत उपस्थित होते हैं ।

---

१ एफ० जे० चाइल्ड— इ० ऐंड० स्का० पा० बै० भूमिका, भाग पृ० १२

२. एफ० बी० गुमेर—ओल्ड इगलिश बैलेड्स, भूमिका, भाग पृ० ३६

१—जे० ग्रिम—लोक निर्मितवाद

२—एफ० बी० गुमेर—समुदायवाद

३—स्तेन्थल—जातिवाद

४—एफ० जे० चाइल्ड—व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद

५—विशप पर्सी—चारणवाद

६—ए० डब्ल्यू० श्लेगल—व्यक्तिवाद

१—ग्रिम महोदय एक प्रसिद्ध जर्मन भाषा शास्त्री थे। लोकगाथाओ की उत्पत्ति के विषय में अपना मत प्रगट करते हुए उन्होने कहा है कि 'किसी भी देश के समस्त निवासी (फोक) ही लोकगाथाओ की सामूहिक रचना करते है।[1] उनका विचार है कि लोकगाथा लोक-जीवन की अभिव्यक्ति हैं। आदिम अवस्था से ही प्रत्येक व्यक्ति सामूहिक रूप से नृत्य, सगीत, गीतो एव लोकगाथाओ की रचना में लगे हुए है। जैसे किसी व्यक्ति-विशेष के हृदय में हर्ष-विषाद, सुख-दुख की भावना जागृत होती है, उसी प्रकार किसी समूह के लोग भी समष्टि रूप में इसी भावना का अनुभव करते है। उत्सवो, मेलो तथा अन्य सामाजिक अवसरो पर एकत्र होकर लोगो ने लोकगाथाओ की रचना की होगी। ग्रिम का आशय यह है कि सामूहिक आनन्द के उच्छ्वास में किसी आनन्ददायी विगत घटना अथवा विजय इत्यादि का वर्णन प्रस्फुटित हो उठता है। धीरे-धीरे उक्त वर्णन एक वृहत् लोकगाथा के रूप में निर्मित हो जाता है। इसीलिये ग्रिम ने बारबार कहा है कि लोक (फोक) ही लोकगाथाओ का रचयिता है।[2]

ग्रिम के सिद्धान्त की आलोचना का सबसे प्रमुख तर्क यह है कि लोकगाथाओ की रचना के लिये जब समूह एकत्र हुआ तो उस समय गाथा की पक्ति किसने प्रारम्भ की? इस प्रथम भावना का उद्भव किस प्रकार हुआ? कौन वह व्यक्ति था जो अगुआ बना? इस प्रश्न का ग्रिम के पास कोई उत्तर नही है। कालान्तर में ग्रिम के इस 'लोक निर्मितवाद' को अनेक विद्वानो ने हास्यास्पद कहा[3]। ग्रिम के सिद्धान्त की चाहे जितनी भी

१—एफ० जे० चाइल्ड—इगलिश ऐण्ड स्काटिश पापुलर बैलेड्स, पृ० १८
'डास वोक डाचटेट'

२—इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका—बैलेड—पृ० ६६४
"फोक इज इट्स आथर"

३—श्री जी० एल० किटरेज—इगलिश एण्ड स्काटिश पापुलर बैलेड्स की भूमिका, पृ० १८

कडी आलोचना हुई हो, परन्तु एक वात निश्चित है कि ग्रिम ही वह प्रथम व्यक्ति था जिसने लोक (फोक) के महत्व को स्वीकार किया। यहाँ तक कि उसने लोक को ही लोकगाथाओं का रचयिता मान लिया। उसका सबसे वडा कारण यही था कि लोकगाथायें कभी भी किसी व्यक्ति की सपत्ति नही रही। अतएव लोक को महत्व देना स्वाभाविक ही था।

(२) श्री एफ० वी० गुमेर का समुदायवाद (कम्यूनल) का सिद्धान्त वहुत सीमातक ग्रिम के सिद्धान्त के अन्तर्गत ही आता है। अन्तर केवल यही है कि ग्रिम ने अत्यन्त व्यापक दृष्टिकोण रखकर लोकगाथाओं की उत्पत्ति पर विचार किया था, परन्तु गुमेर ने एक सकुचित वृत्त में ग्रिम के सिद्धान्त को मान्यता दी है। गुमेर को लोक (फोक) शब्द वहुत वडा प्रतीत हुआ।[1] उन्होंने 'लोक' से सकुचित होकर एक विशिष्ट समुदाय को ही अपना केन्द्र माना। साथ ही गुमेर ने व्यक्ति के महत्व को भी उसी सीमा तक स्वीकार किया, जहाँ तक उसे कटु आलोचना की आँच न लग सके। वे यह स्वीकार करते हैं कि समुदाय में एकत्र प्रत्येक व्यक्ति ने लोकगाथा की रचना में सहयोग दिया है; परन्तु वह लोकगाथा व्यक्ति की सपत्ति नही रह गयी, अपितु सम्पूर्ण समुदाय की सपत्ति वन गई।

गुमेर का आशय है कि एक विशिष्ट समुदाय के लोग एक भावना से प्रेरित हो कर जव एकत्र होते हैं, उसी समय लोकगाथाओं की रचना प्रारम्भ होती हैं। उनके एकत्र होने के कारण अनेक हो सकते हैं।[2] सामुदायिक स्वार्थ की प्रेरणा से या किसी विजय या विशेष घटना आदि के उपलक्ष में एकत्र होकर समुदाय के सभी व्यक्ति नृत्य-गान में भाग लेते है और प्रासगिक घटनाओं को गा-गाकर वर्णन करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग से लोकगाथा का निर्माण होता हैं।

हमारे देश में भी इसी प्रकार गीतों एव गाथाओं का निर्माण होता है। विशेष रूप से कजली इत्यादि के गीत तो इसी प्रकार वनते है। वर्षा ऋतु से उन्मत्त रसिकों का दल आ जमता है। एक व्यक्ति अथवा एक दल गीत की एक कडी कहता है तो दूसरा उसके उत्तर में दूसरी कडी जोड देता है। इन

१—वही, पृ० ६८।

२—इ० एण्ड स्का० पा० वैलेड्स—भूमिका, पृ० १६।
एफ० वी० गूमेर तथा 'ओल्ड इगलिश वैलेड्स' पृ० ३५।
इ० ब्रि० वैलेड्स, पृ० ६६।

१—जे० ग्रिम—लोक निर्मितवाद

२—एफ० बी० गुमेर—समुदायवाद

३—स्तेन्थल—जातिवाद

४—एफ० जे० चाइल्ड—व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद

५—विशप पर्सी—चारणवाद

६—ए० डब्लू० श्लेगल—व्यक्तिवाद

१—ग्रिम महोदय एक प्रसिद्ध जर्मन भाषा शास्त्री थे। लोकगाथाओ की उत्पत्ति के विषय में अपना मत प्रगट करते हुए उन्होने कहा है कि 'किसी भी देश के समस्त निवासी (फोक) ही लोकगाथाओ की सामूहिक रचना करते हैं।[1] उनका विचार है कि लोकगाथा लोक-जीवन की अभिव्यक्ति हैं। आदिम अवस्था से ही प्रत्येक व्यक्ति सामूहिक रूप से नृत्य, सगीत, गीतो एव लोकगाथाओ की रचना में लगे हुए हैं। जैसे किसी व्यक्ति-विशेष के हृदय में हर्ष-विषाद, सुख-दुख की भावना जागृत होती है, उसी प्रकार किसी समूह के लोग भी समष्टि रूप में इसी भावना का अनुभव करते हैं। उत्सवो, मेलो तथा अन्य सामाजिक अवसरो पर एकत्र होकर लोगो ने लोकगाथाओ की रचना की होगी। ग्रिम का आशय यह है कि सामूहिक आनन्द के उच्छ्वास में किसी आनन्ददायी विगत घटना अथवा विजय इत्यादि का वर्णन प्रस्फुटित हो उठता है। धीरे-धीरे उक्त वर्णन एक वृहत् लोकगाथा के रूप में निर्मित हो जाता है। इसीलिये ग्रिम ने बारबार कहा है कि लोक (फोक) ही लोकगाथाओं का रचयिता है।[2]

ग्रिम के सिद्धान्त की आलोचना का सबसे प्रमुख तर्क यह है कि लोकगाथाओ की रचना के लिये जब समूह एकत्र हुआ तो उस समय गाथा की पक्ति किसने प्रारम्भ की? इस प्रथम भावना का उद्भव किस प्रकार हुआ? कौन वह व्यक्ति था जो अगुआ बना? इस प्रश्न का ग्रिम के पास कोई उत्तर नही है। कालान्तर में ग्रिम के इस 'लोक निर्मितवाद' को अनेक विद्वानो ने हास्यास्पद कहा[3]। ग्रिम के सिद्धान्त की चाहे जितनी भी

१—एफ० जे० चाइल्ड—इगलिश ऐण्ड स्काटिश पापुलर बैलेड्स, पृ० १८
'डास वोक डाचटेट'

२—इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका—बैलेड—पृ० ९९४
"फोक इज इट्स आथर"

३—श्री जी० एल० किटरेज—इगलिश एण्ड स्काटिश पापुलर बैलेड्स की भूमिका, पृ० १८

कडी आलोचना हुई हो, परन्तु एक बात निश्चित है कि ग्रिम ही वह प्रथम व्यक्ति था जिसने लोक (फोक) के महत्व को स्वीकार किया। यहाँ तक कि उसने लोक को ही लोकगाथाओ का रचयिता मान लिया। उसका सबसे बडा कारण यही था कि लोकगाथायें कभी भी किसी व्यक्ति की सपत्ति नही रही। अतएव लोक को महत्व देना स्वाभाविक ही था।

(२) श्री एफ० बी० गुमेर का समुदायवाद (कम्यूनल) का सिद्धान्त बहुत सीमातक ग्रिम के सिद्धान्त के अन्तर्गत ही आता है। अन्तर केवल यही है कि ग्रिम ने अत्यन्त व्यापक दृष्टिकोण रखकर लोकगाथाओ की उत्पत्ति पर विचार किया था, परन्तु गुमेर ने एक सकुचित वृत्त में ग्रिम के सिद्धान्त को मान्यता दी है। गुमेर को लोक (फोक) शब्द बहुत बडा प्रतीत हुआ।[१] उन्होंने 'लोक' से सकुचित होकर एक विशिष्ट समुदाय को ही अपना केन्द्र माना। साथ ही गुमेर ने व्यक्ति के महत्व को भी उसी सीमा तक स्वीकार किया, जहाँ तक उसे कटु आलोचना की आँच न लग सके। वे यह स्वीकार करते हैं कि समुदाय में एकत्र प्रत्येक व्यक्ति ने लोकगाथा की रचना में सहयोग दिया है, परन्तु वह लोकगाथा व्यक्ति की सपत्ति नही रह गयी, अपितु सम्पूर्ण समुदाय की सपत्ति बन गई।

गुमेर का आशय है कि एक विशिष्ट समुदाय के लोग एक भावना से प्रेरित हो कर जब एकत्र होते हैं, उसी समय लोकगाथाओ की रचना प्रारम्भ होती है। उनके एकत्र होने के कारण अनेक हो सकते हैं।[२] सामुदायिक स्वार्थ की प्रेरणा से या किसी विजय या विशेष घटना आदि के उपलक्ष में एकत्र होकर समुदाय के सभी व्यक्ति नृत्य-गान में भाग लेते हैं और प्रासगिक घटनाओ को गा-गाकर वर्णन करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग से लोकगाथा का निर्माण होता है।

हमारे देश में भी इसी प्रकार गीतो एव गाथाओ का निर्माण होता है। विशेष रूप से कजली इत्यादि के गीत तो इसी प्रकार बनते है। वर्षा ऋतु मे उन्मत्त रसिको का दल आ जमता है। एक व्यक्ति अथवा एक दल गीत की एक कडी कहता है तो दूसरा उसके उत्तर में दूसरी कडी जोड देता है। इस

१—वही, पृ० ६८।

२—इं० एण्ड स्का० पा० बैलेड्स—भूमिका, पृ० १६।

एफ० बी० गुमेर तथा 'ओल्ड इंगलिश बैलेड्स' पृ० ३५।

इं० ब्रि० बैलेड्स, पृ० ६६।

प्रकार यह क्रम घटों चलता रहता है और अन्त में एक गीत अथवा गाथा का निर्माण हो जाता है।

(३) ग्रिम तथा गुमेर से ही मिलता-जुलता स्तेन्थल का 'जातिवाद' का सिद्धान्त है। अपने सिद्धान्त के प्रतिपादन में स्तेन्थल ग्रिम तथा गुमर से भी आगे बढ गये हैं। वे दृढता से कहते है कि किसी भी देश की समस्त जाति (रेस) ही लोकगाथाओ की रचना करती है।[1] उनके विचार से लोकगाथाए किसी जाति की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति की द्योतक है। स्तेन्थल का कथन है कि लोक का निर्माण केवल समान कुल अथवा समान भाषा पर ही आधारित नही है, अपितु समस्त जाति के व्यक्तियो में पारस्परिक एकात्मकता की अत प्रवृत्ति जागृत होने पर समस्त जाति प्रथम भाषा में और फिर कला में तथा अन्त में धार्मिक रीति-रिवाजो में अपना साक्षात्कार करती है। उनके विचार से 'व्यक्ति' तो उन्नत सस्कृति एव सभ्यता की एक निश्चित इकाई है, परन्तु प्रारभ में व्यक्ति का कुछ भी मूल्य न था। समस्त जाति ही प्रधान थी। अतएव लोकगीतो एव लोकगाथाओ की उत्पत्ति एक जाति के मिश्रित प्रयास के परिणाम से ही होता है।[2]

स्तेन्थल के जातिवाद के सिद्धान्त में ग्रिम एव गुमेर के सिद्धान्तो की भाति सत्य की मात्रा अवश्य है, परन्तु यह मत किसी छोटे द्वीप अथवा देश के ऊपर ही लागू हो सकता है। अनेक देशो में बहुत-सी जातियाँ है जिनके सपूर्ण सदस्य एकत्र होकर उत्सव आदि मनाते हैं। ऐसे अवसरो पर वे गीतो एव गाथाओ की रचना करते हैं। किन्तु किसी विशाल देश अथवा महाद्वीप के लिए यह सिद्धान्त छोटा पडता है तथा सत्य से दूर चला जाता है।

व्यापक दृष्टि से देखने पर उपर्युक्त तीनो मत एक ही श्रेणी में आते हैं। वस्तुत: तीनो मत एक दूसरे के पूरक हैं। इनके अतिरिक्त अन्य विद्वानों ने व्यक्ति की महत्ता को ध्यान में रखकर लोकगाथाओ की उत्पत्ति के विषय में विचार किया है।

(४) लोकगाथाओ के प्रसिद्ध आचार्य श्री एफ० जे० चाइल्ड ने अनवरत परिश्रम से इग्लैड तथा स्काटलैंड की लोकगाथाओ को एकत्र करके उनकी उत्पत्ति के विषय में अपना मत प्रस्तुत किया है। उस मत के प्रतिपादन में उनका कथन है कि लोकगाथाओ में उसके रचयिता के व्यक्तित्व का सर्वथा

---

१ एफ० बी० गुमेर—ओल्ड इंगलिश बैलेड्स भूमिका, भाग, पृ० ३६।

अभाव रहता है। उसकी रचना में उसकी वाणी अवश्य मिलती है, परन्तु उसका व्यक्ति उसमें बिल्कुल नही रहता। वह एक वाणी है, व्यक्ति नही।[1] गाथा का प्रथम गायक लोकगाथा की सृष्टि कर जनता के हाथो मे इन्हें समर्पित कर स्वय अन्तर्हित हो जाता है। मौखिक परपरा के कारण उसकी वाणी में अन्य व्यक्तियो एव समूहो की वाणी भी मिश्रित होती जाती है। यहां तक कि प्रथम रचना का रग रूप ही बदल जाता है। उसमें नये अश जोड दिये जाते है तथा पुराने छोड़ भी दिये जाते हैं।[2] घटनाओ में भी परिवर्तन कर दिया जाता है। इस प्रकार वह रचना व्यक्ति की न होकर सम्पूर्ण समाज की हो जाती है। परन्तु इसके साथ ही हम यह कदापि नही कह सकते कि लोकगाथा की रचना सम्पूर्ण समाज ने की है। इसलिये चाइल्ड के इस मत को हम 'व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद' कह सकते हैं। इस मत का अनुमोदन उनकी पुस्तक के भूमिका-लेखक श्री जी० एल० किटरेज ने भी किया है। आधुनिक समय में यह मत सर्वमान्य हो चला है।

भारतीय लोकगाथाओ पर यही मत प्रतिपादित होता है। विशेष रूप से भोजपुरी लोकगाथाओ के विषय में तो हमारी धारणा यही है कि प्रत्येक लोकगाथा का रचयिता कोई न कोई व्यक्ति अवश्य था। शताब्दियो से मौखिक परपरा में रहने के कारण उसमें अनेक परिवर्तन आ गये हैं। परन्तु आज भी हमें यही प्रतीत होता है कि इसका रचयिता कोई न कोई अवश्य रहा होगा। आज का गायक जब इन गाथाओ को सुनाता है तो उसमें उस गायक का व्यक्तित्व बोलता है क्योकि वह उसमें कुछ नवीनता उपस्थित करता है। इस प्रकार लोकगाथाओ की अक्षुण्ण धारा सदैव प्रवाहित रहती है। उसका कभी अन्त नही होता।[3]

(५) अठारहवी शताब्दी में इगलैंड में बिशप पर्सी ने चारण साहित्य के उद्धार का युगान्तरकारी कार्य किया। उन्होंने बडे परिश्रम से इगलैंड के चारण-काव्य को एकत्र कर 'फोलियो मैनुस्क्रिप्ट' नामक ग्रन्थ का सपादन किया। उनका मत है कि गीतो तथा लोकगाथाओ के रचयिता चारण लोग होते थे।[4]

---

१ एफ० जे० चाइल्ड—इ० स्का० पापु बेलेड्स—भूमिका, पृ० २४।

२ वही, पृ० १७ तथा इ० ब्रि० 'बैलेड्स' पृ० ९९४-९५।

३ चाइल्ड इ० एण्ड० स्का० पा० बै०, भूमिका, पृ० १७।

४ इ० एण्ड० स्का० पा० बै०, भूमिका, पृ० २२।

महाकवि स्कॉट तथा जोसेफ रिट्सन इत्यादि विद्वानो ने भी इसी मत को मान्यता दी है। चारण लोग प्राचीन काल में ढोल अथवा हार्प (एक विशेष प्रकार की सारगी) पर गीत गाते हुये भिक्षा की याचना करते थे। वे विगत अथवा समसामयिक घटनाओ को अपने गीत का विषय बनाते थे। ऐसे गीतो को वहाँ 'मिन्स्ट्रेल बैलेड्' कहा जाता है। भारतवर्ष में भी चारणो का काव्य मिलता है। राजा परमार्दिदेवके दरबार में जगनिक चारण ही था जिसने 'आल्हखड' की रचना की। पृथ्वीराज के दरबार में महाकवि चन्द-बरदाई चारण ही था। परन्तु भारतवर्ष में चारण अथवा भाट, भिक्षुओ की श्रेणी में नही आते थे। वे किसी न किसी राजा के आश्रय में रहा करते थे। अधिकाश रूप में उनके रचनाओ की प्राचीन प्रतिलिपि भी मिलती है। अतएव इगलैंड और भारत के चारणो में वहुत अन्तर है।

उन्नीसवी शताब्दी मे चारणो से लोकगाथाओ की उत्पत्ति के मत की तीव्र आलोचना हुई। चाइल्ड ने साधारण ग्रामीणो से अनेक लोकगाथाएँ एकत्र की और अपने व्यक्तिगत अनुभव को प्रस्तुत करते हुए इस मत का विरोध किया।[१] किटरेज तो लोकगाथा और चारण काव्य को सर्वथा भिन्न वस्तु मानते है। उनका कथन है कि लोकगाथाओ का इतिहास अति प्राचीन है और चारण काव्य एक मध्ययुगीन साहित्य है। यह अवश्य स्वीकार किया जा सकता है कि चारण लोगो ने लोकगाथाओ को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाया। इसके अतिरिक्त चारण काव्य और लोकगाथाओ में कोई भी सबध नही है।[२]

भारतवर्ष में भी चारण काव्य एव लोकगाथाओ में कोई विशेष सबध नही रहा है। लोकगाथाओ की परपरा एक सामाजिक परपरा है और चारणो की परपरा एक व्यक्तिगत परपरा है। लोकगाथा समाज की जिह्वा पर रहती है और चारण काव्य चारण के ही कठ में। केवल जगनिक का 'आल्हखड' इसका अपवाद है। स्वय जगनिक एक चारण था, परन्तु 'आल्हखड' उसकी रचना होते हुए भी आज व्यक्तित्वहीन होकर एक लोकप्रिय लोकगाथा वन गई है।

चारण-काव्य तथा लोकगाथाओ में विभिन्नता होते हुए भी सहसा यह मत हम नही निर्धारित कर सकते कि दोनो में लेशमात्र भी सबध नही था। 'रासो' काव्यो के रचयिताओ ने लोकगाथाओ से अनेक सत्य ग्रहण किए हैं। प्राचीन कवियो ने जिस प्रकार मौखिक साहित्य से कथा सामग्री, कथानक रूढि

---

१ एफ० जे० चाइल्ड—इ० ऐंड स्का० पा० वै०, भूमिका भाग, पृ० २३।
२ वही, पृ० २३ तथा एफ० वी० गुमेर—ओ० इ० वै०, पृ० ६०।

द शैली को अपनाया है, उसी प्रकार चारणो ने भी प्रचलित लोकगाथाओ
प्री ली है। इसका स्पष्टीकरण हम आगे चल कर करेंगे।

६) लोकगाथाओ की उत्पत्ति के सबंध में उन्नीसवी शताब्दी के प्रारभ के
जर्मन विद्वान् ए० डब्ल्यू० श्लेगल का 'व्यक्तिवाद' एक अत्यन्त यथार्थ-
त है। उन्होने ग्रिम के सिद्धान्त को अतिआदर्शवादी एव काल्पनिक बत-
उनका निश्चित मत है कि जिस प्रकार किसी काव्य का रचयिता कोई
ोता है, ठीक उसी प्रकार लोकगाथाओ का रचयिता कोई न कोई व्यक्ति
।[१] अपने इस मत को पुष्ट करने के लिये उन्होने एक उदाहरण भी
त किया है। किसी विशाल अट्टालिका के निर्माण में अनेक व्यक्तियो
योग रहता है, परन्तु उनमें से किसी में भी भवन निर्माण की मूल कल्पना
ा नही रहती है। वास्तव में उसके निर्माण में किसी एक कलाकार
कारीगर का ही मस्तिष्क रहता है। उसी की अत प्रेरणा से वह भवन
र तैयार होता है। इसी प्रकार लोकगाथाओ की रचना के मूल में किसी
क्ति की उद्भावना रहती है। समुदाय उस निर्माण में सहयोग देता है
चयिता प्रत्येक के सहयोग को अपनाकर लोकगाथा का गठन करता
ुर वास्तुकार की भाति हथौडी-छेंनी से अनावश्यक अग काट छांट कर
क सुन्दर रूप देता है। इस प्रकार श्लेगल लोकगाथा को लोक की सपत्ति
मानते है, परन्तु लोक की निर्मिति या रचना नही मानते।

ास्तव में श्लेगल का व्यक्तिवाद चाइल्ड के 'व्यक्तित्व हीन व्यक्तिवाद'
ग्रशपर्सी के 'चारणवाद' के सिद्धान्त का पूरक है। श्लेगल इन तीनो में
प्रभावशाली एव चरम सीमा के आलोचक है। उन्होने व्यक्ति की
को सर्वप्रमुख माना है। लोकगाथाओ की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे इनका
र्वमान्य हो चला है।

ारतीय विद्वानो का ध्यान लोकगाथा, उसकी उत्पत्ति एव विशेषताओ
ार अभी तक नही गया है। कुछ विद्वानो ने प्राचीन भारतीय महाकाव्यो
भव और विकास पर प्रकाश डालते हुए यह अवश्य कहा है कि प्रचलित
ा और लोकगाथाओ के आधार पर महाकाव्यो का निर्माण हुआ है,
स्वय लोकगाथाओ की सृष्टि कैसे हुई, इस विषय पर अधिक विचार
आ। पडित रामनरेश त्रिपाठी ने इस विषय पर थोड़ा विचार अवश्य

---

[१]—एफ० बी० गुमेर 'ओल्ड बैलेड्स' पृ० ५२ तथा ह० वि० 'बैलेड्स'
पृ० ६९४

मत्र के अर्थ में भी ऋग्वेद में पाया जाता है। कालान्तर में 'गाथा' एक छन्द भी बन गया। वैदिक युग में गाथाओ का इतना अधिक महत्व था कि 'रैभी' एव 'नाराशसी' गाथाओ की अलग ही रचना हुई। सायण भाष्य के अनुसार विवाह के अवसर पर विभिन्न वैवाहिक विधियो के समय जो गीत गाये जाते थे वे रैभी, नाराशसी गाथा के नाम से प्रसिद्ध थे।[1]

ब्राह्मण ग्रन्थ—ब्राह्मण ग्रन्थो के अनुसार गाथायें ऋक्, यजु और साम से पृथक् होती थी। इसका आशय यह है कि गाथाओ का व्यवहार मत्र के रूप में नही होता था। ऐतरेयब्राह्मण में ऋक् और गाथा मे पार्थक्य दिखलाया गया है। ऋक् दैवी होती थी तथा 'गाथा' मानुषी। अर्थात् गाथाओ की उत्पत्ति मे मनुष्य का ही उद्योग प्रधान कारण होता था।[2] अत प्राचीनकाल में किसी विशिष्ट राजा के किसी सत्कृत्य को लक्षित कर के जो गीत गाये जाते थे उन्हे 'गाथा' नाम से साहित्य का एक पृथक् अग माना जाता था। निरुक्त में दुर्गाचार्य ने गाथा का यह अर्थ स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है।[3] इस प्रकार से वैदिक सूक्तो में ऋचाओ एव गाथाओ द्वारा तत्कालीन इतिहास व्यक्त हुआ है।

वैदिक गाथाओ के उदाहरण शतपथ ब्राह्मण[4] तथा ऐतरेय ब्राह्मण में उपलब्ध होते है, जिनमें अश्वमेध-यज्ञ करने वाले राजाओ के उदात्त-चरित्र का वर्णन किया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण मे ये गाथायें कही केवल श्लोक नाम

—रैभ्यासीदनुदेयी, नाराशसी न्योचनी
सूर्याया भद्रमिद्वासो, गाथयैति परिष्कृताम्—ऋग्वेद १०।९८।६

२—ऐतरेय ब्राह्मण ७।१८

३—स पुनरितिहास, ऋग्वद्धो गाथा वद्धश्च
ऋक् प्रकार एव कश्चित् गाथेत्युच्यते।
गाथा शसति नाराशसी शसति इति
उक्त गायाना कुर्वीतिति। निरुक्त ४।६ पर दुर्गाचार्य की टीका।

४—शतपथब्राह्मण १३।५।४, १३।४।३८
विशेष उद्धरण—डा० कृष्णदेव उपाध्याय भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन पृ० १४२।

से निर्दिष्ट हैं और कहीं 'यज्ञ गाथायें' कही गई हैं। राजा जनमजय के विषय में एक उदाहरण इस प्रकार है।

आसन्दविति धान्याद रुक्मिण हरितस्त्रवजम
अश्व बवन्ध सारग देवेभ्यो जनमेजय

दुष्यन्त-पुत्र भरत के विषय में ये गाथायें कही गई हैं —

हिरण्येन परीवृतान् शुक्लान् कृष्णदत्तो मृगान्
मष्णारे भरतोऽददाच्छत बद्वानि सप्तच
अष्ट सप्तति भरतो दौष्यन्तिर्यमुनामनु
गगाया वृत्रघ्नेऽवन्नात पच पचाशतेहयान्
महाकर्म भारतस्य न पूर्व नापरे जना
दिव मर्त्य इव हस्ताभ्या नोदापु पचमानवा

✓ पुराण—पुराणो में अनेक गाथाओ का वर्णन मिलता है। सुवर्ण की गाथा तथा कद्रु एव विनता की गाथा इसके उदाहरण हैं। पुराणो में गाथा का कितना महत्त्व है, इसे स्वय व्यास ने स्पष्ट किया है—

'आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभि कल्पशुद्धिभि:
पुराण सहिता चक्रे पुराणार्थ विशारद ॥
प्रख्याते व्यास शिष्योऽभूत् सूतो वैलोमहर्षण
पुराण सहिता तस्मै ददौ व्यासो महामुनि ॥

अर्थात् पुराणो के अर्थ को भलीभाति जानने वाले सत्यवती-सुत कृष्ण द्वैपायन व्यास ने आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्प शुद्धियो द्वारा पुराण सहिता की रचना की और उसे अपने सुप्रसिद्ध शिष्य सूतकुलोत्पन्न लोमहर्षण को प्रदान किया।[२]

वास्तव में यदि 'पुराण' शब्द के अर्थ की ओर जांय तो हमें ज्ञात होगा कि प्राचीन आख्यानो, उपाख्यानो एव गाथाओ के एकत्र सकलन का नाम 'पुराण' है। 'पुराण' शब्द का सामान्यतया प्राचीनकाल की वस्तुओ अथवा कथाओ, गाथाओ से तात्पर्य है। 'पुराभवम्' अथवा 'पुरानीयते' से इस विग्रह की निष्पत्ति होती है।

१—ऐतरेय ब्राह्म ८।४

संस्कृत साहित्य के सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान् विन्टरनीज़ ने भारतीय लोक-गाथाओं की परपरा एव उत्पत्ति के विषय में सन्तोषजनक प्रकाश डाला है। उनके कथनानुसार वेद, पुराण, इतिहास, आख्यान तथा ब्राह्मण ग्रन्थो में यत्र तत्र लोकगाथाओं का इतिहास प्राप्त होता है। प्रत्येक उत्सव एव यज्ञ के प्रारभ में प्रत्येक गृह में देवगाथा, वीरगाथा, तथा अन्य कथाओं का गान एव श्रवण होता था। अश्वमेघ यज्ञ में ब्राह्मण एव चारण लोग वशीध्वनि के साथ सम्राट् एव उसके पूर्वपुरुषो का गुण-गान करते थे। चूर्णाकर्म सस्कार एव गर्भवती स्त्रियों के मगल प्रसव के लिये भी भिन्न-भिन्न कथागीत गाये जाते थे जिसे 'पुसवन' कहा जाता था।

महाकाव्य—पुराणो के अतिरिक्त महाकाव्यो में भी इस विषय से सबद्ध तथ्य उपलब्ध हैं। रामायण एव महाभारत दो ऐसे अन्यतम महाकाव्य हैं जिनमें सपूर्ण भारतीय जीवन परिलक्षित हुआ है। हमारे आपके जीवन में भी इन महाकाव्यो का प्रभाव स्पष्ट है। कुछ विद्वानो का मत है कि रामायण की रचना महर्षि वालमीकि ने उस समय राम सबन्धी प्रचलित लोकगाथाओ के आधार पर की।[1] राम का चरित्र उस समय वीर गाथा के रूप में प्रचलित था। इसी प्रकार 'महाभारत' भी प्रथमत 'जय काव्य' के रूप में मौखिक परपरा में ही सुरक्षित था। कुछ विद्वानो की धारणा है कि श्री रामचद्र के आदर्श चरित्र एव कौरव-पाडव के युद्ध के अतिरिक्त भी अन्य गाथाए समाज में प्रचलित थी। किन्तु महाकवियो ने केवल इन्ही दो गाथाओ को अपना प्रिय विषय बनाया और उसी के फलस्वरूप इन दो महाकाव्यो की रचना हुई। कालक्रम से बहुत-सी छोटीमोटी गाथाए लुप्त हो गई और अनेको को रामायण एव महाभारत ने आत्मसात् कर लिया। अनेक उपकथाओ के साथ 'रामायण' तो 'रामायण' ही रह गई, परन्तु 'जय काव्य' क्रमश 'महाभारत' के विशद् रूप में परिवर्तित हो गया।[2]

महाकाव्यो के उद्भव और विकास पर डा० शम्भूनाथ सिह ने लिखा है कि "सामूहिक गीत-नृत्य से ही काव्य, सगीत, नृत्य, रूपक--सब का विकास हुआ है और अलकृत महाकाव्य, कथा, आख्यायिका, गीति-काव्य आदि इस

---

१ विन्टरनीज़—'हिस्ट्री आफ दी इडियन लिटरेचर' वाल १, पृ० ३११।
२ विन्टरनीज—'हिस्ट्री आफ दी इडियन लिटरेचर' पृ० ३१२।
तथा
वी० के० 'सरकार—फोक एलीमेंट इन हिन्दू कल्चर', पृ० ८।

विकास क्रम की सबसे अन्तिम कड़ियां हैं।' वास्तव में यह कथन तर्क पूर्ण है। महाकाव्य के विकास और रचना में लोकगाथाओ का विशेष योग रहा है। ऊपर कहा जा चुका है कि रामायण और महाभारत की कथा पूर्व प्रचलित लोकगाथाओ से ग्रहण की गई हैं तथा अन्य लोकगाथाएँ अपनी महत्ता को लुप्त करती गई। इसके अतिरिक्त जो लोकगाथाए लुप्त न हो सकी और साथ ही उनकी ओर किसी कवि की दृष्टि नही गई, वे समय के प्रवाह को पार करती हुई, भिन्न रूप धारण करती हुई आज भी वर्तमान हैं। उनके नाम बदल गए, कथानक बदल गए परन्तु उद्देश्य नही बदला, उनका सास्कृतिक एव धार्मिक दृष्टिकोण वैसा ही बना रहा। भोजपुरी लोकगाथाओ के अध्ययन से हमें यही दृष्टि मिलती है।

लोकगाथाओं के विकास क्रम को महाकाव्य के विकास क्रम के समान समझा जा सकता है।[1]

१—सामूहिक गीत-नृत्य (कोरल म्यूजिक एड डान्स) जो वस्तुत मानव के आतरिक अवस्था की ओर निर्देश करती है।

२—आख्यानक नृत्य-गीत (बैलेड डान्स) अर्थात जिसमें आख्यान अथवा कथा का समावेश हो जाता है।

३—आख्यान और गाथा (लेज एड़ बैलेड्स)—विकास की अवस्था में लोकगाथाए दो धाराओ में बट जाती है। (क) लोकगाथा तथा (ख) चारण गाथाए।

४—गाथा चक्र (साइकिल आफ बैलेड्स)—इससे तात्पर्य यह है कि महाकाव्य अवस्था के पूर्व लोकगाथाओ का फैलाव दूर दूर तक हो जाता है। इस प्रकार उनकी कथाओ में परिवर्तन एव परिवर्द्धन होता रहता है। वह एक सतरणशील मौखिक साहित्य बन जाता है। इस क्रिया में युगो लग जाते हैं, और अन्ततोगत्वा एक ही गाथा अनेक रूप धारण कर अन्त में गाथा-चक्र के रूप में निर्मित हो जाती हैं।

विकास के इस क्रम के उपरान्त लोकगाथाओ के मूल रूप अथवा शुद्ध रूप का प्रश्न ही नहीं रह जाता। उसका कथानक और उसके पात्र में परिवर्तन हो जाता है, और वह अनेकानेक उपगाथाओ और कथाओ का सग्रह बन जाता है।

---

१ डा० शम्भूनाथ सिंह—हिन्दी महाकाव्य का उद्भव और विकास अध्याय १, पृष्ठ ४

२ वही।

विकास के इस काल में जव कोई कथानक अथवा कोई वीर अधिक महत्व प्राप्त कर लेता है तो वह किसी प्रतिभावान कवि का काव्य-विषय बन जाता है। इलियड, ओडेसी, तथा महाभारत की रचना का यही रहस्य है। यही से महाकाव्य का युग प्रारभ होता है। परन्तु जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है कि महाकाव्य की रचना के पश्चात् भी लोकगाथाओ की रचना समाप्त नही हो जाती है। महाकाव्य को एक कथानक देकर, वह पुन दूसरे कथानक के साथ विकास करने लगती है।

महाकाव्य और लोकगाथाओ के इसी परिप्रेक्ष्य में दोनो की विशेषताओ के अन्तर को स्पष्ट कर देना उपयुक्त होगा। यह पहले ही स्पष्ट किया गया है कि प्राचीन से लेकर वर्तमान तक के महाकाव्य वस्तुत लोकगाथाओ के ही आभारी है। महाकाव्य के निर्माण के पश्चात् लोकगाथाओ और महाकाव्य में निम्नलिखत अन्तर आ जाते है।

लोकगाथा एक मौखिक साहित्य है अत उसकी काव्य सामग्री सतरणशील होती है। महाकाव्य लिखित साहित्य है अत उनका रूप स्थिर होता है। लोक गाथाए आशुकवित्व तथा परिवर्तन और परिवर्द्धन की विशेषता लिए रहती है तथा महाकाव्य में लोकगाथाओ के सतरणशील काव्य सामग्री का उद्देश्यपूर्ण प्रयोग रहता है। लोकगाथाओ की रचना में व्यक्तित्व का अभाव रहता है तथा महाकाव्य में व्यक्ति की प्रधानता रहती है। लोकगाथाओ में अनलकृत एव सहज सौन्दर्य होता है तथा महाकाव्य मे अलकृत और पाडित्य प्रदर्शन होता है। लोकगाथाओ में घटनाओ का स्वाभाविक एव गतिशील वर्णन रहता है तथा महाकाव्य में घटनाए शिथिल होती हैं, उनमें सूक्ष्म भावो का विशद वर्णन रहता है। लोकगाथाओ में कल्पना का स्वाभाविक प्रयोग तथा यथार्थ जीवन का चित्रण रहता है। महाकाव्य में कल्पना का बाहुल्य और जीवन की अति-रजना रहती है।

बौद्ध साहित्य—भगवान बुद्ध से सम्बन्धित कथाओ और गाथाओ का एकत्रीकरण 'जातक' नामक पाली ग्रथ में हुआ है। इस ग्रथ में उस समय की प्रचलित लोककथाओ एव लोकगाथाओ का भी समावेश किया गया है। जिस प्रकार भोजपुरी कहानियो के बीच-बीच में गीतो का भी प्रयोग किया जाता है, उसी प्रकार जातक की कहानियो में गाथाओ का व्यवहार हुआ है।[1]

प्राकृत काल में भी लोकगाथाओ की लोकप्रियता का समुचित उदाहरण हमें प्राप्त होता है। 'गाथा सप्तशती' इसका स्पष्ट उदाहरण है। इसमें सात

१डा० कृष्णदेव उपाध्याय 'भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन' पृ० १४६।

सौ गाथाओ का संग्रह है। कहा जाता है कि उस समय राजा हाल या शालिवाहन ने प्रचलित सहस्रो लोकगाथाओ में से सात सौ लोकगाथाओ को एकत्र कर गाथासप्तशती का रूप दिया।

अपभ्रंशकाल—लोकगाथाओ की परंपरा का ज्ञान उस समय की एक प्रतिनिधि रचना, आचार्य हेमचन्द्र कृत 'काव्यानुशासन' के द्वारा कर सकते हैं। अपभ्रंश काल में लोकतत्वो और लोकजीवन से स्पर्श करता हुआ ग्रन्थ 'सन्देश रासक' है। यह एक छोटा सा प्रेमगीत है। 'काव्यानुशासन' में हेमचन्द्र ने 'रासक' को गेय रूप माना है। इसके तीन प्रकार होते हैं—कोमल, उद्धत और मिश्र। 'रासक' मिश्र गेयरूपक है। 'रासक' को उस समय की लोकगाथाओ के आधार पर निर्मित माना जा सकता है। हेमचन्द्र ने अपनी टीका में ग्राम्य अपभ्रंश के जिन गेयरूपो का उल्लेख किया है, वे हैं—डोम्बिका, हल्लीस, रासक, गोष्ठी, शिगक भाण, भाणिका, प्रेरण, रामाक्रीड इत्यादि। इनमें 'रासक' सर्वप्रिय था। यह उद्धत प्रधान गेयरूपक था, जिसमें स्थान-स्थान पर कोमल प्रयोग भी रहता था। इसमें बहुत सी नर्तकियाँ विचित्र ताल लय के साथ योग देती थी। यही 'रासक' आगे चल कर वीरगाथा काल में 'रासो' शैली को जन्म दिया। 'आल्हा' भी वस्तुत एक रासक ही है जिसका विवेचन इस प्रबंध में किया गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अपभ्रंश काल में लोकगाथाओ की परंपरा अनेक रूपो में नृत्य इत्यादि के सहयोग के साथ मिलती है।

यात्रा विवरण—इसके अतिरिक्त हमें विदेशी यात्रिको का भी वर्णन प्राप्त होता है। इनमें चीनी यात्री फाह्यान तथा हुएनसांग प्रमुख हैं।

गुप्तकाल में फाह्यान ने भारत-भ्रमण किया था। अपने वृतान्त में ये एक स्थान पर उल्लेख करते हैं कि गुप्तकाल मे नृत्य, संगीत, गीतो एव गाथाओ का बहुत प्रचलन था। ज्येष्ठ की अष्टमी के दिन फाह्यान पाटलिपुत्र में स्वय उपस्थित थे। उन्होने भगवान बुद्ध की रथयात्रा का उत्सव देखा। वे लिखते हैं कि उस समय लोग फूलो की वर्षा करते थे, दुंदुभी बजाते थे, नृत्य करते थे तथा भगवान बुद्ध की महिमा के गीत गाते थे।[२]

इसी प्रकार सम्राट् हर्षवर्धन के समय में ह्वेनसांग का आगमन हुआ था।

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य का आदि काल—पृष्ठ ५९–६०।

२—बी० के० सरकार—फोक एलीमेंट इन हिन्दू कल्चर, पृ० १२।

उसने राज्य के उत्सवो की भूरि-भूरि प्रशसा की है। भारतीयो के नृत्य एव गान उन्हें बहुत ही रुचिकर प्रतीत हुए।[1] इससे स्पष्ट है कि उस समय लोकगीतो तथा लोकगाथाओ का प्रभाव बहुत ही व्यापक था।

गायकों की परपरा—लोकगाथाओ की परपरा के साथ साथ गायको की परपरा के विषय में अनुशीलन कर लेना असगत न होगा। प्राचीन भारत में तथा अर्वाचीन भारत में गायको की परपरा का उल्लेख यत्र-तत्र मिलता है। यद्यपि लोकगाथायें सम्पूर्ण-समाज के मुख में निवास करती है तो भी ये गायक लोकप्रिय गाथाओ का प्रतिनिधित्व करते थे। ये गाथाओ को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते थे। इस प्रकार से समस्त देश मे इन्ही के कारण गाथाओ का प्रचार होता था। हमें प्राचीन भारत में छः प्रकार के गायको की परपरा प्राप्त होती है, जो कि निम्नाङ्कित है—

(१) सूत —'क्षत्रियात्ब्राह्मणीजेऽपि सूत' सारथिवन्दिनो।'[2] अर्थात क्षत्रिय से ब्राह्मणी स्त्री द्वारा उत्पन्न हुआ व्यक्ति जिसका व्यवसाय रथ-सचालन अथवा वन्दना करना होता है। एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि वैश्य से क्षत्रिय में उत्पन्न व्यक्ति वन्दना करने वाला सूत होताहै। हमें यह भली भांति विदित है कि धृतराष्ट्र को आँखो देखा युद्ध का हाल सुनाने वाला सजय सूत ही था। कृष्णद्वैपायन व्यास ने ज्ञानी एव सूत कुलोत्पन्न लोमहर्षण को पुराण का श्रवण कराया। सूत लोग बहुधा युद्धका ही वर्णन करते थे अथवा अपने योद्धा की वीरता का गान करते थे।

(२) मागध—'माग धा सूतवशजा'—ये लोग सूत वश में ही उत्पन्न होते थे, परन्तु इनका कार्य कुछ भिन्न था। ये राजा के आगे उसके वश की स्तुति करते थे। मागव लोगो को 'मधुक' भी कहा गया है, क्योकि ये लोग बडी सुमधुर भाषा में सभा का यशोगान करते थे। इन मागधों के द्वारा अनेक राजाओ के कार्य कलापो एव उनके वशक्रमो का पता चलता है।

(३) वन्दी—'बन्दिनस्त्वमलप्रज्ञा प्रस्तावसहशोक्तय ।'[3]

निर्मल वुद्धि वाले, प्रकरण के अनुकूल अनेक उक्तियाँ रचने वाले तथा

१—वही

२—अमरकोप तथा विश्वकोप

३—अमरकोप

राजाओं की स्तुति करने वाले वन्दी कहे जाते हैं। 'वन्दी' लोगों का वर्णन मध्ययुगीन साहित्य में भी मिलता है। 'राम चरित मानस' तथा रीति-साहित्य के ग्रन्थों में भी इनका उल्लेख उपलब्ध है। ये वन्दी लोग सुमधुर गीत गाने में बड़े पटु होते थे।

(४) कुशीलव—भगवान राम के दोनों पुत्र लव एवं कुश से इनकी उत्पत्ति मानी जाती है। इसका अर्थ है नाचने तथा गाथा गाने वाले। महर्षि वाल्मीकि ने राम सम्बन्धी गाथाओं को एकत्र कर रामायण की रचना की। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से परित्यक्ता सीता वाल्मीकि के आश्रम में ही थी। वहीं लव और कुश उत्पन्न हुये। वाल्मीकि ने इन्हीं पुत्रों को रामायण कठस्थ करवाया। ये दोनों बालक वीणा पर रामायण का गान करते हुए ऋषिजनों को प्रसन्न करते थे। लव और कुश तो समय आने पर अपने पिता के पास चले गये परन्तु गाथा गाने की परम्परा छोड़ गये। रामगाथा की परंपरा को अन्य लोगों ने अपना लिया। यही उनकी जीविका का साधन भी बन गया। ये लोग ही 'कुशीलव' कहलाये।

(५) वैतालिक—'वैतालिक बोधकरा'१—राजाओं को स्तुति पाठ से प्रातःकाल जगाने वालों को वैतालिक कहा जाता था। ये लोग भैरव-राग में राजा के ऐश्वर्य और उसके पूर्व पुरुषों का गान करते थे। इनकी परंपरा मध्ययुग में भी मिलती है। मुगल राजाओं के यहाँ भी इसी प्रकार प्रातःकाल जगाने वाले रखे जाते थे।

(६) चारण—'चारणास्तु कुशीलवा'२—यह एक कथक नाम के नट विशेष होते हैं। इनका चरित्र संदिग्ध होता है। संभवतः ये लोग 'कुशीलवों' की परंपरा में ही आते हैं। इनका कार्य नृत्य तथा राजा के ऐश्वर्य का गुणगान करना ही होता है। इनके वंशज आज भी मिलते हैं। मध्ययुग में तो इनका बाहुल्य था। हिन्दी साहित्य का आदि युग इन्हीं चारणों की रचनाओं का युग है और इन्हीं के आधार पर उसका नामकरण भी हुआ है। वस्तुतः मध्य युग में चारण लोग राजाओं के दाहिने हाथ के समान होते थे। इनका मंत्री से भी अधिक आदर होता था। पृथ्वीराज के दरबार का महाकवि और राजा का

१—वही

२—अमरकोष

परममित्र चन्द बरदाई चारण ही था। राजा परमर्दिदेव के दरबार का जगनिक भी चारण ही था। इनके अतिरिक्त अन्य चारणो का भी उल्लेख मिलता है। ये चारण युद्ध में भी भाग लेते थे और राजा अथवा सेनापति को प्रोत्साहित करते थे।

(७) भांट—प्राचीन सस्कृत ग्रन्थो में तो भाटो का उल्लेख नही मिलता, परन्तु मध्ययुगीन साहित्य में इनका यत्र-तत्र विवरण अवश्य मिलता है। भाटो का कार्य चारणो के समान ही है। सभवत चारणो की परपरा में ही भाट लोग आते हैं। भाट लोग हिन्दू तथा मुसलमान दोनो जाति के होते है। मैंने कई मुसलमान भाटो से ब्रजभाषा के सुन्दर कवित्त और सवैये सुने हैं। भाटलोग प्रचलित लोकगाथाओ को भी कठस्थ करके सुनाते है। इस प्रकार ये लोकगाथाओ के प्रचार के माध्यम हैं। 'आल्हा' की गाथा तो प्राय सभी भाटो को याद रहती है। आजकल भाट लोग प्रत्येक त्योहारो एव सामाजिक सस्कारो पर अपने यजमानो के यहाँ आकर स्तुतिगान करते है तथा नेग-न्यौछावर पाते है। भोजपुरी प्रदेश में ये सभ्रात कुटुम्बो के आवश्यक अग होते हैं। जिस प्रकार नाई, बारी, धोबी का प्रत्येक कुटुम्ब पर अधिकार रहता है, उसी प्रकार भाट लोग भी अपना अधिकार रखते हैं। खेतो की जब कटाई होती है तो उसमें उनका भी भाग होता है।

(८) जोगी—यें नाथ सप्रदाय के परम्परा के अनुगामी होते है। इन लोगो की अब एक विशिष्ट जाति बन गई है। ये लोग सर्वत्र भारत में फैले हुये है। ये जोगियावस्त्र धारणकर, हाथ में सारगी लेकर 'गोपीचद' एव 'भरथरी' की गाथा गाकर भिक्षा मागते हैं। इनका विशेष विवरण योगकथात्मक गाथाओ के अध्ययन में मिलेगा।

गायको की परपरा में उपर्युक्त दो नाम (सात तथा आठ) बढा दिये गये है। इन दोनो का उल्लेख प्राचीन साहित्य में नही मिलता है। मध्ययुग से ही इनका इतिहास प्राप्त होता है। बहुत से स्फुट गायक ऐसे भी मिलते हैं जो ऊपर के प्रकारो में सम्मिलित नही किए जा सकते। इनकी कोई निश्चित जाति नही। इतना निश्चित है कि समाज के निम्नश्रेणी के लोग ही लोक-गाथाओ को गाते हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ को अधिकाश रूप में, अहीर, नेटुआ, तेली, तथा बनिया लोग गाते है। निम्नश्रेणी के लोग ही क्यो गाते है, इसके विषय में जो० एफ० किटरेज लिखते है कि जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता गया वैसे-वैसे लोकगाथायें सभ्रात समाज से हटकर निम्न लोग के

अन्तर्गत आती गई, जिनमें कातने-बुनने वाले, हल चलाने वाले तथा चरवाहे प्रमुख है।[१]

लोकगाथाओ की भारतीय-परपरा पर विचार करने से स्पष्ट है कि ये हमारे देश मे प्रत्येक युग में वर्तमान थीं तथा बड़े चाव से सुनी जाती थी। प्राचीन काल में उनका आज से अधिक आदर था। राजा, सेनापति, मत्री, कवि एव ऋषि-मुनि, सभी लोकगाथाओ का श्रवण करते थे। उस समय की लोकगाथा सामाजिक चेतना एव आदर्श को प्रस्तुत करती थीं, अतएव सर्वप्रिय क्यो न होती।

लोकगाथा की विशेषताएँ

यहाँ हम लोकगाथाओ की प्रमुख विशेषताओ पर विचार करेंगे। ससार के सभी देशो की लोकगाथाओ की विशेषताएँ प्राय एक समान ही है। इसी कारण लोकगाथाओ के सभी विद्वान इस विषय पर एकमत है। भोजपुरी लोकगाथाओ में भी निम्नलिखित विशेषताएँ पूर्णरूप से पाई जाती है --

१—अज्ञात रचयिता

२—प्रामाणिक मूल पाठ का अभाव

३—सगीत का सहयोग

४—स्थानीयता

५—मौखिक परपरा

६—अलकृत शैली का अभाव

७—उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव

८—रचयिता के व्यक्तित्व का अभाव

९—टेक-पदो की पुनरावृत्ति

१०—लम्बा कथानक

११—सदिग्ध ऐतिहासिकता

राबर्ट ग्रेव्स ने अपनी पुस्तक में उपर्युक्त विशेषताओं की परिगणना की है।[२] डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने भी अपने ग्रन्थ में इन्ही विशेषताओ का उल्लेख किया है।[३] प्रो० किटरेज तथा गुमेर भी इन विशेषताओ से सहमत है।

१—चाइल्ड—इ० एण्ड स्का० पा० बैले० भूमिका, पृ० १२

२—राबर्ट ग्रेव्स—दी इंगलिश बैलेड, पृ० ७ से ३६

३—डा० कृष्णदेव उपाध्याय—भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन, पृ० ४९२ से ४१५

१—अज्ञात रचयिता

लोकगाथाओ का रचयिता व्यक्ति है अथवा समूह, इस विषय पर हम विचार कर चुके है। परन्तु इतना निश्चित है कि लोकगाथाओ का रचयिता पूर्णतया अज्ञात होता है। आज तक किसी भी लोकगाथा के रचयिता के विषय में कहीं भी उल्लेख नही मिला है। 'आल्हखंड' के रचयिता जगनिक माने जाते है, परन्तु इनके अस्तित्व के विषय में आजतक कोई सप्रमाण खोज उपस्थित नही किया जा सका है। कुछ लोगो का मत है कि 'आल्हखड' की रचना चन्द-बरदाई ने ही की थी। कुछ भी हो, आजके 'आल्हखण्ड' में रचयिता का सर्वथा लोप है। 'आल्हा' के अतिरिक्त शेष भोजपुरी लोकगाथाओ के विषय में रचयिता का कोई प्रश्न ही नही उठता है। सोरठी, लोरिकी, विजयमल, बिहुला तथा भरथरी इत्यादि लोकगाथाओ के प्रणेताओ का कही भी उल्लेख नही मिलता। वस्तुत· लोकगाथाओ के रचयिता का अज्ञात होना एक स्वाभाविक तथ्य है। प० रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा है कि लोकगीतो के रचयिता अज्ञात स्त्री-पुरुष हैं।[1] लोकगाथाओ के विषय में भी यही बात लागू होती है। राबर्ट ग्रेन्स का कथन है कि आज के युग में किसी रचयिता का अज्ञात रहना इस बात का द्योतक है कि वह स्वयं की कृति को लज्जास्पद समझता है, अत वह समाज के सम्मुख प्रकट नही होना चाहता। परन्तु आदिम समाज में लोकगाथाओ का रचयिता केवल अपनी लापरवाही से ही अज्ञात हो गया।[2] वस्तुत यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है, सभ्यता और सस्कृति के विकास के साथ-साथ समष्टि की भावना गौण होने लगती है तथा व्यक्ति क्रमश प्रधान होने लगता है। लोकगाथाएँ समस्त समाज के क्रमिक विकास को व्यक्त करती हैं। अत इनमें हम तत्कालीन सामाजिक अवस्था का अनुमान कर सकते है, किन्तु किसी व्यक्ति के विषय में कुछ भी नही कह सकते। नृशास्त्री और पुरातत्ववेत्ता, सभी इस विषय पर चुप है। इसका प्रधान कारण है कि उस समय व्यक्ति की महत्ता की प्रतिष्ठा नही हुई थी। लोकगाथाओ के अज्ञात प्रणेताओ ने एक गगा बहा दी जिसमें समाज की

१—प० रामनरेश त्रिपाठी—ग्राम गीत, पृ० २१

२—राबर्ट ग्रेन्स—दी इंगलिश वैलेड, पृ० १२

ऐनानिमिटी इन दी प्रेजेन्ट स्ट्रक्चर आफ सोसाइटी युजुअली इम्प्लाइज दैट दी आयर इज अशेम्ड आफ हिज आथरशिप ऑर अफ्रेड आफ कान्सीक्वेन्सेस इफ ही रिवील्स हिमसेल्फ, वट इन प्रिमिटिव सोसाइटी इज ड्यू जस्ट केयरलेसनेस आफ दी आथर्स नेम।"

आकाक्षाए, गुण, अवगुण उपधाराओ के समान अन्तर्निहित होते गये और क्रमश लोकगाथा की व्यापकता में समाज की आत्मा मुखरित होती गई।

२—प्रामाणिक मूलपाठ का अभाव

रचयिता जब अज्ञात हो गया तो उसकी रचना के मूलपाठ का अज्ञात हो जाना एक स्वाभाविक तथ्य है। आज तक किसी भी लोकगाथा का प्रामाणिक मूल-पाठ नही प्राप्त हो सका है। 'आल्हखण्ड' तक की भी कोई हस्तलिखित प्रति नही प्राप्त हुई है। वस्तुत. लोकगाथाओ का प्रामाणिक मूलपाठ होता ही नही है। इसे भी हम लोकगाथा का एक आवश्यक गुण कह सकते है। कैसा विचित्र विरोधाभास है! आज के युग में जिस अभाव को महादोष माना जाता है, वही लोकगाथाओ के गुण है। यहाँ हमें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि गुण-दोष के मापदण्ड युग-युग मे बदला करते है। लोकगाथाएँ ऐसे युग की रचनाएँ है जब कि व्यक्ति की सत्ता समाज की सत्ता में विलीन थी। लोकगाथाओ के रचयिता एक बार उसका सूत्रपात करके और उसे समाज के हाथो में सौंप कर स्वयं अन्तर्हित हो जाते है और उसके पश्चात् उन लोकगाथाओ के निरन्तर विकास की एक ऐसी शृंखला चल पडती है जिसका कि कभी भी अन्त नही होता। प्रो० किटरेज का कथन है कि लोकगाथाओ के निर्माण के साथ-साथ उनकी समाप्ति नही हो जाती, वरन् वहाँ से ही उनके निर्माण का प्रारम्भ होता है।[1]

इस प्रकार लोकगाथाओ की निर्माण-क्रिया निरन्तर चलती रहती है। लोकगाथाए एक कठ से दूसरे कठ में जाती हुई समस्त समाज में व्याप्त हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार उसे गाता है जिसके परिणामस्वरूप उसमें अनिवार्यत परिवर्तन होता जाता है। पुराने पद छोड दिए जाते है, नए पद जोड दिए जाते है। टेकपद बदल जाते है तथा गाने की धुन भी बदल जाती है तथा चरित्रो में भी परिवर्तन हो जाते है। स्थानान्तरण के साथ-साथ लोकगाथाओ की भाषा भी बदल जाती है। प्रो० किटरेज लिखते है कि जैसे-जैसे सभ्यता का विकास होता है वैसे-वैसे लोकगाथाओ की भाषा भी परिवर्तित होती जाती है।

१—एफ० जे० चाइल्ड—इं० ऐंड स्का० पा० बै० भूमिका भाग, पृ० १

"दी मोमेंट ऐक्ट आफ कम्पोजीशन इज ओवर ऐज साइकली ट्रु ऐज ब्रिटेन, इज नाट दी कन्क्लूजन आफ दी मैटर, इट इज रैदर

ही मानना चाहिए। लोकगाथाए अपनी मौखिक परपरा के बल से समाज में परिव्याप्त हैं, इसीलिए निसर्गत उनमें समाज की प्रगति एव चेतना का दिग्दर्शन होता है। फ्रेंच विद्वानो का मत है कि लोकगाथाओ में जीवन का प्रवाह तभी तक रहता है जब तक लेखक के बाँध से उनकी चेतना आबद्ध नही कर दी जाती। किटरेज का स्पष्ट मत है कि लिपिबद्ध लोकगाथा लोक-सपत्ति न होकर साहित्य की सपत्ति हो जाती है।[१]

लोकगाथाओ की मौखिक परपरा के विषय में फ्रैंक सिजविक ने भी कहा है कि लोकगाथा तभी तक जीवित रह सकती है जब तक मौखिक साहित्य के रूप में सुरक्षित रहती है। उसे लिपिबद्ध करने का अर्थ है उसे मार डालना।[२] भाषा के अध्ययन की दृष्टि से भी लोकगाथाओ के रूप की विविधता बहुत ही लाभप्रद सिद्ध हुई है। लोकगाथाओ से देश के विभिन्न भू-भागो पर अक्षुण्ण एकात्मता और एकजातीयता की एक ऐसी भावना फैली है, जिसमें देश को एक सूत्र में बाँध देने की क्षमता है। इसी कारण भोजपुरी बोलने वालो में आल्हा-ऊदल के प्रति उतनी ही आत्मीयता है जितनी बुन्देलो में।

६—उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव

लोकगाथाओ के अन्तर्गत उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव रहता है। लोक-जीवन का सागोपाग वर्णन-मात्र ही लोकगाथाओ का प्रधान विषय है। इस-लिए स्वाभाविक रूप से लोक-जीवन के गुण-दोष एव आकाक्षाए उसमें वर्तमान रहती है। लोकगाथाए एक कथा का आधार लेकर समस्त लोक का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनमें ऐसी प्रवृत्ति कही भी नही मिलती जिसमें गुणो का तो ब्योरेवार वर्णन हो किन्तु दोषो को छिपा दिया गया हो। यह प्रवृत्ति तो कथात्मक-काव्य

---

१ वही—"व्हाट वाज़ वन्स दी पोज़ेशन आफ दी फोक ऐज़ ए होल विकम्स दी हेरिटेज आफ दी लिटरेचर ओनली " पृ० १२

२ फ्रैंक सिजविक—दी बैलेड, पृ० ३९

"इन दी ऐक्ट आफ राइटिंग डाउन यू मस्ट रिमेम्बर दैट यू आर होल्डिंग टु किल दैट बैलेड 'वीरुम वालिटेयर पार ओरा' इज दी लाइफ आफ ए बैलेड। इट लिव्स ओनली व्हाइल इट रिमेन्स व्हाट दी फ्रेंच 'विथ ए चार्मिंग कन्फ्यूज़न आफ आइडियाज़' काल ओरल लिटरेचर।"

में ही पाई जाती है। वस्तुत लोकगाथाओ मे रचयिता का कुछ भी भाग नही रहता। लोकगाथा अपनी कथा स्वय कहती है। उसमे रचयिता के वैयक्तिक प्रवृत्ति की तनिक भी छाया नही रहती। न तो वह अपने दृष्टिकोण से उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ही करता है और न उसके विपरीत ही कुछ कहता है। लोकगाथा के चरित्रो का भी वह पक्ष नही लेता।[1] लोकगाथा का वर्णन-मात्र करना ही गायक का कार्य है। इस प्रकार लोकगाथाए शिक्षा अथवा उपदेश नहीं देती। शिक्षा अथवा उपदेश ग्रहण करने का उत्तरदायित्व तो श्रोता पर रहता है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में भी उपर्युक्त विशेषता पाई जाती है। परन्तु हम यह मानने के लिए तैयार नही है कि लोकगाथाओ में उपदेशात्मक प्रवृत्ति का सर्वथा अभाव ही रहता है। भोजपुरी लोकगाथाए भारतीय जीवन और परपरा को लेकर निर्मित्त हुई हैं। यह सच है कि लोकगाथाओ के रचयिताओ ने अपनी ओर से उसमें कुछ भी नही जोडा है, परन्तु भारतीय आदर्श कही भी नही छूट पाया है। उनमे पग-पग पर आदर्श की भावना मिलती है तथा असत्य पर सत्य की विजय दिखाई गई है। यहाँ यह भी सोचना नितान्त असगत है कि गायक लोकगाथाओ को गाते समय उन्हे आदर्शवादी बना देते है। वास्तविक बात तो यह है कि गायक स्वय लोकगाथाओ की कथा में निहित आदर्शवाद से प्रभावित रहता है। यह हमारा प्रत्यक्ष अनुभव है। गायक गाथाओ को अत्यन्त पवित्र भाव से देखते है और उसे विधिपूर्वक गाते है। इस प्रकार भोजपुरी लोका गाथाओ के नायको के लोकरजनकारी कार्यों से, चरित्रो के त्याग एव तपस्या से, सती स्त्रियों के जीवन से अनेक शिक्षा मिलती है। भोजपुरी लोकगाथाओ में जहाँ जीवन का अति यथार्थवादी चित्रण हुआ है, वहाँ भी आदर्श नही छूट सका है। भोजपुरी लोकगाथाओ के प्रथम रचयिता के सम्मुख यह आदर्श अवश्य ही उपस्थित रहा होगा। इसलिए भोजपुरी समाज जब इन लोकगाथाओ का श्रवण करता है, तो ऐसा प्रतीत होता है कि सभी रामायण अथवा सत्य-नारायण व्रत की कथा सुन रहे है। आदर्श चरित्रो के कार्यकलापो के साथ हृदय प्रवाहित होता रहता है। गायक जब गाथा के अन्त में कहता है कि हे

---

१ चाइल्ड—इ० एंड स्का० पा० बै०, पृ० ११, भूमिका भाग।

"फाइनली देयर आर नो कमेन्ट्स आर रिफ्लेक्शन्स बाई दी नैरेटर—ही इज नाट इग्गोस्टिक आर लाइकोलाजिकल, ही इज नाट टेक साइड्स फार आर अगेन्स्ट एनी आफ दी ड्रैमेटिस पर्सोनी"

भगवान । जिस प्रकार अमुक आदर्श-चरित्र का विजय हुआ है और उसके सुख के दिन लौटे है, उसी प्रकार सभी श्रोताओ के दिन भी लौटें, और गायक की मगल-भावना के साथ श्रद्धा-भाव से श्रोता विसर्जित होते हैं।

राबर्ट ग्रेव्स का कथन है कि गायक यदि लोकगाथा को नैतिक और उपदेशात्मक बनाता है तो इसका अर्थ यह है कि वह समुदाय (ग्रुप) से विच्छेद करके सुसस्कृत रचनाओ का पक्षपाती हो गया है। उसमें एक ऐसा पक्षपात उत्पन्न हो गया है जिसके कारण उस मेंऔर समुदाय मे एक प्रकार का असामजस्य उपस्थित हो जाता है।[१] यहाँ एक बात विचारणीय है। ग्रेव्स के मत के विरुद्ध भोजपुरी लोकगाथाओ के गायक में समाज से अविच्छिन्न होते हुए भी जो उपदेशात्मकता या आदर्श-भावना वर्तमान है, उसका क्या समाधान है ? इस समस्या के मूल में सास्कृतिक विभिन्नताए निहित है और ग्रेव्स ने जो मत सूचित किया है, वह मूलत आदर्शवादी भारतीय समाज के लिए लागू नही हो सकता। उनका मत पाश्चात्य जीवन और लोकगाथा के विश्लेषण पर ही आधारित है।

७—अलकृत शैली का अभाव

ग्रामगीतो पर विचार करते हुए प० रामनरेश त्रिपाठी लिखते है, "ग्रामगीत और महाकवियो की कविता में अन्तर है। ग्रामगीत हृदय का धन है और महाकाव्य मस्तिष्क का। ग्रामगीत में रस है, महाकाव्य में अलकार। रस स्वाभाविक है और अलकार मनुष्य-निर्मित "ग्रामगीत प्रकृति के उद्गार है, इनमें अलकार नही केवल रस है, छन्द नही केवल लय है, लालित्य नही, केवल माधुर्य है।"[२] यह कथन लोकगाथाओ पर पूर्णतया प्रतिफलित होता है। उनमें अलकृत शैली का नितान्त अभाव रहता है। इसका पहला कारण यह है कि लोकगाथाओ के निर्माण में सपूर्ण समाज का सहयोग होता है। लोकगाथा किसी एक व्यक्ति की

---

१ राबर्ट ग्रेव्स—दी इगलिश बैलेड, पृ० ९ तथा २०

"मारलाईजिंग आर प्रीचिंग इन ए बैलेड इज ए साइन दैट दी बार्ड इज डिफिनिटली आउटसाइड दी ग्रुप ऐंड इज़ इन टच विथ कल्चर, ए पार्टिज़न वायस इज़ इन्काम्पिटेबुल विथ ग्रुप ऐक्शन।"

२ प० रामनरेश त्रिपाठी—ग्रामगीत, पृ—९

पूंजी नहीं होती। दूसरा कारण यह है कि लोकगाथाएँ प्रारंभिक सभ्यता के चित्र सम्मुख रखती हैं। संस्कृत-कलाओं का विकास उस समय नहीं हुआ था। समाज ने यथाविधि अपनी अनुभूतियों को इन लोकगाथाओं में अभिव्यक्त कर दिया। अतएव लोकगाथाओं में अलंकृत शैली का अभाव होना उसकी स्वाभाविकता है।

अलंकृत कविता किसी न किसी व्यक्ति की रचना होती है। कवि बड़े यत्न से उसे सजाने का प्रयत्न करता है और अपनी आंतरिक भावनाओं को अभिव्यंजना देकर अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ देता है। लोकगाथाओं में इस प्रवृत्ति का पूर्ण अभाव रहता है। लोकगाथा एक स्वाभाविक प्रवाह है जो कभी समतल भूमि पर, कभी ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर, कभी वन में तो कभी पहाड़ों में हो कर बहता है। उसमें हमें सभी कुछ मिलेगा जोकि स्वाभाविक और यथार्थ है। अलंकृत कविता और लोकगाथा में वही अन्तर है जो बाल-सौन्दर्य और युवा-सौन्दर्य में है। लोकगाथाओं में एक सहज मर्मस्पर्शिता होती है जो लोकगीतों में नहीं मिलती। श्री स्टीनस्ट्रूप का कथन है कि लोक गाथाओं का वर्णन-पद्धति में एक ऐसी नैसर्गिकता रहती है जैसी मा और शिशु के सलाप में मिलती है।[१]

लोकगाथाओं में पिंगल-शास्त्र के नियम अत्यन्त शिथिल हैं। यह अवश्य है कि यत्र-तत्र अलंकार बिखरे पड़े हैं, परन्तु वे सहज ही आ गये हैं। राबर्ट ग्रेव्स का कथन सत्य है कि लोकगाथाएँ कला की दृष्टि से बहुत विकसित नहीं होती हैं। अविकसित कला से उनका अभिप्राय है छन्द एवं अलंकार विधान इत्यादि का अभाव। लोकगाथाओं की भावधारा काव्यात्मक बनाने के पहले ही काव्यात्मक रहती है, कल्पना द्वारा कलात्मक बनाने के पहले ही वह कलात्मक रहती है, गाने के पहले ही उसमें संगीतात्मकता रहती है।[२] इस प्रकार लोकगाथाओं का प्रधान गुण उनकी स्वाभाविकता है। अपने स्वाभाविक प्रवाह में लोकगाथा काव्यशास्त्र के मौलिक आदर्शों को भी हमारे सम्मुख रखती है।

१—गुमेट—प्रो० इ० बै० पृ० ३१—"टाक लाइक ए मदर टु हर चाइल्ड"

२—राबर्ट ग्रेव्स—दी इंगलिश बैलेड, पृ० १६

"इट हैज बीन नोटेड दैट दी बैलेड प्रापर इज नाट हाइली ऐडवान्स्ड इन टेकनीक, बाई 'ऐडवान्स्ड टेकनीक' इज मेन्ट कम्पलीट वर्स फार्म्स, दी इंजीनियस यूज आफ मेटाफर ऐंड अलेगरी, ऐंड ए प्रेजेन्टेशन आफ आइडियाज हिच इज पायेटिकल बिफोर इट इज पोयेटिक, आर्टिस्टिक बिफोर इट इज इमैजिनेटिव म्यूजिकल बिफोर इट इज इन्टेन्डेड फार सिंगिंग।"

केवल हमारे देखने का दृष्टिकोण उचित होना चाहिए। हमें पिंगल-शास्त्र के नियम-उपनियम से लोकगाथाओ की परीक्षा नही करनी चाहिए।

८—टेकपदों की पुनरावृत्ति

टेकपदो की पुनरावृत्ति लोकगाथाओ की एक प्रधान विशेषता है। लोकगाथाओ के गाने की राग समस्वर होता है तथा द्रुतगति लय में गाया जाता है। टेकपदो से गाथा का महत्व इसलिए बढ़ जाता है कि प्रथम, समस्वर के कारण एकरसता निर्माण होने की जो सम्भावना रहती है, वह नही होने पाती। द्वितीय उपयोगिता यह है कि टेकपदो के कारण गायक को साँस लेने का अवकाश मिल जाता है। पाश्चात्य लोकगाथाओ में दो प्रकार के टेक-पद होते हैं। एक को 'रिफ्रेन' तथा दूसरे को 'इन्क्रीमेन्टल रिपीटीशन' कहा जाता है। 'रिफ्रेन' का इतिहास नही प्राप्त होता है पर ऐसी सभावना है कि लोकगाथाओ के साथ ही साथ इसका भी उद्‌भव हुआ हो। लोकगाथाओ के गायन के लिये जब समूह एकत्र होता है तो बीच-बीच में कुछ विशेष प्रकार के शब्द उच्चरित होते हैं। इससे वातावरण ओजस्वी हो जाता है तथा पूरे समूह को ऊब नही होती। रिफ्रेन दो प्रकार का होता है। एक में तो निरर्थक या सार्थक शब्दो का उच्चारण होता है तथा दूसरे में प्रारम्भ में कही गई पक्तियो को बार-बार दुहराया जाता है। भोजपुरी लोकगाथाओ में प्रथम प्रकार का रिफ्रेन[1] मिलता है। प्रत्येक पक्ति के अन्त में तथा प्रारम्भ में 'रेनुकी', हो, रामा तथा एकिया हो रामा' का उच्चारण होता है।

'इन्क्रीमेन्टल रिपीटीशन' रिफ्रेन से एक पग आगे की वस्तु है। इसमें प्रथम पक्ति, दूसरे पक्ति के पश्चात् पुन आती है। परन्तु उसकी पुनरावृत्ति में किसी एक नवीन शब्द द्वारा कथा का विकास सूचित हो जाता है। भजपुरी लोकगाथाओ में 'इन्क्रीमेन्टल रिपीटीशन' (बुद्धिपरक आवृत्ति)[2] नही पाई जाती पर लोकगीतो में अवश्य मिलती है। एक उदाहरण इस प्रकार है—

> विरना झीनी-झीनी पतिया आमिली कई
> विरना को भई बरियवा के पूत्ते

१—वही—"फर्स्ट दी रिफ्रेन हि्वच दो इट्स हिस्ट्री इज वन आफ दी आब्सक्योरेस्ट चैप्टर्स इन लिटरेचर ऐंड आर्ट, इज मैनीफेस्टली एप्वाइन्ट आफ कनेक्शन बिटवीन दी बैलेड ऐंड दी थ्राग।"

भोजपुरी लोकगाथाओं में यह क्रिया नहीं पाई जाती है। वहाँ प्रत्येक पंक्ति कथा को निरन्तर आगे बढ़ाती रहती है। गायक को पीछे मुड़ने का अवकाश ही नहीं रहता। वह केवल रिफ्रेन का ही प्रयोग करता है जिससे श्रोता को उसे साहचर्य मिलता है और वह एकरसता से मुक्ति पा जाता है।[1]

९—रचयिता के व्यक्तित्व का अभाव

लोकगाथाओं के अज्ञात रचयिता के विषय में पहले ही विचार किया जा चुका है, और यह निश्चित हो गया है कि उसका प्रत्येक अन्वेषण सर्वथा असम्भव है। अन्वेषण की इस अक्षमता के होते हुये भी यह निश्चित है कि लोकगाथाओं का आदि रचयिता अवश्य रहा होगा। यह होते हुये भी उसकी रचना में उसके व्यक्तित्व की छाप नहीं दिखाई पड़ती। प्राचीन काव्यों में यह प्रवृत्ति नहीं थी। अज्ञात लेखकों के भी उपलब्ध रचनाओं में भी उनका व्यक्तित्व स्पष्ट परिलक्षित होता है, परन्तु लोकगाथाओं में ऐसी व्यक्तिपरकता नहीं मिलती। प्रो० स्टीनस्ट्रप का कथन है कि लोकगाथाओं में "मैं" का नितान्त अभाव रहता है।[2]

आदि-गायक केवल कथामात्र कहता है। अपनी ओर से किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी नहीं करता। प्रो० किटरेज ने इसी तथ्य को इस प्रकार स्पष्ट किया है, "यदि यह सम्भव हो जाय कि कोई कथा एक सजग वक्ता के माध्यम के बिना स्वतः अपनी कथा कह सके तो लोकगाथा ऐसी ही कथा होगी।"[3] फ्रैंक सिजविक ने भी लिखा है कि "लोकगाथा की विशेषता उसके रचयिता के व्यक्तित्व की सत्ता में नहीं, उसके व्यक्तित्व के नितान्त अभाव में है"।[4]

१०—लम्बा कथानक

लोकगाथाओं की एक प्रमुख विशेषता है उनका लम्बा कथानक। प्राय

१—फ्रैंक सिजविक—दी बैलेड—पृ० ३७
"दी सिम्पल मोनोटोनी इज रेगुलर्ली रिलीव्ड बाई दी प्राब्लम्स"

२—एफ० बी० गमेर—इ० बै० पृ० ६३

३—चाइल्ड—इं० ऐंड स्का० पा० बै० भूमिका, पृ० ११
"इफ इट वुड बी पासिबुल टु कन्सीव ए टेल ऐज टेलिंग इटसेल्फ विदाउट दि इन्स्ट्रुमेन्टलिटी आफ ए कान्सस स्पीकर दि बैलेड वुड बी सच ए टेल"

४—फ्रैंक सिजविक—दि बैलेड, पृ० ११

सभी लोकगाथाओ का स्वरूप विशाल होता है। यह हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि कथात्मक गीतो को ही लोकगाथा कहते हैं। लोकगाथा के अन्तर्गत एक कथा का होना अत्यन्त आवश्यक है। यह कथा चरित्रो के जीवन का सागोपाग वर्णन करती है, जिसके परिणामस्वरूप लोकगाथा वृहद् हो जाती है। लोकगाथाओ के लम्बा होने का दूसरा कारण है सपूर्ण समाज का सामूहिक सहयोग। प्रत्येक व्यक्ति उसमें कुछ न कुछ जोडता ही है। जिस प्रकार प्रारम्भ में 'महाभारत' एक छोटे आकार का 'जयकाव्य'-मात्र था उसी प्रकार लोकगाथाओ का भी प्रारम्भ रहा होगा और कालान्तर मे उनका स्वरूप विशाल हो गया होगा।

अँग्रेजी लोकसाहित्य में छोटी तथा बडी, दोनो प्रकार की लोकगाथाएँ मिलती है, परन्तु भारतीय लोकगाथाये अधिकाश रूप में लम्बे कथानक वाली ही हैं। इनका आकार महाकाव्य की भाँति होता है। भोजपुरी का आल्हा, लोरिकी, विजयमल तथा सोरठी आकार में किसी महाकाव्य मे कम नही है।

लोकगाथाओ का कथानक किसी विशेष नियम से नही प्रारम्भ होता। वह किसी भी स्थान मे प्रारम्भ हो जाता है। राबर्ट ग्रेव्स का कथन है कि लोकगाथाए नाटक के अन्तिम भाग से प्रारम्भ होती है तथा विना किसी निर्देश के चरम सीमा पर पहुँचती है।[१] ग्रेव्स के कथन का आशय यह है कि लोकगाथाओ में कथा का आरम्भ अकस्मात् हो जाता है। उसमें किसी परिचय या भूमिका का विधान नही रहता। भोजपुरी लोकगाथाओ में भी यही बात देखने को मिलती है। कथानक के प्रमुख अश से गाथा प्रारम्भ हो जाती है और इस प्रकार त्वरित् गति से वर्णन प्रवाहित रहता है।

लम्बा कथानक लोकगाथाओ की ऐसी विशेपता है जो उसे लोकगीतो से पृथक् कर देती है। लोकगीतो में भावना प्रधान होती है। उनमें जीवन के किसी अश की ही भावपूर्ण व्यजना रहती है। इसी कारण वे छोटी होती हैं। लोकगाथाओ का कर्त्तव्य होता है कथा कहना, अतएव वे लम्बी होती हैं।

११—सदिग्ध ऐतिहासिकता

लोकगाथाओ के सभी विद्वान इस विपय पर एकमत है कि लोकगाथाओ में या तो ऐतिहासिकता होती ही नही और यदि होती भी है, तो उसका

१—रावर्ट ग्रेव्स—दी इगलिश वैलेड, पृ० ६

"दी वैलेड प्रापर विगिन्स इन दी लास्ट ऐक्ट आफ दी ड्रामा ऐंड मूव्स टु दी फाइनल क्लाइमेक्स विदाउट स्टेज डाइरेक्शन्स".

इतिहास अत्यन्त संदिग्ध होता है। लोकगाथाओं के रचयिता को इतिहास-निर्माण की चिन्ता नहीं रहती। ऐतिहासिक अथवा अनैतिहासिक घटनाओं पर आधारित लोकगाथाओं की रचना उन घटनाओं के साथ ही प्रारम्भ हो जाती हो, यह अनिवार्य नहीं। यह भी संभव है कि उसके रचनाकाल और वर्णित घटना में कुछ भी सम्बन्ध न हो।[1]

भोजपुरी लोकगाथाओं की ऐतिहासिकता बहुत संदिग्ध है। बाबू कुंवर सिंह आल्हा, गोपीचन्द तथा भरथरी का तो इतिहास में वर्णन मिलता है, परन्तु अन्य गाथाएँ जैसे लोरिकी, विजयमल, शोभानयका बनजारा, सोरठी तथा बिहुला इत्यादि की ऐतिहासिकता अत्यन्त संदिग्ध है। लोकगाथाओं के भौगोलिक वर्णनों से उनके ऐतिहासिक सत्य का केवल आभास होता है। वस्तुतः उनकी प्रमाणिकता संदिग्ध है और इतिहास में उनका महत्व नहीं है।

इन उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त भोजपुरी लोकगाथाओं में कुछ अन्य विशेषताएँ भी मिलती हैं, जिनका यहीं उल्लेख कर देना समयोचित होगा। भोजपुरी लोकगाथाओं में दो प्रधान विशेषताएँ मिलती हैं जो निम्नलिखित हैं—

१—सुमिरन

२—पुनरुक्ति

१—सुमिरन

अधिकांश भोजपुरी लोकगाथाओं में सुमिरन प्राप्त होता है। गायक जब लोकगाथा गाना प्रारम्भ करता है तो कथानक के प्रारंभ में वह सभी देवी-देवताओं का सुमिरन करता है। हमारे यहाँ प्राचीन काव्यों में अथवा नाटकों में भी यही परम्परा मिलती है। प्रत्येक महाकाव्य के प्रारंभ में देवी-देवताओं की वंदना की जाती है। इसी प्रकार लोकगाथाओं के गायक गाथा को निर्विघ्न

१—इनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना—बैलेड पृ० [illegible]

"बैलेड्स हिस्टारिकल और अदरवाइज़ मे आर मे नाट ओरिजिनेट इम्मीजिएटली आफ्टर दी इवेन्ट्स दे सैलिब्रेट, दी डेट आफ कम्पोजीशन मे बियर नो रिलेशन टु दी थीम" तथा देखिए—जार्ज लारेन्स गोमे 'फोकलोर ऐज़ एन हिस्टारिकल साइन्स' पृ० ८

पूर्ण करने के लिए सभी देवी-देवता, पीर-फकीर, राजा इत्यादि की वन्दना करते हैं। इसका उदाहरण इस प्रकार है—

'रामा रामा रामा रामा राम जी के नइयाँ हो ना
'राम जी के नइयाँ करऽ सुमिरनवाँ हो ना
'राम जी दुरूगा जी होइह दयालवा हो ना
'रामा माता जी के करी सुमिरनवा हो ना
'रामा जिन्ह दिहली जनमिया हो ना
'रामा सुमिरी गुरू के चरनिया हो ना
'रामा जिन्ह दिहले गयानवा हो ना
'रामा तबे त सुमिरो बीर हनुमनवा हो ना
'रामा सुमिरी पाँचो पाडवा हो ना
'रामा तबे त सुमिरी गगा माई हो ना
'रामा ठैया सुमिरो माता भुइयाँ तबे सुमिरो डिहवरवारे ना
'रामा तबे त सुमिरो गाँव के बम्हनवारे ना
'रामा तब त सुमिरो पीर सुबहानवारे ना

इस प्रकार लोकगाथा का गायक, पृथ्वी, ग्रामदेवता, देवी दुर्गा, माता, गुरु, ब्राह्मण, पीर सुबहान, पाँचो पाण्डव, हनुमान तथा गगा जी का सुमिरन करके लोकगाथा को प्रारम्भ करता है। कभी-कभी यह सुमिरन बडा लम्बा होता है। इसमें कलकत्ते की काली देवी, अंग्रेज शासक, दिल्ली का दरबार इत्यादि सबका सुमिरन रहता है।

इस सुमिरन से यह स्पष्ट होता है कि लोकगाथा के गायक किसी धर्म या राजा से विरोध नही करते। वे सबमें सामजस्य रखने की चेष्टा करते हैं। वे सबको बडा और पूज्य मान कर उनकी वदना करते हैं। उनकी केवल यही इच्छा रहती है कि लोकगाथा का गायन निर्विघ्न पूरा हो।

२—पुनरुक्ति

भोजपुरी लोकगाथाओ मे पुनरुक्ति की भरमार रहती है। यह विशेषता भोजपुरी में नही अपितु अन्य प्रान्तो के लोकगाथाओ मे भी पाई जाती है। आल्हा के लोकगाथा के प्रत्येक खड में पुनरुक्ति पाई जाती है। युद्ध-वर्णन की शैली तो सर्वत्र समान ही है। वास्तव मे पुनरुक्ति से एक लाभ भी होता है।

लोकगाथाओं का कथानक अत्यन्त विशाल होता है। इसलिए यह सम्भव हो सकता है कि प्रारम्भ में कही गई बात को श्रोता भूल जाएँ। अतएव इस कठिनाई से बचने के लिए गायक लोकगाथा के प्रमुख घटना का बारबार दुहराया करते है।

लोकगाथाओं के प्रकार

भारतवर्ष में लोकगाथाओ के प्रकार पर अभी तक किसी ने विचार नही किया है, परन्तु पाश्चात्य देशो मे, विशेष रूप से इगलैंड में चार प्रकार की लोकगाथाए पाई जाती हैं।

१—परपरानुगत लोकगाथाए (ट्रेडिशनल बैलेड्स)

२—चारण लोकगाथाए (मिन्स्ट्रेल बैलेड्स)

३—प्रकाशित लोकगाथाए (ब्राडसाइड बैलेड्स)

४—साहित्यिक लोकगाथाए (लिटररी बैलेड्स)

परपरानुगत लोकगाथाए वे हैं जो कि शताब्दियो से मौखिक परम्परा द्वारा प्रचारित हैं और जिनके रचयिता अज्ञात है। साथ ही लोकगाथाए का काल भी सदिग्ध है।[1] इस प्रकार की लोकगाथाओ को 'लोकप्रिय (पापुलर) लोकगाथा भी कहा जाता है।

चारण लोकगाथाए वे है जो चारणो द्वारा गाई जाती है। मध्ययुग में इगलैंड में चारण हार्प पर समाज में प्रचलित अथवा निर्मित लोकगाथाए गाते थे। विशपपर्सी ने चारण-गाथाओ को ही प्रतिनिधि लोकगाथा माना है, परन्तु कामिस साइल्ड और प्रो० किटरेज के मत में चारण-लोकगाथा परपरानुगत गाथाओ से सर्वथा भिन्न है।[2]

प्रकाशित लोकगाथाए वे हैं जो मुद्रण-यत्र आविष्कार के पश्चात् पेशेवर लोकगाथा गाने वालो द्वारा एक कागज के बडे पृष्ठ (ब्राड शीट) पर प्रकाशित करके बडे नगरो में बेची जाती थी। इनमें विशेष रूप से ऐतिहासिक विषय ही रहा करते थे। इनके रचयिताओ का नाम भी उन पृष्ठो पर रहता था। सत्रहवी तथा अठारहवी शताब्दी में इनका अत्यधिक प्रचार था। शेक्स-

---

१—इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका 'बैलेड', पृ० ९६

२—चाइल्ड—इं० एड स्का० पा० बैलेड्स भूमिका पृ० २३

पियर ने इस प्रकार की लोकगाथाओ का उल्लेख किया है।[1] प्रकाशित लोकगाथाओ का एक अन्य नाम भी मिलता है। इसे 'स्टाल बैलेड्स' भी कहते हैं।

साहित्यिक लोकगाथाए वे है जिनकी रचना कवियो ने की है।[2] परम्परानुगत लोकगाथाओ से प्रभावित होकर इगलैंड में अनेक प्रसिद्ध कवियो ने साहित्यिक लोकगाथाओ की रचना की। प्रसिद्ध कवियो में शेक्सपियर, वाल्टर स्काट, ब्राउनिग तथा टेनसिन का नाम मुख्य है। इन कवियो ने लोकगाथाओ की रचना कर अग्रेजी साहित्य का भडार भरा। इसके पश्चात् तो अग्रेजी साहित्य में लोकगाथाओ की धूम से रचना हुई। वर्ड्सवर्थ तथा स्विनवर्न इत्यादि कवियो ने भी लोकगाथाओ की रचना की। इन सभी कवियो ने परम्परानुगत लोकगाथाओ से ही स्फूर्ति प्राप्त की। साहित्यिक लोकगाथाओ को कलात्मक लोकगाथाए[3] तथा सुसस्कृत लोकगाथाए[4] भी कहा जाता है।

समस्त भारतीय लोकगाथायें परपरानुगत लोकगाथाओ के अन्तर्गत ही आती है। भारतवर्प मे अनेक चारण लोकगाथाओ की रचना हुई हैं। 'पृथ्वीराज रासो', 'बीसलदेव रासो', 'खुमाण रासो' तथा 'आल्हखड' इत्यादि सभी चारण-गाथा हैं। ये गाथाए कला की दृष्टि से चारण-गाथाओ से एक पग आगे ही बढी हुई है। इनमें काव्यशास्त्र के नियम भी मिलते है और इनकी रचना कागज कलम के साथ हुई है। आज जगनिक के 'आल्हखड' को छोडकर सभी साहित्यिक कृतियाँ मानी जाती है। हम इन्हें इगलैंड की साहित्यिक लोकगाथाओ के अन्तर्गत भी रख सकते हैं। इनके अतिरिक्त भारतवर्ष में अन्य साहित्यिक लोकगाथायें नही पाई जाती। वास्तव में किसी भी महाकवि ने परपरानुगत लोकगाथाओ से स्फूर्ति या प्रेरणा लेकर कोई साहित्यिक रचना नहीकी।

प्रकाशित लोकगाथाए भी भारतवर्ष में नही उपलब्ध होती। परपरानुगत लोकगाथाए ही प्रकाशित रूप में आने लगी है परन्तु उनका रग-रूप अधिकाश में मौखिक के समान ही है।

लोकगाथा और लोकगीत मे अतर

प्रस्तुत अध्याय के अतिम भाग में लोकगाथा एव लोकगीत के अन्तर पर

---

१ ई० अमे० 'बैलेड्स', पृ० ९६

२ इ० अमे० बैलेड्स वाल ३ पृ० ९६

३ आर्ट बैलेड्स

४ कल्चरल बैलेड्स

विचार कर लेना अनुपयुक्त न होगा। लोकगाथा के नामकरण, परिभाषा, उत्पत्ति एव विशेषताओं पर पीछे हम भली-भाँति विचार कर चुके हैं। लोकगीत वस्तुतः लोकगाथा से सर्वथा भिन्न विषय है। लोकगीत के विषय में हम यह कथन उद्धृत कर सकते हैं कि "यह सम्भवतः वह जातीय आशुकवित्व है जो कर्म या क्रीड़ा के ताल पर रचा गया है।"[1] लोकगीतों में प्रधान रूप से भावों की व्यंजना रहती है। इसीलिए कुछ विद्वान इसे 'भावगीत' भी कहते हैं। इनमें मानवता अपने जीवन की साधारण अनुभूतियों को सरल भाव से व्यक्त करती है।

लोकगीत का विषय नैमित्तिक जीवन से सबन्ध रखता है। इनमें नित्य का लोकाचार, जीवन के सुख-दुःख, जीवन का अन्तर्द्वन्द्व, प्रार्थनाएं और साधनाएँ रहती हैं। लोकगाथाओं में लोकगीतों के उपर्युक्त विषय गौण रहते हैं। उनमें जीवन का सांगोपांग वर्णन रहता है। किसी व्यक्ति विशेष से लोक-गाथा का सबंध रहता है। कथा के स्वरूप में उस व्यक्ति का संपूर्ण जीवन उसमें चित्रित रहता है।

डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकगाथा और लोकगीत के अन्तर को दो प्रधान भागों में विभाजित किया है।[2] ये दो भेद इस प्रकार हैं—प्रथम स्वरूपगत तथा द्वितीय विषयगत। स्वरूपगत भेद के विषय में इतना जानना आवश्यक है कि लोकगीतों का स्वरूप अथवा आकार छोटा होता है, परन्तु लोकगाथा का आकार महाकाव्य के समान होता है। विषयगत भेद यह है कि लोकगीतों में विभिन्न संस्कारों—जैसे जन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह इत्यादि, विभिन्न प्रथाओं एवं त्योहारों तथा ऋतुओं से संबंधित गीत सम्मिलित रहते हैं। लोकगाथाओं का विषय प्रधान रूप से कोई कथा रहती है। इस कथात्मकता का लोकगीतों में पूर्णतया अभाव रहता है।

लोकगाथाएं अपने विशाल आकार में लोकगीतों के प्रायः सभी विषयों का समावेश कर लेती हैं। लोकगाथाओं में जन्म एव विवाह का विधिवत् वर्णन रहता है तथा उनसे संबन्धित गीत भी रहते हैं। उनमें ऋतु एव देवी-देवताओं से सबन्धित गीत रहते हैं। परन्तु इतना अवश्य है कि लोकगाथाओं में लोक-गीतों के विषय कथानक के साथ ही चिपटे रहते हैं। उनका अपना स्वतंत्र

---

१ लक्ष्मीनारायण सुधांशु—जीवन के तत्व और काव्य के सिद्धान्त—अध्याय ८, पृ० १७४।

२ डा० कृष्णदेव उपाध्याय—भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन (अप्रकाशित) पृ० ४९३।

अस्तित्व नही रहता है, यद्यपि प्रकाशित लोकगाथाओ में हमें यत्र-तत्र अलग से लोकगीत भी मिल जाते है। लोकगाथाओ में लोकगीत के विषय एक सघर्ष के साथ चित्रित किए गए है। लोकगाथाओ के चरित्रो के साथ ही साथ लोक-गीतो की भावधारा यदा-कदा चित्रित हो गई है। लोकगाथाओ के चरित्रो पर अनेकानेक प्रकार के दुख एव सुख का प्रभाव पडता है। उसी के फलस्वरूप कही नायिका विरह वर्णन करती है तो कही सयोग शृगार का सुख भोगती है। नायक कही विजय में हर्षोन्मत है तो कही अपनी लाचारी पर दु खित है। लोकगाथाओ में रहस्य एव रोमाच का गहरा पुट रहता है, जिसका कि लोक-गीतो में नितान्त अभाव रहता है।

उपर्युक्त अन्तर के अतिरिक्त लोकगाथा और लोकगीत मे कुछ गौण भेद भी रहता है। लोकगीतो में सगीतात्मकता की मात्रा अत्यधिक होती है। विभिन्न भावो के अनुसार सगीत की शैली बदलती जाती है। इसके विपरीत लोकगाथाओ में सगीतात्मकता एकसमान रहती है। अधिकाश भोजपुरी लोक-गाथाए द्रुतिगति लय में गाई जाती है। एकसमान लय में ही प्रेम, विरह तथा युद्ध इत्यादि सभी का वर्णन रहता है।

लोकगीतो में वाद्ययन्त्र का अभिन्न सहयोग रहता है। लोकगीत इसके बिना अधूरे लगते है। परन्तु लोकगाथाओ के गायन में कभी-कभी बिना वाद्ययन्त्र के भी काम चल जाता है। लोकगीतो के गायन में हम नृत्य का भी यदा-कदा सहयोग पाते है, परन्तु लोकगाथाओ में नृत्य अत्यल्प है।

अध्याय २

भोजपुरी लोकगाथायें

समस्त भोजपुरी जनपद में प्रधान रूप से नौ लोकगाथाओं का प्रचलन है। क्रम से ये इस प्रकार हैं—

१—आल्हा
२—लोरिकी (अथवा लोरिकायन)
३—विजयमल (अथवा कुँवर विजई)
४—बाबू कुँवर सिंह
५—शोभानयका बनजारा
६—सोरठी
७—बिहुला
८—राजा भरथरी
९—राजा गोपीचन्द

वास्तव में यदि हम इन्हें उत्तरी भारत की लोकगाथायें कहे तो अनुपयुक्त न होगा। क्योंकि उत्तर-प्रदेश से लेकर बंगाल तक ये गाथायें किसी न किसी रूप में प्रचलित हैं। इनके गाने के ढंग तथा कथानक में अन्तर अवश्य दिखाई पड़ता है, किन्तु अन्ततोगत्वा कथा वही हैं, भाव वही है। उदाहरणस्वरूप—'आल्हा' मूलतया भोजपुरी लोकगाथा नहीं हैं क्योंकि इसके पात्र महोबा (बुन्देलखण्ड) के हैं किन्तु इसकी लोकप्रियता बुन्देली तथा भोजपुरी प्रदेशों में समान रूप से है। इसी प्रकार 'बिहुला' की गाथा है। यह उत्तर-प्रदेश से लेकर बंगाल तक गाई जाती है। पश्चिमी भोजपुर-प्रदेश में इसका नाम 'वाला' या 'बारहलखन्दर' है। गोपीचन्द तथा भरथरी की गाथा भी उत्तर-प्रदेश से बंगाल तक प्रचलित है।

उपर्युक्त गाथाएँ किसी न किसी रूप में संपूर्ण उत्तरी-भारत में प्रचलित अवश्य हैं, परन्तु ये भोजपुरी प्रदेश में जितनी लोकप्रिय हैं उतनी अन्यत्र नहीं। भोजपुरी जीवन में तदाकार होकर ये लोकगाथाएं जीवन से अभिन्न बन गई हैं। इसलिये इन्हें भोजपुरी लोकगाथाएं कहना अधिक समीचीन होगा। भोजपुरी की अन्य बहिनों—मगही और मैथिली—में भी ये गाथाएं वर्तमान हैं, परन्तु वहाँ विद्यापति और हर्षनाथ अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय हैं। भोजपुरी में वस्तुतः

लिखित साहित्य का अभाव है। लोकगाथाओ एव लोकगीतो द्वारा ही यहाँ के जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। भोजपुरी क्षेत्र में तुलसी और व्यास तो वे वरदान हैं जिनके सहारे लोग भवसागर पार उतरते हैं। परन्तु भोजपुरी जीवन के दुख-सुख, आकाक्षाएँ और नाना प्रवृत्तियाँ जिस सुन्दर ढग से इन लोकगाथाओ में परिलक्षित हुई है, उसे देखकर तो यही कहना पडता है कि ये ही भोजपुरी जीवन की वास्तविक प्रतिनिधि हैं।

अगले अध्यायो में प्रत्येक गाथा के सम्बन्ध में विशेष रूप से विचार किया जायेगा। यहाँ पर केवल इनका सक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

(१) आल्हा—मूलतया और प्रधानतया यह बुन्देली लोकगाथा है। हिन्दी साहित्य के विद्वान् इस गाथा का सम्बन्ध चारण-काल से बतलाते हैं। इसके रचयिता जगनिक हैं परन्तु इनके नाम का उल्लेख कही नही मिलता और न मूल लिपि ही मिलती है। लोगो का विश्वास है कि पहले इस लोकगाथा में केवल अठारह युद्धो का ही वर्णन था, परन्तु कालान्तर में इनकी सख्या बावन हो गई। 'आल्हा खड' के नायक आल्हा तथा ऊदल का सम्बन्ध महोबे के राजा परमर्दिदेव से है। महोबा का पक्ष लेकर इन दो वीरो ने अनेक युद्ध किये तथा उस युग के अन्यतम वीर पृथ्वीराज चौहान को भी परास्त किया। 'आल्हा' के नाम से ही यह लोकगाथा प्रसिद्ध है। जनश्रुति है कि 'आल्हा' गाने से पानी बरसता है। भोजपुरी प्रदेश में भी यह गाथा बडे चाव से गाई जाती है। बुन्देली पर भोजपुरी का अत्यधिक प्रभाव है जिसके आधार पर आल्ह खड को भोजपुरी लोकगाथा कहना अनुचित न होगा। यह ढोल और नगाडे पर गाई जाती है।

(२) लोरिकी—'रामायण' के ढग से इस लोकगाथा का नाम 'लोरिकायन' भी पड गया है। गायक इसे रामायणसे भी वृहद् मानता है। वह कहेगा 'बारहखड रमायन त चउदह खड लोरिकायन।' अहीर जाति का यह 'जातीय काव्य' है। चौदह खड तो एक व्यजना है। वस्तुत चार खड में यह लोकगाथा गाई जाती है। यह गाथा एक प्रकार से वीर काव्य है, जिसका नायक 'लोरिक' है। दुष्टो को मार कर शान्ति-स्थापन करना ही लोरिक का मुख्य उद्देश्य है। उसकी वीरता, उसका प्रेम, अहीरो के लिये गर्व की वस्तु है।

(३) विजयमल—यह भी एक वीर-गाथा है जिसमें मल्ल क्षत्रियो के एक युद्ध का वर्णन है। इसकी ऐतिहासिकता सदिग्ध है। 'आल्हा' की गाथा में जिस प्रकार प्रत्येक विवाह में युद्ध अनिवार्य है उसी प्रकार इसमे विवाह के कारण ही युद्ध हुआ है। यह गाथा मध्ययुगीन प्रतीत होती है। विजयमल इस लोकगाथा का नायक है।

(४) बाबू कुंवरसिंह--यह भोजपुरी वीरता का प्रतिनिधित्व करने वाली अमर गाथा है। बाबू कुँवरसिंह बिहार के शाहाबाद जिले के भोजपुरी गाँव के निवासी थे। आप एक छोटे से राज्य के अधिपति थे। १८५७ के भारतीय विद्रोह में आपने पूर्वी भारत मे प्रमुख रूप मे भाग लिया। हम जानते ही हैं कि इस सगठनहीन विद्रोह का परिणाम भयानक हुआ। कुवर सिंह वीरगति को प्राप्त हुए किन्तु अपना नाम अमर कर गये। भोजपुरी प्रदेश मे उनकी गाथा अत्यन्त आत्मीयता से गाई जाती है और श्रोता सुनते-सुनते आठ-आठ आँसू रोने लगते हैं। भोजपुरी लोकगीतो में भी इनका चरित्र वर्णित है। अग्रेजो के प्रति बाबू कुवर सिंह ने जो घृणा दिखलाई, वह बिहार के भोजपुरी प्रदेश में आज भी वर्तमान है।

(५) शोभानयका बनजारा---यह लोकगाथा व्यापारी जाति से सबन्ध रखती है। प्राचीन समय में व्यापारी बैलो तथा नावो पर सामान लाद कर अनेक वर्षो के लिये व्यापार करने बाहर चले जाते थे। इसका नायक शोभानायक है जो व्यापार के लिये मोरग देश चला जाता है नायिका 'जसुमति' है। इस गाथा मे विरह और पातिव्रत-धर्म का अति रोचक वर्णन मिलता है। समाज की कुरीतियो, अध-विश्वासो तथा ननद-भौजाई के कलह-सबन्धो का सुन्दर चित्र खीचा गया है। वास्तव मे यह एक प्रेमकाव्य है।

(६) सोरठी--यह एक अत्यन्त रोचक गाथा है। भोजपुरी समाज इस लोकगाथा को बडी पवित्र दृष्टि से देखता है। 'सोरठी' नायिका है तथा 'बृजाभार' नायक। प्रेमियो का मिलन कितना कष्ट-साध्य होता है, इसमें यही चित्रित है। साथ-साथ खल-पात्रो के अनेक प्रकारो का और अलौकिक तत्वो का भी विशद चित्रण हुआ है। इस पर नाथ-सप्रदाय की स्पष्ट छाप पडी है। बृजाभार नायक इसी मत का मानने वाला दिखलाया गया है, परन्तु समन्वय सभी मतो का है। इसमे कोई भी देवी-देवता छूट नही पाया है। 'सोरठी' एक साध्य है जिसे प्राप्त करने के लिये बृजाभार अनेक साधनायें करता है। सोरठी पैदा होते ही पिता-माता से दुर्भाग्यवश बिछुड जाती है और एक कुम्हार के यहाँ पलती है। दैवी कृपा से किस प्रकार उसकी प्राण-रक्षा होती है यह सुनने योग्य है। गाने का ढग भी रोचक है। एक साथ दो व्यक्ति गाते हैं। राग भी कर्णप्रिय होता है।

(७) बिहुला---इस लोकगाथा का दूसरा नाम 'बालालखन्दर' भी है। पश्चिमी भोजपुरी प्रदेश में यह इसी नाम से प्रसिद्ध है किन्तु पूर्वी भोजपुरी प्रदेश मे लेकर बगाल तक इसका 'बिहुला नाम ही प्रचलित है। यह पाति-

व्रत धर्म की एक अमर गाथा है। 'सावित्री सत्यवान' से किसी भी प्रकार इसका महत्व कम नही। मृत पति को जीवित करने के लिये विहुला को सदेह स्वर्ग जाना पडा। इस गाथा का सम्बन्ध बगाल के मनसा-सप्रदाय से है। लोगो का यह भी विश्वास है कि भागलपुर जिले के चम्पानगर नामक गाँव से इस गाथा का सम्बन्ध है। यह विषय विवादास्पद है, और इसका समाधान विहुला के प्रकरण में मिलेगा। पूर्वी विहार तथा बगाल में नागपचमी के दिन विहुला सती की भी पूजा होती है। विहुला आज पुराणो की देवी बन चुकी है, इस कारण इसका कालनिर्णय अत्यन्त दुरूह है। गायक इस गाथा को बडे पूज्य भाव से गाते है। प्रचलित विश्वास है कि जब विहुला की गाथा गाई जाती है तो समीप ही सर्प भी आकर सुनते हैं। यदि उस समय साँप दिखाई पड जाय तो उसे मारा नही जाता।

(८) **राजा भरथरी**—ये भी नाथ परपरा के अनुगामी थे। नवनाथो में इनका भी नाम आता है। राजा भरथरी एव रानी सामदेई की प्रसिद्ध कथा ही इस लोकगाथा का विषय है। इस गाथा को जोगी लोग ही गाते है। उज्जैन के राजवश से इनका सम्बन्ध था। ये राजा विक्रमादित्य के बडे भाई समझे जाते है तथा राजा गोपीचन्द के मामा भी बतलाये जाते है।

(९) **राजा गोपीचन्द**—नाथ सप्रदाय के अन्तर्गत 'गोपीचन्द का नाम प्रमुख रूप से आता है। नवनाथो में एक नाथ ये भी थे। जोगियो में गोपीचन्द की गाथा बहुत प्रचलित है। गोपीचन्द राज्य और भोग-विलास, सब कुछ छोडकर माता मैनावती के आदेशानुसार तपस्या करने वन में चले गये। उनके इस त्याग की कथा ही लोकगाथा रूप मेंप्रचलित है। गोपीचन्द की गाथा समस्त भारत में प्रचलित है। गोपीचन्द का सम्बन्ध बङ्गाल के पालवश से था।

भोजपुरी लोकगाथाओं का एकत्रीकरण

भोजपुरी लोकगाथाओ का एकत्रीकरण एक प्रकार से नही के बराबर ही हुआ है। आज से सत्तर वर्ष पूर्व वृहदाकार लोकगाथाओ को एकत्र करने का सराहनीय प्रयत्न श्री जी० ए० ग्रियर्सन ने किया था। आपने 'इडियन ऐंटीक्वेरी'[१] में आल्हा के विवाह के गीत का भोजपुरी रूप अँग्रेजी अनुवाद के साथ प्रकाशित करवाया है। इसी प्रकार ज़ेड० डी० एम० जी० में

१—जी० ए० ग्रियर्सन—साग आफ आल्हाज़ मैरेज—इडियन ऐन्टीक्वेरी वाल० १४—१८८५, पृ० २०९-२२७।

'सेलेक्टेड स्पेसिमेंन ग्राफ विहारी लैन्गुएज'[1] के अन्तर्गत शोभानायका वनजार की गाथा उद्धृत की है। गोपीचन्द की गाथा के मगही एव भोजपुरी रूप को जे० ए० एस० वी०[2] के एक प्रति में तया विजयमल की गाथा को जे० ए० एस० वी०[3] की दूसरी प्रति में पूर्ण रूपेण प्रकाशित करवाया है। एक विदेशी द्वारा वास्तव में यह एक सराहनीय कार्य है। ग्रियर्सन के पश्चात् भोजपुरी लोकगाथाओ का एकत्रीकरण नही हुआ। लोकगीतो को अवश्य एकत्रित किया गया। श्री रामनरेश त्रिपाठी, श्री चचरीक, श्री दुर्गाशकर सिह तथा डाक्टर कृष्ण देव उपाध्याय का नाम इस सम्वन्ध में उल्लेखनीय है। भोजपुरी लोकगाथाओ पर लोगो की दृष्टि गई अवश्य किन्तु उनका वैज्ञानिक रूप से एकत्रीकरण नही किया गया। वैसे प्राय सभी भोजपुरी लोकगाथाओ के प्रकाशित रूप कलकत्ते[4] और वनारस से[5] प्राप्त होते हैं, किन्तु ये प्रकाशन प्रामाणिक नही हैं। इनमे कथानक भी यत्र-तत्र परिवर्तित कर दिये गये हैं। इन पुस्तको से हम लोकगाथाओ के महत्त्व को नही समझ सकते। प्रत्येक प्रकाशित लोकगाथाओ पर तथाकथित रचयिता के व्यक्तित्व की छाप है। इन प्रकाशित पुस्तको से कुछ लाभ अवश्य हुआ है। प्रथमत, प्रकाशित होने के कारण ये उत्तरी भारत के प्राय सभी मेलो में विकते हैं, जिससे अन्य लोगो को भोजपुरी का परिचय मिलता है। द्वितीय, इस प्रकार से इन लोकगाथाओ का अन्य प्रदेशो में भी प्रचार हो जाता है। किन्तु इतना होते हुये भी जव तक स्वय इन लोकगाथाओ को सुना तथा एकत्र न किया जाय तव तक इनका वैज्ञानिक अध्ययन नही किया जा सकता।

लोकगाथाओं का एकत्रीकरण—लोकगाथाओ के लिये उनके मूल मौखिक रूप को प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिये गावो में जाने की अवश्यकता पडती है। कभी-कभी नगरो में भी 'आल्हा', 'गोपीचन्द' तथा 'भरथरी' के गाने वाले मिल जाते हैं, परन्तु समान्यतया गाथाओ के गायक गावो में ही

१— वही —सेलेक्टेड स्पेसिमेन ग्राफ विहारी लैन्गुएज-जेड० डी० एम० जी० १८८७, पृ० ४६८-५०९

२— ,, —अथ गीत गोपीचन्द—जे० ए० एस० वी० वाल० LVI १८८५, पृ० ३५

३— ,, —विजैमल—जे० ए० एस० वी० १८८४ (i) पृ० ९४

४—दूधनाथ प्रेस, हवडा

५—वैजनाथ प्रसाद वुकसेलर, वनारस

निवास करते हैं । लोकगाथाओ को एकत्र करने के लिये गावो मे तो भटकना पडता है साथ-साथ एकत्रीकरण में भी अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती है ।

खेती के दिनों में गाने वाले बडी कठिनाई से उपलब्ध होते हैं । ये लोकगाथाए उनके जीविकोपार्जन के साधन नही हैं । प्रधान रूप से गायक किसान अथवा मजदूर होते हैं । केवल जोगियो की जाति ही 'गोपीचन्द' तथा 'भरथरी' की गाथा सुना कर जीविकोपार्जन करती है । 'आल्हा' के गायक भी वर्षा के प्रारम्भ से अत तक आल्हा गाकर थोडा बहुत जीविकोपार्जन कर लेते हैं । शेष सभी लोकगाथाओ के गायक पेशे पर गाने वाले नही होते । इसलिये जोताई-बोआई के दिनो में इनका मिलना बडा कठिन होता है । यदि उनके खेतो में फसल आ गई है अथवा कट चुकी है तो वे अवश्य उपलब्ध हो जाते हैं ।

लोकगाथाओ के गायक अधिकाश रूप में रात को अवकाश पाने पर गाते हैं । उनमें यह प्रवृत्ति रहती है कि लोकगाथाओ को रात को भरी सभा में गाना चाहिये । वास्तव मे यह परपरा इसी कारण बनी है कि दिन मे उन्हें कार्य से अवकाश नही मिलता अत रात में थकान मिटाने के लिये गायको का दल आ जमता है । इस दल में बूढे, बालक, जवान सभी पूर्ण उत्साह से भाग लेते है । आस-पास की स्त्रिया भी सुनने के लिये चली आती हैं ।

'मुझे ये गाथाए लिखनी है'—यह प्रस्ताव सुन कर वे अचम्भित हो जाते हैं । इसके कई कारण हैं । पहला यही कि आखिर पढे-लिखे बाबुओ के लिये इन ग्राम्य-गाथाओ में धरा ही क्या है ? दूसरा यह कि ग्रामीण नही समझ पाते कि इतनी लम्बी लोकगाथाए किस प्रकार से लिखी जायेंगी । वस्तुत लोकगाथायें कठ-परपरा से ही एक दूसरे के पास चली आती हैं और गायको को लिखने अथवा पढने की आवश्यकता पडती नही । इसी कारण उन्हें लिखने-लिखाने की बात भी नही रुचती अत लिखाने के लिये उनकी मनौती करनी पडती है ।

जब वे लिखाने के लिये तैयार हो जाते ह तो उससे भी बडी कठिनाई सामने आती है । कठ परपरा से प्राप्त लोकगाथाए जब द्रुत गति से गाई जाती है तो उनकी पक्तियाँ गायक को स्मरण होती जाती हैं और गायक अबाध गति मे गाते रहते हैं । परन्तु लिखाने के लिये जब उनसे धीरे धीरे गाने को कहा जाता है तो वे गाथाओ की पक्तियाँ भूल जाते हैं, उनकी कडी टूट जाती है, प्रवाह रुक जाता है । इस प्रकार लेखक और गायक, दोनो असमजस मे पड जाते हैं ।

यदि गाथाओ का लिखने वाला शीघ्र गति का हुआ तब तो बहुत काम

वन जाता है। गायको को लिखाने में विशेष कष्ट नही होता। साथ ही उस व्यक्ति का आदर भी वढ जाता है, कि 'वावू वहुत विद्वान है'।

गाथा आप क्यो लिख रहे है ? लिख कर क्या करियेगा ? इत्यादि प्रश्नोत्तर का उत्तर देना एक जटिल समस्या होती है। कभी कभी तो लोग यह समझ लेते हैं कि पुस्तक छपवा कर पैसा कमायेगा। खोजकार्य क्या है, यह समझाने की मैंने अनेक चेष्टा की परन्तु मुझे स्वय विश्वास नही कि मैं सतोपजनक उत्तर दे सका हूँ। कुछ लोगो का व्यग भी सुनना पडा 'ढेर पढलको काल हवे' इत्यादि। इस समय पडित रामनरेश त्रिपाठी जी की कठिनाई स्मरण हो उठती है।

आल्हा, लोरिकी, गोपीचन्द तथा भरथरी की गाथा मे सहगान नही होता वरन् एक ही व्यक्ति गाता है। परन्तु अन्य लोकगाथाए दो व्यक्ति एक साथ गाते है तथा समूह भी टेकपदो मे साथ देता है।

लोकगाथाओ के श्रोता की भी सख्या पर्याप्त चाहिये अन्यथा गायको का रग नही जमता। कम सख्या मे उनका उत्साह ठडा पड जाता है। उनके उत्साह को वनाये रखने के लिये, ताडी, वीडी, पान-सुरती का भी प्रवन्ध करना पड़ता है। गाने के पश्चात् गायको को पारिश्रमिक भी देना पडता है।

गायक, लोकगायाओ के विषय मे वहुत अधिकारिक ढग से अपना ज्ञान प्रकट करते है। यदि आप उनके ज्ञान को महत्व नही दे तो उन्हे वहुत वुरा लगता है। वे प्रकाशित गाथाओ को नकली तथा स्वय की गाई हुई लोकगाथा को असली वतलाते है। इस प्रकार उनका मौखिक परपरा मे अटूट विश्वास प्रकट होता है।

लोकगाथाओ को लिखते समय कभी-कभी अध-विश्वासो का भी सामना करना पडता है। 'विहुला' की गाथा लिखते समय एक विशेष कठिनाई उपस्थित हुई। गायक गाने के लिये तैयार नही होता था। मैंने कारण पूछा। उसने उत्तर दिया कि, आज से चार वर्ष पूर्व जव वह विहुला सुना रहा था तो वहाँ पर साँपो का जोडा आ पहुँचा। एक श्रोता ने वहुत मना करने पर भी उन साँपो को मार डाला। उसी समय से उसके मन के दुख एव भय समा या और विहुला गाना वन्द कर दिया।' वास्तव मे विहुला की गाथा मे साँपो का स्थान महत्वपूर्ण है। मेरे वहुत कहने-सुनने पर उसने गाथा को गाकर लिखवाया। इस प्रकार हम लोकगाथा से सम्वन्धित एक विश्वास को पाते है।

लोकगाथाओं तथा गायको की कुछ समान विशेषतायें

यह हम पहले ही विचार कर चुके है कि भोजपुरी जीवन में लोकगाथाओं का महत्व अत्यधिक है। भोजपुरी समाज इन लोकगाथाओ को रामायण, महाभारत भागवत तथा सत्यनारायण-कथा से कम महत्व नही देता। साथ ही उसी पवित्र भाव से देहाती समाज इन गाथाओ को सुनता तथा गाता भी है। गायक इन्हें बडे विधि से गाते है। गाते समय कोई विघ्न न पडे, इसलिये गायक स्थान, समय, देवी-देवता इत्यादि सभी की विनती करते है, जिसे सुमिरण कहा जाता है।

कुछ भोजपुरी लोकगाथायें जातियो में विभाजित है। 'गोपीचन्द' तथा 'भरथरी' की गाथा केवल जोगी लोग गाते हैं। 'लोरिकी' की गाथा अहीर लोग गाते है। 'शोभानयका वनजारा' तथा 'विजयमल' की गाथा तेली और नेटुआ लोग गाते हैं। सोरठी, विहुला, इत्यादि शेष गाथाओ के गाने वालो की कोई निश्चित जाति नही होती। इन्हें किसी भी जाति के लोग गा सकते है। गोपीचन्द, भरथरी तथा लोरिकी को छोडकर अन्य गाथाओ के लिये कोई विशेष नियम नही है और कोई भी उन्हे गा सकता है। लोकगाथाओ के लोकप्रिय होने का यह एक प्रधान कारण है।

लोकगाथा जोगियो को छोड कर अन्य गायको के जीविकोपार्जन का साधन नही है। ये लोग केवल अपनी रुचि एव परपरा से सीखते है। कभी कभी तो ये गवैये मेलो में जाकर बैठ जाते है और गाथाओ का गान करते है। लोगो की भीड एकत्र हो जाती है। वहाँ यदि कोई पैसा भी देना चाहे तो वे गायक उसे नही लेते। इसके उनसे स्वाभिमान को चोट पहुँचता है।

एक ही गाँव में यदि एक लोकगाथा-विशेषके गाने वाले दो व्यक्ति हुये तो उनकी शब्दावली भिन्न होगी, यद्यपि कथा समान ही रहती है। इसका प्रधान कारण है कठ-परपरा। केवल जोगियो को एक ही ढग से गाते हुये सुना जाता है।

प्राय सभी गायको का राग एक ही ढग का होता है। वैसे इच्छानुसार वे वदल भी लेते हैं। तात्पर्य यह कि प्रत्येक लोकगाथाओ का अपना-अपना एक राग होता है, परन्तु गवैयो को राग वदलने की स्वतन्त्रता रहती है। 'सोरठी लोकगाथा को मैंने दो-तीन रागो में सुना था। इन रागो का शास्त्रीय राग-पद्धति से कोई सम्बन्ध नही।

लोकगाथाओ में वाद्ययन्त्रो का होना अनिवार्य है। जोगियो की सारगी उनके वेप-भूपा का एक अङ्ग है। 'गोपीचन्द' और 'भरथरी' वे मारङ्गी पर ही

गाते हैं। सोरठी, विहुला, शोभानयका, वनजारा, कुवरसिंह, विजयमल आदि गाथाएँ खँजडी पर गायी जाती हैं। साथ में टुनटुनी भी रहती है। 'आल्हा' की गाथा ढोल पर गाई जाती है। वस्तुत वाद्यो के ताल-स्वर पर गाते हुए गायक सपूर्ण वातावरण को इतना भावमय बना देते है कि तदनुकूल श्रोता-जन कभी रोमाचित हो जाते है और कभी करुणा-विगलित हो जाते हैं।

प्राय सभी भोजपुरी लोकगाथाए एक बार में गाकर समाप्त नही की जाती क्योकि ये अत्यधिक लम्बी होती हैं। इसलिये इन्हें टप्पे में गाया जाता है। 'टप्पा' एक प्रकार का सर्ग-विभाजन है। एक टप्पे में एक छोटा कथानक रहता है। लोकगाथाए सुमिरण से प्रारभ की जाती हैं। साथ-साथ प्रत्येक टप्पे के प्रारम्भ में भी एक छोटा सुमिरण रहता है। वस्तुत टप्पो मे गायक को विश्राम मिलता है।

गायक वृन्द लोकगाथाओ की प्राचीनता सतयुग-त्रेता से कम नही वतलाते लोकगाथाओ की ऐतिहासिकता पर इनका अटूट विश्वास है। यह उनका एक ऐसा विश्वास है जिसके लिए उनके पास कोई प्रमाण नही। गायक भी गाथाओ के अतिवर्णनो, काल तथा स्थान दोषो को स्वीकार करते है।

लोकगाथा के आदि-रचयिता के विषय में सभी गायक मौन रहते हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओं का वर्गीकरण

अध्ययन की दृष्टि से भोजपुरी लोकगाथाओ का वर्गीकरण अत्यन्त आवश्यक है। किस गाथा में किस भावना की विशेष प्रधानता है, इसी एकमात्र तथ्य के आधार पर इनका वर्गीकरण किया जा सकता है। डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने भोजपुरी लोकगाथाओ को तीन भागो में बाँटा है जो इस प्रकार हैं—[१]

१—वीरकथात्मक लोकगाथायें

२—प्रेमकथात्मक लोकगाथायें

३—रोमाचकथात्मक लोकगाथायें

ऊपर के विभाजन से स्पष्ट है कि भोजपुरी लोकगाथाओ में हमे तीन तत्व प्राप्त होते है प्रथम वीर-तत्व, द्वितीय प्रेम-तत्व, तृतीय रोमाच-तत्व। भोजपुरी लोकगाथाए प्रमुख रूप मे इन्ही तीन तत्वो में विभाजित हैं। इनके अतिरिक्त एक

---

१ डा० कृष्णदेव उपाध्याय 'भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन', पृ० ४९९

और तत्व भी इन लोकगाथाओ मे मिलता है, जिसकी ओर उपाध्याय जी का ध्यान नही गया है, वह है योग-तत्व। भोजपुरी लोकगाथाओ के अन्तर्गत 'राजा गोपीचन्द' एव 'भरथरी' की गाथा इसी वर्ग मे आती है। इन दोनो गाथाओ में वीरता, लौकिक प्रेम तथा रोमाच का पुट प्राय नही के बराबर है। यह दोनो त्याग एव तप की गाथाए है। सासारिक मोह-माया को छोड कर गोपीचन्द और भरथरी नाथ-धर्म की शरण लेते है। अतएव इन दोनो लोकगाथाओ को एक अलग वर्ग में ही रखना उचित है।

इस वर्गीकरण का यह अर्थ नही है कि तत्व विशेष की दृष्टि से विभाजित लोकगाथाओ मे अन्य तत्व नही मिलते है। वास्तव मे प्रत्येक लोकगाथा मे प्रत्येक तत्व मिलता है। उदाहरण के लिये आल्हा को हम वीर कथात्मक गाथा मानते है, परन्तु उसमें प्रेम-तत्व एव रोमाच तत्व का भी अभाव नही है। इसी प्रकार प्रत्येक लोकगाथा में किसी-न-किसी रूप में प्रत्येक तत्व वर्तमान है किन्तु प्रत्येक मे कोई न कोई तत्व विशेष प्रधान है। इस दृष्टि से भोजपुरी लोकगाथाओ को हम चार भागो में बाँट सकते है —

१—वीरकथात्मक लोकगाथाए

२—प्रेमकथात्मक लोकगाथाए

३—रोमाचकथात्मक लोकगाथाए

४—योगकथात्मक लोकगाथाए

वीरकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत भोजपुरी की चार लोकगाथाए आती है। वे है, आल्हा, लोरिकी, विजयमल तथा बाबू कुवरसिंह इन चारो लोकगाथाओ के अन्तर्गत वीरतत्व की प्रधानता है। वास्तव में भोजपुरी जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाली लोकगाथाए, वीरकथात्मक गाथाए ही है। बाबू कुवरसिंह की गाथा को तो हम अर्वाचीन लोकगाथा कह सकते हैं क्योकि इस का सबध १८५७ के भारतीय विद्रोह से है। परन्तु अन्य तीनो लोकगाथाओ पर भारतवर्ष की मध्ययुगीन सस्कृति एव सभ्यता का स्पष्ट प्रभाव है। रजीपूती वीरता, युद्ध की कठिनता, प्रेम एव लोकरजन का अत्यन्त सुन्दर चित्र इन गाथाओ में चित्रित किया गया है। ये चारो वीर भारतीय आदर्श एव वीरता की मूर्तिमत प्रतीक हैं। दुष्टो का दमन करने के हेतु ही इनके नायको का जन्म हुआ है। इन्हें पग-पग पर कष्ट झेलना पडता है। विवाह भी बिना युद्ध के नही सपन्न होता परन्तु ये वीर, पथ की बाधाओ से नही विचलित होते। इनका पक्ष सत्य ह, इसलिये देवी-देवता भी इन्ही की सहायता करते है।

भोजपुरी प्रेमकथात्मक लोकगाथा के अन्तर्गत केवल एक ही गाथा आती

है, वह है 'शोभानगका बनजारा' की गाथा। वस्तुत यह एक प्रेम-काव्य है। इसमें न युद्ध है न कोई विशेष रोमाच ही। त्याग और संन्यास का तो कोई प्रश्न ही नही। यह पति-पत्नी के प्रेम एव विरह का सुन्दर चित्र है। यह लोकगाथा व्यापारी जाति से सम्बन्ध रखती है। इसमें भारतीय स्त्री के महान् पातिव्रत धर्म की अन्यतम झाँकी मिलती है।

भोजपुरी रोमाचकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत दो लोकगाथायें आती है, 'सोरठी' तथा 'विहुला'। इन दोनो लोकगाथाओ में सोरठी और विहुला का पातिव्रत-धर्म लौकिक धरातल से उठकर अलौकिक स्तर पर पहुँच गया है। वे साधारण स्त्रियाँ नही रह गई है वरन् देवियाँ वन गई है। इनकी तुलना हम पौराणिक सती देवियो से कर सकते हैं। इनका जन्म एक विशेष प्रयोजन के लिये हुआ है। अपनी इहलीला समाप्त करके ये स्वर्ग को चली जाती है, परन्तु अपनी परपरा छोड जाती है। सीता, सावित्री, दमयन्ती के समान इनका चरित्र है। भोजपुरी समाज इन्हे अत्यन्त पूज्य भाव से देखता है। इनका इहलौकिक जीवन रोमाचकारी घटनाओ से भरा पडा है। इनके इगित पर स्वर्ग की अप्सरायें, दुर्गा, भगवती एव स्वय इन्द्र भी कार्य करते है। इन दोनो लोकगाथाओ में जादू, टोना, तथा अद्‌भुत युद्धो का अत्यधिक वर्णन है। थलचर, वनचर, नभचर सभी इसमें प्रमुख भाग लेते हैं। इन दोनो देवियो की कर्तृत्व शक्ति अत्यन्त प्रवल है, परन्तु कही भी स्वाभाविक स्त्रीत्व एव भारतीय आदर्श से च्युत नही होती। ये पातिव्रत-धर्म के अनुकूल पति को भगवान के रूप में देखती है और पति के सुख के लिये अनेको यातनायें सहती है। स्वर्ग के सभी देवी-देवता इनकी सहायता करते हैं। इन दोनो गाथाओ में यह दिखलाने की चेष्टा की गई है, कि असत्य के अनुगामी चाहे कितने भी प्रवल क्यो न हो, उनका अत में पराभव ही होता है।

भोजपुरी योगकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत 'राजा गोपीचन्द' एव 'भरथरी' की गाथा आती है। यह दोनो गाथाए मध्ययुग के नाथ-संप्रदाय से सवन्ध रखती है इन गाथाओ में नाथधर्म के जटिल सिद्धान्तो का अत्यन्त सरल एव लोकप्रिय ढग से प्रतिपादन किया गया है। इन गाथाओ में ससार मिथ्या है, शरीर नश्वर है, सारा वैभव-विलास सारहीन है, ऐसे तत्त्वो का सुन्दर रीति से प्रतिपादन हुआ है। दो प्रतापी राजाओ के त्याग एव तप की कहानी है। सासारिक मोहामाया को त्याग कर ये राजा योगी भेष धारणकर तप के लिए चले जाते है।

भोजपुरी लोकगाथाओं का उद्देश्य—समस्त भोजपुरी लोकगाथाओ में सत्य, सुन्दर, और शिव का सिद्धान्त निहित है। लोकगाथाओ के नायक एव

नायिकाएँ अपने कर्तृत्व से समाज में सदाचार और कर्मशीलता उत्पन्न करने की चेष्टा करते हैं। वास्तव में इन लोकगाथाओ में हमारे देश की सास्कृतिक एवं आध्यात्मिक प्रतिभा का सुन्दर विकास हुआ है। खल प्रवृतियां चाहे कितनी भी प्रबल क्यो न हो, वे कितनी भी दलबल के साथ क्यो न आक्रमण करती हो परन्तु चिरन्तन सत्य और तपश्चर्या के सम्मुख उनका पराभव लोकगाथाओ में चित्रित किया गया है। सत्य की विजय और असत्य का पराभव ही इन लोकगाथाओ का उद्देश्य है। 'आल्हा' तथा 'बाबूकुँवरसिह', की गाथा का अन्त यद्यपि करुणाजनक है, परन्तु उनमें हम नायको की कर्मशीलता एव सच्चरित्रता से सत्य की विजय निहित देखते हैं। लोकगाथाओ में सत्य का पक्ष देवी-देवतागण भी लेते हैं, वे नायको एव नयिकाओ को अनेक सहायता देते हैं और उनको विजय दिलाते हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ मे निहित इस उद्देश्य का पूर्ण विचार हमें अगले अध्यायो मे मिलेगा ।

अध्याय ३

भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथा का अध्ययन

(१) आल्हा—भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ में 'आल्हा' का स्थान प्रमुख है। भोजपुरी लोकगाथा न होते हुये भी भोजपुरी प्रदेश में इसका अत्यधिक प्रचार है। यहाँ के जीवन से यह लोकगाथा अभिन्न हो गई है। अब यह जगनिककृत आल्हखड सर्वथा भोजपुरिया 'आल्हा' हो गई है। इसके भोजपुरी रूप को देख कर यह कोई नही कह सकता कि यह वैसवारी का रूपान्तर है।

हिन्दी साहित्य के वीरगाथा काल के अन्तर्गत 'आल्हा' का उल्लेख होता है। वीरगाथाकाल में प्रबधकाव्यो एव महाकाव्यों के साथ साथ वीरगीतो की रचना प्रचुर मात्रा में होती थी। वह अराजकता का काल था। नित्य युद्ध दुन्दुभी बजा करती थी। मुसलमान आक्रमणकारियो से तो युद्ध होता ही था, साथ-साथ फूट के कारण छोटे मोटे राजा आपस में निरन्तर युद्ध किया करते थे। इस कारण उस काल के कवियो एव गीतकारो ने वीरगाथा अथवा वीर गीतो की रचना की है। डा० श्यामसुन्दरदास का कथन है कि प्रबधमूलक वीरगाथाओ के अतिरिक्त उस काल में वीरगीतो की भी रचनायें हुई थी। अनुमान से तो ऐसा जान पडता है कि उस काल के रचनाओ में प्रबधकाव्यो की न्यूनता तथा वीररसात्मक फुटकर पद्यो की ही अधिकता रही होगी। अशान्ति तथा कोलाहल के उस युग मे लम्बे-लम्बे चरित्-काव्यो का लिखा जाना न तो सभव ही था और न स्वाभाविक ही। अधिक सख्या में वीरगीतो का ही निर्माण हुआ होगा। युद्ध के लिए वीरो को प्रोत्साहित करने में और वीरगति पाने पर उनकी प्रशस्तियाँ निर्माण करने में वीरगीतो की ही उपयोगिता अधिक होती है।[1]

आल्हा की रचना भी इन्ही वीरगीतो के अन्तर्गत आती है। यह निश्चित है कि 'आल्हा' के समान और भी वीरगीतो की रचना हुई होगी, परन्तु वे काल कवलित हो गये। जैसे जैसे भाटो चारणो की सख्या कम होती गई वैसे वैसे उन गीतो का भी अन्त हो गया। परन्तु जगनिक कृत 'आल्हखड' अपनी ओजस्विता एव लोकप्रियता के कारण बचा रहा। हम प्रथम अध्याय में ही इस पर विचार

१—डा० श्यामसुन्दर दास 'हिन्दी भाषा और साहित्य' पृ० २७७

कर चुके हैं। जिस प्रकार प्राचीनकाल मे अनेक लोकगाथायें प्रचलित थी परन्तु आदर्शवादी 'राम' की ही लोकगाथा सर्व प्रिय हुई। महाकवियो ने इसी रामगाथा को ही अपना विषय, चुना। शेष, समय के साथ समाप्त हो गई। यही बात 'आल्हा' पर लागू होती है।

'आल्हा' की लोकगाथा के अध्ययन के साथ एक नए तथ्य का उद्घाटन होता है। 'भारतीय लोकगाथाओ की परम्परा' शीर्षक अध्याय में हमने विचार किया है कि जब कोई गाथा, गाथाचक्र का रूप धारण कर लेती है, तो निकट भविष्य में महाकाव्य के जन्म होने की सभावना हो जाती है। परन्तु आल्हा की लोकगाथा इसके विपरीत है। कुछ विद्वानो के मत के अनुसार प्रथमत आल्हा महाकाव्य की रचना 'आल्हखड' अथवा परमालरासो के रूप मे हुई थी। हस्तलिखित प्रति के न मिलने के कारण अथवा अपनी ओजस्वी वृत्ति के कारण यह काव्य पुन लोक की ओर मुड चला और लोकगाथा के रूप में अमरता प्राप्त की। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि कभी-कभी लिखित काव्य भी अपने मूल कलेवर को छोडकर जनता जनार्दन के कठ में आ विराजता है।[1] वर्तमान समय में 'आल्हा' एक विशुद्ध लोकगाथा होते हुए भी उसे 'लोकगाथात्मक महाकाव्य' सिद्ध करने की चेष्टा हो रही है।

एकत्रीकरण—'आल्हा' की मूललिपि का पता नही चलता। सन् १८६५ में फर्रूखाबाद के भूतपूर्व सेटिलमेंट आफिसर श्री चार्ल्स इलियट ने इसे प्रथमत लिपिबद्ध करवाया था। इसके पश्चात् सर जार्ज ग्रियर्सन ने बिहार में गाई जाने वाली 'आल्हा' के कुछ अश का अग्रेजी अनुवाद भी किया[2]। इस प्रकार का कार्य श्री विन्सेन्ट स्मिथ ने भी आल्हा के बुदेली रूप के सबध में किया। इसके पश्चात् सर जार्ज ग्रियसन के सपादकत्व में १८२३ में श्री डब्ल्यू० वाटरफील्ड ने आल्हा के एक भाग का अग्रेजी रूपान्तर 'दी नाइन लाख चेन्स' के नाम से 'कलकत्ता रिव्यू' में प्रकाशित करवाया था। श्री वाटरफील्ड ने 'आल्हा' के कुछ अन्य प्रमुख भागो का अग्रेजी अनुवाद करके प्रकाशित करवाया था।[3] इसके पश्चात् एकत्रीकरण का और कार्य नही हुआ।

'आल्हखड' का प्रकाशित रूप बाजारो एव मेलो में बिकता है।[4] इसमें बावन युद्धो का वर्णन है। निस्सन्देह इसमें मिश्रण हुआ है। डा० श्यामसुन्दर

१—डा० शभूनाथ सिंह-हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास—पृष्ठ ३३९
२—इन्डियन ऐन्टीक्वेरी वाल १४-१८८५-दी साग आफ आल्हाज़ मैरेज
३—डब्ल्यू-वाटरफील्ड-दी ले आफ आल्हा
४—आल्हखड-दूबनाथप्रेस हवडा

दास का कथन है कि 'वीरगाथाकाल की रचनाओ मे तो विभिन्न कालो की घटनाओ के ऐसे अमवद्ध वर्णन घुस गये है कि वे अनेक कालो में अनेक कवियो की हुई रचनाएँ जान पडती हैं।" इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि गायको ने अपनी ओर से भी 'आल्हखड' में मिश्रण किया है, तथा युद्धो की सख्या अनावश्यक रूप से बढा दी है। प्रकाशित पुस्तक में युद्ध की तालिका इस प्रकार है।

(१) सयोगिता स्वयवर की लडाई (पृथ्वी राज तथा जयचन्द का युद्ध) (२) रतीभान की लडाई (३) महोवे की लडाई (४) माडो की लडाई (५) अनूपीठोडरमल से लडाई (६) सूरजमल से लडाई (७) करिया की लडाई (८) जम्बै राजा की लडाई (९) सिरसा की पहली लडाई (पारथ मलखान समर) (१०) आल्हा का व्याह (नैनागढ की लडाई) (११) पथरीगढ की लडाई (मलखान का व्याह) (१२) बौरीगढ की लडाई (१३) गजकुमारो की लडाई (१४) वीरशाह राजा की लडाई (१५) दिल्ली की लडाई (१६) दरवाजे की लडाई (१७) मडवेतर की लडाई (१८) नरवर गढ की लडाई (१९) इन्दल हरण (२०) बलख बुखारे की लडाई (२१) अभिनन्दन की लडाई (२२) आल्हा निकामी (आल्हा का कन्नौज में जाना) (२३) लाखन का व्याह (शहर बूंदी की लडाई) (२४) मोती जवाहिर की लडाई (२५) राजा गगाधर की लडाई (२६) गाजर की लडाई (२७) हरीसिह वीरसिह की लडाई (२८) मार्तनि राजा की लडाई (२९) राजा कमलापति की लडाई (३०) भूप गोरखा बगाले की लडाई (३१) बाडइसा आदि की लडाई (३२) लाखन के गौना की लडाई (३३) सिरसा की दूसरी लडाई (३४) चौरा नायब और मलखान की लडाई (३५) धीरसिह तथा मलखान की लडाई (३६) गुजरियो की लडाई (३७) अभई रजित की लडाई (३८) ब्रह्मानद की लडाई (३९) योगियो (आल्हा ऊदल) आदि की लडाई (४०) आल्हा मनौआ (४१) सिहा ठाकुर परहुल वाले से लाखन की लडाई (४२) गगासिह कोडहरी वाले से आल्हा की लडाई (४३) नदी बेतवा की लडाई (४४) लाखन और पृथ्वी राज की लडाई (४५) ऊदल का नदी बेतवा पर पहुँचना (४६) बेला के गवने की पहली लडाई (४७) बेला के गवने की दूसरी लडाई (४८) ब्रह्मानद का घायल होना (४९) बेला ताहर की लडाई (५०) चन्दन बगिया की लडाई (५१) चदन खभा की लडाई (५२) बेला सती।

चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा ने अपनी 'आल्हा' नामक पुस्तक में केवल बत्तीस युद्धो का वर्णन किया है। ऐसा प्रतीत होता कि आपने 'आल्हखड' के

ने वनाफरो को अपने यहाँ रखा है जो कि अच्छे कुल के नही समझे जाते थे। परतु किसी भी नृपति ने नैनागढ के भय से विवाह का प्रस्ताव स्वीकार नही किया।

वास्तव मे इसका कारण यह था कि उन दिनो विवाहो मे अनिवार्य रूप से युद्ध हुआ करता था। कभी कभी नववधू तक उसमे विधवा हो जाया करती थी। नैनागढ मे विशेष रूप से लोग इसलिये घवडाते थे कि राणा के यहाँ अमरढोल था जिसे वजाते ही मृत सिपाही जीवित हो जाते थे।

सोनवा का व्याह कही तय नही हुआ। सोनवा आल्हा के गुणो पर पहले ही से मोहित हो चुकी थी। उसने हीरामन तोते के गले मे एक पत्र बाँधकर अल्हा के पास भेजा। ऊदल ने यह पत्र खोल कर पढ़ा और राजा परमाल को दिखलाया। परमाल भीरू था, उसने यह विवाह स्वीकार नही किया। मलखान गरज पडा और उसने विवाह की तैयारी की आज्ञा दे दी। रानी मल्हना का आशीर्वाद लेकर वारात चल पडी। नैनागढ की सीमा पर वारात जव पहुँची तो रूपना वारी ऐपनवारी लेकर राजदरवार मे गया और नेग में युद्ध माँग कर युद्ध किया। अव तो युद्ध की घोषणा हो गई। वहुत घमासान युद्ध हुआ। नैनागढ की सेना हार गई, परन्तु अमरढोल के कारण सेना पुन जीवित हो उठी। ऊदल, सोनवा की सहायता से अमरढोल का पता लगा कर उसे उठा लाया। दूसरे दिन युद्ध हुआ तो नैनागढ की सेना वुरी तरह मारी गई। नैनागढ के राजा ने देवी की आराधना की, देवी ने ढोल आल्हा के यहाँ से उठा कर इन्द्र के यहाँ पहुँचा दिया तथा उसे फोडवा दिया। लग्न मडप में पुन युद्ध हुआ, परन्तु ऊदल ने सव को परास्त किया और आल्हा को कैद से मुक्त किया। राजा के पुत्रो को उसने कैदकर लिया और डोला उठा कर महोवा की ओर चल दिया।

प्रस्तुत दोनो रूपो की समानता एव अन्तर—लोकगाथा के दोनो रूपो की कथा प्राय एक समान है। केवल कथानक में अन्तर मिलता है।

लोक गाथा के वैसवारी रूप में कथा सोनवा के चरित्र से प्रारम्भ होती है तथा भोजपुरी रूप मे आल्हा और ऊदल से। वैसवारी रूप में अमरढोल तथा हीरामन तोते का उल्लेख किया गया है। भोजपुरी रूप म इसका उल्लेख नही है। वैसवारी रूप में नैनागढ का राजा नैपाली है जिसके तीन पुत्र है जोगा, भोगा, तथा विजया। भोजपुरी रूप में नैनागढ के राजा मदनसिंह तथा उसके लडके इदन्रमन, समदेवा और छोटक का उल्लेख है। आल्हखड के प्राय प्रत्येक भाग मे रुपनावारी के ऐपनवारी की घटना का वर्णन है।

भोजपुरी रूपो में रुपना का उल्लेख कम होता है तथा प्रस्तुत रूप मे रुपना का उल्लेख ही नही है । भोजपुरी रूप में स्वय आल्हा का दरबार लगा हुआ है, इसमे राजा परमाल का कही उल्लेख नही है । बैसवारी रूप में आल्हा और ऊदल, सब राजा परमाल की अधीनता में कार्य करते है ।

लोकगाथा का भोजपुरी रूप, बैसवारी से छोटा है । बैसवारी रूप की कथा अत्यन्त वृहद् है तथा उसमें छोटी-मोटी उपकथाए वर्णित है । क्षण-क्षण में कथानक बदलता रहता है परन्तु अन्त दोनो ही रूपों का एक समान है । सामान्यतया भोजपुरी आल्हा प्रकाशित बैसवारी मे थोडी भिन्नता रखता है, परन्तु कथा के प्रधान चरित्रो एव कथा के अन्त में समानता है ।

उपर्युक्त समानता एव अन्तर की परिपाटी आल्हाखड के सम्पूर्ण गीतो मे व्याप्त है । अत यह स्पष्ट हो जाता है कि भोजुरी आल्हा, बैसवारी आल्हा से बहुत दूर नही है । आज तो भोजपुरी प्रदेश में शिक्षा के प्रभाव के कारण आल्हा के प्रकाशित बैसवारी रूप का ही प्रभाव बढ रहा है ।

'आल्हा, की ऐतिहासिकता—आल्हा की कथा बारहवी शताब्दी के तीन प्रधान राजाओं से सबध रखती है दिल्ली के पृथ्वी राजचौहान, कन्नौज के जयचद गहरवार तथा महोबा के राजा परर्मादिदेव । लोकगाथा में जयचन्द को राठौर वश का बतलाया गया है जो कि ऐतिहासिक दृष्टि मे गलत है । जयचन्द वास्तव में गहरवार वश से सबध रखते थे । इतिहासकारो का मत है कि इन तीन राज्यो में कन्नौज के राजा जयचन्द सबसे प्रबल थे । मुसलमान इतिहासकारो ने उनके राज्य की सीमा पूरब में बनारस तक बतलाई है । लोकगाथा मे उनके राज्य का विस्तार विहार, बगाल, उडीसा और आसाम तक बतलाया गया है ।

यह तो सत्य है कि बारहवी शताब्दी में जयचद और पृथ्वीराज उत्तरी भारत के प्रमुख शासक थे । पृथ्वीराज द्वारा जयचद की कन्या सयोगिता के हरण की कथा तो सभी जानते है । उसी समय से जयचचद और पृथ्वी-राज का वैमनस्य प्रारम्भ होता है जिसका अत मुहम्मद गोरी के आक्रमणो के साथ होता है । जयचद के राज्य के अतर्गत महोबा भी एक छोटा सा राज्य था, जिसका अधिपति राजा परिमर्दिदेव था । राजा परर्मादिदेव का इतिहास अधिक नही मिलता, क्योंकि राजा के समान उसने इतिहास में लिखने योग्य कोई भी महत्वपूर्ण कार्य नही किया । उसके नाम का उल्लेख पृथ्वी-राज रासो तथा लोकगाथा में ही होता है । आठवी शताब्दी में चदेलवशी क्षत्रियो ने महोबे पर अपना आधिपत्य स्थापित किया था । उसी समय से महोबा

एक महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया। चदेल वश के अन्तिम वशधर राजा पर्मर्दिदेव ११८५ के निकट महोवा की गद्दी पर बैठे और ओरई (बेतवा नदी के पार एक बस्ती) के सरदार माहिल परिहार की वहिन मल्हना से विवाह किया।[1] सिंहासनारुढ होने के साथ साथ ही वे जयचन्द की अधीनता मे आ गये। लोकगाथा में परमाल एक अत्यन्त भीरु राजा के रूप में वर्णित हुआ है। उसकी स्त्री मल्हना बहुत ही कुशल स्त्री थी।

महोबा राज्य तथा राजा परमर्दिदेव को जनसमाज में जो महत्व मिला है, उसका श्रेय है आल्हा और ऊदल को। आल्हा और ऊदल महोबा के प्रधान सामतो में से थे। आल्हा और ऊदल बनाफर-शाखा के क्षत्रिय थे। बनाफर क्षत्रियो को कुलीन क्षत्रिय नही समझा जाता था। इसी कारण आल्हा और ऊदल को अनेक युद्ध करने पडे थे।

बनाफर क्षत्रियो के विषय में दो प्रधान मत है। प्रथम मत लोकगाथा के अनुसार है। बिहार के बक्सर नामक स्थान से दसराज, बछराज, रहमल तथा टोडर नाम के चार क्षत्रिय सरदार महोबा में उस समय उपस्थित थे जब कि माडो के राजा करिंघा ने महोबा पर आक्रमण किया था। इन चारो सरदारो ने किले के द्वार पर खडे होकर युद्ध किया तथा करिधा को पराजित किया। राजा परमाल ने प्रसन्न होकर अपनी सेना में उन्हें उच्च पद दिया। दसराज और बछराज ने विवाह किया। दसराज के दो पुत्र हुए जिनका नाम आल्हा और ऊदल था। बछराज के भी दो पुत्र हुये जिनका नाम मलखान तथा सुलखे अथवा सुलखान था। आल्हा और ऊदल की माता का नाम 'देवी' अथवा 'दीवलदे' था तथा मलखान, सुलखान की माता का नाम 'बिरम्हा'। 'दीवलदे' तथा 'बिरम्हा' आपस में सगी बहनें थी। इनके पिता का नाम राजा दलपतसिंह था जो ग्वालियर के राजा थे।

बनाफरो की उत्पत्ति के विषय में द्वितीय मत जनश्रुति के अनुसार है। यह कहा जाता है कि एक दिन दसराज तथा बछराज शिकार खेलने के लिये वन में गये। वहाँ उन्होने दो साडो को आपस में लडते देखा। दो अहीर कन्यायें भी वहाँ उपस्थित थी। उन कन्याओ ने साडो के लडने के कारण दोनो सरदारो के मार्ग को अवरुद्ध देखकर एक-एक साड की सीगे पकड ली और उन्हे पीछे कर दिया। दसराज तथा बछराज यह वीरता देखकर चकित रह गये। उन्होने

१—वाटरफील्ड—दी ले आफ आल्हा, भूमिका ग्रियर्सन पृ० १५–१६

विचार किया कि इन कन्याओ से उत्पन्न पुत्र निश्चय ही महावली होगें। अतएव दोनो ने वही उन कन्याओ से विवाह कर लिया, जिसके फलस्वरूप चारो वीर वालक उत्पन्न हुए।[१]

यह जनश्रुति सच हो अथवा झूठ परन्तु इतना निश्चित है कि 'वनाफर' क्षत्रियो को अब भी कुलीन क्षत्रिय नही समझा जाता। वैसे आल्हा और ऊदल ने अपनी वीरता और उदारता से तो क्षत्रियत्व का ही परिचय दिया है।

उत्तर भारत में वनाफर लोग वहुत वडी सख्या में मिलते है। मिर्जापुर, वनारस से लेकर कानपुर, वादा तक वनाफर क्षत्रिय ही अधिक मिलते है। ये लोग स्वय को काश्यप गोत्रीय यदुवशी क्षत्रिय तथा अपना उद्भव स्थान महोवा वतलाते हैं।[२]

लोकगाथा में अनेक राजाओ के नाम आये है। उनकी ऐतिहासिकता के विपय में अभी तक प्रकाश नही डाला जा सका है। विद्वानो का मत है कि अधिकाश नाम काल्पनिक है। केवल, तीन नाम, पृथ्वीराज, जयचन्द, तथा परमाल इतिहास में प्राप्त होते है।

स्थानो के नाम भी अधिकाश रूप में काल्पनिक ही जान पडते है। यदि वे रहे भी होगें तो अब उनकी भौगोलिक सत्ता मिट चुकी है। कुछ स्थान आज भी वर्त्तमान हैं जिन्हे नीचे दिया जाता है।[३]

१—महोवा—हमीरपुर जिले (उत्तर प्रदेश) के अन्तर्गत आधुनिक पन्ना और चरखारी राज्य के वीच में स्थित है।

२—कन्नौज—कानपुर से उत्तर गगा के किनारे आज भी यह नगर प्रसिद्धि रखता है।

३—सिरसा—लोकगाथा में 'सिरसा की लडाई' का वर्णन है। यह स्थान ग्वालियर के दक्षिण यमुना की एक सहायक नदी के समीप स्थित है।

४—नरवर—लोकगाथा में 'नरवरगढ' का वर्णन मिलता है। 'नरवर' सिरसा से दक्षिण पश्चिम के कोने पर चम्वल नदी की एक शाखा के समीप स्थित है।

१—वही

२—रेवरेन्ड एम० ए० शेरिंग-हिन्दू ट्राइव्स एण्ड कास्ट्स ऐज रिप्रेज़ेन्टेड इन वनारस पृ० २२३-२२४

३—'दि ले आफ आल्हा' पुस्तक मे दिये हुये मानचित्र के अनुसार

५—बूंदी—लोकगाथा मे 'बूंदी की लडाई' वर्णित है। बूंदी, राजपूताना में प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है जो कि चित्तौड से उत्तर दिशा में है।

६—माडोगढ़—लोकगाथा में 'माडोगढ की लडाई वर्णित है। माडोगढ नर्वदा नदी के उत्तरी किनारे पर धार रियासत में स्थित है।

७—बेतवा नदी—लोकगाथा में 'बेतवा नदी की लडाई वर्णित' है। बेतवा यमुना की सहायक नदी है जो कि कालपी से आगे पूरब की ओर मुड कर यमुना से मिलती है। यह नदी महोवा से पश्चिम मे पडती है।

८—उरइ—यहाँ माहिल परिहार रहता था जो चुगलखोरी के लिए प्रसिद्ध था। ओरई आजकल एक छोटा सा कस्बा है जो कानपुर जिले में है।

लोकगाथा में दिल्ली, जयपुर, चित्तौड इत्यादि अनेक नगरो के वर्णन है जिनकी भौगोलिकता से हम पूर्णतया परिचित है। नदियो में गगा, चबल, बेतवा, यमुना इत्यादि का वर्णन आता है जो कि भौगोलिक दृष्टि से उस प्रदेश के लिये उपयुक्त है।

९—नरवरगढ़—यह स्थान ग्वालियर राज्य में आज भी है। यहाँ के राजा नरपति की कन्या फुलवा से ऊदल का ब्याह हुआ था।

१०—नैनागढ़—यह स्थान भोजपुरी प्रदेश में ही है। मिर्जापुर जिले में चुनार के नाम से यह स्थान विख्यात है। आल्हा का व्याह यही हुआ था।

११—बिठूर—कानपुर जिले में एक ऐतिहासिक स्थान है। ऊदल की मा का चन्द्रहार करिगाराय ने यही के मेले में छीन लिया था।

१२—खजुआगढ़—यह बुंदेलखड के छतरपुर राज्य मे आजकल खजु-राहो के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ चन्देलवशीय राजाओ की पुरानी राजधानी थी।

१३—बौरीगढ़—यह स्थान बुंदेलखड में है। यहाँ के राजकुमार से परमाल की कन्या चन्द्रावली का विवाह हुआ था।

आल्हा-ऊदल का चरित्र—'आल्हा' में वीर चरित्रो का बाहुल्य है। आल्हा, ऊदल, मलखान, सुलखान, रुपनाबारी, रानी मल्हना तथा वेला का चरित्र उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त इन्दल, ब्रम्हा, ढेवा का भी चरित्र प्रशसनीय है। ये चरित्र राजपूती वीरता के सुन्दर एव भव्य उदारहण उपस्थित करते हैं। ग्रियर्सन का कथन है कि 'आल्हा' की लोकगाथा एक महान् कथा है, जिसमें अनेक प्रकार के चरित्रो का वर्णन किया गया है।[1] दुष्ट तथा इर्ष्यालु

---

१ वाटर फील्ड—दी ले आ आल्हा—ग्रियर्सन की भूमिका पृ० २०

चरित्रो में 'माहिल' का चरित्र उल्लेखनीय है। माहिल, रानी मल्हना का भाई था। मल्हना ने उसके दुष्कृत्यो को अनेक वार क्षमा किया था। ग्रियर्सन ने 'वेला' के चरित्र की भूरि-भूरि प्रशसा की है। वेला का चरित्र सवके हृदयो मे जौहर का अनुपम चित्र एव करुणा का भाव जागृत कर देता है।

उपर्युक्त सभी चरित्रो में आल्हा, ऊदल का चरित्र अत्यन्त महान् एव सर्व-व्यापक है। स्वामिभक्ति, रणकुशलता एव उदारता उनके जीवन के प्रधान अग है। ग्रियर्सन के कथनानुसार वे भारतीय वीरता के आदर्श प्रस्तुत करते है जिसे 'धीरवीर' कहा जाता है। वारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में देश की अराजक परिस्थित में इन दो वीरो ने अपने कर्त्तव्य से भारतीय वीरता की परम्परा को अक्षुण्ण रखा। खड्ग ही उनका जीवन-साथी था। जीवन की प्रत्येक समस्या का हल खड्ग ही करती थी। उनके जीवन का मूलमत्र था—

वारह वरिस लै कूकर जीयें,
औ तेरह ले जीयें सियार।
वीस अठारह छत्री जीयें,
आगे जीवन को धिक्कार॥

इस प्रकार हम देखते है कि इन वीरो मे वीरत्व की भावना प्रचड रूप से वर्त्तमान थी। वीरगाथा काल के प्रवन्ध काव्यो एव महाकव्यो में भी इस वीरता का चित्रण नही मिलता है।

आल्हा और ऊदल का चरित्र स्वामिभक्ति से परिपूर्ण है। उन्हें महोवा प्रिय है, राजा परमाल और रानी मल्हना प्रिय है। इनकी आज्ञा पर वे मर-मिटने के लिये सदा तत्पर रहते हैं। महोवा की यशोध्वजा को कभी भी नीची होते नही देख सकते। जन्म से ही वे रानी मल्हना के सरक्षकत्व में पले थे। उनकी नस-नस में श्रद्धा और भक्ति व्याप्त थी। इन्ही की आज्ञा लेकर उन्होने अनेको युद्ध किया और उस समय के प्रवल प्रतापी राजा पृथ्वीराज को भी नीचा दिखलाया। एक वार आल्हा और ऊदल ने जयचन्द के यहाँ जाकर शरण लिया। उसी समय महोवे पर पृथ्वीराज का आक्रमण हुआ। इन वीरो से महोवे का सकट देखा न गया रानी मल्हना का सकेत पाते ही वे महोवे की ओर चल पडे और उसकी रक्षा की। इसी प्रकार इन्होने समय-समय पर राज्यकुल के प्रत्येक व्यक्ति की रक्षा की। इनके हृदय में अपनी वीरता का तनिक भी अभिमान न था। वे तो अपने राजा के नीचे रह कर सच्चे सिपाही की भाँति लडते थे। युद्ध में सभी दिवगत हुये, परन्तु आल्हा कजली वन में चला गया। उसे विश्वास है कि वह एक दिन अवश्य ही महोवा के वैभव को पुन लौटावेगा।

आल्हा और ऊदल की वीरता की कोई उपमा नही है। खड्ग लेकर शत्रु के दल में पिल पडना, निरन्तर लडते रहना, तथा शत्रु को मौत के घाट उतार देना उनके लिये बाँयें हाथ का खेल था। वे वास्तविक रूप में धीरवीर थे। उन्होने स्त्रियो और निहत्थो पर कभी शस्त्र नही चलाया। बडे बडे प्रतापी राजाओ को जीतने के लिये उन्होने अनेक उपाय एव षड्यन्त्र किये परन्तु राजपूती वीरता एव आदर्श को नही छोडा। वे शत्रु के वचन पर विश्वास करते थे। निर्भय होकर लग्न मडप में विवाह विधि सपन्न कराने के लिये चले जाते थे। विश्वासघात का प्रचड बदला लेते थे। युद्धभूमि ही उनके खेल का मैदान था। बालक जिस प्रकार खिलौना पाकर प्रसन्न हो उठता है, उसी प्रकार ये वीर युद्धभूमि में जाने के लिये सदा लालयित रहते थे।

आल्हा और ऊदल का प्रेम भी उनके वीरता के ही उपयुक्त था। प्रस्तुत लोकगाथा मे इनके प्रेमी चरित्र को कम दर्शाया गया है। केवल ऊदल के चरित्र में रसिकता प्रदर्शित है। नरवरगढ की लडाई में ऊदल और फुलवा का मिलन, ऊदल का स्त्री रूप धारण करना, फुलवा के प्रेम में व्याकुल होना उसके चरित्र के प्रेमपूर्ण अग है। नरवरगढ़ के राजा को परास्त करके उसकी कन्या से उसने विवाह किया। फुलवा उसके साथ भाग चलने को कहती थी, परन्तु वीर ऊदल सबके सम्मुख विवाह करके उसे डोले में बिठाकर ले गया। उसने इसी प्रकार आल्हा का विवाह नैनागढ में सोनवा से करवाया। उनके लिये प्रेम और विवाह, युद्ध के सम्मुख गौण हो जाता था।। खड्ग के सहारे ही वे विवाह करते थे। इसी प्रकार उन्होने अपने अन्य भाइयो एव भतीजो का विवाह करवाया। इनके चरित्र को श्री ग्रियर्सन ने बडे समुचित ढग से रखा है। वे लिखते है—'भारतीय आदर्श को प्रस्तुत करने वाला आल्हा एक धीर-वीर था जो शीघ्र क्रोध में नही आता था। वह एक रणकुशल सेनापति था। जब वह क्रोधित होता था तो उसे दबाया भी नही जा सकता था। ऊदल एक तेजस्वी रणबाँकुडा था, एक प्रेमी था, परन्तु कठोर भी था। वह एक बहुत ही कट्टर शत्रु था परन्तु साथ ही उदार भी था। वह रसिक एव प्रेमी भी था परन्तु पवित्रता को लिये हुये। उसके इस स्वभाव के कारण उसके प्रति सबकी आत्मीयता जागृत हो जाती है।[1]

आल्हा-ऊदल के प्रचड परन्तु पवित्र वीरता ने ही भोजपुरी जीवन को आकर्षित किया है। ये दोनो वीर आज भोजपुरिया वीर हो गये है।

१—'दि ले आफ आल्हा' भूमिका ग्रियर्सन, पृ० २०

(२) लोरिकी

समस्त भोजपुरी प्रदेश में 'लोरिकी की लोक गाथा व्यापक रूप से प्रचलित है। 'लोरिकी' को 'लोरिकायन' के नाम से भी अभिहित किया जाता है। वस्तुत. यह अहीरो का जातीयकाव्य है। अहीर लोग अपने यहाँ उत्सवो एव शुभ सस्कारो के अवसर पर 'लोरिकी' वडे उत्साह से गाते हैं। इसमें अहीर जाति के जीवन का गौरवपूर्ण चित्र मिलता है। अहीर कौन हैं—इस विषय पर आगे विचार किया जायगा। 'लोरिक' इस लोक गाथा का नायक है। यह लोकगाथा, चार भागो में गाई जाती है। प्रत्येक खड किसी महाकाव्य से कम नही है। इसके चार भाग इस प्रकार हैं —

१—सवरू का विवाह,

२—लोरिक का विवाह-मजरी से,

३—लोरिक का विवाह चनवा से (जिसे 'चनवा का उढार' भी कहते है)

४—लोरिक का विवाह जमुनी से,

साधारणतया 'लोरिक मजरी का विवाह' तथा 'लोरिक चनवा का विवाह' अधिक प्रचलित है। साथ ही यह दोनो खड भोजपुरी के अतिरिक अन्य प्रदेशों में भी गाये जाते है। प्रथम तथा चतुर्थ खंड का प्रचलन भोजपुरी प्रदेश में ही है। सवरू, लोरिक का वडा भाई था। उसके विवाह के निमित्त जो युद्ध हुआ, वही प्रथम खड में वर्णित है। लोरिक और चनवा के विवाह के अन्तर्गत ही लोरिक और जमुनी के विवाह का भी वर्णन आता है। यह खड अन्य खडों की अपेक्षा छोटा है।

लोरिकी के गाने का ढग—इस गाथा को एक ही व्यक्ति गाता है। कभी-कभी गायक साथ में ढोल भी रख लेता है। वैसे गाथा गाने के साथ ढोल का सहयोग नहीं होता है। गायक जब एक पक्ति पूरी कर देता है तो ढोल पर वडे जोर से हाथ मारता है और फिर दूसरी पक्ति प्रारभ कर देता है। वस्तुत ढोल का उपयोग केवल श्वास के अवकाश के लिए ही होता है। साथ-साथ वीरकथात्मक होने के कारण इस गाथा के गायन के साथ ढोल वजा देने पर वातावरण में ओजस्विता आ जाती है।

यह लोकगाथा अतुकान्त है। अन्य भोजपुरी लोकगाथाओ की भाति इसमें 'रामा' अथवा 'हो रामा' इत्यादि का टेक नही रहता। तुक का तो साम्य नहीं

रहता, परन्तु स्वर साम्य अवश्य रहता है। प्रत्येक तीसरी अथवा चौथी पक्ति के पश्चात् अलाप रहता है। इसी अलाप से लोकगाथा के गायन मे साम्य आ जाता है। इसका अलाप बडा लम्बा होता है। 'विरहा गीत' में भी इसी प्रकार का अलाप सुनने को मिलता है। अलाप, अन्तिम शब्द से प्रारभ होता है। अलाप के अतिरिक्त सभी पक्तियाँ बडी द्रुति गति से गाई जाती है। हम इसे 'द्रुतिगति छद' (रन-आन-वर्सेस) कह सकते है। गायक एक हाथ कान पर लगा कर और दूसरा हाथ ऊपर उठाकर 'अरे' शब्द से लोकगाथा को द्रुतिगति से प्रारम्भ कर देता है।

लोरिक—समस्त लोकगाथा में लोरिक का चरित्र प्रधान है। लोरिक के के जीवन का मुख्य उद्देश्य सती स्त्रियो के जीवन का उद्धार करना तथा दुष्ट प्रवत्ति के व्यक्तियो का नाश करना है। लोरिक अपने जन्म के साथ ही अपना उद्देश्य प्रकट कर देता है कि "मै भगवान लालदेव का अवतार हूं, तथा दुष्टो का दलन करूँगा।" लोरिक एक अत्यन्त गरीब घर मे जन्म लेता है और अपनी अलौकिक वीरता से समस्त देशवासियो को चकित कर देता है। लोरिक की वीरता भारतवर्ष की मध्ययुगीन वीरता है जिसमे विवाह और उसके लिए युद्ध, शृगार और उसके लिए वीरता का विधान हुआ करता था। लोरिक ने भी तीन विवाह किये और उसी के बहाने उस समय के अनेक दुष्टो का दलन किया।

यहाँ इस लोकगाथा के दो खड (द्वितीय तथा तृतीय) का ही अध्ययन किया जायगा। इसके कई कारण है। पहला यही कि इन दोनो से ही लोरिक का मुख्य रूप से सम्बन्ध है। अन्य दोनो में लोरिक की गाथा गौण है। दूसरा कारण यह है कि यही दोनो प्रचलित भी अधिक है। एक तीसरा कारण भी है, वह यह कि द्वितीय तथा चतुर्थ खड के मैथिली तथा छत्तीसगढी रूप भी प्राप्त होते है। अतएव तुलनात्मक अध्ययन के लिये सुविधा होगी।

लोरिक मजरी के विवाह की सक्षिप्त कथा—अगोरी का राजा मलयगित् जाति का दुसाध[1] था। इस नगरी मे छत्तीसो जातियाँ निवास करती थी। राजा मलयगित् ने ढिढोरा पिटवा दिया था कि राज्य की सभी सुन्दरी कन्यायें महल मे पलेंगी और राजा की पटरानियाँ बन कर रहेगी।

उसी नगर के महरा नामक सज्जन व्यक्ति के यहाँ सती मजरी ने जन्म लिया। महरा और उनकी पत्नी पद्मावती ने मलयगित् के भय से कन्या-जन्म

१—दुसाध-सूअर चराने वालो की जाति

की बात छिपा ली। परन्तु जन्म संस्कार के समय जो दाई आई थी उससे न रहा गया। उसने अपने पति से यह गुप्त बात कह दी। उसके पति ने राजा के नियम का स्मरण दिला कर दाई को बहुत बुरा भला कहा। उसने जाकर राजा के यहाँ सूचना दे दी। राजा ने तुरन्त सिपाहियों को महरा के यहाँ भेजा। महरा ने इस विपत्ति से बचने के लिये एक उपाय सोच निकाला। वे राजा के पास चले आये और प्रश्न किया कि नवजात बालिका आप किस प्रकार पालेंगे ? राजा ने उत्तर दिया कि मेरी रानी उसे दूध पिला कर पालेगी। इस पर महरा ने कहा कि इस प्रकार से वह कन्या तो आपकी पुत्री के समान हो जायगी और फिर किस प्रकार उससे आप विवाह करेंगे ? राजा यह सुन कर निरुत्तर हो गया। इस पर महरा ने कहा कि कन्या मेरे यहाँ ही पलने दीजिये। विवाह योग्य होने पर एक दुर्बल व्यक्ति के साथ उसका विवाह किया जायगा। उस व्यक्ति को मारकर आप मजरी को सरलता से प्राप्त कर सकेंगे। इससे मेरी लाज बच जायगी और आपका भी काम बन जायगा। राजा यह तर्क मान गया। मजरी अपने माता-पिता के यहाँ ही पलने लगी। महरा को अहोरात्र यही चिन्ता थी कि किस प्रकार इस दुष्ट राजा का सर नीचा किया जाय जिससे सबका कल्याण हो।

मँजरी जब विवाह योग्य हुई तो महरा ने चारो दिशाओ में योग्य वर खोजने के लिये नाई तथा ब्राह्मण भेजा। परन्तु कही भी मजरी के योग्य वर न मिला। मजरी अपने पिता को कष्ट में देखकर बहुत दुखित हुई। उसने आत्म हत्या कर लेना उचित समझा। वह गगा में जाकर कूद पडी परन्तु गगा ने लहर मार कर उसे किनारे लगा दिया। मजरी ने सोचा कि मै बहुत पापिष्ठा हूँ, इसीलिये गगा भी शरण नही दे रही है। गगा वृद्धा वेष धारण कर मजरी के पास आई और सात्वना देने लगी। मजरी ने उनके सम्मुख विलाप करके सब हाल सुनाया। गगा ने सहायता का वचन दिया। भाग्य से मार्ग में भावी (भविष्य) से गगा की भेंट हो गई। भावी से गगा ने मजरी के विवाह के विषय मे पूछा। भावी ने अपनी असमर्थता प्रकट की परन्तु पता लगाने का उसे वचन दिया। भावी, इन्द्र के यहाँ चली गई। इन्द्र ने उसे वशिष्ठ के यहाँ भेजा। वशिष्ठ ने विचार करके बतलाया कि मजरी का विवाह—'गउरा गुजरात' ग्राम के बुढकूबे के यहाँ लोरिक से होगा। भावी ने आकर मजरी को बुढकूबे के घर का पता बतला दिया। मजरी महल में वापस चली आई। प्रातःकाल कोयल जब विरह की वाणी बोलने लगी तो मजरी की नीद टूट गई। वह माता के पास आई और लज्जा छोड कर सब हाल कह सुनाया। मजरी के मामा शिवचन्द गउरा-गुजरात

की ओर चल पडे। अनेक कठिनाइयो के पश्चात् वे गउरा पहुँचे। गउरा के राजमहल के सम्मुख जब वे पहुँचे तो वहाँ के राजा शाहदेव ने इसे बुला लिया। वह भी अपनी बेटी की शादी लोरिक से करना चाहता था। परन्तु शिवचन्द किसी प्रकार जान बचाकर बुढकूबे के यहाँ पहुँचे। बुढकूबे ने लोरिक को बोहा गाँव से बुलवाया। लोरिक सब समझ गया। उसने कहा कि मजरी से विवाह करना कोई खेल नही है। उसके लिये अनेको युद्ध करने पडेंगे। परन्तु बहुत कहने-सुनने के बाद तिलक चढ़वाने को तैयार हो गया। गउरा के राजा शाहदेव को जब यह मालूम हुआ तो वह क्रोधित हो उठा। वह अपनी कन्या चनवा का व्याह लोरिक से ही करना चाहता था। उसने नगर में ढिढोरा पिटवा दिया कि जो भी बुढकूबे के यहाँ तिलक मे भाग लेगा या बारात में जायगा मृत्यु दड का भागी होगा। देवी दुर्गा की कृपा से स्वर्ग से चौसठ योगिनियो ने आकर मगलगान किया और धूम-धाम से तिलक चढवा दिया। लोरिक के बडे भाई सवरू ने शिवचन्द से कहा कि बारात के लिये कोई विशेष प्रबन्ध न करना, केवल चार लोग आयेंगे।

लोरिक को दूल्हा बना कर जब चारो बाराती राजा शाहदेव के महल के सामने से निकले तो राजा शाहदेव की कन्या लोरिक को देखकर मोहित हो गई। चनवा ने अपनी मा से जाकर कहा कि मैं इसी से विवाह करूँगी। चनवा की माँ नें राजा शाहदेव से कहा। राजा शाहदेव ने सवरु से कहलवाया कि वे दुगुना दहेज देंगे और वह विवाह यही करे। परन्तु सवरु ने अस्वीकार कर दिया। इस पर राजा शाहदेव बहुत कुपित हुआ। उसने पार जाने के लिये गगा की सभी नावें डुबा दी। सवरु ने बुढकूबे को खाची में बिठाकर पार करवा दिया। शेष लोग तैर कर पार हो गये। इस प्रकार वे लोग नदी, पहाड, जगल पार करते हुये कोठवानगरमदोखा में जा पहुँचे। चलते चलते बारातियो की सख्या भी बढती गई। वहाँ राजा चित्रसेन से घमासान युद्ध हुआ। उसे परास्त कर और बारात के लिये प्राप्य सामान लेकर वे सोनपी नदी के किनारे पहुँचे। सोनपी नदी के पार राजा मलयगित् का धोबी उनके कपडे धो रहा था। उससे कपडे छीन कर सब बारातियो ने पहन लिया। सब बाराती अगोरी नगर की सीमा पर पहुँच गये। मजरी के मामा शिवचन्द ने इतनी बडी बारात देखी तो वह घबरा गया। उसने बारातियो की सख्या घटाने की बहुत चेष्टा की परन्तु उसे असफलता मिली। वह इतने बडे बारात के प्रबन्ध में जुट गया। राजा मलयगित् ने शिवचन्द की सहायता की। इसके पश्चात् परम्परानुसार एक दूसरे के पक्ष की बुद्धि परखने का

कार्य मजरी के पिता महरा ने किया। वुढकूत्रे के कारण वागत के लोग विजयी हुये।

इधर मजरी ने इन्द्र से प्रार्थना की कि उसका विवाह कुशलता से सपन्न हो। लोरिक लग्न मंडप में आया। इधर मलयगित् ने लोरिक को मरवाने के लिये अनेक प्रयत्न किये परन्तु असफल रहा। लग्न मडप युद्ध स्थल वन गया। लोरिक ने वडी वीरता से सवका सामना करके मार गिराया। मलयगित् स्वय युद्ध के लिये चौसा के मैदान में उतरा। वडी देर तक घमासान युद्ध हुआ। अन्त में लोरिक ने मलयगित् को मार गिराया। उसके गढ और महल इत्यादि को उसने ध्वस कर दिया। मलयगित् को अपने पाप का पूर्णतया दड मिल गया। दूसरे दिन महरा ने अत्यधिक दहेज देकर लोरिक से मजरी का विवाह कर दिया। लोरिक मजरी के साथ विवाह करके गउरा के लिये प्रस्थान कर दिया।

२—लोरिक और चनवा का विवाह—लोरिक जव मजरी के साथ विवाह करके गउरा लौट आया तो कुछ काल के पश्चात् एक नई घटना घटी जिससे मजरी का जीवन दुखमय हो गया। लोरिक-मजरी के विवाह-खड में ही यह वतलाया जा चुका है गउरा का राजा शाहदेव था, जो अपनी कन्या चनवा का विवाह लोरिक से करना चाहता था। चनवा भी लोरिक को चाहती थी, परन्तु यह सभव न हो सका। राजा शाहदेव ने चनवा का व्याह वगाल के सिलहट नगर में कर दिया। चनवा का मन वहाँ न लगा। एक दिन वह वहा से अकेले भाग चली। भागते हुये जव गउरा के समीप एक जगल में पहुँची तो वाठवा चमार नामक व्यक्ति ने चनवा को अपनी स्त्री वनाना चाहा। वाठवा वडा वलवान था। उनसे राजा शाहदेव भी घवडाता था। चनवा किसी प्रकार भागकर गउरा में पहुँच गई। वाठवा ने समस्त गउरा निवासियो को कष्ट देना प्रारभ कर दिया। उसने वहा के सव कुओ में गऊ की हड्डी रख दी। केवल लोरिक के घर का कुवा उसने छोड दिया। इस कारण लोगो को अपार कष्ट होने लगा। लोरिक गउरा मे उपस्थित नही था। मजरी ने उसके पास समाचार भेजा। लोरिक तुरन्त उपस्थित हुआ और वाठवा को कुश्ती में हरा कर भगा दिया। लोरिक की वीरता का यशोगान गउरा के घर-घर में होने लगा।

चनवा ने लोरिक की प्रशंसा सुनी और उनका मन उससे मिलने के लिये व्याकुल हो उठा। उसने एक उपाय निकाल लिया। अपने पिता से कहा कि मेरी इज्जत वच गई, इस खुशी में नगर भर को अपने यहाँ भोजन कराइये। राजा शाह-

देव यह सुन कर तैयार हो गया। भोजन का प्रबन्ध बडे धूम धाम से होने लगा। सब नगरवासियो को निमन्त्रण दिया गया। लोरिक भी अपने बडे भाई सवरू के साथ भोजन करने के लिये आया। सब लोग भोजन करने के लिये बैठ गये। अब चनवा सोचने लगी कि किस प्रकार लोरिक से आखें चार करूँ। उसने तुरन्त पान की खिल्ली बनाई और लोरिक जहाँ बैठा था, उसके उपर वाले झरोखे मे जाकर बैठ गई। लोरिक आनन्द से भोजन कर रहा था, कि ऊपर से चनवा ने पान की खिल्ली उसके पत्तल मे गिरा दी। लोरिक ने उपर दृष्टि की तो उसने चनवा को जम्हाई लेते देखा। लोरिक इसका आशय समझ गया। वह बार बार ऊपर देखने लगा। यह चनवा के भाई महादेव को बुरा लगा पर सवरु ने लोरिक को निर्दोष बताकर उसे शान्त किया।

उसी दिन रात्रि को लोरिक एक रस्सी लेकर चनवा के महल के पीछे पहुचा। उसने चनवा के झरोखे पर अपनी रस्सी फेंकी। रस्सी फेंकने की आवाज़ सुन कर चनवा जाग पडी। उसने झरोखे से बाहर लोरिक को देखा। वह बहुत प्रसन्न हुई। उसने कुछ देर लोरिक को चिढाया। लोरिक जब रस्सी फेंकता था तो वह पकडकर पुन छोड देती थी। लोरिक जब क्रोधित होने लगा तो चनवा ने रस्सी को झरोखे से बाध दिया और उसके सहारे लोरिक ऊपर चढ गया। चनवा लोरिक के साथ आनन्द-विहार करने लगी। इसी प्रकार एक पक्ष बीत गया। एक रात्रि में जब चनवा के महल से लोरिक चलने लगा तो गलती से चनवा की चादर अपने सिर में बाधकर चल दिया। घर पहुँचते ही मजरी चादर देखकर हँस पडी। लोरिक घवडा गया और दौडा दौडा मितरजाइल धोवी के यहाँ पहुचा। धोबी ने उसकी लाज बचाली। धोबिन चादर की तह करके सिर पर रख चनवा के यहाँ चली गई। इधर चनवा भी असमजस में पडी थी। मुगिया लौडी ने मर्दाना चदरा चनवा के घर में देखा था। अतएव उसे चनवा पर सदेह हुआ। इसी समय धोबिन आ पहुँची और कहा कि चादर बदल गया है, अपना चादर ले लो और मर्दाना चादर लौटा दो। इस प्रकार चनवा और लोरिक दोनो की लाज बच गई।

इस प्रकार अनेक दिवस बीत गये। एक दिन चनवा ने कहा कि अब उन्हे दूसरे देश भाग चलना चाहिए, क्योकि अब बदनामी का भी डर था। बहुत कहने-सुनने के पश्चात् उनके पलायन का दिन निश्चित हुआ। दोनो ने हरदी नगर में जाना निश्चित किया। वहाँ चनवा का परिचित साहूकार महीचन्द रहता था। हरदी प्रस्थान के पहले ही चनवा ने लोरिक से महीचन्द और राजा महुबल को न मारने का वचन ले लिया।

सती मजरी ने अपने सत् से सब कुछ जान लिया। उसने चनवा और लोरिक को रोकने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु वह सफल न हो सकी। उसे सोता छोड कर लोरिक, चनवा के साथ पलायन कर गया। चलने के पहले लोरिक ने अपने बडे भाई सवरू और गुरु मितारजईल धोबी से सब कुछ बतला दिया। उसने मजरी से कहलवा दिया कि वह दस दिन में लौट आवेगा। इस प्रकार वे गउरा से चल कर बोहाबथान, फुहियापुर, बक्सर, बिहिया इत्यादि पार कर, ठूँठी पकडी पेड के नीचे पहुँचे। चनवा को वहाँ साँप ने काट लिया, परन्तु चनवा गर्भवती थी इसलिये बच गई। मार्ग में लोरिक ने रणदेनिया दुसाव को हराया और आगे वह बिदिया के राजा रणपाल को हराकर आगे बढा।

सारगपुर पहुँचने पर महीपत जुआडी से पाला पडा। लोरिक जुए मे सब कुछ हार गया, यहाँ तक कि चनवा को भी हार गया। यहाँ चनवा ने चालाकी की। वह भी जुआ खेलने के लिये बैठी। देवी की कृपा से उसने हारा धन फिर जीत लिया तथा सारगपुर गाँव भी जीत लिया। इस प्रकार पति को बचाकर वह आगे बढी। मार्ग मे कतलपुर के डोम राजा को भी परास्त किया। अनेक दिनो के यात्रा के बाद वे हरदी बाजार पहुँचे। वहाँ पूछते-पूछते वे सेठ महीचन्द के द्वार पर गए। परिचय इत्यादि हुआ। चनवा और लोरिक सम्मानपूर्वक वहाँ रहने लगे। एक दिन शराब पीने के लिये लोरिक, जमुनी कलवारिन के यहाँ गया। वह उस पर मोहित हो गई। उसे खूब शराब पिलाकर अपने ही यहाँ रात में शयन कराया। (अन्त में जमुनी भी उसकी स्त्रियो मे एक हो गई) कुछ ही दिनो में लोरिक, हरदी बाजार में अपने ठाटबाट के कारण प्रसिद्ध हो गया। एक दिन राजा महुबल ने उसे अपने यहाँ बुलवाया। दरबार मे उससे और मत्री से कहासुनी हो गई। मत्री ने राजा के महाबली भीमल पहलवान को ललकारा। भीमल तथा लोरिक का मल्ल-युद्ध हुआ। भीमल धराशायी हुआ। सारे नगर मे लोरिक का यश फैल गया। अब तो राजा बहुत घबडाया। बहुत सोच-विचार करके लोरिक को मारने का एक उपाय निकाला। नेवारपुर का हरवा-बरवा दुसाध महाबली था। वह साल में एक दिन के लिये हरदी आता था और छ' महीने की एकत्रित की गई खाद्य सामग्री एक ही दिन में समाप्त कर जाता था, अन्यथा राजा को दड देता था। राजा महुबल ने लोरिक को बहाने से पत्र देकर नेवारपूर भेजा। लोरिक ने घोडभगरा नामक घोडे पर बैठ कर, चनवा से विदाई लेकर, मार्ग में अनेको विजय करता हुआ नेवारपुर पहुँचा। वहाँ हरवा-बरवा दुसाव से युद्ध हुआ। घमासान युद्ध के पश्चात् उसने उन्हे मार गिराया। वह पुन हरदी लौट आया, परन्तु चनवा को

मिर्जापुरी रूप—इस रूप को डब्ल्यू० क्रुक ने एकत्र किया है।[1] यह कथा लोरिक मजरी के विवाह से मिलती जुलती है। कथा इस प्रकार है—

सोन नदी के किनारे अगोरी नामक किले में एक दुष्ट राजा राज्य करता था। उसके पास दासियो मे गाय भैंस चराने वाली एक मजरी भी थी। मजरी, लोरिक से प्रेम करती थी। लोरिक अपने बडे भाई सवरू के साथ राजा से मजरी को माँगने आया। राजा ने उसके ऊपर क्रोध प्रदर्शित किया। वीर लोरिक मजरी को चुपके से लेकर भाग चला। राजा अपने भयानक हाथी पर बैठकर लोरिक का पीछा किया। परन्तु लोरिक ने एक ही वार में उसके हाथी को धराशायी कर दिया। परन्तु राजा ने उसका पीछा नही छाडा। मर्कुन्डी घाटी के पास जब लोरिक पहुँचा तो मजरी ने अपने पिता की तलवार लोरिक को दे दी। लोरिक ने अभिमान में उसका तिरस्कार किया। लडाई मे लोरिक की तलवार टूट गई। अब लोरिक सचेत हुआ। उसने मजरी के पिता के तलवार को लेकर राजा को मार डाला। इस प्रकार विजय प्राप्त करने के पश्चात् वह मजरी सहित गउरा की ओर चल पडा।

छत्तीसगढी रूप—'लोरिकी' का छत्तीसगढी रूप अत्यन्त रोचक है। इस प्रदेश में 'लोरिक तथा चनवा' की गाथा ही अधिक प्रचलित है। यहाँ इस लोकगाथा को 'लोरिक चनैनी' अथवा 'चनैनी' नाम से अभिहित किया जाता है। लोकगाथा के छत्तीसगढी रूप को फादर वैरियर एल्विन ने अंग्रेजी में अनुवाद करके अपने ग्रन्थ 'फोकमाग्स आफ छत्तीसगढ' मे उद्धृत किया है।[2] लोकगाथा की सक्षिप्त छत्तीसगढी कथा इस प्रकार है—

चनैनी अपने पिता के घर से अपने पति वीर बावन के घर जा रही है। वीर बावन गउरा का निवामी है। मार्ग में भटुआ चमार ने चनैनी को अपनी स्त्री बनाना चाहा। लोरिक वहाँ सहायता के लिये आ गया और भटुआ चमार को मार भगाया। लोरिक अपनी स्त्री मजरी के साथ गउरा में ही रहता है। चनैनी, भटुआ के साथ लडते हुए लोरिक की वीरता देखकर मुग्ध होती है। लोरिक भी चनैनी की सुन्दरता को देखकर मोहित होता है। दूसरे दिन लोरिक रस्सी लेकर चनैनी के घर के पीछे पहुँचता है। वहाँ पहुँचने पर चनैनी पहले तो उसे चिढाती है पर बाद मे उसे ऊपर चढा लेती है। दोनो गउरा से भाग चलन

१—डब्ल्यू० क्रुक-ऐन इन्ट्रोडक्शन टू दी पापुलर रिलीजन एण्ड फोकलोर आफ नार्दर्न इडिया पृ० २९२।

२—वैरियर एल्विन—फोकसाग्स आफ छत्तीसगढ, पृ० ३३८

का निश्चय करते है। अन्त में एक दिन लोरिक तैयार हो जाता है और चनैनी को लेकर गढ हरदी के लिये चल देता है। मार्ग में उसका भाई सवरू रोकता है परन्तु वह नही रुकता। वीर-बावन उनका पीछा करता है परन्तु वह लोरिक को नहीं मार पाता है। मार्ग में लोरिक को साँप काट खाता है परन्तु महादेव व पार्वती की कृपा से वह पुन जीवित हो उठता है। आगे चलकर करिघा के राजा से युद्ध होता है। लोरिक राजा को हरा देता है। करिघा का राजा उसे मारने के लिये षड्यन्त्र करता है और उसे पाटनगढ के राजा के यहाँ भेजता है। लोरिक करिघा की चाल समझ जाता है। वह हरदीगढ चला जाता है वहाँ आनन्द से रहने लगता है। इस बीच गउरा से समाचार आता है कि उसकी स्त्री मजरिया भीख माँग रही है। उसके भाई बन्धु सभी मर गये है। गायें इत्यादि भाग गई हैं और घर ध्वस हो गया है। लोरिक चनैनी के साथ पुन लौटता है। लोरिक अपने गायो तथा अन्य जानवरो की खोज में चला जाता है। मजरिया और चनैनी मे मार-पीट होती है। मजरी विजयी होती हैं। वह बडे अभिमान से पानी लेकर पति का स्वागत करने को आती है, पर बर्तन का पानी भूल से गदला निकलता है। लोरिक यह देखकर अत्यन्त दुखी होता है और सब को छोडकर कहीं चला जाता है और फिर कभी नही लौटता।

श्री काव्योपाध्याय महाशय द्वारा एक अन्य छत्तीसगढी रूप है,[1] जिसकी सक्षिप्त कथा इस प्रकार है—

वीर बावन एक महाबली व्यक्ति था जो कि कुभकर्ण के समान छ महीने सोता था और छ महीने जागता था। उसकी स्त्री का नाम चन्दा था जो कि अत्यन्त रूपवती थी। एक बार वीर बावन गभीर निद्रा में निमग्न था। चन्दा ने अपने गांव में लोरी नामक धोबी को कपड़ा धोते देखा और उस पर मोहित हो गई। उसने लोरी को अपने महल में बुलाया। कोठे पर आने के लिये चन्दा ने नीचे रस्सी फेंकी। कुछ देर तक उसने लोरी को चिढाया, परन्तु अन्त में लोरिक चढ गया। चन्दा पुन महल में छिप गई परन्तु लोरी ने उसे ढूंढ लिया। लोरी और चन्दा ने रात्रि एक ही साथ व्यतीत की। लोरी प्रात काल चलते समय अपनी पगडी भूल गया और चन्दा की साडी बाँधकर चल दिया। लोरी की धोबिन साडी पहचान गई। लोरी ने उसे सब कथा बतला दी। धोबिन उन दोनो प्रेमियो की दूती बन गई।

१—वैरियर एल्विन—फोकसाग्स आफ छत्तीसगढ, पृ० ३३८

चन्दा और लोरी दूसरे देश भागने की तैयारी करने लगे। पहले लोरी तैयार नही होता था। उसने वीर बावन को भी जगाने का प्रयत्न किया परन्तु वह नही जगा। अन्त मे लोरी को चन्दा के साथ भागना ही पडा। चलते-चलते वे एक जगल मे पहुँचे जहाँ एक किला था और आवश्यकता की सारी सामग्री भी थी। वे वही आनन्द से रहने लगे। इधर छ महीने बाद वीर बावन की निद्रा टूटी। उसने लोरी का पीछा किया। लोरी से उसका युद्ध हुआ और वह हार गया। निराश होकर वह लौट आया और अकेले ही रहने लगा।

प्रकाशित रूप—[1] भोजपुरी प्रकाशित रूप एव मौखिक रूप में कोई विशेष अन्तर नही है। हेर-फेर से दोनो में कथानक एक ही हैं। प्रकाशित रूप में कही-कही 'गजल और कविताए' भी दे दी गई हैं। इन्हे प्रकाशक ने लोकगाथा को रोचक बनाने के ख्याल से ही रखा है। लोरिक चनवा की गाथा में कथानक चनवा के चरित्र से प्रारम्भ होता है। मौखिक कथा मजरी के विरह से आरम्भ होती है। मजरी अन्त में विजयी होती है और लोरिक को पुन प्राप्त कर लेती है। शेष कथा समान है। मौखिक रूप में मजरी के चरित्र को देवी का स्थान मिला है। वह लोरिक को क्षमा कर देती है, और उसे अपने भगवान के रूप में पूजती है।

लोरिक के बगला रूप की कथा[2]—बगाल में यह लोकगाथा 'लोरमयनावती,' के नाम से अभिहित की जाती है। यदा कदा इसे 'सती मयनावती' भी कहा जाता है। इसी गाथा के आधार पर बगाल के एक मुसलमान कवि दौलत काजी ने सुन्दर काव्य की रचना कर डाली है। कथा का साराश इस प्रकार है—गौहारी देश का राजा अथवा राजपुत्र 'लोर' के नाम से प्रसिद्ध है और उसके साथ मयनावती व्याही जाती है, किन्तु काल पाकर लोर का प्रेम उसके प्रति कम होने लगता है और एक योगी से चित्र द्वारा यह जानकर कि मोहरा देश की एक अत्यन्त सुन्दर राज कन्या चद्राली का व्याह एक नपुसक बावन वीर के साथ हुआ है, वह मोहरा चला जाता है। लोर और चद्राली एक दूसरे को देखकर मोहित हो जाते हैं और उनका मिलन हो जाता है। बावनवीर की आशका से दोनो भाग निकलते हैं। बावनवीर पीछा करता है और वन में यद्ध होता है। बावनवीर मारा जाता है किन्तु चद्राली को साप डस लेता है। तब तक वहाँ चद्राली का पिता भी पहुँच जाता है। चद्राली होश में आती

१—'चनवा का ओढार'-दूधनाथ पुस्तकालय, कलकत्ता।

२—श्री परशराम चतुर्वेदी—भारतीय प्रेमाख्यान की परपरा-पृष्ठ ६२ से ६८

है और दोनो का व्याह हो जाता है तथा उसका पिता अपना राज्य दे देता है।

इधर मयनावती विरह से व्याकुल हो उठती है और वह शि की अराधना करती है। उसके पडोसी राजा नरेन्द्र का पुत्र छातन सौंदर्य पर अनुरक्त हो जाता है। वह इसे वश में करने के लिए दू भेजता है किन्तु असफल होता है। मयनावती सखियो से सलाह शुक के साथ किसी ब्राह्मण को लोर के पास भेजती है। ब्राह्मण, लोर जागृति कर देता है। लोर अपने पुत्र को राज्य देकर चद्राली के सा के निकट आता है। इस प्रकार लोर, चन्द्राली और मयनाव सुखपूर्वक राज्य करने लगता है।

जिस प्रकार इस कथा के अधार पर बङ्गला के मुसमान कवि है उसी प्रकार बङ्गला के प्रसिद्ध कवि अलाओल ने, जिसने जाय 'पद्मावत' का बङ्गला रूपान्तर लिखा है, लोर एव चन्द्राली शेषाश लेकर 'लोर चन्द्राली' की रचना की है।

हैदराबाद (दक्षिण) मे प्राप्त कथा का रूप[1]—इस प्रेम व वाले अश का यहाँ प्रचार नही है। यहाँ के किसी अज्ञात कवि की 'मसनवी किस्सा सतवन्ती' नामक रचना पाई जाती है। इसके अ नगर के एक धनी व्यक्ति को 'लोरक, नाम का पुत्र था और किसं मैना नाम की सुन्दरी पुत्री थी। वे दोनो परस्पर प्रेम करते थे से जीवन विताते थे। किन्तु वे दोनो सयोगवश निर्धन हो गए नगर छोडकर दूसरे स्थान के लिए चल पडे। वहाँ लोरक पशु वही लोरिक ने चन्दा नाम की एक सुन्दरी को देखा जिसका पि लोरक उनके घर गया और उसके महल पर चढ कर उसे देखा कि धनमाल लेकर यहाँ से भाग चलें। पहले लोरक ने आनाक मान गया। जब दोनो वहाँ से भाग निकले और इस वात का तो लोगो ने राजा मे जाकर कहा, किन्तु राजाने वतलाया लोरक की पत्नी मैंना पर मुग्ध था तथा जब मे उसने उसे दे वेचैन था।

विभिन्न रूपों के कथानक मे समानता एव अंतर—(१

क`गे । विभिन्न रूपो में केवल श्री क्रुक द्वारा एकत्रित मिर्जापुरी रूप ही लोरिक मजरी के विवाह से सम्बन्ध रखता है । परन्तु समानता कम है, अन्तर अधिक है । समानता केवल नामो में मिलती है, कथानक में नही । मिर्जापुरी रूप में लोरिक, मजरी, सवरू तथा दुष्ट राजा का उल्लेख है । स्थानो के नाम में अगोरी का किला तथा सोन नदी का उल्लेख है । प्रस्तुत भोजपुरी रूप मे इन नामो एव स्थानो का उल्लेख है । इस साम्य के अतिरिक्त कथानक मे अन्तर है ।

प्रस्तुत भोजपुरी रूप का कथानक विशाल है । मजरी, के जन्म से लोकगाथा प्रारम्भ होती है । मजरी के पिता तथा राजा मलयगित् की वार्ता, मजरी के लिये वर ढूँढा जाना, लोरिक का तिलक चढना, लोरिक का अगोरी से आकर विवाह करना, राजा मलयगित् से युद्ध और उसे मारकर महल को ध्वस करना इत्यादि भोजपुरी रूप के प्रमुख अश हैं ।

मिर्जापुरी रूप में मजरी, राजा के जानवरो को चराने वाली दासी है, उससे और लोरिक से प्रेम हो जाता है । आगे इस गाथा में लोरिक और सवरू का राजा से मजरी को मांगना, राजा से युद्ध, उसका मारा जाना, और लोरिक का मजरी के साथ गउरा के लिये पलायन वर्णित है ।

इस प्रकार कथानक में महान अन्तर है । समानता के लिये हम यह कह सकते हैं कि लोरिक और मजरी का विवाह तथा राजा से युद्ध, दोनो में प्राप्य हैं । साथ-साथ अन्त भी दोनो में एक ही प्रकार का है ।

(२) लोरिक की लोकगाथा का दूसरा भाग 'लोरिक एव चनवा का विवाह' भोजपुरी क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य प्रदेशो में भी प्रचलित है । मैथिली और छत्तीसगढी प्रदेशो में तो यह अत्यधिक प्रचलित है । यहाँ हम विभिन्न रूपो की भोजपुरी रूप से तुलना करेंगे । (तुलना करने के लिये भोजपुरी लोकगाथा के प्रमुख अशों को हम प्रस्तुत करते चलेंगे ।)

१—भोजपुरी रूप में चनवा का सिलहट (बगाल) से लौट कर अपने पिता के घर (गउरा) आना वर्णित है । छत्तीसगढी रूप में भी यह वर्णित है, परन्तु कुछ विभिन्नता है । इसमें चनवा (छत्तीसगढी रूप की चनैनी) का अपने पिता के घर से पति (वीरबावन) के घर (गउरा) लौटना वर्णित है । अन्य रुपो में यह वर्णन नही है ।

२—भोजपुरी रूप मे चनवा को मार्ग में बाठवाचमार अपनी स्त्री बना लेना चाहता है, परन्तु वह किसी तरह गउरा अपने पिता के घर पहुँच जाती है । बाटवा चमार गउरा में आकर सबको कष्ट देता है । चनवा का पिता

राजा शाहदेव भी वाठवा से डरता है। मजरी के बुलाने पर लोरिक पहुँचता है और वाठवा को मार भगाता है। उसकी सब लोग प्रशसा करते हैं।

छत्तीसगढी रूप में यह वर्णित है। परन्तु उसमें थोडा अन्तर है। भटुआ चमार (भोजपुरी-वाठवा) मार्ग में चनैनी को छेडता है, लोरिक वहाँ आकर उसे मार भगाता है। लोरिक की वीरता देखकर वह मोहित हो जाती है। लोरिक को वह अपने महल में बुलाती है।

शेष अन्य रूपो में यह वर्णन नही मिलता।

३—भोजपुरी रूप में राजा शाहदेव के यहाँ भोज है। चनवा लोरिक को अपनी ओर आकर्षित करती है, रात्रि मे लोरिक रस्सी लेकर चनवा के महल के पीछे पहुँचता है, तथा दोनो का मिलन वर्णित है।

छत्तीसगढी रूप में भोज का वर्णन नही मिलता है। परन्तु रात्रि में लोरिक उसी प्रकार रस्सी लेकर जाता है और कोठे पर चढता है तथा दोनो एक साथ रात्रि व्यतीत करते हैं।

काव्योपाध्याय द्वारा प्रस्तुत छत्तीसगढी में भी इसका वर्णन है परन्तु कुछ भिन्न रूप में। इसमें चन्दा (चनैनी) का पति वीरवावन महावली है जो छ महीने सोता है तथा छ महीने जागता है। उसकी स्त्री चन्दा, लोरी (लोरिक) धोवी से प्रेम करने लगती है। वह उसे अपने महल में वुलाती है और स्वय खिडकी से रस्सी फेंक कर ऊपर चढाती है। मैथिली तथा वेग्लर द्वारा प्रस्तुत शाहावाद जिले के रूप में यह वर्णन नही प्राप्त होता।

४—भोजपुरी रूप मे रात्रि व्यतीत कर जब लोरिक चनवा के महल से चलने लगता है तो अपनी पगडी के स्थान पर चनवा का चादर वाध कर चल देता है। धोबिन उसे इस कठिनाई से बचाती है।

वैरियर एल्विन द्वारा प्रस्तुत छत्तीसगढी रूप में यह वर्णन नहीं है, परन्तु काव्योपाध्याय द्वारा प्रस्तुत वर्णन में यह अंश इसी प्रकार वर्णित है। शेष अन्य रूपों में यह नही मिलता।

५—चनवा के बहुत मनाने पर लोरिक का हरदी के लिये पलायन की घटना सभी रूपो में उपलब्ध है। वेग्लर द्वारा प्रस्तुत वर्णन में उस घटना का क्रम इस प्रकार है। चनैनी के पति शिववर की समस्त शक्तियाँ महादेव-पार्वती के श्राप से कुठित हो जाती है। चनैनी अपने पडोसी लोरिक से प्रेम करने लगती है। शिववर तथा लोरिक से युद्ध होता है। शिववर हार कर वापस आ जाता है। इसके पश्चात् लोरिक और चनैनी, दोनो हरदी भाग जाते हैं।

६—लोरिक को मार्ग मे मजरी और सवरू रोकते है। छत्तीसगढी रूप (एल्विन) में भी यह वर्णित है, परन्तु केवल सवरू का नाम आता है। शेष रूपो में नही प्राप्त होता।

७—भोजपुरी रूप मे लोरिक, मार्ग मे अनेको विजय प्राप्त करता है, तथा महापतिया दुसाध को जुए में हराता है, और युद्ध में भी हराता है।

वेग्लर द्वारा सम्पादित शाहाबाद जिले के रूप में भी यह वर्णित है। उसमें चनैनी महापतिया को अपनी ओर लुभा लुभा कर पराजित करा देती है और अन्त में उसके ऊपर लाछन लगाकर उसे मरवा देती है। शेष रूपो में यह वर्णन नही प्राप्त होता।

भोजपुरी रूप में लोरिक अनेक छोटे मोटे दुष्ट राजाओ को मारता है। मार्ग मे चनवा को सर्प काटता है, परन्तु वह गर्भवती होने के कारण बच जाती है। सर्प आकर पुन जहर पी लेता है।

एल्विन द्वारा सपादित छत्तीसगढी रूप में लोरिक को सर्प काटता है तथा चनवा शिव पार्वती से प्रार्थना करती है और लोरिक पुन जीवित हो जाता है। शेष रूपो में यह वर्णन नही प्राप्त होता।

(९) भोजपुरी रूप के अनुसार लोरिक का हरदी के राजा महुबल से बनती नही थी। महुबल ने अनेको उपाय किये परन्तु लोरिक मरा नही। अन्त मे महुवल ने पत्र के साथ लोरिक को नेवारपुर हरवा-बरवा दुसाध के पास भेजा। लोरिक वहाँ भी विजयी होता है। अन्त में महुबल को उसे आधा राज-पाट देना पडता है और मैत्री स्थापित करनी पडती है।

शाहाबाद जिले के रूप में वर्णित है कि लोरिक हरदी के राजा को हरा कर स्वय राज करने लगा।

मैथिली रूप के अनुसार हरदी के राजा मलवर (महुवल) और लोरिक आपस में मित्र है। मलवर अपने दुश्मन हरवा-बरवा के विरुद्ध महायता चाहता है। लोरिक प्रतिज्ञा करके उन्हें नेवारपुर में मार डालता है।

एल्विन द्वारा प्रस्तुत छत्तीस गढी रूप में यह कथा दूसरे रूप में है। इसमे लोरिक और करिंघा के राजा से युद्ध का का वर्णन है। करिंघा का राजा हार कर लोरिक के विरुद्ध षड्यन्त्र करता है और उसे पाटनगढ भेजना चाहता है। लोरिक नही जाता।

(१०) भोजपुरी रूप में कुछ काल पश्चात् मजरी मे पुन मिलन वर्णित है। ग्रेग्लर द्वारा प्रस्तुत रूप में लोरिक अपनी जन्म भूमि (पाली) लौट आता है और अपनी मगेतर सत्मनाइन (सतीमजरी) की परीक्षा लेकर उससे विवाह करता है।

छत्तीसगढ़ी रूप में हरदी में लोरिक के पास मजरी की दीन दशा का समाचार आता है, और लोरिक और चनवा दोनो गउरा लौट पडते हैं। शेष रूपों में यह वर्णन नही मिलता है।

(११) भोजपुरी रूप सुखान्त है। इसमें लोरिक अन्त मे मजरी और चनवा के साथ आनन्द से जीवन व्यतीत करता है। मैथिली रूप भी सुखान्त है परन्तु उसमें गउरा लौटना नही वर्णित है। एल्विन द्वारा प्रस्तुत छत्तीसगढी रूप मे लोरिक अपनी पत्नी से तथा घर की दशा से दुखित होकर सदा के लिये वाहर चला जाता है। ग्रेग्लर द्वारा प्रस्तुत शाहावाद जिले के रूप मे भी लोरिक दुर्गा के क्रोध से दड पाता है और काशी जाकर मणिकर्णिका घाट पर पत्थर मे परिणित हो जाता है।

काव्योपाध्याय द्वारा प्रस्तुत रूप का अन्त इस प्रकार होता है :—

लोरी चन्दा के साथ भाग कर जगल के किले मे रहने लगता है। वहाँ चन्दा का पति वीरवावन पहुँचता है। उससे लोरी का युद्ध होता है। वीरवावन हार जाता है और निराश होकर अकेले गउरा में रहने लगता है।

लोक गाथा के वगला रूप मे वर्णित 'लोर मयनावती तथा चद्राली' वास्तव मे भोजपुरी के लोरिक, मजरी और चनैनी ही है। वावन वीर का वर्णन छत्तीस गढी रूप में भी प्राप्त होता है। वगला रूप में चद्राली को सर्प काटता है। भोजपुरी रूप में भी गर्भवती चनैनी को सर्प काटता है। दोनो रूपो में वह पुन जीवित हो जाती है। वगला रूप में 'मयनावती' के सतीत्व का वर्णन है। भोजपुरी में भी मजरी को सतीरूप में वर्णन किया गया है।

लोक गाथा का हैदरावादी रूप, छत्तीसगढी के काव्योपाध्याय मे अधिक साम्य रखता है।

उपर्युक्त रूपो के तुलनात्मक अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तव में लोकगाथा का भोजपुरी रूप ही आदि रूप है। भोजपुरी प्रदेश मे ही इस गाथा का प्रसार हुआ। भोजपुरी रूप में प्राय सव रूपो का समन्वय है।

हम यह प्रथम अध्याय में ही विचार कर चुके हैं कि लोकगाथाओ का कोई एक निश्चित रूप नही होता। उसका एक पाठ नही होता।[१] लोरिकी के

१—चाइल्ड-स्काटिश एण्ड इगलिश पापुलर वैलेड्स-भूमिका, किट्रेज, 'देयर आर टेक्स्ट्स वट देयर इज़ नो टेक्स्ट—पृ० १८

भी विविध रूप विभिन्न भागो में उपलब्ध होते है। इसके रूप निश्चित बदलते भी रहे है, जिसके परिणाम स्वरूप आज यह विविधता पैदा हो गई है।

लोरिकी की लोकगाथा क्षेत्र प्राय अन्य लोक गाथाओ से अधिक व्यापक है। इसके कथानक के भी अनेकानेक रोचक रूप मिलते है। इसके कथानक में निहित प्रेमतत्व की ओर कुछ कवियो का भी खिचाव हुआ। बगाल के दौलत काजी तथा अलाओल ने इस कथानक के आधार पर सुन्दर काव्य की रचना कर डाली है। इसी प्रकार मुल्ला दाउद नामक प्रसिद्ध सूफी कवि ने 'चदायन' की रचना कर 'लोरिक चदा' को अमर कर दिया है। परन्तु यह रचना लोरिक की ऐतिहासिकता को स्पष्ट नही करती है। जायसी ने जिस प्रकार 'पद्मावत' में ऐतिहासिकता को गौण कर कल्पना का सहारा लिया है उसी प्रकार मुल्लादाउद ने भी सूफी सप्रदाय एव साहित्य की अभिवृद्धि के हेतु प्रसिद्ध लोकगाथा 'लोरिकी' को 'चदायन' के रूप मे अपनाया है। हिंदी मे 'चदायन' की प्रेमा गाथा सूफी सप्रदाय की प्रथम गाथा मानी जाती है। इसे 'चदायन' अथवा 'लोरक चदा' कहते हैं। इसके विषय मे लिखते हुए अल्बदायूनी ने कहा है कि "एक बार शेख से कुछ लोगो ने पूछा कि आपने इस हिन्दी मनसवी को क्यो चुना है ? शेख ने उत्तर दिया कि यह समस्त आख्यान ईश्वरीय सत्य है, पढ़ने में मनोरजक है, प्रेमियो को आनन्द और चिन्तन की सामग्री देने वाला है, कुरान की कुछ आयतो का उपदेश देने वाला है और हिंदुस्तानी गायको व भाटो के गीत जैसा है"।[1]

शेख तकीउद्दीन वायज़ रब्बानी इस रचना को प्रवचन के समय पढ़ा करते थे। यह रचना अभी तक अपने वास्तविक रूप में उपलब्ध नहीं है, किन्तु यदि 'लोरक' वा 'नूरक', 'लोरिक' हो तो इसकी कथा इसी लोक गाथा की हो सकती है। राजस्थान में उपलब्ध हस्तलिखित प्रति के अनुसार इसका रचना काल स० १४३६ होना चाहिए।[2]

स्थानो और व्यक्तियो के नामो मे वहुत अन्तर है। रूपो की विविधता के होते हुए भी नामो की यह समानता सचमुच विलक्षण है।

प्रमुख स्थानों के नाम--गउरा, वोहा, हरदी, पाली, अगोरी, नेवारपुर चौसाका मैदान, तथा वङ्गाल का सिलहट यही प्रमुख स्थानो के नाम है। ये ही इस

१—श्री परशुराम चतुर्वेदी भारतीय प्रेमाख्यान की परपरा—पृष्ठ ८८

२— ,, ,, ,, ,, ,,

गाथा की घटनाओं के केन्द्र हैं। आगे इनके द्वारा लोकगाथा की ऐतिहासिकता पर विचार किया जाएगा।

भोजपुरी रूप में केवल 'पाली' का नाम नहीं आता। केवल ग्रेगलर द्वारा एकत्रित रूप में लोरिक की जन्मभूमि गउरा के स्थान पर 'पानी' बतलाया गया है। अन्य सभी रूपों में गउरा का नाम आता है।

प्रमुख व्यक्तियों के नाम—लोरिक, सवरु, मजरी, चनवा, राजा शाहदेव, राजा मलयगित्, राजा महुवर, हरवा-बरवा महापतिया दुसाध तथा बाठवा चमार यही लोक गाथा के प्रधान चरित्रों के नाम हैं। कथानक का विकास इन्हीं व्यक्तियों के साथ हुआ है। इन नामों की ऐतिहासिकता अप्राप्य है। ये नाम केवल समाज के निम्नश्रेणी के व्यक्तियों में प्रचलित हैं। निम्नश्रेणी में इनका प्रचलन होते हुये भी लोकगाथाओं में प्रदेश की संस्कृति एवं सभ्यता के उच्चादर्श की अभिव्यक्ति होती है।

उपर्युक्त सभी नाम भोजपुरी रूप में प्राप्य हैं। लोरिक, सवरु तथा मजरी, के नाम तो सभी रूपों में मिलते हैं। शेषनामों में थोड़ा बहुत अन्तर है। 'चनवा' का नाम मिर्जापुरी, शाहाबादी तथा छत्तीसगढी रूप में 'चनैनी' है। काव्योपाध्याय के छत्तीसगढी रूप में लोरिक का नाम 'लोरी, है तथा चनवा का नाम 'चन्दा' है। बाठवा चमार का छत्तीसगढ़ी रूप 'भटुआ चमार है। शेष रूपों में यह नाम नहीं मिलता है।

'महापतिया दुसाध' का नाम केवल काव्योपाध्यय के छत्तीसगढी रूप को छोड़कर सभी रूपों मे दिया गया है।

राजा शाहदेव एवं मलयगित् का नाम केवल भोजपुरीरूप में है। शेष रूपों में नामों के स्थान पर केवल 'राजा' का उल्लेख है।

हरदी के राजा महुवर का नाम मैथिली रूप में 'मलवर है। शेष रूपों में 'महुवल है। छत्तीसगढी रूप में यह नाम नहीं है। काव्योपाध्याय के छत्तीसगढी रूप में 'वीरबावन' का नाम आता है जो कि 'चन्दा' का पति है।

नदियों के नाम—प्रमुख नदियाँ लोकगाथा के अन्तर्गत, गंगा एवं सोन है। सोन के किनारे ही अगोरी का किला वर्णित है। गङ्गा का तो सभी लोकगाथाओं में समावेश है।

'लोरिकी' की ऐतिहासिकता—लोरिकी की ऐतिहासिकता के विषय मे अभी तक कोई निश्चित तथ्य नहीं प्राप्त किया जा सका है। वास्तव में अभी तक 'अहीरजाति' के सांगोपांग इतिहास पर ही किसी निश्चित मत का प्रतिपादन नहीं किया गया है। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि वे प्राचीन आभीरों

एव गुर्जरो के वशज है। पाश्चात्य इतिहासकारो का मत है कि आभीर एव गुर्जर बाहर से आई हुई जातियाँ है। भारतीय विद्वानो का मत है कि आभीर एव गुर्जर जातियाँ भारत की प्राचीन जातियो में से ही है। इनका उल्लेख रामायण महाभारत, पुराण, तथा मनुस्मृति में भी किया गया है।

अहीर लोग प्राय समस्त भारतवर्ष मे मिलते है। आठवी शताब्दी मे गुजरात में जब कट्टी जाति का आगमन हुआ था, उस समय ताप्ती तथा देवगढ के बीच के भाग को 'आभीर प्रदेश' कहा जाता था।[1] सर हेनरी का कथन है कि अहीर लोगो ने नेपाल पर भी राज्य किया था।[2] बगाल के पालवश से भी इनका सबध बतलाया जाता है। इस प्रकार हम देखते है कि प्राचीन समय से अहीर एक महत्वपूर्ण जाति रही है।

आजकल साधारण रूप से अहीरजाति की गिनती शूद्रो में की जाती है। मनुस्मृति मे आभीरो को ब्राह्मण तथा वैश्य से उत्पन्न बतलाया गया है। भागवत पुराण में प्रसिद्ध नन्द अहीर को वैश्य जाति का वतलाया गया है। साधारणतया सभी अहीर अपने को उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले से सबधित बतलाते है। वैसे अहीरो की अस्मी से ऊपर उप-जातियाँ प्राप्त होती है, परन्तु इनके तीन प्रमुख भाग है प्रथम नन्दवश, द्वितीय यदुवश, तृतीय ग्वालवश। गगा यमुना के दोआब के अहीर नन्दवशी कहलाते हैं, यमुना के पश्चिम एव उत्तर दोआब के अहीर यदुवशी कहलाते हैं, तथा दोआब के नीचे और बनारस के पूरब के अहीर ग्वालवशी कहलाते है।

वर्तमान समय में अहीरो का प्रधान कार्य गाय पालना और दूध बेचना है। ये लोग कुश्ती लडने के लिए प्रसिद्ध होते हैं। वास्तव में यह एक बलाढ्य जाति है। इनकी वीरता एव उत्साह क्षत्रियो के समान है। लोकगाथा में ये लोग क्षत्रिय के समान ही चित्रित किये गये हैं। अहीर होते हुये राज्य करना, युद्ध करना इनका प्रधान कर्म है।

अब प्रश्न यह है कि 'लोरिक' की लोकगाथा का इतिहास क्या है? डब्ल्यू० क्रुक (फेटिशिज्म[4]) पर विचार करते हुये वतलाते हैं कि इस लोकगाथा का भी उद्भव इसी पूजा से है।[3] इनका कथन है कि भारतवर्ष में अद्भुत ढग के वने

१—सर हेनरी—कास्ट्स एण्ड हर्डस्मेन-पृ० ३३३

२— वही पृ० ३३२

३—डब्ल्यू क्रुक—ऐन इन्ट्रोडक्शन टु दी पापुलर रिलिजिन एण्ड फोकलोर आफ इण्डिया। पृ० २८९–२९०

४—फीटेशिज्म—जड पदार्थों की पूजा

हुये पत्थरो, टीलो तथा वृक्षो की पूजा होती है। वस्तुत प्रकृति की नैसर्गिक क्रिया में ये वस्तुये अपना अद्‌भुत रूप धारण कर लेती हैं। परन्तु ग्रामीण समाज उसमें कुछ निहित अमानवीय भावना का दर्शन पाता है। धीरे-धीरे उस वस्तु की पूजा प्रारभ हो जाती हैं। उसके पीछे अनेक कथाये प्रचलित हो जाती हैं। इसी प्रकार कथा एव गाथा का निर्माण हो जाता है। इस कथन को और भी स्पष्ट करते हुए वे 'लोरिक' का उदाहरण देते हैं और लिखते हैं कि सोन नदी के किनारे लहरो से कटा हुआ एक पत्थर है जो कि हाथी के कटे सूंड के समान है। वहाँ एक बहुत बडा पत्थर का टुकडा भी पडा है जिसमें एक पतली दरार है। इन्ही पत्थरो के आधार पर लोरिक की कथा का जन्म हो गया है जो कि हमें उस युग में ले जाता है जब कि आर्यों एव अनार्यो में सोन नदी के किनारे विस्तृत भूमि भाग के लिये युद्ध हुआ करता था।[1]

प्रस्तुत लोकगाथा में सोन नदी के किनारे अगोरी किले का वर्णन मिलता है। अत यह सम्भव हो सकता है कि प्राचीन समय में लोरिक नामक वीर ने अगोरी के राजा से युद्ध किया हो और उसी विजय का स्मरण उपर्युक्त पत्थर दिलाता हो। इस घटना के पश्चात धीरे-धीरे कथा विकसित होते-होते वर्तमान विशाल रूप में परिणत हो गई हो। प्रथम अध्याय में ही हम विचार कर चुके हैं कि लोकगाथाओ का विकास-क्रम बहुत ही असबद्ध होता है। कोई भी साधारण या असाधारण घटना तत्काल या कालान्तर में समाज में एक कथा के रूप में फैल जाती है और तदनन्तर कालक्षेप के साथ लोकगाथा के रूप में परिणत हो जाती है।

डा० जयकान्त मिश्र ने मैथिली लोकसाहित्य पर विचार करते हुये 'लोरिकी' (मैथिलरूप-लोरिक का गीत) की लोकगाथा को छ सौ वर्ष पुराना बतलाया है।[2] आपका कथन है कि ज्योतिरेश्वर कृत 'वर्णरत्नाकर' की रचना सन् १३२४ में हुई थी, तथा लोरिकी की लोकगाथा प्राय इसी समय प्रारभ हुई थी। इस प्रकार 'लोरिकी' का उद्‌भव मध्य युग में हुआ होगा। लोकगाथा के चरित्रो एव वर्णनो को देखने से हम उसमें मध्य युगीन सस्कृति की झलक पाते हैं। इसलिये

१—क्रुक—ऐन इन्ट्रोडक्शन टु दी पापुलर रिलीजन एण्ड फोकलोर आफ इण्डिया—पृ० २९१

२—युनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज (अग्रेजी भाग), इन्ट्रोडक्शन टु दी फोकलिटरेचर आफ मिथिला—पृ० २२

यह सम्भव हो सकता है कि यह एक मध्य युगीन घटना हो, अथवा यह भी सभव हो सकता है कि इस घटना का लोकगाथा के रूप में प्रचार मध्य युग में हुआ हो। इस प्रकार गायको द्वारा उसमें मध्ययुगीन सास्कृतिक तत्वो का समावेश कर दिया गया होगा। नीचे इस गाथा में वर्णित गावो, नदियो आदि की ऐतिहासिकता पर विचार प्रस्तुत किया जाता है।

गउरा—सम्पूर्ण लोकगाथा में सबसे प्रमुख स्थान 'गउरा' है। यही लोरिक का जन्म हुआ था। यहाँ के राजा का नाम शाहदेव था। इस गाथा में अनेक स्थानों पर 'गउरा गुजरात' का नाम आता है, जिससे यह प्रतीत होता है कि यह घटना गुजरात से सबध रखती है। आभीरो का उद्भव भी गुजरात मे प्रमुख रूप से हुआ था। परन्तु लोकगाथा में 'गउरा गुजरात' नाम के अतिरिक्त गुजरात के किसी भी उपप्रदेश, नगर, गाँव का उल्लेख नही है। गुजराती लोक-साहित्य के अन्तर्गत भी 'लोरिक' नामक व्यक्ति अथवा 'गउरा' स्थान का कही उल्लेख नही मिलता। अतएव केवल सम्भावना है कि आभीरो के आगमन के साथ लोरिक की घटना घटी होगी। आभीर लोग ज्यो ज्यो पूरव की ओर बढते गये त्यो त्यो इस घटना का विकास होता गया और भोजपुरी प्रदेश में आकर स्थानिक रूप ले लिया। लोककथाओ का गमनागमन मौखिक प्रचार के कारण होता है। इसी क्रम से तो जातको की कथाएँ यूरोपीय देशो तक पहुँच गई है।

उपर्युक्त सम्भावना के ऐतिहासिक या भौगोलिक प्रमाण नही मिलते, किन्तु भोजपुरी प्रदेश में 'गउरा' नामक गाँव है। बिहार के शाहाबाद जिले में डुमराव तहसील में 'गउरा' नामक ग्राम में अहीरो की एक बहुत बडी बस्ती है। 'लोरिकी' के गायक से यह ज्ञात हुआ कि लोरिक इसी 'गउरा' का रहने वाला था। परन्तु यहाँ पर कोई ऐतिहासिक चिन्ह नही है। अहीरो की बडी बस्ती से हम यह सम्भावना कर सकते हैं कि 'लोरिक' का स्थान यही है।

वोहा—प्रस्तुत लोकगाथा में 'वोहा के मैदान' का उल्लेख मिलता है। यहाँ लोरिक तथा उसका वडा भाई सवरू गाय-भैंसे चराते थे।

उत्तरप्रदेश के बलिया नगर से उत्तर दो मील की दूरी पर 'वोहा' का मैदान' आज भी स्थित है। इसका क्षेत्रफल प्राय चौदह मील के लगभग बतलाया जाता है। इसी 'वोहा' के अन्तर्गत एक वडा ऊँचा टीला है जो 'लोरिक डीह' कहलाता है। बहुत सम्भव है कि खुदाई करने से यहाँ कुछ प्राचीन वस्तुएँ मिले जिनका लोरिक से कोई सबध हो।

इसी 'लोरिक डीह' से चार पाँच फर्लाङ्ग दूरी पर 'सवरू बाध' नामक गाँव है, जो दन्तकथा के अनुसार लोरिक के बडे भाई सवरू के नाम पर बसा है।

'सवरू बाध' से थोडी दूर पूरब की ओर 'अखार' नामक गाव है। लोकगाथा के अनुसार लोरिक तथा सवरू अखाडे मे कुश्ती लडते थे। यह गाँव इसी अखाड़े का स्मरण दिलाता है।

अगोरी—प्रस्तुत लोकगथा के मिजापुरी रूप से यह स्पष्ट होता है कि 'अगोरी का किला' सोन नदी के किनारे था। लोकगाथा के भोजपुरी रूप मे भी अगोरी तथा सोन (सोन नदी) नदी का वर्णन मिलता है। श्री डवल्यू० क्रूक ने लिखा है कि मिर्जापुर के 'अगोरी परगने' के अहीर 'माथू' नाम से पुकारे जाते है। 'अगोरी परगना' आज भी है।

सोन नदी के किनारे 'अगोरी किले' का तो कही नाम निशान नही है। यह सम्भव है कि उपर्युक्त किला कभी रहा हो और कालान्तर में सोन की लहरो ने आत्मसात् कर लिया हो। यह भी सम्भव है कि क्रुक द्वारा वर्णित सोन नदी के तट का चट्टान उसी किले का भग्नावशेष हो।

हरदी—प्रस्तुत लोकगाथा मे लोरिक तथा चनवा का भाग कर हरदी जाना एक महत्त्वपूर्ण घटना है। भोजपुरी रूप में 'हरदी' वगाल के सिलहट जिले में वतलाया गया है। गायको का भी यही विश्वास है कि 'हरदी' वगाल में ही है।

श्री वेग्लर ने हरदी को मुंगेर जिले के अन्तर्गत वतलाया है। यहां हरदी नामक एक गाँव है। वलिया जिले में भी एक 'हरदी' नामक प्रसिद्ध गाँव है। यहां हैहयवशी क्षत्रिय निवास करते है परन्तु इन वश ने लोकगाथा का कोई सम्वन्ध नहीं वतलाया जाता है।

वस्तुत उत्तरी भारत में 'हरदी' नामक अनेक गांव मिलते है। परन्तु किसी भी गाँव में लोरिक की ऐतिहासिकता को स्पष्ट करने की सामग्री नहीं उपलब्ध होती है।

गगा नदी और सोन नदी का उल्लेख लोकगाथा में स्वाभाविक है। विहार मे होकर ये दोनो नदियाँ वहती है। पर इनकी लहरें यह नही वतलाती कि लोरिक, मजरी के साथ विवाह करके कव इन लहरो पर से पार हुआ होगा, अथवा लोरिक, चनवा के साथ पलायन करते हुए कव इन लहरो को काट कर

उस पार पहुँचा होगा। वे लहरे अब है ही कहाँ, वे तो विशाल महोदधि में विलीन हो गई ।

'लोरिकी' की घटनायें अवश्य घटित हुई होगी, परन्तु विशाल जनसमूह ने उन्हे आत्मसात् करके उसकी ऐतिहासिकता को समाप्त कर दिया। 'लोरिकी' को अपने नित्य जीवन का आदर्श मान लिया। लोरिक व्यक्ति न हो कर एक अवतार, वीरता, सज्जनता, एव रसिकता की प्रतिमूर्ति बन गया ।

उपर्युक्त स्थानो की भौगोलिकता पर विचार करने से यह विश्वास उत्पन्न होता है कि 'लोरिकी' की गाथा किसी अन्य प्रदेश से नही आई, अपितु उसकी घटनाएँ भोजपुरी प्रदेश में ही घटी होगी। लोकगाथा के रग-रग मे भोजपुरी जीवन व्याप्त है, इसमें सभी कुछ भोजपुरी है। अतएव यह कहना असगत न होगा और न पक्षपात ही होगा कि यह घटना एक भोजपुरी घटना है।

लोरिक का चरित्र—लोरिकी की सम्पूर्ण लोकगाथा में और इसके समस्त रूपो में प्रथमत वह वीरता का अवतार है, द्वितीय वह लोकरक्षक के रूप में हमारे सम्मुख आता है, वस्तुत इसके तीन प्रधान रूप में सम्मुखआता है तथा तृतीय वह एक उत्कट प्रेमी है।

यह भारतीय परपरा है कि जब जब देश में अनार्य प्रवृत्तियाँ अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है, तो भगवान् स्वय इस पृथ्वी पर दुष्टो के पराभव तथा साधुजन की रक्षा के हेतु अवतार लेते है। भगवान् के जन्म लेते ही मङ्गल भावना का उदय होता है। उनके तेजोमय रूप से चारो ओर आशा एव विश्वास का सचार होता है तथा शठ अपनी शठता का यथोचित दड पाते है। वीर लोरिक का जन्म भी एक अवतार की भाँति होता है। वह समस्त दुष्ट प्रकृति के लोगो का पराभव करता है। गरीव वुढकूबे के घर में भगवान लालदेव (अर्थात् लोरिक) अवतार लेते है। लोरिक के जन्म के साथ ही गउरा मे आनन्द का साम्राज्य छा जाता है। गउरा का राजा शाहदेव एक दुराचारी व्यक्ति था। उसके अत्याचार से समस्त प्रजा त्राहि-त्राहि कर रही थी। भगवान् कृष्ण की भाति ऐसी ही परिस्थित में लोरिक का जन्म होता है। वाल्यावस्था में ही वह सव विद्याओ म पारगत हो जाता है। दड, मुगदर, कसरत तथा शस्त्रास्त्र में निपुण हो जाता है। उसकी अद्भुत शक्ति को देखकर लोग चकित हो जाते हैं। शुक्ल-पक्ष के चद्रमा की भाँति उमका रूप और गुण विकसित होता है। वोहा में वह गाय भैंसो मे खेलता है। अखाडे में अपने वडे भाई सवरु तथा गुरु मितारजइल को भी पछाड देता है। अपने अद्भुत कृत्यो से पुरजनो को प्रसन्न करता है। वाल्यावस्था मे पदार्पण करने के पहले ही उसके कर्त्तत्त्व की परीक्षा प्रारभ

होती है। सवरू के विवाह मे सकट देखकर पिता को ढाढस देता है और कहता है। वावा तुम घवडाओ नही, जानते हो मै कौन हू ?

अरे पहिला अवतरवा हो भइल मोहवा में हमार'
नइयाँ रहे वाविल ऊदल हो हमार,
नैनागढ में कइले हो रहली आल्हा के वियाह,
अरे तेकर त हलिया जाने सव सव ये सार,
दोसर अवतरवा हो भाइल गढ रोही ए दाम ,
नामवाँ तो रहले वाविल विजई कुअर हमार,
वावन गढ किलवा वाविल दिहली हो गिराय,
अरे तिसरे जनमवा ए वाविल गउरवा में भइल हमार,
तोहरा ही घरवा नइयाँ लोरिकवा पडल हमार,
तू त वाविल जालऽ थोडे में घवडाय,
हमरो त हलिया वाविल देखऽ आँख पसार।

उपर्युक्त वचन जव उसका पिता सुनता है तो उसे विश्वास होता है, और सवरू के विवाह की अनुमित देता है। वह सव प्रकार से सुसज्जित होकर वारात में चल देता है और जीवन के रणक्षेत्र मे कूद पडता है।

लोरिक के जीवन का व्रत है लोकरजन एव लोकसेवा। उमे यह भली-भाँति विदित है कि विना दुष्टो का नाश किये देश मे शान्ति नही स्थापित हो सकती है। वह अपने वडे भाई को तथा अपने व्याह के वहाने इस समय के दुष्प्रकृति व्यक्तियो का नाश करता है। उसने सुरवलि के राजा वामदेव के अत्याचार को सुन रक्खा था। वह प्रतिज्ञा करता है 'वामदेव के किलवा में कोइला देवि हम वोवाय,' सुरवलि पहुँच कर राजा वामदेव से भीपण युद्ध होता है। वह अद्भुत पराक्रम से युद्ध करता है। जादू, टोना भूत-प्रेत इत्यादि अनाय-सवितयाँ उसका वाल भी वाँका नही कर पाती है। स्वर्ग के देवता भी उसकी सहायता करते है। वह लग्नमडप में वैठकर भाई का व्याह रचाता है तथा भाई की रक्षा के लिये वही युद्ध करता है। विवाह के पश्चात् वह सुरवलि के किले को नष्ट भ्रष्ट कर देता है।

इसी प्रकार अपने विवाह के लिये वह सात देशो एव सात नदियो को पार करता हुआ अगोरी में पहुँचता है। द्वापर में कस ने जिस प्रकार आज्ञा दे रक्खी थी कि मथुरा में उत्पन्न वालक काल के मुख में जायेगे, उसी प्रकार अगोरी के राजा मलयगित् की आज्ञा थी कि समस्त अगोरी की समस्त वालिकायें उसकी पटरा-गनियाँ वनकर रहेगी। मजरी से विवाह करने के वहाने वह अगोरी पहुँच कर

राजा मलयगित् से भीषण युद्ध करता है। चौसाका मैदान रक्त रंजित हो उठता है। वह मलयगित् को धराशायी करता है। समस्त निवासी संतोष की साँस लेते है। इसी प्रकार चनवा के साथ पलायन करने में दुष्ट राक्षस हरबा-बरबा का नाश कर हरदी के राजा का भय दूर करता है।

लोरिक के जीवन का एक अन्य रूप है। वह उसका प्रेमी रूप है। वह एक सफल प्रेमी है। वह किसी नायिका से प्रेम की याचना नही करता है, अपितु उसकी वीरता को देखकर चनवा उसके ऊपर मोहित हो जाती है। प्रेम की मार बडी पैनी होती है। लोरिक चनवा के नयनबाण से घायल हो जाता है। उसके कर्मठ जीवन में वसन्त की कोयल कूक उठती है परन्तु उसके वीरकर्म का अन्त नही होता है। जीवन के इस नन्दन कानन में भी उसका हाथ तल-वार पर रहता है। अनेकानेक दुष्टो को वह दंड देता है।चनवा के प्रेम मेंरत होकर वह गउरा छोड देता है। सभी-नर-नारी रो उठते हैं, मजरी के दुख का तो ठिकाना ही नही। भगवान कृष्ण भी तो गोपियो को रोता छोडकर चले गये थे। लोरिक भी सबको विलखता छोडकर प्रेम की बाजी जीतना चाहता है। इसमें उसे सफलता मिलती है। चनवा सुन्दरी के लिए वह योग्य प्रेमी बनता है। मार्ग में उसे अनेक कष्टो से बचाता है। हरदी पहुँच कर नवीन राज्य की स्थापना करता है। चनवा जब उसके प्रेम को पूर्णतया परख लेती है तो गउरा लौटने को कहती है। उसके पश्चात् दोनो गउरा लौटते हैं।

इस प्रकार लोरिकी मे 'लोरिक' का सर्वांगसुन्दर चित्र उपस्थित हुआ है। इसी कारण इस गाथा का नाम 'लोरिकी' पडा है। वास्तव में 'लोरिकी' अहीर जाति के लिये गर्व की वस्तु है। लोरिक भारतीयता से ओत-प्रोत एक बीर पुरुष है। वह आर्य पथानुगामी है तथा जीवन के के उच्चादर्श को हमारे सम्मुख रखता है।

—–o—–

(३) विजयमल

भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत 'विजयमल' की लोकगाथा प्रमुख स्थान रखती है। इस लोकगाथा का दूसरा नाम 'कुवर-विजई' भी है। भोजपुरी प्रदेश में इसको नेटुआ[1] तथा तेली जाति के लोग अधिकाश रूप में गाते हैं। लोकगाथा के अन्तर्गत 'विजयमल' को तेली जाति का ही वतलाया गया है, परन्तु इसमें वर्णित सामाजिक स्तर निम्न श्रेणी का न होकर राजपुरुषो की भाति है। परम्परा में विश्वास करने वाले गायकवृन्द विजयमल को तेली जाति से ही सवधित वतलाते हैं। वर्णव्यवस्था के अनुसार तेली लोगो की गणना शूद्रो में की जाती है, यद्यपि वे अपने को वैश्य ही समझते है। 'विजयमल' के गायक तेली अथवा नेटुआ जाति के ही होते हैं। परन्तु ऐसा कोई नियम नही है। अन्य जाति के लोग भी इसे गाते हैं।

यह सम्भाव्य है कि निम्न श्रेणी मे प्रचलित होने के कारण इस गाथा के चरित्र भी निम्न वर्ण के कर दिये गये हो। वास्तव में उनका चरित्र, उनकी सभ्यता, उनका राज्य शासन तथा युद्ध कौशल, इसी वात के द्योतक है कि उनमें आर्य रक्त है तथा वे क्षत्रिय कुल के है।

'विजयमल' के नाम में 'मल' शब्द से विजयमल का क्षत्रिय होना सम्भव हो सकता है। क्षत्रियो में 'मल क्षत्रिय' भी एक उपजाति है। परन्तु क्षत्रिय लोग 'मल क्षत्रियो' को कुलीनवश का नही मानते हैं।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलो एव विहार में अधिकांश रूप से मल क्षत्रिय रहते है। इसलिये यह सभव हो सकता है कि 'विजयमल' भी क्षत्रिय जाति के ही रहे हो। मल क्षत्रियो के विषय में लोकगाथा की ऐतिहासिकता के प्रकरण में विचार करेंगे।

इस लोकगाथा में कुवर विजयमल का चरित्र प्रधान रूप से चित्रित किया गया है। वीर लोरिक के समान विजयमल भी दैवी कृपा युक्त एक वीर पुरुष है। प्रस्तुत लोकगाथा मे प्रमुख रूप से विजयमल का विवाह तथा विजयमल के पिता के कष्ट का वदला लेना वर्णित है। इस लोकगाथा में भी मध्ययुगीन वीरता

१—एक जाति विशेष—यह एक वनजारो की जाति होती है, लोकगाथा गा कर अथवा शारीरिक व्यायाम दिखला कर जीवकोपार्जन करते है।

चित्रित हुई है। मध्ययुग की भाति इस लोकगाथा में भी विवाह ही युद्ध का प्रधान कारण है। कथानक में विवाह तो गौण हो जाता है और युद्ध प्रधान बन जाता है। वीरता के साथ-साथ उदारता एव उत्कट प्रेम की भावना का भी इसमें समावेश हुआ है। कुवर विजयमल इस लोकगाथा में लोकरक्षक के रूप मे चित्रित हुआ है। अत्याचारी को नष्ट करना ही उसके जीवन का प्रमुख उद्देश्य है।

प्रस्तुत लोकगाथा का कोई अन्य प्रादेशिक रूप अभी तक देखने अथवा सुनने में नही आया है। यह केवल भोजपुरी प्रदेश में गाई जाती है। सबसे प्रथम ग्रियर्सन ने शाहाबाद जिले मे बोली जाने वाली भोजपुरी रूप को प्रस्तुत करने के लिये इस लोकगाथा को एकत्र किया था[1] और इसका अग्रेजी में अनुवाद भी किया था।

प्रस्तुत लोकगाथा दूधनाथ प्रेस, हवडा से भी प्रकाशित की गई है। यही साधारणतया बाजारो एव मेलो में बिकती है।[2]

लोकगाथा का तीसरा रूप मौखिक है। इस प्रकार 'विजयमल' की लोकगाथा के तीन भोजपुरी रूप हमारे सम्मुख है। तीनो ही आदर्श भोजपुरी रूप है। 'विजयमल' की लोकगाथा अधिकाश रूप में आदर्श भोजपुरी प्रदेश में ही गाई जाती है।

गाने का ढंग—अन्य भोजपुरी लोकगाथाओं की भाँति यह लोकगाथा भी समान स्वर में गाई जाती है जिसे 'द्रुतिगतिलय' नाम से अभिहित किया जा चुका है। लोकगाथा के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक प्रत्येक पक्ति के प्रारम्भ में 'रामा' तथा अन्त में 'रेना' रहता है। गायक द्रुतलय से गाथा की प्रत्येक पक्ति गाता चला जाता है। वर्णित भावो के अनुसार उसके स्वर में भी चढाव-उतार हुआ करता है। परन्तु 'रामा' और 'रेने' का क्रम नही टूटने पाता है।

लोकगाथा की संक्षिप्त कथा—राजा घुरुमल सिह तथा रानी मैनावती के दो पुत्र थे। प्रथम का नाम धीरानन तथा द्वितीय का विजयमल। धीरानन की स्त्री का नाम सोनमती था। देवी दुर्गा की कृपा से बहुत बाद में राजा घुरु-मल सिह के यहा विजयमल ने जन्म लिया। रोहदास गढ में इनका राज्य था।

बावन देश के राजा बावन सूबेदार के यहाँ कन्या ने जन्म लिया, जिसका

१—जे० एस० बी० १८८४ (१) पृ० ७४

२—कुवर विजई-दूधनाथ प्रेस एव पुस्तकालय, हावडा।

नाम 'तिलकी' पडा। बावन सूवे के पुत्र का नाम मानिकचन्द था। कन्या के जन्म लेने के पश्चात् ही राजा ने देश-देशान्तरो में तिलकी के लिये वर खोजने नाई-ब्राम्हण को भेजा, परन्तु कही वर न मिला। कुछ काल के उपरान्त राजा घुरुमल सिह के यहाँ भी विजयमल के लिये तिलक चढाने नाई-ब्रम्हण पहुँचे। पहले तो घुरुमलसिह ने तिलक अस्वीकार कर दिया क्योकि वे राजा बावन सूवा के अत्याचारो से परिचित थे, परन्तु बडे पुत्र धीरानन के कहने पर तिलक स्वीकार कर लिया। राजा बावन सूवा ने बहुत धूमधाम से तिलक भेजा। लाखों लोग बावन देश से आये। धीरानन ने लोगो के हाथ पैर धोने के लिये पानी की जगह तेल दिया तथा पीने के लिये घी। इस पर तिलकी का भाई मानिकचन्द क्रोधित हुआ और कहा, 'मै भी विवाह मे बदला लूंगा।' बावनसूवा ने जब इस सत्कार का समाचार सुना तो वह भी अत्यन्त क्रोधित हुआ।

राजा घुरुमल तथा धीरानन छप्पन लाख की बारात लेकर बावन देश पहुँच गये। बावन सूवा ने लोगो का बहुत आदर सत्कार किया। विवाह की विधि सुन्दर ढग से सम्पन्न हुई। मानिकचन्द को अब बदला लेना था। उसने समस्त बारात को माँडो में आने के लिये निमन्त्रित किया। बडे उत्साह से राजा घुरुमल सिह बारात सहित माडो में आये। मानिकचन्द ने उसी समय विजयमल को छोडकर सबको बँधवा कर बावन गढ के किले में डलवा दिया। माडों के समीप ही हिछल बछेडा (घोडे का बच्चा) था। उसके आँख पर पट्टी बँधी हुई थी तथा हाथ पैर बाँध दिये गये थे। वह सब समझ रहा था। कैद होने से केवल विजयमल बच गये थे। मानिकचन्द ने तिलकी की सखी चल्हकी नाऊन को आज्ञा दी कि वह विजयमल को आग में फेंक दे। परन्तु चल्हकी नाउन ने अपनी सखी के सौभाग्य की रक्षा के लिये दूसरा उपाय निकाला। उसने हिछल बछडे को खोल दिया, विजयमल को उस पर बिठा दिया और घोडे से उड जाने की सलाह दी। हिछल बछेडा विजयमल को लेकर आकाश मार्ग से रोहदासगढ पहुँच गया। हिछल बछडे ने सब समाचार सोनमती से कह सुनाया। उसके दुख का ठिकाना न रहा।

कुँवर विजयमल की अवस्था जब दस वर्ष की हुई तो वह एक दिन गुल्ली-डण्डा खेलने के लिये पडोस की बाल मण्डली में गया। लडकों में से एक जो काना था, बोला कि अपना गुल्ली-डण्डा लाओ तब खिलायेंगे। विजयमल ने भाभी सोनमती से कहकर काठ का गुल्ली-डण्डा बनवा लिया। जब वह पुनः पहुँचा तो काने लडके ने कहा कि तुम राजा हो, काठ के छोटे गुल्ली डण्डा से तुम क्या खेलोगे, जाकर लोहे की अस्सी मन की गुल्ली और अस्सी मन का डण्डा बनवा लाओ तब खेलेंगे। कुँवर विजयमल ने क्रोधित होकर यह बात सोन-

मती से कही । सोनमती ने कुँवर को प्रसन्न करने के लिये लोहार से अस्सी मन की गुल्ली डण्डा वनाने की आज्ञा दे दी । अस्सी मन का गुल्ली डण्डा तो वन गया पर वह किसी से उठता नही था । लोहार बडा घबडाया और महल में जाकर यह सूचना दी । यह सुनकर विजयमल वहाँ स्वय गये और एक ही हाथ से गुल्ली डण्डा को उठाकर फेंका । गुल्ली जाकर बावनसूबे के महल में गिरा । कुँवर का यह कर्तव्य देखकर लोग चकित रह गये । उस काने लडके ने फिर कहा कि 'यार तुम इतने वीर हो तो क्यो नही जाकर अपने पिता और भाई को कैद से छुडाते हो । विजयमल को अपने विवाह का स्मरण नही था । उसने जाकर सोनमती से पूछा । सोनमती यह सुनकर घबडा गई । वह सोचने लगी कि पूरे कुल में यही एक बालक वचा है, क्या यह भी बावनसूबा के हाथो से मारा जायगा ? परन्तु कुवर ने सोनमती की बात नही सुनी और प्रतिज्ञा की कि जब तक सबको कैद से छुडाकर बावनसूबा को दड नही दूँगा तब तक हमारे जीवन को धिक्कार है ।

विजयमल हिछल बछडे पर सवार होकर बावन देश की ओर चल पडा । जगलो, पहाडो, नदियो को पार करते हुये विजयमल बावन देश पहुँच गया । राजा द्वारा निर्मित भवरानन पोखरे पर उसने अपना डेरा डाल दिया । तिलकी की सोलह सौ सखियाँ घडा लेकर वहाँ पानी भरने के लिये आईं । विजयमल ने एक तीर से सब घडो को फोड दिया । सखियो ने जाकर तिलकी से यह समाचार कहा । तिलकी ने अपनी प्रिय सखी चल्हकी को देखने के लिये भेजा । चल्हकी को आते देखकर विजयमल योगी बनकर बैठ गया तथा मन्त्र बल से पोखरे के घाटो को बाँध दिया । चल्हकी ने उससे पोखरा छोडने के लिये कहा । विजयमल अपने स्थान से नही डिगा । इस पर चल्हकी ने कहा कि बावनसूबा तुम्ह मार डालेंगे । उस पर विजयमल ने बताया कि बावनसूबा उसके श्वसुर हैं । आगे उसने सारी कथा भी कह सुनाई और यह भी बता दिया कि मैं बदला लेने आया हूँ । यह समाचार तिलकी के पास पहुँचा । तिलकी स्नान के बहाने अपनी माता से आज्ञा लेकर शृगार करके भवरानन पाखरे पर गई । विजयमल ने तिलकी का रूप देखा तो वह मूर्छित हो गया । हिछल बछडे ने उसकी मूर्छा दूर की । तिलकी को जब यह मालूम हुआ तो लाज के मारे उसने घूंघट निकाल लिया । तिलकी ने भविष्य की विपत्तियो से सचेत करते हुये विजयमल से भाग चलने के लिये कहा । विजयमल ने कहा कि जब तक प्रण पूरा न होगा तब तक नही जाऊँगा और तुम्हारा गवना सबके सम्मुख करा के ले जाऊँगा ।

विजयमल, हिछल बछडे पर पुन सवार होकर नगर में चल पडा । एक कुंये पर आकर वह रुका । वहाँ राजा की दासी पानी भरने आई थी । कुवर ने पीने

के लिये पानी मांगा। दासी ने अस्वीकार कर दिया तो विजयमल ने घडा फोड दिया। यह समाचार राजा के पास पहुँचा। राजा ने चार पहलवानों को पकडने के लिये भेजा। विजयमल ने सबको धराशायी किया। राजा ने महावली पहलवान 'जसराम' को भेजा। विजयमल ने उसे भी भूमिशायी कर दिया। राजा ने फिर तीन सौ डोमडो को भेजा। विजयमल ने इन्हें भी मार गिराया। इसके पश्चात् राजा स्वय अपने पुत्र मानिकचन्द के साथ लाखो की सेना के साथ विजयमल को मारने के लिये पहुँचा। विजयमल ने देवी दुर्गा का स्मरण किया। हिछल बछडे ने उसे ढाँढस बधाया। युद्ध प्रारम्भ हो गया। हिछल सदा उनको विपत्तियो मे बचाता रहा। वह आकाश मे उडकर, फौज पर दौडकर सेना में कुहराम मचा देता था। विजयमल ने अपने खड्ग से समस्त सेना को काट डाला।

विजयमल ने किले में पहुँचकर तिलकी की सहायता से जेल का द्वार खोल दिया और अपने पिता तथा भाई से मिला। सब की भलीभाति सेवा करके सबको घर भेजने का प्रबन्ध कर दिया। पिता ने विजयमल से भी चलने को कहा। विजयमल ने कहा कि अभी प्रण पूरा नही हुआ है। यह कह कर कुँवर महल मे गवने की रस्म करने के लिये चला गया। मानिकचन्द ने अवसर देखकर विजयमल पर घातक प्रहार किया। विजयमल मूर्छित हो गया। हिछल बछेडा यह देख रहा था। वह विजयमल को टागकर उड चला और देवी दुर्गा के निवास पर पहुँचा। देवी ने अपनी कनिष्ट अगुली चीर कर विजयमल के मुख में खून की बूँदे डाल दी। कुँवर जीवित हो उठा। क्षण भर मे वह बावनगढ में पुन पहुँच गया। पहुँचते ही मानिकचन्द को हरा कर राजा एव मानिकचन्द, दोनो को सीकड से बँधवा दिया। बावनगढ को उसने ध्वस कर दिया और तिलकी के साथ पालकी में बैठकर वह चल दिया। सीकड में बँधे राजा और मानिकचन्द को रोहदासगढ के जेल में आजन्म कारावास भुगतने के लिये डाल दिया। घुरमलपुर में सोनमती के प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उसे पति मिला, देवर मिला, श्वसुर मिला और तिलकी देवरानी भी मिली।

प्रस्तुत लोकगाथा के अन्य दो रूपो (ग्रियर्सन द्वारा एकत्रित रूप तथा प्रकाशित रूप) में भी यही कथा दी हुई है। कथा में कोई अन्तर नहीं है। केवल कहीं कहीं पर घटा-बढा दिया गया है। व्यक्तियो के नामो तथा स्थानो के नामो मे अवश्य कुछ अन्तर मिलता है।

लोकगाथा के भोजपुरी रूप एवं अन्य रूपो मे अन्तर—(१) श्री ग्रियर्सन द्वारा एकत्र की हुई प्रस्तुत लोकगाथा मौखिक रूप से छोटी है। लोकगाथा का मौखिक रूप सैकड़ो पृष्ठो में उतारा गया है। वस्तुत ग्रियर्सन ने लोकगाथा की

पुनुरुक्तियो को छोड दिया है। लोकगाथाओ में पुनरुक्तवर्णनो की भरमार रहती है। एक ही विषय को बार-बार दोहराया जाता है। डा० ग्रियर्सन ने कथानक के प्रमुख अशो को कही नही छोडा है। ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत लोकगाथा का प्रारंभ तिलकी के वर ढूंढ़ने से प्रारंभ होता है।

व्यक्तियो के नामो मे भी बहुत थोडा अन्तर है। राजा घुरुमलसिंह का नाम 'गोरखसिंह' तथा धीरानन क्षत्रिय का नाम 'धीर क्षत्रिय' है। शेष सभी नाम मौखिक रूप के समान ही है।

स्थानो के नाम में दो विशेष अन्तर है। मौखिक रूप मे घुरुमलसिह के गढ का नाम रोहिदासगढ़ है तथा नगर का नाम घुरुमुल पुर है। ग्रियर्सन के रूप मे नगर का नाम 'धुनघुन शहर' दिया हुआ है। दूसरा अन्तर है बावनसूबो के किले के नाम में। मौखिक रूप में बावन सूबा के किला का नाम बावनगढ है तथा ग्रियर्सन के रूप में 'जिरहुल किला'। शेष सभी स्थानो के नाम एक समान ही हैं।

(२) प्रस्तुत लोक गाथा का प्रकाशित रूप, मौखिक रूप से भी बडा है। समस्त लोक गाथा सोलह भाग में वर्णित है। इसमें बीच-बीच मे कथानक के अनुरूप भजन, झूमर, सोहर तथा जतसार के गीत भी दिये गये हैं। प्रकाशित रूप में लोकगाथा का प्रारम्भ विजयमल के पितामहो से होता है। इस रूप के प्रथम भाग में विजयमल के पूर्वजो के तथा विजयमल का जन्म किस प्रकार होता है, वर्णित है। इसके पश्चात् कथा मौखिक रूप के ही समान चलती है। केवल शब्दावली का अन्तर है।

व्यक्तियो के नामो में ग्रियर्सन के रूप से अधिक अन्तर मिलता है। राजा घुरुमल सिह का नाम प्रकाशित रूप में घोडमल सिह दिया गया है। धीरानन क्षत्रिय का नाम इसमें हीरा क्षत्रिय है। चल्हकी नाउन का नाम सल्हकी नाऊन है तथा हिछल बछेडा का नाम हैदल बछेडा दिया गया है।

स्थानो के विषय में निम्नलिखित अन्तर मिलता है। मौखिक रूप के घमुंलपुर का नाम इसमें घोडहुलपुर दिया गया है तथा भवरानन पोखरा का नाम सैंरापोखरा है।

शेष सभी स्थानो एव व्यक्तियो के नाम समान है। प्रकाशित रूप में लेखक ने लोकगाथा के अन्त में विजयमल के पुत्रो इत्यादि का भी वर्णन किया ह। यह भी बतलाने का कष्ट किया है कि विजयमल के वंश में आगे चल कर 'शोभानयका बनजारा' ने जन्म लिया। शोभानयका बनजारा की लोकगाथा प्रेम

कथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत हमारे अध्ययन का विषय है। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक ने भोजपुरी लोकगाथाओ को एकसूत्र में बांधने के हेतु सब का नाम दिया है।

विजयमल लोकगाथा की ऐतिहासिकता—प्रस्तुत लोकगाथा की भी ऐतिहासिकता संदिग्ध है। 'विजयमल' के विषय में अभी तक कोई ऐसा तथ्य नही प्राप्त किया जा सका है, जिससे कि इसके ऐतिहासिकता का पता चल सके। डा० ग्रियर्सन ने प्रस्तुत लोकगाथा की भूमिका में लिखा है, कि "मैं लोकगाथा के चरित्रो को प्रकाश में लाने में अति कठिनाई का अनुभव करता हूँ।' उनका कथन है कि लोक गाथा में प्रचलित रीति रिवाजो का वर्णन उचित ढग से मिलता है, परन्तु व्यक्तियो के नाम के विषय में वे कहते हैं कि बुन्देली लोकगाथा 'आल्हा' के चरित्रो से कुछ साम्य है। 'आल्हा' की लोकगाथा में 'बावन सूबा का वर्णन है। 'विजयमल' में भी बावन सूबा का वर्णन है। 'आल्हा' की लोकगाथा में 'बेंदुला घोडा' के अद्‌भुत कार्यों का वर्णन है। ठीक उसी प्रकार प्रस्तुत लोकगाथा में 'हिछल बछेडा' का वर्णन है।[1]

यह सभव हो सकता है कि गायको ने आल्हा की लोकगाथा से उपर्युक्त चरित्रो का समावेश इस लोक गाथा में कर लिया है। प्रस्तुत लोकगाथा में वैवाहिक युद्ध, मानमर्दन, युद्ध वर्णन तथा दास दासियो के नामो में आल्हा की लोकगाथा से आश्चर्यजनक समानता मिलती है। अतएव यह भी सभव हो सकता है कि 'विजयमल' नामक किसी वीर के चरित्र को लेकर 'आल्हा' की गाथा के आधार पर, प्रस्तुत लोक गाथा की रचना कर दी गई हो।

प्रस्तुत लोक गाथा में 'रोहदास गढ' का नाम आता है। रोहतास गढ का किला आज भी सोन नदी के किनारे बिहार में स्थित है। परन्तु रोहतास गढ के किले से सबधित इतिहास से 'विजयमल' का कोई सबध नही मिलता है। इसका भी कोई प्रमाण नहीं है कि 'मल क्षत्रियो' ने कभी इस पर राज्य किया था। यह गाथा गायक की ही कल्पना प्रतीत होती है।

लोकगाथा में 'बावन गढ' नाम आता है। भोजपुरी प्रदेश में बावन गढ नामक कोई स्थान अथवा किला नही है। गोंड जाति के कथाओ इत्यादि में मडला के बावन किलो का नाम मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हीं बावन किलो का समावेश 'बावनगढ' के रूप में प्रस्तुत लोक गाथा में आ

१—जे० एस० बी० १८८४ (१) पृ० ९४

गया है। लोक गाथा में बावन सूबा का नाम भी आता है। यह नाम आल्हा की लोकगाथा मे भी प्राप्त होता है। यह भी सभव है कि इस प्रकार के स्थानो अथवा व्यक्तियो के नाम से अधिकार एव वैभव की व्यजना होती है।

हम यह पहले ही उल्लेख कर चुके है कि गायकवृन्द 'विजयमल' को तेली जाति का बतलाते है। हमे इस पर विश्वास नही होता है। 'विजयमल' के 'मल' शब्द से उसका क्षत्रिय होना प्रतीत होता है। लोकगाथा के सामाजिक स्तर से भी इसी सभावना की पुष्टि होती है।

सस्कृत के 'मल्ल' शब्द का अर्थ होता है। कुश्ती लडने वाला। विजयमल की वीरता इस अर्थ को पुष्ट करती है। डा० आपर्ट ने भारतवर्ष के आदिम निवासियो पर विचार करते हुये लिखा है कि मल्ल, मल, मालवा तथा मलाया इत्यादि शब्द द्राविडी भाषा से निकले है जिसमें 'मल' का अर्थ होता है 'पर्वत'।[1] इस आधार पर यह भी सभव हो सकता है कि 'मल' शब्द दक्षिण से ही आया हो। किन्तु एक बात और भी है। उत्तरी भारत वर्ष में, विशेष करके उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलो में तथा बिहार में 'मल' नामक एक महत्वपूर्ण जाति निवास करती है। श्री डब्ल्यू० क्रुक ने 'मल' जाति पर विचार करते हुये लिखा है कि 'मल' लोग कुर्मी जाति के होते है। ये अपनी उत्पत्ति ऋषि मौर्य भट्ट तथा कुर्मिन वैश्या के सयोग से बतलाते है। सरयू नदी के किनारे गोरख-पुर जिले में 'ककराडीह' नाम गांव है। यहाँ मलो की बस्ती है। उनका कथन है कि कन्नौज के राजा हषवर्धन के समय से उनको उक्त प्रदेश में राज्य करने की आज्ञा मिली थी। 'मल' लोगो में वैष्णव पथी तथा शैवपथी दोनो होते है। विशेष करके ये लोग काली तथा डीह (ग्राम देवता) की पूजा करते है।[2]

मल जाति की उत्पत्ति के विषय में उपर्युक्त कथन से यह निष्कर्ष निक-लता है कि 'मल' लोग निम्न जाति के होते है। वस्तुत यह कथन सत्य है। यद्यपि मल लोग अपने को क्षत्रियो की जाति में बतलाते है और आज उनकी गिनती भी क्षत्रियो में होती है, परन्तु कुलीन क्षत्रिय उन्हें आदर की दृष्टि से नही देखते।

इस विषय में एक तथ्य और भी विचारणीय है। बुद्ध कालीन सोलह महा-जन पदो में से एक 'मल्ल जनपद' भी था। इसकी भौगोलिक सीमा क्या थी, आज भी निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। जैन कल्प-सूत्रो में नौ मल्लो

१—डब्ल्यू-क्रुक-ट्राइब्स एड कास्ट्स आफ नार्थ वेस्ट प्राविन्सेस एड अवध भाग तीसरा पृ० ४५१। २—वही पृ० ४५०।

का उल्लेख मिलता है, किन्तु बौद्ध ग्रथो में केवल तीन मल्लो का उल्लेख मिलता है। यह है क्रमश कुशीनारा, पावा तथा अनूपिया के मल्ल। इनके अन्तर्गत अनेक प्रसिद्ध नगर थे जैसे, भोगनगर, अनूपिया तथा उरुवेलकप्प। कुशीनगर और पावा आधुनिक गोरखपुर जिले मे स्थित 'कसया और 'पडरौना' है। बुद्ध की मृत्यु कुशीनारा में ही हुई थी और उनका शरीर यहाँ के मल्लो के 'सस्था-गार' में रखा गया था। ये मल्ल बुद्धयुग के प्राचीन क्षत्रिय थे। गोरखपुर में एक जाति मिलती है जिसका नाम है 'सइथवार'। इस शब्द की उत्पत्ति सभवत 'सस्थागार' से ही हुई है। कदाचित् प्राचीन सस्थागार (सभाभवन) के ये लोग रक्षक रूप में रहे होगे और इनका भी सम्बन्ध मल्लो मे होगा। मल्ल लोग गणतन्त्री थे। बहुत सम्भव है कि इन्ही वीरो की कोई कथा 'विजय-मल' के रूप में प्रचलित हो गई हो।[१]

वास्तव में उपर्युक्त सभावना यथार्थ के निकट प्रतीत होती है। गोरखपुर, आजमगढ, छपरा इत्यादि जिलो में 'मलक्षत्रियो' की बहुत बडी आबादी है। अतएव यह सभव हो सकता है कि मध्य युग में अथवा उसके पहले ही किसी 'विजयमल' नामक वीर के ऊपर प्रस्तुत लोकगाथा की रचना हुई हो।

विजयमल का चरित्र—भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ में वीरत्व की प्रवृत्त एक समान नहीं मिलती है। प्रथमत या तो वह वीर अवतार के समान चित्रित रहता है या दैव अनुग्रह युक्त रहता है। वीर लोरिक अवतारी पुरुष था। इसी प्रकार विजयमल भी देवी दुर्गा की कृपा से उत्पन्न महावीर था। द्वितीय, लोकगाथाओ के वीर, अद्भुत कार्य करने की क्षमता रखते है। लोरिक विजयमल, आल्हा तथा ऊदल अपनी अद्भुत वीरता के कारण ही प्रसिद्ध हैं। अकेले सहस्रो की फौज को हरा डालना, सैकडो गज का छलाग मारना, एक तीर से सैकडो लोगो को धराशायी कर देना इन वीरो के लिये अत्यन्त सुगम कार्य है। कुवर विजयमल भी बाल्यकाल से अद्भुत वीरता का परिचय देता है। दसवर्ष की ही अवस्था में अस्सी मन की गुल्ली को मारकर उडा देता है। तृतीय, लोकगाथाओ में वीरो को सहायता देने के लिये उनका एक गुरु होता है। यह आवश्यक नही कि वह गुरु मनुष्य ही हो। वह घोडा, हाथी, सुग्गा, पेकटा अथवा किसी नीच जाति का व्यक्ति भी हो सकता है। लोरिक का गुरु मितार-जइल धोबी था। प्रस्तुत लोकगाथा में विजयमल का गुरु हिछल बछेडा (घोडा

१—डा० उदयनारायण तिवारी-'ओरिजिन ऐंड डेवलेप्मेंट आफ भोजपुरी' (अप्रकाशित)

है। वह उसे सभी विपत्तियो से बचाता है तथा समय-समय पर सचेत भी करता रहता है।

इस प्रकार प्रस्तुत लोकगाथा का नायक विजयमल दैवी कृपायुक्त, अद्‌भुत वीरता की क्षमता रखने वाला, तथा गुरू की सहायता से परिपूर्ण एक वीर है।

राजा घुघमल सिह को देवी दुर्गा स्वप्न देती है—

"रामा सपना देले देबिमाई दुरुगवा रे ना।
बबुआ तोहरा पुतर होइहें तेज मनवा रे ना॥"

इस प्रकार विजयमल का जन्म होता है। शैशव में ही उसके वीरत्व का प्रारम्भ होता है। वह अस्सी मन के गुल्ली को आकाश में उडा देता है—

"रामा तब उहे मरले एगो चँपवा रे ना
रामा चँपवा जाके गिरल बावनगढ मुलुकवा रे ना"

उसकी वीरता को देखकर लोग चकित रह जाते हैं। हिछल बछेडा उसका अभिन्न साथी है। विजयमल को जब अपने पिता की दुर्दशा का समाचार विदित हुआ तो वह हिछल बछडे पर सवार होकर चल देता है। हिछल बछेडा उसे युद्ध की विपत्तियो से बचाता है और साथ ही विजयमल को उसकी स्त्री तिलकी से मिलाता है। वह विजय को डाँटकर सोते से जगाता है—

'तयले कनखी देखेला हिछल बछेडवा रे ना
शोइजा तडप ... छल बछेडवा रे ना
सर ... चदरिया रे न
र ... ऊँघइया रे
... लउडिया रे
... रे

इस प्रकार ... होता है। ि
के साथ-साथ ... पर
सखियों को तग
कर मूर्छित हो

तिलकी उससे
अपने कर्त्तव्य का

बिना बदला लिये मैं यहाँ से वापस नही जाऊँगा। वह अकेले हिछल बछड़े प- सवार होकर बिजली की भाँति कौंधकर सेना में कूद पड़ता है। बावनसूबा तथा मानिकचन्द को वन्दी बनाता है और सारे किले को ध्वस कर देता है। वह समस्त प्रजा के कष्ट को दूर करता है और अपने पिता और बन्धुओ को जेल से मुक्त करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विजयमल का चरित्र एक राजपूत वीर का चरित्र है जो अपनी प्रतिज्ञा पर मर मिटने वाला होता है। विवाह तथा स्त्री प्रेम उसके लिये गौण स्थान रखते हैं। वह शत्रु से बदला लेना जानता है। उसका सत्य में, ईश्वर में तथा देवी देवता में विश्वास है। वह आर्य पथ का अनुगामी है। अनेक कठिनाइयो के पश्चात् उसे सफलता मिलती है और इस प्रकार लोकगाथा का अन्त मङ्गलदायी होता है।

है। वह उसे सभी विपत्तियो से बचाता है तथा समय-समय पर सचेत भी करता रहता है।

इस प्रकार प्रस्तुत लोकगाथा का नायक विजयमल दैवी कृपायुक्त, अद्भुत वीरता की क्षमता रखने वाला, तथा गुरू की सहायता से परिपूर्ण एक वीर है।

राजा घुघमल सिंह को देवी दुर्गा स्वप्न देती है—

"रामा सपना देले देबिमाई दुरुगवा रे ना।
बबुआ तोहरा पुतर होइहें तेज मनवा रे ना ॥"

इस प्रकार विजयमल का जन्म होता है। शैशव में ही उसके वीरत्व का प्रारम्भ होता है। वह अस्सी मन के गुल्ली को आकाश में उड़ा देता है—

"रामा तब उडे मरले एगो चँपवा रे ना
रामा चँपवा जाके गिरल बावनगढ मुलुकवा रे ना"

उसकी वीरता को देखकर लोग चकित रह जाते हैं। हिछल बछेडा उसका अभिन्न साथी है। विजयमल को जब अपने पिता की दुर्दशा का समाचार विदित हुआ तो वह हिछल बछडे पर सवार होकर चल देता है। हिछल बछेडा उसे युद्ध की विपत्तियो से बचाता है और साथ ही विजयमल को उसकी स्त्री तिलकी से मिलाता है। वह विजय को डाँटकर सोते से जगाता है—

'तबले कनखी देखेला हिछल बछेडवा रे ना
ओइजा तडपल बाटे हिछल बछेडवा रे ना
सरऊ फेंकऽ तुहूँ मखमल चदरिया रे ना
तोहरा तिले तिले लागल वा ऊँघइया रे ना
सरऊ आवतारी सोरह सौ लउडिया रे ना
सगे आवतारी तिलकी बबुनिया रे ना'

इस प्रकार विजयमल और तिलकी का मिलन होता है। विजयमल वीर होने के साथ-साथ उत्कट प्रेमी भी ह। वह भवरानन पोखरे पर आकर तिलकी के सखियो को तग करता है। तिलकी जव आती है तो वह उसकी सुन्दरता देख-कर मूर्छित हो जाता है।

'रामा देखतारे तिलकी के सुरतिया रे ना
रामा गिरी परले पोखरा उपरवा रे ना,

तिलकी उससे भाग चलने के लिये प्रार्थना करती है परन्तु विजयमल को अपने कर्त्तव्य का ध्यान है। वह लोकरक्षक एव दुप्ट सहारक है। वह कहता है

बिना बदला लिये मैं यहाँ से वापस नही जाऊँगा। वह अकेले हिछल बछड़े पर सवार होकर बिजली की भाँति कौंधकर सेना में कूद पड़ता है। बावनसूवा तथा मानिकचन्द को बन्दी बनाता है और सारे किले को ध्वस कर देता है। वह समस्त प्रजा के कष्ट को दूर करता है और अपने पिता और बन्धुओ को जेल से मुक्त करता है।

इस प्रकार हम देखते है कि विजयमल का चरित्र एक राजपूत वीर का चरित्र है जो अपनी प्रतिज्ञा पर मर मिटने वाला होता है। विवाह तथा स्त्री प्रेम उसके लिये गौण स्थान रखते हैं। वह शत्रु से बदला लेना जानता है। उसका सत्य में, ईश्वर में तथा देवी देवता में विश्वास है। वह आर्य पथ का अनुगामी है। अनेक कठिनाइयो के पश्चात् उसे सफलता मिलती है और इस प्रकार लोकगाथा का अन्त मङ्गलदायी होता है।

---

(४) बाबू कुंवरसिंह

भोजपुरी लोकजीवन में बाबू कुवर सिह का चरित्र परिव्याप्त है। बिहार राज्य में बाबू कुवरसिह का नाम बालक, युवक, बृद्ध सभी जानते हैं। स्वातत्रय-प्रेम का, पराक्रम एव त्याग का अभूतपूर्व आदर्श बाबू कुवर सिह ने सबके सम्मुख रखा है। १८५७ के भारतीय विद्रोह के प्रधान अधिनायको में उनका नाम आता है। बिहार के तो वे बिना मुकुट के राजा थे। उनकी वीरता महारानी लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे तथा नाना साहब इत्यादि वीरो से किसी भी प्रकार कम न थी। अस्सी वर्ष की वृद्धावस्था मे उन्होने जो पराक्रम दिखलाया उसकी प्रशसा अग्रेजो ने भी की है। भोजपुरी लोकगाथाओ में यही एक मात्र अर्वाचीन लोकगाथा है। वीरकथात्मक लोकगाथा के साथ-साथ यह एक ऐतिहासिक गाथा भी है।

वंश परपरा—बाबू कुवरसिह का सबध उस कुलीन राजपूत वश से था जिसके कारण आज बिहार राज्य की पश्चिमी बोली को भोजपुरी नाम से अभिहित किया जाता है। बिहार के शाहाबाद जिले के अन्तर्गत भोजपुर नामक गाव है। यह उज्जैन राजपूतो का गाव है। श्रीराहुल साकृत्यायन का मत है कि चौदहवी शताब्दी में महाराज भोज के वश के श्री शान्तनुशाह, धार की राजधानी मुसलमानो के हाथ में पड जाने के कारण पूरब की ओर बढे और बिहार के इस भाग में पहुँचे।[1] यहाँ के पुराने शासको को पराजित करके महाराज शान्तनुशाह ने पहले दावा (विहिआ स्टेशन) को अपनी राजधानी बनाई। उनके वशजो ने जगदीशपुर, मठिला, और अन्त में डुमराव में अपनी राजधानी स्थापित की। इसी जगदीशपुर से बाबू कुवर सिह का सबध है। उज्जैन राजपूतो की वश परपरा आज भी यहाँ पर है। बाबू दुर्गा शकर प्रसाद सिह ने अपनी पुस्तक में पितामहो द्वारा प्राप्त एक अलग वशावली दी है। वशका प्रारभ राजा भोज से ही है। उन्होने यह भी स्वीकार किया है कि चौदहवी शताब्दी में इस वश का बिहार में आगमन हुआ।[2] इनका कथन है कि कालान्तर में चलकर राजपूतो का राज्य कई टुकडो में बँट गया। जगदीशपुर भी उन्ही टुकडो में से

१—श्री दुर्गाशकर प्रसाद सिंह—'भोजपुरी लोकगाथा में करुण रस' भूमिका भाग—श्री राहुल साकृत्यायन का मत पृ० ४

२—वही, पृ०, १३

एक था। पहले तो यह एक साधारण जमींदारी के रूप में था, परन्तु शाहजहां के दरबार ने जगदीशपुर रियासत के मालिक को राजा की उपाधि मिली। उसी समय वहाँ के मालिक राजा के नाम से पुकारे जाने लगे।[1] इस समय से लेकर १८५७ ई० तक जगदीशपुर के राजाओं का बिहार के अधिकाश भाग पर एकाधिपत्य था। मुग़लकाल में इसे भोजपुर सरकार कहा जाता था।

बाबू कुवरसिंह के पिता का नाम बाबू शाहज़ादा सिंह था। मृत्यु के पूर्व शाहज़ादा सिंह उन्हें अपनी जमींदारी के तीन चौथाई भाग का मालिक बना गये थे। शेष एक चौथाई भाग मे उनके तीन भाई दयालसिंह, राजपतिसिंह तथा अमरसिंह सम्मिलित थे।[2] उज्जैन वशी राजपूतो मे बाबू कुवरसिंह बडे प्रतापी शासक हुये। उनका मान-सम्मान उन्ही के वश के डुमराव के समकालीन महाराजा से बढ-चढकर था। वे बहुत ही लोकप्रिय थे और युवावस्था मे ही समस्त बिहार मे राजपूतो के अग्रगण्य बन गये थे।

लोक गाथा के गाने का ढंग—प्रस्तुत लोकगाथा को दो व्यक्ति मिलकर एक साथ गाते हैं। प्रत्येक पद के प्रारम्भ मे 'रामा' रहता है तथा अन्त में 'रेना'। यह लोकगाथा एक स्वर मे गाई जाती हैं। इसमे स्थायी तथा अन्तरा नहीं रहता। इसके लय को द्रुतगतिलय कहते हैं। कथानक से उत्पन्न भावों के अनुरूप गायक का स्वर बदलता रहता है परन्तु लय वही रहता है। वाद्य यन्त्रो में खजडी और टुनटुनी (घटी) रहता है। वस्तुत अधिकाश भोजपुरी लोकगाथाएँ इसी प्रकार से गाई जाती है। उनमें ताल ठेका नही रहता। केवल स्वर साम्य ही रहता है।

भारतीय विद्रोह की भूमिका—१८५७ के भारतीय विद्रोह में बाबू कुवरसिंह ने सक्रिय भाग लिया। अत यहाँ पर सक्षेप में भारतीय विद्रोह के कारणो पर विचार कर लेना अनुपयुक्त न होगा।

भारतवासियों को अँग्रेजो के प्रति यदि यह सदेह न हुआ होता कि ये लोग यहाँ राज्य विस्तार करने आये है, तो यह निश्चित था कि १८५७ का विद्रोह न होता। परन्तु अँग्रेजो की अदूरदर्शिता तथा जल्दबाजी की नीति के कारण १८५७ में लोगो को अँग्रेजो के विरुद्ध बरबस अस्त्र उठाना ही पडा। मुगलो के लम्बे शासन के कारण देश एक विचित्र सुप्तावस्था में था। साधारण जनसमाज में स्वातन्त्र्य एव गुलामी दोनो के विषय में स्पष्ट कल्पना नहीं रह

१—प० सुन्दरलाल—भारत में अंग्रेजी राज-भाग तीसरा पृ० १५७८

२—प० ईश्वरीदत्त शर्मा—सिपाही विद्रोह—अध्याय २२ पृ० ४४१

गया। इधर बनारस के सिपाहियो के निहत्थे कर दिये जाने का समाचार दानापुर (बिहार) में पहुँचा। दिल्ली के समाचार ने पटने में एक सनसनी फैला दी। अँगरेजो पर दानापुर के सिपाहियो का सन्देह पक्का हो गया। पटने में अवध की नवाबी समाप्त करके आये हुये मुसललानो ने बुरी तरह उत्तेजना फैलाना प्रारम्भ कर दिया।[1] अकस्मात् हल्ला उड गया कि बहुत से गोरे सिपाही पटना और दानापुर की ओर आ रहे हैं। पटने के अँग्रेजो में भी गलत खबर उड गई कि दानापुर के सिपाही बलवाई हो गये हैं।

ऐसी आतकपूर्ण परिस्थिति में पटने के कमिश्नर टेलर नें स्थिति सम्हालने के लिए, नगर के प्रतिष्ठित मुसलमानो को गृहबन्दी बना दिया। इसके कारण उत्तेजना और फली। अब स्पष्ट रूप से विद्रोह की आग भडक उठी। अफीम विभाग के अफसर डाक्डर लायल विद्रोहियो को सतोप दिलाने गये। लोगो ने उन्हें गोली का शिकार बना दिया। इसके पश्चात् पटने मे धर-पकड प्रारम्भ हो गई। लखनऊ का पीरअली कुतुबफरोश भी पकडा गया। उसके ऊपर डाक्टर लायल की हत्या का अभियोग लगाया गया। १८५७ की ३ जुलाई को उसने बडी वीरता से फाँसी के तख्ते का सामना किया। २५ जुलाई को दानापुर के सिपाहियो ने भी स्वाधीनता की घोषणा कर दी। गोरे सिपाहियो से युद्ध प्रारम्भ कर दिया। दानापुर छावनी से देशी सेना ने कूच कर दिया। पटना में कमिश्नर टेलर ने परेड के मैदान पर गिरफ्तार व्यक्तियो को फाँसी की आज्ञा दे दी।[2]

आरा में भी विद्रोह का समाचार पहुँचा। यह हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि वाबू कुवर सिह का दबदबा चारो ओर था। सब लोग उन्हे अपना त्राता मानते थे। यद्यपि वाबू कुवरमिह वहुत वडी जमीदारी के मालिक थे, परन्तु अपने वेहद खर्चीलेपन के कारण उन्हे बरावर कडे सूद पर महाजनो से कर्ज़ लेना पडता था। धीरे-धीरे कर्ज़ बीस लाख से ऊपर पहुँच गया। परन्तु उन पर नालिश करने की हिम्मत किसी में न थी। अत में आरा के सब महाजनो ने मिलकर बावू साहव पर नालिश कर ही दी। डिग्री भी हो गई और इजराय की नौबत आ पहुँची। अत में लाचार होकर वावू साहब आरा के कलक्टर साहव के पास गये। कलक्टर साहब बावू कुवर सिह का बहुत आदर करते थे। सारा हाल सुनकर उन्होने कमिश्नर टेलर के पास लिखा कि बावू

१—प० सुन्दरलाल-भारत में अँग्रेज़ी राज—भाग तीसरा पृ० १५७७
२—वही पृ० १५७७

साहब की जमीदारी बिकने न पाये, इसलिए यह उचित है कि अंग्रेजी सरकार जमीदारी का प्रबन्ध अपने हाथ मे ले ले और क्रमश ऋण चुका दे। बोर्ड आफ रेवेन्यू ने जमीदारी का प्रबन्ध करना तो स्वीकार कर लिया पर ऋण का भार कुवरसिह पर ही रखा। बाबू साहब ने लाचार होकर यही प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और बीस लाख रुपया एकत्र करने के प्रबन्ध में लग गये। कुछ रकम तो उनके पहुँच मे थी, कि इतने मे बोर्ड आफ रेवेन्यू ने लिखा कि यदि आप एक महीने में रुपए न अदा करेंगे तो सरकार आप की जमीदारी का प्रबन्ध छोड देगी। आरा के कलक्टर ने कुवरसिह का बहुत पक्ष लिया। परन्तु बोर्ड टस से मस न हुआ।[१]

इस घटना से बाबू कुवरसिह को बहुत धक्का पहुँचा। उन्हे अब यह स्पष्ट हो गया कि अंग्रेजो की इच्छा क्या है। पुत्र के जीवित न रहने से तथा पौत्र के पागल हो जाने से वे पहले ही दुखी थे। इधर उनके विरोधियो ने अंग्रेजो का कान भरना प्रारम्भ कर दिया। बढती हुई अराजकता देखकर कमिश्नर टेलर को बाबू साहब पर भी सन्देह हो गया। उसने एक डिप्टी कलक्टर भेज कर कुवरसिह को पटना आने के लिए निमन्त्रित किया। बाबू साहब को सन्देह हो गया और उन्होने बीमारी का बहाना किया। डिप्टी कलक्टर उनका मित्र था। उसने कहा कि 'आप के न जाने से सन्देह पक्का हो जायगा।' इस पर कुवर सिह ने उत्तर दिया कि "आप मेरे पुराने मित्र हैं, उसी मित्रता की याद दिलाते हुये मै आप से पूछता हूँ कि क्या आप ईमान से कह सकते हैं कि पटने जाने पर मेरी कोई बुराई न होगी ?" डिप्टी साहब इसका कुछ उत्तर न दे सके और चुपचाप चलते बने।[२] बैरिस्टर सावरकर ने इस घटना की तुलना अफजल खाँ द्वारा भेजे गये ब्राह्मण एव शिवाजी से की है।

यद्यपि बाबू कुवर सिह के विरुद्ध विद्रोह का कोई प्रमाण न था, परन्तु अब लाचारी थी। उन्होने बहुत दुख सहा था, परन्तु इस अविश्वास को नहीं सह सकते थे। अंग्रेजो के विरुद्ध उनकी भृकुटी तन गई और क्रान्ति के अग्रदूत बन गये। इधर दानापुर के सिपाही आरा पहुँच गये थे। कुवर सिह भी जगदीशपुर से आरा पहुँचे। उनके आगमन से सिपाहियो का जोश दुगुना हो गया। कुवरसिह अपनी आरे वाली कोठी के मैदान मे घोड़े पर सवार होकर आये। सिपाहियो ने उन्हे फौजी ढग से सलाम दिया और अपना अधिनायक बनाया।

१—टी. आर होम्स-'हिस्ट्री आफ दी इडियन म्यूटिनी'—पृ० १८०
२—प० ईश्वरी दत्त शर्मा-'सिपाही विद्रोह'—पृ० ४४२

बाबू कुवरसिह के प्रधान लोगो में थे उनके छोटे भाइ अमरसिह, हरिकिशन सिंह और रणदलन सिंह ।

२७वी जुलाई को दानापुर के सिपाहियो ने कैदखाना तोड कर कैदियो को छोड दिया । कचहरी के कुछ कागज पत्र नष्ट किये गये परन्तु कलक्टरी के कागजो को बाबू साहब ने नही रद्द करने दिया । उन्होने कहा कि 'अँग्रेजो को भारत से भगाने पर इन कागजो के आधार पर ही लोगो के वश परम्परागत उत्तराधिकार का निर्णय करेंगे' ।

आरा का घेरा—आरा में विद्रोह प्रारम्भ होने के पहले ही अँग्रेजो ने वहाँ का खजाना तथा अँग्रेजी कुटुम्बो को हटाकर एक नवनिर्मित दुर्ग में लाकर सुरक्षित कर दिया था । इनकी रक्षा के लिए सिख सिपाही भी बुला लिये गये थे । बाबू कुवरसिह ने यहाँ आकर घेरा डाल दिया । आग लगाया गया । मिर्चे जलाये गये । परन्तु अँग्रेज न हटे । किले में पानी की कमी होने पर सिक्खो ने गड्ढा खोद कर पानी निकाल लिया, पर बाहर घेरा ज्यो का त्यो पडा रहा ।[१]

आम के बाग का संग्राम—२८ जुलाई को दानापुर से कप्तान डनबर के अधीन प्राय: तीन सौ गोरे सिपाही और सौ सिख आरा की सेना की सहायता के लिये चले । आरा के निकट ही एक आम का बाग था । बाबू साहब ने अपने सिपाहियो को वृक्षो की डालो पर छिपा दिया था । रात का समय था । अँग्रेजी सेना अमराई के बीच पहुँची तो ऊपर से गोलियाँ बरसनी प्रारम्भ हो गई । प्रात काल तक ४१५ में ५० अँग्रेज सिपाही जीवित बचे । कप्तान डनबर इसी आम के बाग में मारा गया ।[२]

बीबीगज का सग्राम—२ अगस्त को मेजर आयर और कुवरसिह की मुठभेड बीबीगज के निकट हुई । आयर विजयी रहा । इस प्रकार आरा का घेरा समाप्त हुआ और पूरा नगर और किला अँग्रेजो के हाथ मे फिर आ गया । कुवरसिह सेना सहित जगदीशपुर लौट आये । मेजर आयर ने पीछा किया । कई दिनो तक सग्राम जारी रहा । अँग्रेजो का बल बढता गया । १४ अगस्त को कुवर सिंह सौ सैनिको और अपने महल की स्त्रियो को साथ लेकर ससराम के पहाड में चले गये ।[३] जनरल आयर ने आरा और जगदीशपुर के

१—होम्स-हिस्ट्री आफ दी इन्डियन म्यूटिनी पृ०, १८१

२—प० सुन्दरलाल-भारत मे अँग्रेजी राज-भाग तीसरा पृ०, १५७८

३—होम्स–हिस्ट्री आफ दी इडियन म्युटिनी पृ० १८७

गल्ले को ध्वस कर दिया । निहत्थे लोगो को मारा तथा कैदी सिपाहियो को
पर चढ़ा दिया । कुँवरसिंह के सर पर पचीस हजार रुपये का इनाम बोला
परन्तु अपने लोकप्रिय नेता के साथ किसी ने भी विश्वासघात नही किय
बेखटके जहाँ चाहते चले जाते थे । बाबू साहब की दुर्दशा सुनकर लोगो के
में आग लग गई । कहते है कि मध्यप्रदेश तथा बरार और उसके आ
भी इनकी धाक फैली हुई थी । जबलपुर के सिपाही भी इनके लिये बलव
गये थे । नागपुर मे सागर-नर्मदा प्रदेश तक इनके लिए हलचल मच गई
सुदूर आसाम प्रदेश के एक राजा के सैनिक भी बाबू साहब के लिए बिग
हुये थे । इसी से उनकी व्यापक प्रतिष्ठा को हम जान सकते है ।

मिलमैन की पराजय—बाबू साहब की इच्छा थी कि ससराम के
से निकल कर दिल्ली, आगरा और झाँसी के क्रान्तकारियो से सम्बन्ध स
किया जाय । १८ मार्च १८५८ को कुँवरसिंह आगे बढे । आजमगढ मे
मील दूर उन्होंने अपना डेरा जमाया । जिस समय अँग्रेजो को यह स
मिला तुरन्त मिलमैन की अध्यक्षता में कुछ पैदल, कुछ घुडसवार, त
तोपें २२ मार्च १८५८ को कुँवरसिंह के विरोध में आ गई । घमासा
हुआ । कुवर सिंह ने एक चाल चली । वे पीछे हटने लगे । ऐसा प्रतीत हो
कि कुवर सिंह हार गये । अंग्रेजी फौज एक बगीचे में ठहर गई और भो
प्रबन्ध करने लगी । शिवा जी के भाँति कुवरसिंह गुरिल्ला युद्ध पद्धति के
उसी समय टूट पडे । मिलमैन आजमगढ की ओर भाग निकला । उसके
स्थानीं सिपाहियो ने उसका साथ छोड दिया । पूर्ण विजय कुवर सिंह की
लिखा है कि कम्पनी के सैनिक, बैलो और गाड़ियो समेत इधर-उधर भा
शेष सामान बाबू साहब के हाथ लगा ।[1]

डेम्स की पराजय—कर्नल डेम्स के अधीन दूसरी अँग्रेजी सेना मिल
सहायता के लिए गाजीपुर पहुँची । २८ को वह संयुक्त सेना कुवर
हाथो मार खाई । डेम्स ने आजमगढ के किले में जाकर आश्रय लिया
कुवरसिंह ने आजमगढ नगर में प्रवेश किया ।[2]

आजमगढ से कुवरसिंह बनारस की ओर बढे । लार्ड कैनिंग
उस समय इलाहाबाद मे था । उस समय का इतिहासकार मॉलेसन

१—पं० सुन्दर लाल—'भारत में अंग्रेजी राज'—भाग तीसरा पृ० १
२—शाहाबाद गजेटियर पृ० २८-३५

है कि कुवरसिह के विजयो और उसके बनारस पर चढाई का समाचार सुन-कर लार्ड कैनिंग घबरा गया ।[१]

डगलस की पराजय— सेनापति डगलस के अधीन दूसरी अग्रेजी सेना कुवरसिह से नघई ग्राम के निकट भिड गई । कुवरसिह ने अपनी सेना के तीन दल किये । कम सख्यावाला दल वही रह गया, जिसे डगलस दबाता गया । जब अग्रेजी सेना थक कर रुकी तो दोनो ओर से दो अन्य दलो ने आक्रमण कर दिया । पराजित डगलस को पीछे हटना पडा । कुवरसिह ने आगे बढ़कर सरयू नदी पार किया । मनोहर ग्राम में पुन मुठभेड हुई परन्तु कुवरसिह सेना को छोटी छोटी टुकडियो में बाँटकर आगे बढ गया । अग्रेजी सेना पीछा न कर सकी । डगलस हताश हो गये ।[२]

बाबू कुवरसिह गोली से घायल—गङ्गा के निकट पहुँचकर कुँवरसिह ने हल्ला मचा दिया कि उनकी सेना बलिया के निकट हाथियो पर गङ्गा पार करेगी । अग्रेजी सेना उसी स्थान पर आ डटी । कुँवरसिह वहाँ से सात मील दक्षिण शिवपुर घाट से सेना को पार भेजने लगे । स्वय अन्तिम नाव पर बैठकर गङ्गा पार होने लगे कि इतने में अँग्रेजी सेना आ गई और नावो पर गोली बरसाना प्रारम्भ कर दिया । एक गोली कुँवरसिह के दाहिनी कलाई में लगी । शरीर मे विष फैल जाने का भय था । अत उस वीर ने बाँयें हाथ से तलवार लेकर दाहिना हाथ काटकर गङ्गा को भेंट कर दिया । अँग्रेजी सेना उनका पीछा न कर सकी ।[3]

क्रान्ति की अमर चिनगारी झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई वीरगति को प्राप्त हो चुकी थी । इस समाचार ने बाबु कुँवर सिह की योजना को बिगाड दिया । बाबू साहब लौट पडे । आठ महीने के पश्चात् कुँवर सिह ने २२ अप्रैल १८५८ को जगदीशपुर में पुन प्रवेश कर अपना अधिकार स्थापित किया ।

लीग्रंड की पराजय—२३ अप्रैल को लीग्रड के अधीन अँग्रजी सेना ने पुन जगदीशपुर पर आक्रमण किया । कटे हाथ से बाबू कुँवर सिह लडे । अँग्रेज पुन.

२—प सुन्दरलाल-भारत म अँग्रेजी राज भाग–तीसरा पृ १५७९ ,

३—शाहाबाद गजेटियर पृ-२९-६५

४— वही

पराजित हुये। इतिहास लेखक व्हाइट लिखता है कि इस अवसर पर अंग्रेजो ने बुरी तरह से हार खाई।[1]

बाबू कुंवरसिंह की मृत्यु—कुंवरसिंह थक चुके थे। अस्सी वर्ष के उस वृद्ध का शरीर जर्जर हो चला था। इतिहासकार होम्स लिखता है कि वह वृद्ध राजपूत इतने सम्मानपूर्वक तथा वीरता से अंग्रेजो से लडकर २६ अप्रैल १८५८ को काल कवलित हो गया। बाबू कुंवरसिंह दिव गत हुए। जीवन की दारुण सध्या में यह कितना भव्य अन्त था।

क्रान्ति की बागडोर उनके छोटे भाई बाबू अमर सिंह के हाथो मे आई। सात महीने तक अंग्रेजो को इनके कारण अपार कष्ट हुआ। अवध की लडाई के विजेता सर हेनरी हैवलाक तथा डगलस के अधिनायकत्व में १७ अक्टूबर को नौनदी का संग्राम हुआ। अमरसिंह हार गये। वे कैमूर की पहाडियो में चले गये, और फिर उनका पता नही लग सका।

बिहार के उस प्रदेश से अंग्रेजो को जितना कष्ट उठाना पडा उसे वे बहुत दिनो तक भूल न सके। पिछले जर्मन युद्ध तक वहाँ से कोई युद्धमे भरती नही किया जाता था।

लोकगाथा मे वर्णित वृत्त—बाबू कुंवरसिंह उज्जैनकुल भूषण थे तथा उनकी राजधानी जगदीशपुर में थी। उस समय जगदीशपुर बिहार के प्रधान राज्यो में था। कुंवरसिंह और अमरसिंह दो भाई थे। बाबू कुंवरसिंह उस समय गद्दी पर थे। स्वातन्त्र्य सग्राम के समय उनकी अवस्था अस्सी वर्ष की थी। इस अवस्था में जो पराक्रम उन्होने दिखलाया वह अद्वितीय था। बाल्य काल से ही वीरता उनके बांट पडी थी। शस्त्र विद्या मे वे पूर्ण पारगत थे और मृगया में बहुत चाव रखते थे। उनके जीवन का अधिक अंश आनन्द एव शांति में व्यतीत हुआ। बाल्यकाल खेल कूद में बीता। यौवन काल राज सुख में बीता। वृद्धावस्था में आकर उन्हें स्वातन्त्र्य सग्राम में भाग लेना पडा।

भारतीय विद्रोह की आग दिल्ली, आगरा, मेरठ, लखनऊ, झांसी ग्वालियर, इन्दौर तथा बनारस होते हुये पटना भी पहुँची। पटना के कमिश्नर टेलर ने कई विद्रोहियो को फांसी पर चढा दिया, जिनमे पीरअली थे। उसने आस-पास

१—शाहाबाद गजेटियर पृ २९-३५
२ वही

के जमीदारो से भी विद्रोह दमन में सहायता ली। जिसने सहायता न दी उनमें से अनेको को जेल भिजवा दिया अथवा फाँसी दिलवा दी।

इस परिस्थिति को देखकर बाबू कुँवरसिंह ने न्यायपथ को चुन लिया। इसी समय दाना पुर के सिपाहियो ने जाकर पटने का हाल सुनाया और अँग्रेजो के विरुद्ध झन्डा खडा करने की प्रार्थना की। इस प्रकार जीवन के सध्याकाल में भारतीय स्वातन्त्र्य समर में बाबू कुँवरसिंह ने अपना जीवन सर्मपित्त कर दिया।

युद्ध के लिये सन्नद्ध होकर वे दानापुर पहुँचे और आधी रात के समय गङ्गा के तीर पर वन्दूको की धाँय-धाँय गरज उठी। सब ओर त्राहि-त्राहि मच गई। अँग्रेजो को ऐसे अचानक आकमण की आशा न थी। उनके पैर उखड गये। जिसको जहाँ भी ठौर मिला वह वही भाग खडा हुआ। बाबू कुँवरसिंह ने दानापुर में विजय की पताका फहरा दी। अँग्रेजो के विरुद्ध यह प्रथम विजय थी।

इस विजय के पश्चात् बाबू कुँवरसिंह ने समस्त उत्तरापथसे अँग्रेजी राज्य की नीव उखाडने का निश्चय कर लिया। उन्होंने दानापुर के पश्चात आरा पर आक्रकण कर दिया। आरा कचहरी और वहाँ का खजाना लूट लिया। अँग्रेजी फौज भागकर किले में छिप गई। इस विद्रोह का समाचार बक्सर के आयर साहेब के पास पहुँचा। वहृत बडे तोप खाने ओर फौज के साथ उसने आरा पर आक्रमण कर दिया। कुछ हिन्दुस्तानी गद्दारो ने भी आयर की सहायता की। कुँवरसिंह ने वीरता के साथ सामना किया। परन्तु सेना और युद्ध सामग्री की कमी के कारण आरा से हटना पडा।

इधर आयर ने आरापर अग्रेजी झडा गाड कर कुवर सिंह की राजधानी जगदीशपुर पर भी आक्रमण कर दिया। जगदीशपुर की रक्षा के लिये वावू कुवरसिंह के अनुज श्री अमरसिंह तत्पर थे। उन्होंने वडी वीरता के साथ सामना किया। अमरसिह की वीरता को देखकर अँग्रेजो के छक्के छूट गये। परन्तु इस देश का दुर्भाग्य कि डुमराँव के महाराजा ने अग्रजो का साथ दिया। अमरसिह ने क्रोध मे आकर डुमराँव के महाराजा पर आक्रमण कर दिया। हाथी की सू ड कट गई और वह चिग्घाड कर मैदान से भाग निकला। कुवरसिहने नगर छोड दिया। अमरसिह के साथ वे ससराम के पहाडो में चले गये। अग्रेजो ने समस्त नगर को श्मशान भूमि वना डाला।

वावू कुवर सिह ने अव पश्चिम की ओर वढने का निश्चय किया। वे आजम-गढ की ओर चल पडे। रास्ते में अतरौलिया के मैदान में अँग्रेजो से घमासान

युद्ध हुआ। अँग्रेजो के कदम वहाँ से उखड गये और उनकी फौज तितर-बितर हो गई। कुवर सिह ने आजमगढ पर आक्रमण किया और कर्नल डेम्स को हरा कर आजमगढ को स्वतन्त्र कर दिया। कुवरसिह की वीरता का समाचार वाइसराय लार्ड कैनिग तक पहुँचा। बाबू कुवरसिह का नाम अँग्रेजो के लिए अत्यन्त भयावह हो गया।

आजमगढ से आगे चल कर कुवरसिह ने बनारस पर आक्रमण कर दिया। लार्ड माककर के अधिनायकत्व में अँग्रेजी फौज ने उनका सामना किया। कुछ देर के घमासान युद्ध के पश्चा अँग्रेजो की हार हो गई और लोग जहाँ तहाँ जान लेकर भागे। लार्ड माककर भी भाग निकला।

स्वातन्त्र्य-सग्राम को एक सूत्र में बाँधने के हेतु बाबू कुवरसिह ने झासी की ओर रानी लक्ष्मीबाई से मिलने के लिए प्रस्थान किया। इसी बीच समाचार मिला कि रानी वीरगति को प्राप्त हो गई। इस निराशाजनक समाचार को सुनकर बाबू कुवरसिह पुन पूरब की ओर लौट पडे। अँग्रेजो ने उनका पीछा किया। गाजीपुर के पास आकर पुन घमासान युद्ध हुआ। जनरल डगलस फौज लेकर पिल पडा और कुवर सिह को घेर लिया। परन्तु बाबू साहब चालाकी से घेरे में से निकल आये। शत्रुओ ने फिर भी पीछा नही छोडा और जिस समय वे गगा में नाव पर बैठ कर पार जा रहे थे, उन पर गोली की वर्षा प्रारम्भ कर दी। बाबू कुवर सिह के दाहिने हाथ में गोली लगी, परन्तु उस वीर ने तलवार से दाहिने हाथ को काट कर गगा मैया को अर्पण कर दिया। वे पुन जगदीशपुर लौट आये और भग्न महल पर विजय पताका फहराई।

अँग्रेज सेनापति लीग्रड ने जगदीशपुर पर पुन घेरा डाल दिया। आठ महीने तक उसी घायल अवस्था में कुवरसिह मोर्चा लेते रहे। परन्तु अस्सी वर्ष का वह जर्जर शरीर इस व्यथा को सहन न कर सका और वे इहलोक की लीला समाप्त कर परलोक सिधार गये।

उनके देहान्त के पश्चात् अँग्रेजो ने उस सुनसान जगदीशपुर के गढ को पूर्णतया ध्वस कर डाला। मन्दिरो-मूर्तियो को गिराकर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। कुवर सिह के अनुज अमर सिह को इतना शोक हुआ कि जगदीशपुर छोडकर कही चले गये और फिर कभी नहीं लौटे।

बाबू कुवरसिह के ऐतिहासिक वृत्त तथा लोकगाथा वृत्त में निम्नलिखित समानता एव अंतर है।

समानता—प्रस्तुत लोकगाथा अत्यन्त अर्वाचीन होने के कारण घटनाओ में विशेष अन्तर नही आने पाया है। यह लोकगाथा इतिहास के आधार पर रची गयी है। निम्नलिखित तथ्य समान है।

बाबू कुवरसिह का वश, उनका वीर स्वभाव, भारतीय विद्रोह का वर्णन, पीरअली की फाँसी, पटना के कमिश्नर टेलर का बाबू कुवर सिह पर सन्देह, दानापुर के सिपाहियो पर विद्रोह, बाबू साहब का विद्रोह का नेतृत्व ग्रहण करना, आरा का घेरा, अतरौलिया (आम का बाग) का सग्राम, बीबीगज का सग्राम, मिलमैन की पराजय, कर्नल डेम्स की पराजय, डगलस की पराजय, बाबू कुवर सिंह का गोली से घायल होना, जगदीशपुर पुन लौटना और उनकी मृत्यु तथा अमर सिंह का पलायन। इस प्रकार लोकगाथा में प्राय सभी युद्धो का का वर्णन है। स्थानो के नाम में भी अन्तर नही मिलता। केवल कही-कही पर नाम नही दिये गये हैं और घटनाओ के दिनाक का भी उल्लेख नही किया गया है।

अन्तर—यह पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि घटनाओ का क्रम समान ही है। इतिहास में प्रत्येक घटनाओ एव कारणो का व्यवस्थित वर्णन मिलता है। लोकगाथा में कारणो का उल्लेख न करके बाबू कुवरसिंह की वीरता का ही अधिक वर्णन है। अतर इस प्रकार है—

प्रथम, लोकगाथा में आरा का खजाना लूटने का भी वर्णन है, परन्तु इतिहास के अनुसार अँग्रेजो ने खजाने को पहले ही किले में रख लिया था। कुवर सिंह ने किले पर घेरा डाला परन्तु सफलता न मिली।

द्वितीय, लोकगाथा में कुवर सिंह के छोटे भाई अमरसिंह को भी यथेष्ट महत्व मिला है। अमरसिंह का राजा डुमराव से युद्ध का वर्णन सुन्दर रीति से किया गया है। इतिहास में यह घटना उतनी महत्वपूर्ण नहीं है।

तृतीय, लोकगाथा में कुवरसिंह की मृत्यु के पश्चात् अमरसिंह का पलायन वर्णित है। परन्तु इतिहास में अँग्रेजो से सात महीने युद्ध का जारी करना लिखित है। नौनदी के सग्राम में हार कर अमरसिंह कैमूर की पहाडियो में अन्तर्ध्यान हो गया। गाथा मे यह वर्णन नही है।

लोकगाथा तथा इतिहास के वृत्तो में विशेप अतर नही है। एक बात उल्लेखनीय है, वह यह कि इस लोकगाथा में कही भी अतिरजित वर्णन नही मिलता। यह प्रवृत्ति अन्य किसी भोजपुरी लोकगाथा मे भिन्न है। सभी में

अतिरजना है एव देवी-देवताओं का समावेश है। इसमे सभी घटनाओं का और बाबू कुवर सिह की वीरता का अत्यन्त स्वाभाविक वर्णन किया गया है।

बाबू कुवरसिह की लोकगाथा का प्रकाशित रूप[1] भी आजकल प्रचार में है। एक विशेष बात इस प्रकाशित रूप में भी दिखलाई पडती है। वह यह कि अन्य प्रकाशित लोकगाथाओं के समान इसके प्रकाशित एव मौखिक रूपों में भिन्नता नही है। बाबू कुवरसिह का जीवनचरित, घटनाओं का वर्णन तथा टेक पदो की पुनरावृत्ति इत्यादि सब समान है। केवल शब्दावली का अतर है, जो कि स्वाभाविक भी है। ऐसा प्रतीत होता है कि अत्यन्त अर्वाचीन होने के कारण इसमें सम्मिश्रण तथा घटनाओ का फेर-फार नही होने पाया है। इस लोकगाथा के वर्णन की स्वाभाविकता ही इसका सबसे बडा प्रमाण है। रचमात्र भी इसमें अतिरजना नही है। अतएव यहाँ पर मौखिक एव प्रकाशित रूपों की तुलना की आवश्यकता नही है।

बाबू कुवरसिह की लोकगाथा के मौखिक रूप के खोज में एक नवीन बात दिखलाई पडी। कुवर सिह का जीवनचरित भोजपुरी समाज में लोकगाथा के के रूप में उतना नही व्याप्त है जितना कि लोकगीतो के रूप में। बाबू कुवर सिह के ऊपर निर्मित लोकगीतो की भरमार है। चैता, बारहमासा, होली, बिरहा तथा देशभक्ति के गीतो में कुवर सिह का चरित्र बहुत ही सुन्दरता से व्यक्त किया गया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि लोकगाथा के गायक प्राचीनता एव रसिकता में अधिक रुचि रखते है। ये बाते 'कुवर सिह' की लोकगाथा में नही है। सम्भवत इसी कारण गायक, कुवरसिह के चरित्र को ऋतुओं तथा अन्य रसिक गीतों में सम्मिलित करके गाते है।

बाबू कुवरसिह की लोकगाथा कथात्मक के साथ-साथ ऐतिहासिक भी है। यहा इस लोकगाथा में आये हुये स्थानो की भौगोलिकता पर विचार कर लेना अनुपयुक्त न होगा।

भौगोलिकता—लोकगाथा में जिन-जिन स्थानो, नगरो, नदियो एव पहाडो के नाम आये है वे सभी सत्य है। इस लोकगाथा मे कल्पना का लेशमात्र भी स्थान नही है।

१—बाबू कुवर सिह—दूधनाथ पुस्तकालय, हवडा

प्रमुख नगरो के नाम--दिल्ली, आगरा, ग्वालियर, इदौर, कानपुर, बिठूर, लखनऊ, इलाहाबाद, बनारस, आजमगढ, गाजीपुर, बलिया, पटना, दानापुर, बक्सर, आरा एव जगदीशपुर ।

उपर्युक्त नगर आज भी स्थित हैं तथा यह हम भली भाँति जानते है कि इन स्थानो पर भारतीय विद्रोह का विशेष प्रभाव रहा है । इसके अतिरिक्त अतरौलिया, बीबीगज इत्यादि स्थान आज भी हैं ।

नदियों के नाम—गगा तथा सरयू (घाघरा) का नाम प्रमुख रूप से आता है। कुवरसिह जिस मार्ग से आगे बढे थे उनमें गगा एव सरयू का उल्लेख पूर्णतया उपयुक्त है ।

पहाड़ों के नाम—ससराम के पहाडो एव कैमूर की पहाडी का उल्लेख लोकगाथा में है। यह भी एक भौगोलिक सत्य है। ये बिहार में ही पडते हैं।

व्यक्तियो के नाम भी जो दिये गये हैं, वह सब ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य हैं।

बाबू कुँवरसिंह का चरित्र—भारतीय पुनर्जागरण के इतिहास में बाबू कुवर सिंह का नाम अमर हैं । अपने जीवन के सध्याकाल में इस महापुरुष ने जो वीरता दिखलाई उससे उसके कुल का, प्रदेश का तथा समस्त देश का अन्धकारमय विगत इतिहास प्रदीप्त हो उठा । सर्वत्र स्वातन्त्र्य भावना की लहर दौड गई । विदेशियो के चगुल से छुटकारा पाने के लिये यह महादेश जाग पडा और प्राय अर्द्धशताब्दी तक विदेशियो से जूझते हुये अपने ध्येय का साक्षात्कार किया ।

भारतवर्ष के इतिहास में अनेको बार ऐसी घटनाएँ घटी है जब इतिहास का मगल पृष्ठ लिखते-लिखते रुक गया है । मध्य युग में गुरुगोविन्दसिंह शिवा जी से भेंट करने के लिये चल पडे थे । पर देश का दुर्भाग्य, कि शिवा जी चल बसे। इतिहास बनते-बनते रुक गया । इसी प्रकार बाबू कुँवरसिह स्वातन्त्र्य की वैजयन्ती लहराते झासी की रानी मे मिलने चल पडे थे, पर हमारे दुर्भाग्य से रानी दिवगता हो गईं । सभवत हमारे कर्तृत्व शक्ति की परीक्षा अभी शेष थी । इतिहास गिरते-पडते आगे बढता गया ।

सग्राम में भाग लेने के पूर्व बाबू कुँवरसिंह का जीवन अत्यन्त सादगी का था। वे सादा वस्त्र पहनते थे और सादा जीवन व्यतीत करते थे । पराक्रम उनमें कूट-कूट कर भरा हुआ था । बाल्यकाल से ही उन्हें वीरता के कार्यों में अधिक रुचि थी। अध्ययन में उनकी रुचि कम थी । सदा हथियार चलाने, घुडसवारी करने और शिकार खेलने में ही मस्त रहते थे। अपनी बलिष्ठ भुजाओ के कारण वे यौवनकाल ही में बिहार के राजपूतो के अग्रगण्य हो गये थे । सब लोग उनका

आदर करते थे। कोई उनके विरुद्ध एक बात भी बोलने का साहस नहीं करता था। शाहाबाद जिले के तो वे राजा ही थे। इस प्रदेश में उनका ऐसा प्रताप व्याप्त था कि वे जिस रास्ते निकल जाते थे, उधर के लोग रास्ते के दोनो किनारे हाथ जोड़कर खड़े हो रहते थे। कोई उनके सामने ऊँचे स्वर से बात नही करता था, कोई तम्बाकू नही पीता था, कोई छाता नही लगाता था। उनका ऐश्वर्य सम्राट् की भाँति था।

उनकी यह धाक बलपूर्वक नही जमी थी। वस्तुत वह एक लोकप्रिय व्यक्ति थे। दु खी जन की सेवा ही उनका व्रत था। परोपकार में उन्होंने अपना खजाना खाली कर दिया। उनके ऊपर बीस लाख रुपये का कर्ज चढ़ गया, परन्तु लोक सेवा का व्रत नहीं टूटा। शरणागतवत्सलता उनमें कूट-कूट कर भरी थी। उनके यहाँ से कोई खाली हाथ नही लौटता था। एक बार नैपाल के रणदलन सिंह खून करके उनकी शरण में आये। बाबू साहब ने अपने यहाँ शरण दिया। सग्राम में चलकर रणदलनसिंह उनका प्रमुख सेनापति बना।

बाबू कुँवरसिंह ने अपने जीवन में किसी से झगडा नही मोल लिया। सभी उनके मित्र थे। यहाँ तक कि अग्रेज भी उनके मित्र थे। आरा का कलक्टर तथा पटने का कमिश्नर टेलर भी उनके घनिष्ट मित्रो में से थे। इतिहासकार होम्स भी इस मित्रता का समर्थन करता है।[1] परन्तु सन्देह की कोई दवा नही। अग्रेजो ने बाबू साहब पर अविश्वास प्रकट किया। वह भारतीय वीर भला इस अविश्वास को कैसे सहन कर सकता था। उसने म्यान से तलवार बाहर निकाल ली और समरागण में कूद पड़ा। अग्रेजो को भी भारत के वृद्ध बाहु का प्रताप देखना था। उन्होंने खुली आँखो से देखा। कुँवरसिंह का नाम उनके लिये भयावह हो गया।

वीरता के साथ साथ बाबू कुँवरसिंह में नीतिमत्ता भी थी। सग्राम में भाग लेने के पूर्व उनकी नीतिकुशलता का उदाहरण पुन प्रस्तुत करना अनुपयुक्त न होगा। पटना से टेलर ने एक डिप्टी कलक्टर को कुँवरसिंह को बुलाने के लिये भेजा। कुँवरसिंह ताड़ गये। डिप्टी कलक्टर ने कहा, 'आपके न जाने से टेलर साहब को आप पर जरूर शक होगा।' इस पर बाबू साहब ने गम्भीर भाव से उत्तर दिया, 'आप मेरे पुराने दोस्त है, उसी दोस्ती की याद दिलाते हुए मैं आप से पूछता हूँ कि क्या आप ईमान से कह सकते हैं कि पटने जाने पर मेरी कोई बुराई न होगी?' डिप्टी साहब इसका कुछ उत्तर न दे सके और चुपचाप चलते

१—टी० आर० होम्स—ए हिस्ट्री [illegible]

बने। यह घटना इतिहास के उस चिरस्मरणीय घटना को स्मरण कराती है, जब अफजल खाँ ने एक ब्राह्मण द्वारा शिवा जी को निमन्त्रित किया था।

सग्राम में भाग लेने पर उन्होने क्षत्रियत्व के आदर्श को कभी नही छोडा। वे एक कुशल सिपाही और कुशल सेनापति थे। आवश्यकतानुसार शिवा जी की तरह उन्होने भी गुरिल्ला युद्ध की पद्धति अपनाई और अग्रेजो को नाच नचाया। उन्होने अपने थोडे से सिपाहियो के साथ अग्रेजो को घेर-घेरकर पराजित किया। गगा पार करने के समय भी उन्होने अग्रेजो को धोखा दिया और सात मील दक्षिण जाकर गगा को पार किया। अग्रेज हाथ मलते रह गये। बाबू कुवरसिंह ने युद्ध नीति में युद्ध-धर्म कभी नही छोडा। अग्रेजो ने उनकी वीरता की भूरि-भूरि प्रशसा की है। अग्रेज स्त्रियो और बच्चो को उन्होने कभी नही मारा। निहत्थे सिपाहियो पर कभी भी अस्त्र नही उठाया। शरणागतो को अपनी सेना में स्थान दिया। जब आरा की कचहरी लूटी गई, उस समय उन्होने कागज़ाद को नष्ट नही होने दिया। उन्होने कहा कि इन्ही कागजात के द्वारा भविष्य में लोगो को जमीन—जायदाद दी जायगी।

उनकी व्यक्तिगत वीरता अप्रतिम थी। अस्सी वर्ष की वृद्धावस्था में घोडे पर सवार होकर युद्ध करना वास्तव में एक अद्भुत कार्य था। कुँवरसिह तलवार लेकर स्वय पिल पडते थे। अपनी वीरता का 'नजराना' उन्होने गगा को कैसे दिया इसका कितना सुन्दर वर्णन लोकगाथा में है।

"रामा गोली आई लागल दहिना हथवा रेना
रामा हाथ होइ गइल बेकरवा रेना
रामा जानिकर हाथ बेकरवा रेना
रामा काटि दिहले लेके तरवरवा रेना
रामा कहेले जे लेहु गगा हथवा रेना
रामा कहिकर उतना बचनवा रेना
रामा डाल दिहले गगा जी में हथवा रेना
रामा वीर भगत के ईहे निशानवाँ रेना
रामा गगा जी के रहल नजरानवाँ रेना"

यही श्री बाबू कुँवरसिंह के चरित्र की सक्षिप्त झाकी है। उनके अमर जीवन की यह गाथा भोजपुरी प्रदेश में अत्यधिक प्रचलित है। वीरता एव परोपकार के लिये उन्ही से तुलना की जाती है। देशभक्ति के तो वे स्फूर्तिमय देवता बन गये है। भोजपुरी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनका जीवन व्याप्त है।

पहले ही बताया जा चुका है कि लोकगीतों में भी उनका चरित्र परि-
व्याप्त है। कुछ गीत इस प्रकार है —
उदाहरण के लिये 'फाग' का एक पद,

'बाबू कुवरसिंह तोहरे बिनु–
अब न रगइबो केसरिया ॥
इतते अइले घेरि फिरगी,
उतते कुँवर दुई भाई ॥
गोला बारूद के चले पिचकारी
बिचवा में होत लडाई ॥ बाबू० ॥

इसी प्रकार 'बिरहा में इनका चरित्र परिव्याप्त है—

बाबू कुँवरसिंह के नील का बछेडवा,
पीअले कटोरवन में दूध ॥
हाली हाली दुधवा पिआईए कुँवरसिंह
अबकी रयनियाँ जिताव निलका बछेडवा
सोनवे मढइबो चारो खूँट ॥

तिरहुत नगर पहुँच कर दसवन्ती के घर के समीप शोभानायक ने मनिहारी की दुकान सजा दी और स्वय मनिहारी का भेप बनाकर बेचने बैठ गया। दसवन्ती की एक सखी बाजार में सामान खरीदने चली आ रही थी। वह मनिहारी की दुकान देखकर टिकुली, सेंदुर, चूडी इत्यादि खरीदने के लिये वहाँ पहुँची, परन्तु शोभा के सुन्दर रूप को देखते ही वह मूर्छित हो गई। शोभा ने जल छिडक कर उसकी मुर्छा दूर की। होश आते ही वह दासी दसवन्ती के महल में गई और सारा हाल कह सनाया। ऐसे मनिहारी को देखने के लिये दसवन्ती तीन सौ साठ दासियो के साथ मनिहारी की दुकान पर गई। एक दासी ने चोली उठाकर उसका मोल पूछा। शोभा ने कहा कि तुममें से जो सर्दार हो वही मोल-भाव करे। निर्भीक होकर दसवन्ती सामने आ गई। शोभा ने देखा कि बारी दसवन्ती पूर्ण यौवन को प्रप्त कर चुकी है। शोभा ने कहा कि, 'तुम तो पूरी जवान हो चुकी हो और बाजार में घूमती हो ? मै शोभा का मित्र हूँ। उससे जाकर यह बात कह दूँगा।' यह सुनते ही वह शोभा को पहचान गई और नौ हाथ का घूंघट काढकर महल में भाग गई।

महल में जाकर सोचने लगी कि जिस प्रकार शोभा न मुझे छकाया है उसी प्रकार मैं भी उसे छकाऊँगी नही तो वह जीवन भर मेरी मजाक उडायेगा। वह अपने पिता से आज्ञा लेकर पूरे सामान के साथ तीर्थ-यात्रा करने चल पडी। नगर के बाहर जाकर उसने तम्बू डलवा दिया और रास्ते पर पहरा बिठा दिया। उधर शोभानायक अपना सब समान बाँध कर घर के लिये उसी मार्ग से रवाना हुआ। नगर के बाहर घाट पर दसवन्ती द्वारा तैनात पुलिस ने रोककर उससे बावन लाख कौडी चुंगी माँगी। शोभा ने कहा, "आजतक मैंने चुगी नही दी फिर आज क्यो ?" इस पर पुलिस ने उसे बाँधकर तम्बू में डाल दिया। दसवन्ती ने कहलाया कि 'यदि वह मुर्गे का माँस खायगा तो छोड दिया जायगा।" शोभा को तो छुटकारा पाना था। इसलिए मुर्गे का मास खाने के लिये तैयार हो गया। साध्वी दसवन्ती ने पति का धर्म भ्रष्ट होने से बचाने के लिए मुर्गे के स्थान पर बकरे का माँस भेज दिया। शोभा ने उसे मुर्गे का माँस समझ कर खा लिया। उसके बाद वह छोड दिया गया। वह अपने नगर बाँसडीह चला गया और दसवन्ती अपने महल में वापस चली गई।

शभू बनजारा से आज्ञा लेकर शोभानायक गवने की पूरी तैयारी करके तिर-हुत नगर में पहुँचा और दसवती को विदा करा लाया। कोहवर की रात्रि में शोभा ने बाजारवाली घटना सुनाकर दसवती का मजाक उड़ाया। इस पर दसवन्ती ने मुर्गा खाने वाली घटना कह सुनाई। यह सुनकर शोभा सिटपिटा गया। बारी हस पडी और सारा हाल कह सुनाया। इसी समय शम्भू शाह ने

सूचना दी कि उसका व्यापार नष्ट हो रहा है, इसलिए आज ही मोरग देश के लिये रवाना होना है। शोभा ने तुरत तैयारी प्रारम्भ कर दी। सोलह सौ बैलो पर जीरा मिर्च लादकर मोरग के लिये चल पडा। चलते-चलते जब बहुत दूर निकल गया तो पडाव डाल दिया गया। जहाँ शोभा सो रहा था वही एक वृक्ष के ऊपर हँस और हँसिनी बातें कर रहे थे। वे आपस में कह रहे थे कि, "जो व्यक्ति आज की रात में सोहाग रात मनाता होगा उसे सुन्दर एव गुणी पुत्र उत्पन्न होगा। जिसके हँसने से लाल गिरे और रोने से हीरा झरे"। शोभा पडे पडे सब बाते सुन रहा था। उसे अपनी गलती का अनुभव हुआ। वह हस से प्रियतमा के पास पहुँचने के लिये प्रार्थना करने लगा। हस नें उसे ले जाना स्वीकार कर लिया और अपनी पीठ पर बैठाकर उसी रात्रि में दसवन्ती के महल मे पहुँचा दिया।

महल में पहुँच कर शोभानायक दसवन्ती का द्वार खटखटाने लगा। पहले तो दसवन्ती को विश्वास नही हुआ परन्तु जब यह सिद्ध हो गया कि वह उसका पति है तो उसने दरवाजा खोल दिया। उसी रात्रि शोभा ने सोहागरात मनाई। चलते समय शोभा ने आगमन के चिन्ह स्वरूप अपना रुमाल दे दिया। उसने अपने छोटे भाई चतुर्गुन से भी सब बातें बतला दी। शोभा पुन हस की पीठ पर सवार होकर प्रात काल होते-होते अपने पडाव पर पहुँच गया।

इधर दसवन्ती को गर्भ रह गया। कुछ दिनो बाद उसकी ननद को भी पता चला। उसने दसवन्ती को कुलकलकिनी समझा। दसवन्ती ने उससे सब हाल कह सुनाया और चिन्ह स्वरूप दी गई रुमाल भी दिखलाया, परन्तु ननद ने विश्वास नही किया। ननद ने दसवन्ती को समाज से बहिष्कृत कर दिया। चतुर्गुन तो सब हाल जानता ही था। वह भी अपनी भाभी के पास चला गया। वह नौकरी मजदूरी करके दसवन्ती का तथा अपना पेट पालने लगा। नव महीने बाद दस-वन्ती को पुत्र उत्पन्न हुआ। ननद ने तब भी पीछा नही छोडा। उसने नवजात शिशु को कुम्हार के आँवाँ में डलवा दिया और दसवन्ती को जगल में मार डालने के लिये हत्यारो के हाथ में सौंप दिया। जगल में दमवन्ती ने हत्यारो से कहा कि मुझे मारने से क्या लाभ, मुझे बेंच दो, तुम्हें पैसा मिल जायगा। हत्यारो को दया आ गई। उन्होने ऐसा ही किया। बाजार में शोभानायक का बहनोई दीप-चन्द दसवन्ती की सुन्दरता देखकर मुग्ध हो गया। उसने नवलाख अशरफी देकर दसवन्ती को खरीद लिया। हत्यारों ने कुत्ते का कलेजा निकालकर ननद को दिखला दिया। उधर बालक भी आँवाँ में से जीता जागता निकल आया और कुम्हार के यहाँ पलने लगा।

देवी दुर्गा को अब दसवन्ती का दुख देखा न गया। वह मोरग देश चल पडी। देवी ने शोभा को जादुगरनियो के पजे से छुडाया। बरहज बाजार, लघी शहर होते हुये शोभा अपने बहनोई दीपचद के यहाँ पहुँचा। व्यापार के लिये जाते समय शोभा ने दीपचद से कर्ज लिया था। उसी कर्ज को चुकता करने वह आया। वहाँ उसने दसवन्ती को रसोईया का काम करते देखा। दोनो का मिलन हुआ। वही उसे सारी विगत् घटना मालूम हुई। दसवन्ती को साथ लेकर वह बासडीह नगर पहुँचा। केका कुम्हार के यहाँ से बालक बुलवाया गया। केका ने इस पर अपत्ति की। केका की स्त्री ने कहा कि यह बालक मेरा है। इसकी परीक्षा ली गई। दसवन्ती के स्तन की दूध की धारा बह निकली। यह सिद्ध हो गया कि बालक उसी का है। शोभा ने अपनी बहिन को गढे में डाल कर पटवा कर मार डाला। चतुर्गुन को घर का मालिक बनाया। इस प्रकार शोभानायक और दसवन्ती का दिन फिर लौटा और वे सुख से जीवन व्यतीत करने लगे।

लोकगाथा के अन्य रूप

प्रस्तुत मौखिक रूप के अतिरिक्त 'शोभानयका बनजारा' लोकगाथा के चार अन्य रूप और प्राप्त होते हैं। प्रथम, सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'सेलेक्टेड स्पेसिमेन्स आफ विहारी लैन्गुएज' के अन्तर्गत शोभानायक बनजारा लोकगाथा को प्रस्तुत किया है तथा उसका अग्रेजी अनुवाद भी किया है।[1] यह एक आदर्श भोजपुरी रूप है।

लोकगाथा का द्वितीय रूप प्रकाशित भोजपुरी रूप है जो कि हवडा (कलकत्ता) से प्रकाशित हुई है तथा बाजारो या मेलो में विकता है।

तृतीय रूप मगही रूप है। मगही प्रदेशो में भी प्रस्तुत लोकगाथा का प्रचार है। परन्तु यह मगही रूप भोजपुरी रूप से विल्कुल समानता रखती है। केवल वोली का अन्तर है।

लोकगाथा का चतुर्थ रूप मैथिली रूप है, इसमें भी कथा भोजपुरी के ही समान है। मैथिली में इस लोकगाथा को 'गीत नेवारक' कहते है।

छत्तीसगढ में 'सीताराम नायक' की लोकगाथा प्रचलित है, परन्तु उसकी कथा सर्वथा भिन्न है।

इस प्रकार से हम देखते है कि शोभानायक बनजारा की लोकगाथा केवल विहार में ही सीमित है। यह लोकगाथा भोजपुरी प्रदेश मे ही विशेप रूप से

१—जेड० डी० एम० जी० १८८६ पृ० ४६८–५०९

प्रचलित है। भोजपुरी प्रदेश से ही यह लोकगाथा अन्य प्रदेशो मे फैली है। क्योकि कथानक, चरित्रो एव नगरो के नाम अन्य रूपो में प्राय समान ही है।

लोकगाथा के भोजपुरी रूप तथा अन्य रूपो में समानता एव अंतर— ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत लोकगाथा में तथा मौखिक रूप की कथा एक समान है। देवी दुर्गा द्वारा दसवन्ती का पति का परदेश जाना विदित होना, भाभी और माँ से विदाई के लिये याचना करना, शोभानायक का मनिहारी का रूप धरकर दसवन्ती से भेट करना, शोभा का दसवन्ती को चिढाना, दसवन्ती का भी शोभा से वदला लेना, शोभा की मोरग यात्रा, हँस-हँसिनी सम्वाद, दसवन्ती को पुत्र उत्पन्न होना तथा उस पर कलक लगना तथा ननद को दड देना इत्यादि सभी घटनायें इस रूप में भी वर्णित है।

दोनो रूपो में केवल कुछ स्थानो के नाम अन्तर है। कथानक में अन्तर केवल यही है कि दसवन्ती स्वय पत्र लिखकर शोभा को वुलवाती है, तथा शोभा-नायक जव मोरग से लौटता है तो अपने ससुराल भी जाता है।

भोजपुरी मौखिक रूप में शोभानायक वाँसडीह नगर का रहने वाला है। तथा ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत रूप में शोभानायक गउरा गुजरात का रहने वाला है तथा दसवन्ती हरदी वाजार की रहने वाली है। ऐसा प्रतीत होता है लोकगाथा के इस रूप में 'लोरिकी' की लोकगाथा के स्थानो का नाम गायको द्वारा जोड दिया गया है। 'लोरिकी' में गउरा गुजरात तथा हरदी वाजार वड़े प्रमुख स्थान हैं।

लोकगाथा के प्रकाशित भोजपुरी रूप में वढा चढा करके वर्णन मिलता है। उसमें दसवन्ती के माता-पिता का वर्णन पहले है, तत्पश्चात् दसवन्ती के भाई के जन्म का वर्णन है। इसके पश्चात् शोभा के माता-पिता का वर्णन है। इसके वाद शोभा के वहिन के विवाह का वर्णन है। इसके पश्चात् वास्तविक लोकगाथा प्रारम्भ होती है।

चरित्रो के नाम में भी अन्तर कम मिलता है। दसवन्ती का दूसरा नाम 'जसुमति' इसमें दिया हुआ है। शोभा के मुनीम का नाम मौखिक रूप में 'मधवा पगहिया' है, परन्तु प्रकाशित रूप में 'जगुमुनीव' है।

स्थानो के नाम मौखिक रूप के ही समान है। प्रकाशित रूप में कुछ नगर वढा भी दिये गये है। जैसे वहराइच, मोतिहारी इत्यादि।

लोकगाथा के मगही और मैथिली रूप मौखिक भोजपुरी रूप से विल्कुल समानता रखती है। उसमे व्यक्तियो तथा स्थानो के नाम में भी अन्तर नहीं

मिलता है। भोजपुरी प्रदेश से दूर जाकर भी इसमें अन्तर नही आया है, यह आश्चर्यजनक बात है।

लोकगाथा की ऐतिहासिकता

वास्तव में प्रस्तुत लोकगाथा के ऐतिहासिकता का कोई प्रश्न नही उठता है। यह एक व्यापारी समाज की कहानी है। अनेक वर्षों के लिये व्यापार के लिये परदेश जाना व्यापारियो का पुरातन नियम है। उनकी स्त्रियो का विरह के कष्ट झेलना तथा समाज की यातनाये सहना एक स्वाभाविक बात है। इस विषय पर लोकगीतो में चैता, चौमासा एव बारहमासा इत्यादि के गीत रचे गये हैं। इनमें पति का परदेस से न लौटने पर विरहणियो का करुण चित्र उपस्थित किया गया है। इसी प्रकार से यह लोकगाथा एक प्रेम कथा है, जो धीरे-धीरे भोजपुरी प्रदेश में महत्व प्राप्त करती गई तथा आज हमारे सम्मुख एक प्रसिद्ध लोकगाथा के रूप में आ गई है।

प्रस्तुत लोकगाथा की भूमिका में श्री ग्रियर्सन लिखते हैं कि 'यह गीत भोजपुरी समाज के साधारण जीवन को प्रस्तुत करता है। व्यापारी लोग बैलो पर सामान लादकर चावल की खोज में नपाल की तराई में जाया करते थे। वे वहाँ से चावल लाकर 'पटना चावल' के नाम से बेचते थे। यह 'पटना चावल' कलकत्ता के द्वारा सारे ससार में जाता था। इस 'पटना चावल' की प्रसिद्धि बहुत दूर-दूर तक फैली हुई थी। चावल के अतिरिक्त तेल के बीज का भी व्यापार होता था जिससे कि जर्मन व्यापारियो ने अकूत धन कमाया।'[1]

इस प्रकार से हम देखते हैं कि यह भोजपुरी व्यापारियो के दैनिक जीवन की कहानी है। लोकगाथा के स्थानो का जो वर्णन मिलता है वह भौगोलिक दृष्टि से भी अधिकाश में सत्य है।

मोरंग—लोकगाथा में शोभानायक का मोरग देश यात्रा करना वर्णित है। ग्रियर्सन ने हिमालय की तराई को ही मोरग देश बतलाया है[2] उनका कथन है कि दोआब के उत्तर और हिमालय पर्वत के बीच में जो भूमि भाग है, उसके पश्चिमी भाग को तराई कहा जाता है तथा पूर्वी भाग 'मोरग' कहा जाता है। वस्तुत यह कथन सत्य है। मोरग इसी भाग को कहते हैं। यहाँ पर चावल का आज भी बहुत बडा व्यापार होता है।

१—जे० डी० एम० जी० १८८८ पृ० ४६८

२—वही

तिरहुत—लोकगाथा में तिरहुत नगर का वर्णन है। तिरहुत नगर तो कही नही मिलता है, परन्तु बिहार के उत्तरी-पूर्वी प्रदेश को 'तिरहुत' कहते हैं। यह सस्कृत 'तीरभुक्ति' से निकला है। यहाँ की भाषा मैथिली है।

बांसडीह—बलिये जिले में 'बांसडीह' एक कस्बा और स्टेशन है। यह भी गल्ले के व्यापार का बडा केन्द्र है।

बहराइच—नैपाल की तराई में एक नगर और जिला है। यह भी गल्ले की बहुत बडी मडी है।

बरहज बाजार—सरयू नदी के उत्तरी किनारे पर गोरखपूर जिले में स्थित है। नदी के किनारे होने के कारण व्यापार का एक अच्छा केन्द्र है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि लोकगाथा में भारत के पूर्वी प्रदेश के प्रमुख व्यापारी केन्द्रो का वर्णन मिलता है। सदा से इन नगरो में पूर्वी भारत के गल्ले का व्यापार होता चला आया है अतएव लोकगाथा में इनका वर्णन होना स्वाभाविक है।

इन स्थानो पर दूर दूर से गल्ले और मसाले के व्यापारी आया करते हैं। कुछ समय पहले शोभानायक भी इन्ही व्यापारियो में से एक रहा होगा जो अपने रसिक चरित्र के कारण प्रसिद्ध हो गया होगा और गायको ने एक विस्तृत लोकगाथा उसके जीवन पर रच डाली होगी

शोभानायक का चरित्र—शोभानायक प्रस्तुत लोकगाथा का नायक है। इसके चरित्र के तीन अग हैं। प्रथमत वह एक रसिक बनजारा है, द्वितीय वह एक अनन्य प्रेमी है तथा तृतीय वह एक सज्जन एव सच्चरित्र व्यक्ति है।

शोभानायक जब पूर्ण यौवन को प्राप्त करता है तो उसके हृदय में अपनी पत्नी से भेंट करने की इच्छा जागृत होती है। दसवन्ती का द्विरागमन निकट भविष्य में सभव नही था, अतएव शोभानायक अपनी पत्नी को देखने के लिये चल देता है। वह मनिहारी का रूप धारण करके दसवन्ती से भेंट करता है। उसका यह चरित्र किसी रीतिकालीन नायक की भाँति चित्रित हुआ है। वह अपनी नायिका से अभिसार करता है। उसकी रसिकता की मात्रा यहाँ तक बढ जाता है कि वह अश्लील मजाक भी अपनी स्त्री से करता है। उसके सुन्दर रूप और रसिक स्वभाव के कारण मार्ग में अनेक जादूगरनियाँ उसके ऊपर मोहित हो जाती हैं। परन्तु उसकी यह रसिकता सयम को नही छोडती है। वह सब कुमार्गों से बचकर दसवन्ती से भेंट करता है। उसका उद्देश्य था दसवन्ती को देखना और यह कार्य समाप्त करके वह वापस घर लौट आता है, और गवने की तैयारी प्रारम्भ कर देता है।

अध्याय ५

भोजपुरी रोमांचकथात्मक लोकगाथा का अध्ययन

भोजपुरी वीरकथात्मक तथा प्रेमकथात्मक लोकगाथाओ के पश्चात रोमांच-कथात्मक लोकगाथाओ का स्थान आता है। इस वर्ग में दो लोकगाथायें आती हैं। प्रथम 'सोरठी' तथा द्वितीय 'बिहुला'। भोजपुरी समाज में वैसे तो प्रेम सभी लोकगाथाओ से है, परन्तु जो आदर और श्रद्धा इन दोनो लोकगथाओ को मिला है, उतना अन्य कोई भी लोकगाथा नही प्राप्त कर सकी है। भोज-पुरी लोकजीवन में सोरठी एव बिहुला स्वर्ग में निवास करने वाली देवियो की परम्परा में हैं। अत्यन्त श्रद्धा एव पूज्य भाव से इन लोकगाथाओ का गान किया जाता है।

यद्यपि सोरठी एव बिहुला पतिव्रत धर्म की अमर लोकगाथाए है परन्तु इसमें रोमाचतत्व अत्याधिक रूप से पाया जाता है। इसी कारण इन दोनो लोकगाथाओ को पातिव्रतधर्म विषयक लोकगाथाएँ न कहकर रोमाँचकथात्मक लोकगाथाएँ कही गयी हैं। यह रोमाच तत्व क्या है? वास्तव में अंग्रेजी के 'रोमान्स' शब्द से इसकी व्युत्पत्ति है। 'रोमान्स' का अर्थ होता है प्रेम एव सोन्दर्य। परन्तु हिन्दी में 'रोमाच' शब्द कुछ अधिक अर्थ रखता है। 'रोमाँच' शब्द में अंग्रेजी के 'सुपरनेचुरल एलिमेन्ट' का भी भाव समावेष कर गया है। 'रोमाँच' एक भाव है जो किसी अद्‌भुत दृश्य देखने अथवा अद्‌भुत कार्य करने के कारण उत्पन्न होता है। इसके दोनो पक्ष होते है। मनुष्य की कल्पना के परे कोई सुन्दर दृश्य अथवा अद्‌भुत कार्य जैसे घोडे का उडना पेड का बोलना इत्यादि देखकर मन को आनन्द प्राप्त होता है। इसके विपरति भूत प्रेत, जादू टोना का कार्य देखकर भय भी उत्पन्न होता है। यह दोनो ही रोमाँच तत्व के अन्तर्गत आते हैं।

'सोरठी' एव 'बिहुला' की लोकगाथा के अन्तर्गत अमानवीय चरित्रो का अत्याधिक समावेष है। अतएव रोमाँच तत्व का इसमें प्रमुख स्थान रहना स्वाभाविक है। इन दोनो लोकगाथाओ में देवी, देवता, भूत प्रेत सभी प्रमुख स्थान रखते है। नदी, तालाव, वृक्ष पहाड भी क्रियात्मक रूप से इन लोकगा-थाओ में सहयोग देते है। कुत्ता, विल्ली, मछली तथा अनेक जानवर, क्या थलचर, जलचर अथवा नभचर, सभी वातचीत करते हुए एव कथानक में भाग

लेते हुये दिखाये गये है। जादू, मत्र, पूजा तथा टोना इत्यादि भी कथा को मोडने में प्रमुख स्थान, रखते है। दैवी सहायताओ से मनुष्य आकाश के मार्ग से चलता है, नदी की उल्टी धार पर चढा चलता है तथा स्वर्ण विमान पर आसीन होता है। इन लोकगाथाओ में स्वर्गलोक से मृत्युलोक तक तथा मृत्युलोक से पाताल लोक तक एक ताता बधा हुआ है। लोकगाथा के चरित्रो को इस ब्रह्मांड मे कही भी आना जाना बिल्कुल असभव नही है। इन्द्रपुरी ही तो इनका हाइकोर्ट है जहाँ प्रत्येक झगडो का अन्तिम फैसला होता है। अतएव इन लोकगाथाओ के चरित्र इस लोक के होते हुये भी इस लोक के नही अपितु सर्वव्यापी है।

वास्तव में मनुष्य का स्वभाव है अपने से परे देखने की चेष्टा करना। यही प्रवृत्ति उसे नाना कल्पनाओ की ओर ले जाती है। कुछ का तो वह विज्ञानादि के सहारे यथार्थ जीवन में साक्षात्कार कर लेता है तथा कुछ के लिये सदा ही व्याकुल रहता है। लोकगाथा के प्रथम गायक को एक घटना हाथ में लगी, उसे अपनी कल्पना की डोर पर उसने चढा दिया, फिर उसके कवित्वमय हृदय ने इस ससार और उस ससार के भिन्नता को मिटा दिया। वह समस्त सचराचर में विचरण करने लगा। इस प्रकार उस गायक के जीवन की पृष्ठभूमि में जो सस्कृति एव सभ्यता निहित रहती है उसी आधार पर लोकगाथा की रचना होने लगती है। इस प्रकार से उस लोकगाथा में वास्तविक जीवन के साथ अन्य रोमाचकारी तत्वो का समावेष हो जाता है। उसमें कौतूहल रहता है, अलौकिकता रहती है तथा एक अभिनव सम्मोहन रहता है, जिसके कारण घटो लोग बैठकर श्रवण किया करते है तथा गायक के साथ समस्त ब्रह्माड की सैर किया करते है।

भारतीय जीवन के लिये यह रोमाचतत्व कोई नवीन वस्तु नही है। वस्तुत जब हम सोरठी एव बिहुला की लोकगाथा को सुनते हैं तो हमें कुछ भी अस्वाभाविक प्रतीत नही होता है। हम यह ऊपर विचार कर चुके हैं गायक के जीवन के आधार में जो सस्कृति एव सभ्यता निहित रहती है उसी के आधार पर लोकगाथा की रचना होने लगती है। अतएव हम देखते हैं कि भारतीय सस्कृति में इस प्रकार के तत्व कोई नवीन वस्तु नही है। पुराणो एव धार्मिक कथाओ में देवी देवताओं के अलौकिक चरित्र वर्णित रहते है। यह कथाएँ प्रत्येक भारतीय के हृदय में घर किये हुये रहती हैं। इसी कारण 'सोरठी' एव 'बिहुला' में वर्णित रोमाचतत्व को श्रोतागण अस्वाभाविक नही मानते हैं। इसके विपरीत उनके हृदय में सोरठी एव बिहुला के प्रति अत्यन्त आदर एव श्रद्धा का भाव जागृत होता है तथा वे भी पुराणो एव धार्मिक कथाओ की देवी बन जाती हैं।

साधक के रूप में दिखलाया गया है। जायसी के 'पद्मावत्' में जिस प्रकार राजा रत्नसेन, पद्मावती को प्राप्त करने के लिये दुर्गम यात्रा करता है तथा भीषण कष्ट झेलता है, उसी प्रकार, उससे भी अधिक यातनायें सोरठी को प्राप्त करने के लिये वृजाभार को भुगुतनी पडती है। जिस प्रकार 'पद्मावत्' में पद्मावती एक साध्य के समान है, उसी प्रकार प्रस्तुत लोकगाथा में सोरठी भी एक साध्य है जिसे प्राप्त करने के लिये वृजाभार को कष्टप्रद साधना करनी पडती है। जिस प्रकार 'पद्मावत्' एक आध्यात्मिक दृष्टिकोण का महाकाव्य है, उसी प्रकार सोरठी की लोकगाथा की चरम सीमा आध्यात्मिकता पर पहुँच जाती है। यह भोजपुरी का दुर्भाग्य है कि इस वोली में कोई जायसी जैसा महाकवि नही उत्पन्न हुआ, अन्यथा यह लोकगाथा छन्दवद्ध एव परिष्कृत होकर 'पद्मावत्' से कई गुना रोचक एव विचारोत्पादक होती। परतु तो भी यह भोजपुरी का सौभाग्य है कि समय की लम्बी अवधि में यह लोकगाथा विस्मृत न होकर आज भी बडे जतन से मौखिक परपरा मे सुरक्षित है।

सोरठी की सक्षिप्त कथा--सोरठपुर के राजा उदयभान को सतान न थी। इस कारण राजा बहुत चिन्तित रहते थे। राजपडित व्यासमुनि (जो कि पूर्व जन्म के गधर्व थे) ने वतलाया कि तप करने से सतान सभव है। राजा, जगलो में तप करने चले गये। कुछ काल के पश्चात् आकाशवाणी हुई कि 'राजा के यहाँ एक अत्यन्त गुणवती कन्या जन्म लेगी।' राजा प्रसन्नचित्त होकर घर लौटे। ठीक समय पर रानी तारा के गर्भ से कन्याने जन्म लिया। राजपडित ने उसका नाम सोरठी रखा। जन्म के समय नार काटन के लिये जब धाय बुलाई गई तो नवजात सोरठी बोल पडी, "मुझे धाय से स्पर्श मत कराओ अन्यथा मैं अपवित्र हो जाऊँगी"। रानी को यह सुनकर बडा भय हुआ। इस पर सोरठी बोली, "डरो नही मैं इन्द्रपुरी से आई हूँ, एक त्रुटि हो गई है इसी कारण मत्युलोक में आना पडा है"। इसके पश्चात् इन्द्र से प्रार्थना करने पर चार अप्सराएँ आईं और धाय सेवा करके चली गईं।

राजपडित व्यास मुनि ने देखा कि यह कन्या सुलक्षणी एव बारह जन्मो का हाल जानने वाली है। पडित के मन में ईर्ष्या जागृत हुई। उसने सोचा कि यदि यह कन्या जीवित रहेगी तो उन्हें कोई न पूछेगा, और मानसम्मान सब नष्ट हो जायगा। यह सोचकर उन्होने राजा से कहा कि 'हे राजन् यह कन्या सर्वगुण सपन्न है परन्तु यह नगर की राशि पर जन्मी है, इस कारण समस्त नगर नष्ट हो जायगा और उसके पश्चात् राजकुल भी समाप्त हो जायगा'। राजा ने इस आपत्ति मे वचने का उपाय पूछा। इस पर पडित ने

कहा कि काठ के सदूक में कन्या को रखकर गगा में वहा दिया जाय, तभी कल्याण होगा। राजा और रानी को अत्यन्त दुख हुआ परन्तु क्या करते, उन्होने काठ के सन्दूक में 'सोरठी' को रखकर गङ्गा में वहा दिया। 'सोरठी' के स्पर्श करते ही वह सन्दूक सोने का हो गया। वहते वहते वह सन्दूक एक घोवी के घाट के सामने आया। घोवी सोने का सन्दूक देखकर लालच में आ गया। वक्स पकडने की अनेक चेष्टा की परन्तु वह पकड न पाया। पडोस में उसने केका कुम्हार को सूचना दी। केका एक धर्मात्मा व्यक्ति था, उसने सरलता से पकड लिया। सन्दूक में कन्या देखकर वह वहुत प्रसन्न हुआ, क्योकि उसके कोई सन्तान न थी। उसने सोने का सन्दूक लालची घोवी को दिया। घोवी के स्पर्श करते ही वह सन्दूक पुन काठ का हो गया। उसे अपनी लालच का फल मिल गया।

केका कुम्हार और उसकी स्त्री वडे लाड प्यार से सोरठी को पालने लगे। वव्या कुम्हारिन को भी दूध निकलने लगा। सोरठी धीरे-धीरे वडी होने लगी। एक वार अपने कुम्हार पिता से उसने कहा कि, 'तुम इतना काम करते हो परन्तु तुम्हे कम ही पैसा मिलता है'। यह कहकर उसने आवाँ में हाथ लगा दिया। सव मिट्टी के वर्तन सोने के हो गये। केका उन्हे न पहचान कर धेले में ही वेचने लगा। परन्तु खरीदार धेले के जगह अपने आप पाँच रुपया देकर चले जाते थे। यह देखकर उसे सच्ची वात विदित हुई और उसने फिर अपने व्यापार को भली भाँति सम्हाल लिया। कुछ दिन पश्चात् इन्द्र की कृपा से सोरठी के लिये विश्वकर्मा ने एक ही रात में आकर स्वर्ण मदिर निर्माण कर दिया। इस आश्चर्य जनक घटना से समस्त देश में समाचार फैल गया। राजपडित व्यास मुनि भी यह देखने के लिये आये। उन्होने आते ही सोरठी को पहचान लिया। उसने अव दूसरी चाल चली। इस वार उसने सोरठी के धर्म को भ्रष्ट करना चाहा। सोरठी अव विवाह योग्य हो चुकी थी। व्यास पडित ने राजा उदयभान से कहा कि तुम्हारे योग्य एक कन्या है, उसी से विवाह करो। राजा ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। केका कुम्हार भी राजा के भय से विवाह के लिये तैयार हो गया। सिन्दूरदान की जव घड़ी पहुँची तो भविष्यज्ञानी सोरठी वोल उठी कि "हाय रे दुर्भाग्य! दुनियाँ वाप वेटी में ही विवाह करा रही है"। लोगो ने सुना परतु व्यास पण्डित ने सव को वहला दिया। सोरठी ने पुन वही वात कही। राजा को सदेह हुआ। उसने सोरठी से सव हाल पूछा। सोरठी ने सभी विगत् घटनायें सुना दी। राजा ने अपनी वेटी से क्षमा माँगी और उसे गले लगा लिया। केका को धन देकर सोरठी को महल में ले आये। व्यास पण्डित को पकडवा कर, उनका हाथ, नाक कान कटवा कर राज्य से बाहर निकाल दिया।

दक्षिण शहर में टोडरमल सिंह नामक राजा राज्य करता था। उनकी रानी का नाम सुनयना था। उन्हें भी कोई संतान न थी। गुरू गोरखनाथ की सेवा के फलस्वरूप रानी को गर्भ रहा। गर्भाधान के छ महीने के पश्चात ही राजा टोडरमल का देहान्त हो गया। नौ महीने के पश्चात् एक पुत्र उत्पन्न हुआ। ब्राह्मण से लक्षण पुछवा कर उसका नाम "वृजाभार" रखा गया। पंडित ने बतलाया कि यह लडका महाबली उत्पन्न हुआ है, किन्तु इसके कर्म में राजयोग के स्थान पर वैराग्य लिखा हुआ है। रानी को यह सुनकर बडी चिन्ता हुई। वृजाभार क्रमश यौवनावस्था को प्राप्त हुये।

इन्द्रपुरी से सात अप्सरायें अपनी त्रुटियो के कारण स्वर्गच्युत होकर मृत्यु-लोक में भिन्न-भिन्न स्थानो में निवास करने लगी। हेवचलपुर में हेवचल नामक राजा राज्य करता था। उसे हेवन्ती नामक एक कन्या थी। उसने अपनी कन्या के विवाह के लिये स्वयवर रचा था। इधर गुरू गोरखनाथ को स्वयवर का समाचार मिला। वे तुरन्त दक्षिणशहर में गये और वृजाभार को कन्धे पर बिठाकर ले भागे। सारे राज्य में हाहाकार मच गया। माता सुनयना ढाढे मार मार कर रोने लगी। इधर गुरू गोरखनाथ हेवचलपुर पहुँचे। गोरखनाथ की आज्ञा से वृजाभार ने कोढी का रूप धर कर स्वयवर में प्रवेश किया। राज-कुमारी हेवन्ती ने वृजाभार कोढी को ही अपना वर चुन लिया। राजा हेवचल को यह बडा अपमानजनक प्रतीत हुआ। राजा क्षुब्ध होकर कोढी वृजाभार को गड्ढे में डलवा दिया। परन्तु हेवन्ती न मानी और उसे ही अपना पति चुना। लोगो ने कहा कि हेवन्ती का भाग्य फूट गया है और नाक दबा कर विवाह सस्कार करने के लिये बैठे। यह देखकर हेवन्ती ने कहा कि "हे पतिदेव! तुम्हें पाने के लिये मैंने शिव की सेवा की है, अपने कोढी रूप को तुम छोड दो"। वृजाभार ने मस्कुराकर अपना पूर्व सुन्दर रूप उपस्थित कर दिया। लोगो ने विस्मय से वृजाभार को देखा तथा उपस्थित स्त्रिया उस पर मोहित हो गई। निमन्त्रित व्यक्तियो म सोरठी भी वहाँ उपस्थित थी। सोरठी भी मोहित हो गई। उसने वृजाभार से कहा कि विवाह करूँगी तो तुम्ही से। वृजाभार ने उत्तर दिया कि समय आने पर तुम्हें प्राप्त करने के लिये मैं स्वय आऊँगा। वृजाभार बारात को विदा करके हेवन्ती के साथ दक्षिण शहर पहुँचा। माता सुनयना ने यह देखकर कि पुत्र विवाह करके आया है, बडी प्रसन्न हुई। इधर वृजाभार को अपने मामा के यहाँ गये बहुत दिन हो गया था। कुछ दिन बाद पीलीधोती पहनकर गुजरात के लिये प्रस्थान कर दिया।

सोरठपुर से हाथ नाक कटवा कर व्यास पंडित गुजरात के राजा खेंखड़-मल के यहाँ पहुँचे। यहाँ का राजा कोढी था। उसे कोई सन्तान भी न थी।

पंडित के मन में सोरठी से बदला लेने की इच्छा थी ही। उसने राजा खेंखड-मल से कहा कि, "हे राजन् ! तुम सोरठपूर की राजकन्या सोरठी से विवाह करो। उससे तुम्हें पुत्र उत्पन्न होगा तथा कोढ भी अच्छा हो जायगा"। पंडित ने यह भी बतलाया कि सोरठपुर की यात्रा अत्यन्त कठिन है। इसमें बारह वर्ष लग जायेंगें। तुम्हारा भाजा वृजाभार ही इस कार्य को पूर्ण कर सकता है। राजा खेंखडमल ने अपने भाजे वृजभार के सम्मुख यह प्रस्ताव रखा। वृद्धावस्था में मामा का यह कौतुक देखकर वृजाभार को बडा विस्मय हुआ। परन्तु अब तो उसे मामा के आज्ञा का पालन करना ही था। वृजाभार ने योगी का रूप धारण कर लिया तथा गुरू गोरखनाथ का आर्शीर्वाद लेकर चला। खेंखडमल की तीन-सौसाठ रानियो ने बहुत रोका पर वह नही रुका। स्वर्ग से पदच्युत सात अप्सराए 'सातो सावरी' ने आकर कहा कि तुम इस दुर्गम मार्ग पर मत जाओ। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम पाँच मिनट में सोरठी को यही प्रस्तुत कर देगें। इस पर वृजभार ने उत्तर दिया कि मैंने इस कार्य का बीड़ा उठाया है, तुम लोगो की सहायता लेने से हमारी प्रतिज्ञा नष्ट हो जायगी और क्षत्रिय धर्म में वट्टा लगेगा। इसके पश्चात् "सातो सावरी" ने वृजभार को एक फल दिया जिसे खा लेने से भूख प्यास नहीं लगती थी। आधा फल तो वृजाभार ने वही खालिया और आधा झोली में रखकर पहले दक्षिण शहर की ओर चल दिया।

दक्षिण शहर पहुँचने पर अपने महल के सम्मुख राजा भरथरी के समान भिक्षा के लिये पुकार लगाया। माता सुनयना वाहर निकली परन्तु योगीरूप अपने पुत्र को न पहचान सकी। दरवाजे की ओट में हेवन्ती खडी थी। उसने देखते ही पति को पहचान लिया। उसने वृजाभार को घर में लाकर आदर सत्कार किया, तथा त्रिया चरित्र के जो भी उपाय होते हैं उसे वृजाभार पर लगाया। परन्तु वृजाभार अपने उद्देश्य से नही डिगा, और महल से वाहर निकल गया। हेवन्ती ने उसका पीछा किया। वृजाभार ने डाटकर वापस भेज दिया। हेवन्ती ने वृजाभार से पूछा कि यह कैसे मालूम होगा कि आप पर विपत्ति पडी है? वृजाभार ने बतलाया कि जब मेरे उपर विपत्ति पडेगी तो तुम्हारे आगन की तुलसी सूख जायगी तथा तुम्हारे माग का सिंदूर फीका पड जायगा। हेवन्ती ने उसे सोरठपुर का मार्ग बतलाया और हफ्तापुर, और ठूठी पकडी वृक्ष के नीचे जाने से मना कर दिया।

योगी वृजभार वहा से चलकर नगर के वाहर जाकर पोखरे में स्नान किया। वहाँ उसकी गगाराम केकडा से भेंट हुई। उसने अपनी झोली में केकड़े को रख लिया। चलते चलते वह ठूंठीपकड़ी के पेड के नीचे पहुंचा और वहाँ

जाकर सो गया। पेड पर एक कौआ और एक नागिन रहते थे। कौए ने नागिन से कहा कि तुम इसे डस लो जिससे मै मनुष्य का मांस खाऊँ। नागिन ने आकर डस लिया। गगा राम केकडा यह देख रहा था। उसने आते हुये कौए का गला दवाकर मार डाला और नागिन को धमका कर वृजाभार को पुन जीवित करा दिया।

छ मास चलने के पश्चात् वृजाभार रत्नपुर नगर पहुँचा। वहाँ की राज-कन्या उसके लिये प्रतीक्षा कर रही थी। उसने वृजाभार से विवाह प्रस्ताव किया। वृजमार ने वहाँ से छुटकारा पाने के अनेको प्रयत्न किये परन्तु असफल रहा। उसने कहा कि सोरठी को प्राप्त करने के पश्चात् ही तुम से विवाह करूँगा। यह बचन देकर वह आगे बढ़ा।

आगे चलने पर योगी वृजाभार फूलपूर नगर में पहुँचा। वहाँ की राजकन्या फूलकुवरी उसे देखकर मोहित हो गई। योगी वहाँ से भाग खडा हुआ। फूल-कुवरी न जादू से उसे चील बनाकर उसे पकड लिया, परतु हेवती के सत् तथा उसके प्रयत्नो से किसी प्रकार से उसकी जान छूटी और आगे बढा।

चलते चलते वृजाभार केदली बन में पहुँचे वहा उसने एक बुढिया को एक वृक्षके नीचे बैठे देखा। बुढिया ने योगी वृजाभार को देखा और उस पर दया आ गई। उसने योगी से भाग जाने के लिये कहा। वृजाभार ने उपाय पूछा तो उसने झाडी में छुपा दिया और कहा कि 'जब यहाँ का दानव सो जायगा तो भाग जाना। दानव जब वहाँ पहुँचा तो उसे मनुष्य के गध का अनुभव हुआ। उसने वृजाभार को ढूंढ निकाला और खडे निगल गया। पेट में पहुँचने पर वृजाभार गुरू सुमिरन करने लगे। गुरू गोरखनाथ ने वही दर्शन देकर कहा कि अपनी झोली में से छुडा निकाल कर दानव का पेटचीर दो। वृजाभार ने दानव का पेट चीर दिया, और दानव मृत होकर गिर पडा। वृजाभार बाहर निकल आये। बुढिया ने वृजाभार से दानव की दाहिनी जांघ चीरने के लिये कहा। वृजाभार ने वैसा ही किया। जांघ मे से अनुपम सु दरी देवकन्या निकल पडी। देवकन्या ने कहा मै तुम्हारी प्रतीक्षामें थी, मुझसे विवाह करो। वृजाभार ने लौटती वार साथ ले चलने का वचन देकर आगे वढा।

वशी वजाते हुये वृजाभार सुबुकीनगर पहुँचे। वहां की दो स्त्रियां ननद-भौजाई, उमे देखकर मोहित हो गई और विवाह का प्रस्ताव किया। परन्तु किसी प्रकार वृजाभार वहां से वच निकला। आगे चलने पर हफ्तापुर नगर में पहुँचा। वहां धुपिया जादूगरनी ने उसे तोता वना लिया और विवाह रचाने

लगी। हेवन्ती और सातो सांवरी की सहायता से वहाँ वृजाभार को छुटकारा मिला। चलते चलते वृजाभार हेवल पुर पहुँचा। वहाँ हेवली-केवली नामक दो बहनो ने वृजाभार से विवाह करना चाहा। वृजाभार ने तिरस्कार किया, उन्होने वृजाभार को बंधवाकर बांस के कईन (वेत) से पिटवाना प्रारभ किया। साथ ही वेउसके घावो पर नमक भी छिड़कती गई। अन्त में वृजाभार का प्राण निकल गया। उसके मरते ही वृक्ष, नदी-तालाव सूख गये। पशुपक्षी रोने लगे। हेवल-केवली ने वृजा भार की आंखे निकलवा ली और उसके शरीर को यमुना के किनारे जलाकर राखकर दिया। जव उसका शरीर जल रहा था, उस समय वृजाभार का मस्तक फूटने पर एक मणि निकली और यमुना में गिर पडी जिसे रेघवा नामक मछली निगल गई। मणि की गर्मी से व्याकुल होकर वह पाताल लोक पहुँची और वेहोश होकर गिर पडी। वहाँ एक साधू यह कौतुक देख रहा था। उसने रेघवा मछली के पेट से मणि निकाल लिया। उधर हेवन्ती के आंगन की तुलसी सूख गई, मांग का सिंदूर फीका पड गया। हेवन्ती उडन-खटोले में वैठकर सातो सांवरी के साथ आई। परन्तु वृजाभार का कुछ पता न चला। हेवली केवली से जादू-मत्र से युद्ध हुआ परन्तु कुछ फल न निकला। हेवन्ती पाताल लोक में चली गई। उसने देखा कि एक साधू मदिर में वैठा तप कर रहा है, और मदिर में एक मणि दमक रही है। मणि को देखते ही हेवन्ती पहचान गई। वह साधू के पास पहुँच कर विलाप करने लगी। साधू ने सव हाल कह सुनाया और मणि दे दी। हेवन्ती मणि को हृदय से लगा कर सातो सांवरी के पास पहुँची। उन्होने इन्द्र से प्रार्थना करके वृजाभार को जीवित करा दिया। तत्पश्चात वृजाभार ने हेवली केवली को मृत्यु दड दिया और आगे वढ़ा।

चलते चलते वृजाभार सोरठपुर के समीप पहुँचा। सोरठपुर के राजा उदय-भान ने राजाज्ञा निकलवा दी थी कि नगर की सीमा में कोई घुसने न पाये। केवल वृद्ध व्यक्ति आ जा सकते थे। हेवन्ती के विवाह में ही वृजाभार ने सोरठी से कहा था कि जव मैं सोरठपुर पहुँचूंगा तो तुम्हारी फुलवारी सूख जायगी और फुलवारी में जव पहुँचूगा तो वह पुन हरी हो जायगी। सोरठी ने देखा कि फुलवारी सूख गई है तो समझ गई कि वृजाभार आ रहा है। उसने एक उपकारी को अशरफियां इनाम में दे कर कहा कि "यह दो गुटके ले जाओ, नगर के वाहर एक योगी मिलेगा उसे एक गुटका खिला देना। एक गुटका खाने से वह वृद्ध हो जायगा और जव वह नगर में आ जाय तो दूसरा गुटका खिला देना, जिससे वह पुन जवान हो जायगा।" वृजाभार को उसी प्रकार

सहायता मिली और वशी बजाते हुए फुलवारी में पहुँचा। फुलवारी पुन हरी भरी हो गई। सोरठी सजधज कर वृजाभार से मिलने आई। दोनो का मिलन हुआ। सोरठी पुन आधी रात में आने का बचन देकर चली गई। फुलवारी की निर्जल मालिन भी उसके ऊपर अनुरक्त हो गई।

अर्द्धरात्रि में सोरठी पुन वृजाभार के पास आई और इन्द्र से विमान भेजने की प्रार्थना की। इन्द्र ने विमान भेज दिया। सोरठी और वृजाभार उस पर आसीन हुये। सोरठी की प्रार्थना पर निर्जल मालिन को भी उस पर बिठा लिया। सोरठपुर से विमान उड चला। प्रात काल सोरठपुर मे हलचल मच गई। विमान को जमुनीपुर में ले जाकर जमुनी को उस पर बिठाया तथा इसी प्रकार रत्नपुर से रत्नावत कन्या, केदली बन से देवकन्या तथा फूलपुर से फुलवन्ती को लेकर गुजरात नगर मामा खेंखडमल के यहाँ पहुँचा। सोरठी को देखते ही उनका कोढ़ अच्छा हो गया। परन्तु अब उनमें सुबुद्धि आ गई थी। उन्होने वृजाभार से कहा कि, "मेरा तो चौथापन आ गया है, मैं अब सन्यास लूँगा अतएव तुम्ही सोरठी से विवाह कर लो तथा यहाँ के राज्य का भी उपयोग करो"।

सोरठी तथा अन्य स्त्रियो को साथ लेकर वृजाभार, दक्षिणी शहर पहुँचा। माता सुनयना और हेवन्ती के प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। हेवन्ती के साथ रात्रि में शयन करने जब वह जा रहा था तो गुरु गोरखनाथ ने दर्शन देकर कहा कि लीलापुर में लीलावती तुम्हारे नाम की माला जप रही है, उसे जाकर ले आओ। वृजाभार सब को छोडकर पुन चल पडा। मार्ग में चम्पापुर के राजा की पुत्री 'लाडली' को स्वयवर में जीत लिया। लीलापुर के मार्ग में अनेक जादूगरनियो से युद्ध हुआ। सब को हराते हुये वह लीलापुर से पहुँचा। सोरठी और हेवन्ती की सहायता से वह लीलापुर से लीलावती को भी ले आया। दक्षिणी शहर में जब वृजाभार आनन्द मना ही रहा था कि गुरु गोरखनाथ ने पुन दर्शन दिया कि 'मैं सुगवा-सुगेसरी से वचन हार गया हूँ, तुम धवलागिरि जाकर उन्हें भी ले जाओ।' वृजाभार पुन विजय करने के लिये चल पडा। इधर माता सुनयना हेवन्ती से बहुत बुरा भला कहने लगी कि वह अपने पति को वश में नही रखती है। यह सुनकर हेवन्ती को बडा दुख हुआ और वह वृजाभार की मोहिनी बसरी लेकर स्वर्ग चली गई। उसकी देखा देखी अन्य सभी स्त्रियाँ भी चली गई। वृजाभार जब सुगवा-सुगेसरी के साथ वापस आया तो किसी को नहीं पाया। आकाशवाणी हुई कि मोहिनी बंसरी बजाओ तो सब वापस आ जायगी। परन्तु बसरी तो वहाँ थी नहीं। वृजाभार

ने गुरु का सुमिरन किया और उनकी कृपा से वह इन्द्रपुरी पहुँचा। उसने इन्द्र से बसरी माँगा तो इन्द्र ने कहा कि तुम्हारे हाथ मे तलवार शोभा देगी बाँसुरी नही। बृजाभार यह सुनकर सब स्त्रियो के साथ लौट आया और शेष सभी के साथ विवाह किया।

कुछ काल के उपरान्त इन्द्र ने विचार किया कि सबने मृत्युलोक में अपनी लीलाएँ कर ली हैं, अब इन्हें वापस बुलाना चाहिये। इन्द्र ने मोहिनी बसरी बजाकर सब स्त्रियो को बुला लिया। बृजाभार क्रोधित होकर इन्द्र के पास पहुँचा। इन्द्र ने डर के मारे बसरी वापस कर दी। बृजाभार ने बसरी बजाकर पुन सबको बुला लिया। इन्द्र ने लालपरी को बसरी लाने के लिये भेजा। लालपरी ने बृजाभार को नृत्य से प्रसन्न करके बाँसुरी इनाम में माँग लिया। इन्द्र को पुन बाँसुरी मिल गई। उसके बजाते ही सब स्त्रियाँ पुन इन्द्रलोक मे चली गई। ब्रजाभार ने दुखित होकर गुरु गोरखनाथ का सुमिरण किया। इस बार गुरु ने भी असमर्थता प्रकट की। बृजाभार ने मायामोह की क्षणभंगुरता को समझ कर अपना नश्वर शरीर छोड दिया। उसकी सभी स्त्रियाँ पुन भूमि पर उतर कर सती हो गई। इन्द्र ने सबकी आत्माओ को लाने के लिए विमान भेजा। बृजाभार अपनी सभी स्त्रियो, सोरठी, हेवन्ती इत्यादि के साथ स्वर्ग विमान पर बैठकर इन्द्रपुरी के लिये प्रस्थान कर दिया।

लोकगाथा के अन्य रूप—प्रस्तुत लोकगाथा के दो अन्य रूप प्राप्त होते हैं। प्रथम प्रकाशित भोजपरी रूप तथा द्वितीय मैथिली रूप। मगही में भी यह गाथा गाई जाती है, परन्तु अभी तक इसका एकत्रीकरण नही हुआ है।

लोकगाथा का प्रकाशित भोजपरी रूप तथा मौखिक रूप अधिकाश मे समान है। केवल शब्दावली तथा कुछ व्यक्तियो के नामो में अन्तर है। वर्णन करने के ढग तथा कथोपकथन एक समान हैं। प्रकाशित रूप मे कथा बडे व्यापक ढग से बत्तीस खडो में दी हुई है। कथा को स्पष्ट करने के लिये बीच बीच में गद्य का भी प्रयोग किया गया है। मौखिक रूप के समान ही भजन, सोहर, जतसार, बिरहा इत्यादि लोकगीतो का भी प्रयोग किया गया है। टेक पदो की पुनरावृत्ति दोनों में एक समान है। प्रकाशित रूप में संस्कृत श्लोकादि का भी प्रयोग किया गया है तथा सुमिरन भी बहुत बढा चढा कर किया गया है।

केवल दो व्यक्तियो के नामो मे स्पष्ट अन्तर मिलता है। मौखिक रूप मे सोरठी के पिता का नाम 'उदयभान' तथा माता का नाम 'तारामती' है। प्रकाशित रूप में सोरठी के पिता का नाम 'राजा दक्षसिह' तथा माता का नाम 'रानी कवलापति' दिया हुआ है। शेष सभी नाम जैसे हेवन्ती, खेखडमल, व्यास-

पंडित, केका कुम्हार, तथा स्थानो के नाम जैसे सोरठपुर, गुजरात, दक्षिणी-शहर इत्यादि सभी एक समान है। ऐसा प्रतीत होता है भोजपुरी लोकगाथाओ का प्रकाशित रूप भी गायको द्वारा एकत्र करके तथा उसमें कुछ जोड घटाकर प्रकाशित करवा दिया दिया गया है। क्योकि हम देखते है कि समस्त भोजपुरी लोकगाथाओ के प्रकाशित रूप प्राय मौखिक रूप के समान ही है।

मैथिली रूप—'सोरठी' की लोकगाथा मैथिल-प्रदेश में बड़े चाव से सुनी जाती है। यद्यपि मैथिली रूप के कथानक में बहुत हेर-फेर है, परन्तु अन्तोलगत्वा कथा समान ही है। 'सोरठी' की लोकगाथा का मैथिली रूप भी प्रकाशित हो चुका है। मैथिली रूप भोजपुरी रूप से छोटा है। मैथिली रूप आठ खडो में वर्णित है। लोकगाथा के मैथिली रूप पर अभी तक किसी विद्वान का ध्यान नहीं गया है। केवल डा० जयकान्त मिश्र ने इस लोकगाथा के कुछ अशो पर विचार किया है।[1]

मैथिली में इस लोकगाथा को 'कुवर वृजाभार का गीत' अथवा 'सुट्ठी (सोरठी) कुमारी का गीत' नाम से अभिहित किया जाता है। इसका सक्षिप्त कथानक इस प्रकार है —

पुहुपनगर (पुष्प नगर) के राजा का नाम रोहनमल था। उसका भाँजा व्रजाभार बहुत ही वीर था। राजा के सात रानियाँ थीं परन्तु किसी से पुत्र उत्पन्न नही हुआ। राजा को ज्योतिषियो ने बतलाया कि कुवर व्रजाभार को बुलवाया जाय क्योंकि वही कटकबन की रानी मनकली की वहन सुट्ठी कुमारी (सोरठी) को ला सकते हैं। सोरठी कुमारी से ही पुत्र सम्भव है। चिट्ठी भेजकर राजा ने व्रजाभार को वुलवाया। कुवर व्रजाभार का कुछ दिन हुये विवाह हुआ था, परन्तु मामा की आज्ञा के कारण उसे घर वार छोडना पडा। मामा से आज्ञा लेकर व्रजाभार गुरु गोरखनाथ के यहाँ पहुँचे और उनकी सहायता से कटकवन, तथा मैनाक पर्वत पार किया। गुरु की आज्ञा से उन्होने योगी का रूप धारण किया। इसके पश्चात् वृजाभार को वताश, लवलग, सानोपिपरिया, महानद, मलिनी वन, गीदरगज, दौरा इत्यादि कई भयानक नगरो एव नदियो को पार करना पडा। अनेक जादू की लडाइयाँ लडनी पडी। परन्तु सब कष्टो को वीरता-पूर्वक झेलते हुये उन्होने सुट्ठीकुमारी को प्राप्त किया। सुट्ठीकुमारी उन पर

१—डा० जयकान्त मिश्र—इन्ट्रोडक्शन टु दी फोक लिटरेचर आफ मिथिला, यूनिवर्सिटी आफ इलाहावाद स्टडीज, भाग १ पृ० २१–२४

अनुरक्त हो गई। कालान्तर में मामा की आज्ञा से उन्होंने उसके साथ विवाह किया और तत्पश्चात् स्वर्ग चले गये।

कथा के अन्तर्गत योगी के रूप में अपनी माता मैनावती से भिक्षा माँगनें के लिये जाना, सुट्ठी कुमारी के जन्म की कथा, केका कुम्हार के यहाँ लालन-पालन तथा राज पडित की दुष्टता इत्यादि सभी कथा मैथिली रूप में भी वर्णित है।

इस प्रकार हम देखते है कि मैथिली रूप की कथा भोजपुरी रूप के समान ही है। लोकगाथा के प्रमुख चरित्रो के नाम भी प्राय. एक समान है। केवल स्थानो के नाम में विशेष भिन्नता है, जिसे कि ऊपर दिया गया है। मैथिली रूप मे प्राय: सभी स्थानो के नाम भोजपुरी रूप से भिन्न है।

लोकगाथा की ऐतिहासिकता—'सोरठी की लोकगाथा के विषय में कोई ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध नही होती है। लोकगाथा के वर्णन में भी कोई ऐसा तथ्य नही प्राप्त होता है जिससे कि ऐतिहासिक अनुसधान किया जा सके। अतएव यह लोकगाथा भी अपनी 'सदिग्ध ऐतिहासिकता' की विशेषता लिये हुये है। मौखिक परंपरा से निर्मित इन रचनाओ के स्थान, समय तथा व्यक्तिओ के विषय में खोज करना दूभर ही नही अपितु असम्भव सा हो गया है। परतु तो भी हमारे सम्मुख कुछ सम्भावनायें है। अतएव हम इन्ही सम्भावनाओ पर विचार करेंगे। निकट भविष्य में हो सकता है कि इन्ही सम्भावनाओ के द्वारा ऐतिहासिकता भी प्राप्त किया जा सके।

(१) 'सोरठी' की लोकगाथा के गायको का विश्वास है कि सोरठी तथा नायक बृजाभार तथा लोकगाथा के कुछ अन्य चरित्र वास्तव में इस लोक के नही हैं। वे इन्द्रपुरी से अपनी त्रुटियो के कारण कुछ काल के लिये दड स्वरूप मृत्यु-लोक में चले आये थे। जितने समय तक ये अप्सरायें एव गधर्व इस भूमि पर रहे, उन्होंने अपनी लीलायें कीं और तत्पश्चात् वे पुन इन्द्रलोक में चले गये।

वस्तुत उपर्युक्त भाव हमारे लिये नवीन नही हैं। अवतारों की कथा हम भली भ ाँति जानते हैं। इन्द्रपुरी से च्युत "मेघदूत" के यक्ष के विषय में तथा मदान्ध नहुष के पतन के विषय में हम सभी परिचित हैं। अवतार एव स्वर्ग-पतन की कथाएें सर्वत्र भारत में प्रचलित हैं। अतएव यह सम्भव हो सकता है कि अवतारवाद एव स्वर्गपतन की इन्ही कथाओ के आधार पर प्रस्तुत लोक-गाथा का भी निर्माण हुआ हो। लोकगाथा के गायक ने एक छोटी घटना में पौराणिक कथाओ के भाव का मिश्रण करके एक वृहद लोकगाथा का निर्माण कर दिया हो।

(२) प्रस्तुत लोकगाथा में गुरु गोरखनाथ का नाम बार बार आता है। गुरु गोरखनाथ की ही कृपा से वृजाभार का जन्म हुआ था तथा वह आजन्म उन्ही का शिष्य बना रहा। भोजपुरी लोकगाथाओ में 'सोरठी' की लोकगाथा, एक मात्र लोकगाथा है जिसमें अन्य देवी देवताओ, दुर्गा, शकर पार्वती इत्यादि के नाम का उल्लेख नही होता है। इसमें केवल इन्द्र, अप्सरायें तथा यक्ष किन्नरो का ही उल्लेख है। इन्ही के साथ गुरु गोरखनाथ का नाम लगा हुआ है। गुरु गोरखनाथ की ही कृपा से वृजाभार सब कार्यों में सफल होता है। नाथ सम्प्रदाय के जोगियो की भाँति वह भी वेष धारण करता है। अतएव हम देखते हैं कि नाथसम्प्रदाय का भी समावेष इस लोकगाथा में हुआ है।

विद्वानो के मत के अनुसार गोरखनाथ का आविर्भाव तेरहवी शताब्दी में हुआ था। उनके द्वारा प्रचलित नाथधर्म का प्रभाव सर्वत्र देश में फैल गया था। इसलिये यह सम्भव हो सकता है कि प्रस्तुत लोकगाथा की रचना गोरखनाथ के समय मे अथवा परवर्ती काल में हुई हो। साथ ही उसमें प्रचलित लोकप्रिय नाथधर्म का भो गायक ने समावेष कर लिया हो। इस लोकगाथा में केवल गोरखनाथ और वृजाभार के योगी वेष एव तप इत्यादि का ही वर्णन है। इसमें नाथधर्म के सिद्धान्तो का प्रतिपादन कही भी नही किया गया है। वस्तुतः इसमें नाथधर्म के विपरीत सिद्धान्तो का उल्लेख हैं। नाथ धर्म में स्त्री को कही भी महत्वपूर्ण स्थान नही दिया गया है। स्त्री मे सदा दूर रहने की शिक्षा नाथधर्म में दी गई है। परन्तु यहाँ इसके विपरीत स्वय गुरु गोरखनाथ वृजाभार को स्वयबर में ले जाते है, उसका विवाह कराते है तथा इस मार्ग में आने वाले कष्टो का निवारण भी करते हैं।

अतएव यह सिद्ध होता है कि प्रचलित धर्म होने के कारण ही गायको ने गोरखनाथ के नाम का मिश्रण कर लिया है। मध्ययुग में साधू-सन्तो की परपरा में नाथधर्म के ही योगी अधिकांश रूप में जाने जाते थे। अतएव वृजाभार का योगी रूप धारण करना प्रचलित परपरा के अनुसार ही वर्णित हुआ है। नाथ सम्प्रदाय में वृजाभार के नाम का कही भी उल्लेख नही है।

(३) प्रस्तुत लोकगाथा में देश के प्रचलित लोककथाओं का भी समावेष हुआ है। अतएव यह सम्भव हो मकता है कि प्रचलित लोकप्रिय कथाओ के मिश्रित रूप से ही सोरठी की लोकगाथा का निर्माण हुआ हो।

सोरठी की लोकगाथा जायसी के 'पद्मावत्' से कुछ अश तक मिलती जुलती है। वृजाभार का चरित्र 'पद्मावत्' के राजा रत्नसेन मे मिलता जुलता है। जिस

प्रकार राजा रत्नसेन ने पद्मावती को प्राप्त करने के लिये अनेक कष्ट उठाये, नाना प्रकार की विपत्तियो को झेला, ठीक उसी प्रकार बृजाभार को भी सोरठी से मिलने के लिये कष्ट उठाना पडा। पद्मावती के समान 'सोरठी' भी एक साध्य के रूप में चित्रित की गई है। राजा रत्नसेन का गुरु जिस प्रकार हीरामनतोता था, उसी प्रकार इसमें भी बृजाभार के गुरु गोरखनाथ है। दोनो ही कथाओ का अन्त आध्यात्मिक सीमा पर होता है। अतएव यह सम्भव है कि इसी कथा के आधार पर 'सोरठी' की भी रचना हुई हो।

एक अन्य कथा का समावेश इस लोकगाथा में किया गया है। वह है राजा भरथरी की कथा। राजा भरथरी का योगीरूप धारण कर रानी सामदेई से भिक्षा मांगते की कथा सर्वत्र व्यापक है। इस अश का दूसरा रूप इस लोकगाथा मे वर्णित है। बृजाभार योगी का रूप धारण कर अपने नगर में आता है और महल के बाहर भिक्षा की याचना करता है। माता सुनयना उसे नही पहचानती है पर उसकी पत्नी हेवन्ती पहचान जाती है। इसके पश्चात् दोनो के कथोपकथन प्रारम्भ होते हैं। हेवन्ती अपने पति को वश में करना चाहती है। यह कथा भरथरी की कथा का दूसरा रूप है।

लोकगाथा में बौद्ध जातक कथा के एक अश का उल्लेख मिलता है। जातक कथा में केकडा (जलचर विशेष) को बोधिसत्व का रूप दिया गया है। केकडा सदा ही आर्य पथानुगामी की सहायता करता है। प्रस्तुत लोकगाथा में 'गगाराम केकडा' का उल्लेख है। यह बृजाभार को मृत्यु से बचाता है। बृजाभार जब ठूंठी-पकडी वृक्ष के नीचे शयन करता है तो वहाँ नागिन उसे डस लेती है। कौआ जब मांस खाने आता है तो केकडा झोली से निकल कर उसे मार डालता है और बृजाभार को पुन जीवित कराता है।

उपर्युक्त तीन उदाहरणो से यह स्पष्ट होता है कि सोरठी की लोकगाथा में कालान्तर में इन कथाओ का समावेष हो गया जिससे कि यह लोकगाथा अत्यन्त रोचक बन गई है। भिन्न-भिन्न कथाओ के मिश्रण से हमें अनेक मतो का सामजस्य भी इस लोकगाथा में दिखलाई पडता है। इसमें सनातन हिन्दू धर्म, नाथ सम्प्रदाय सूफी मत तथा बौद्ध मत के अनेक उदाहरण मिलते हैं। इस लिये यह कहना असगत न होगा कि 'सोरठी' की मौखिक परपरा ने उत्तर पूर्व भारत के अनेक धर्मों में सामजस्य स्थापित करने की सफल चेष्टा की है।

(४) 'सोरठी' की ऐतिहासिकता पर विचार करने के लिये हमारे सम्मुख एक और सामग्री उपलब्ध होती है। वह है लोकगाथा में आये हुये स्थानों के

नाम। लोकगाथा मे वैसे तो अनेक नगरो के नाम आये हुये है, परन्तु प्रमुख नगरो के नाम है—सोरठपुर, गुजरात तथा दक्षिणी शहर।

उपर्युक्त तीनो नगरो के नाम भौगोलिक दृष्टि से भारतवर्ष के दक्षिणी भाग, विशेष रूप से गुजरात प्रान्त का बोध कराते है। सौराष्ट्र प्रदेश को 'सोरठ' भी कहा जाता है। अतएव यह सभावना उठती है कि क्या 'सोरठी' की लोकगाथा सौराष्ट्र से आई हुई है? राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त रचित 'सिद्धराज' खड-काव्य मे 'राणक दे' का चरित्र हमें लोकगाथा की 'सोरठी' का स्मरण कराती है। 'राणक दे' को जन्म के पश्चात पिटारे में बन्द कर नदी मे बहा दिया जाता है। ठीक इसी प्रकार 'सोरठी' को जन्म लेते ही पिटारे मे बद कर नदी मे बहा दिया जाता है। 'सिद्धराज' की कथा आगे चल कर दूसरा रूप धारण कर लेती है और सोरठी की कथा से कही भी साम्य नही होता। हमे भली भाँति विदित है कि 'सिद्धराज' गुजरात (सौराष्ट्र) का प्रसिद्ध सोलकीकुलदीपक महाराज कर्णदेव का वीर पुत्र था। सिद्धराज ने कालातर मे चक्रवर्ती शासन की नींव डाली थी। सोलकी कुल से सबधित अनेको कथाएँ एव गाथाएँ सौराष्ट्र में प्रचलित हैं। अत यह सभावना कि 'सोरठी' की लोकगाथा का प्रादुर्भाव वही से हुआ, किसी सीमा तक उचित ही प्रतीत होता है। इस लोकगाथा में सोरठपुर, गुजरात तथा दक्षिणीशहर का नाम आने से यही विश्वास उत्पन्न होता है कि प्रस्तुत लोकगाथा का उद्गम स्थन सौराष्ट्र ही है। आभीरो एव गुर्जरो के साथ इस लोकगाथा ने पूर्व की ओर बढते बढते भोजपुरी प्रदेश में स्थानिक रूप ले लिया है। भोजपुरी प्रदेश में आकर भी यहाँ के नगरो, गाँवो तथा पहाडो के नाम का समावेष इस लोकगाथा में नही हो पाया है। केवल गंगा नदी का नाम आता है। लोकगाथाओ में गगा अनिवार्य रूप से वर्त्तमान रहती हैं, क्योंकि हमारे देश में प्रत्येक नदी और जलाशय को कभी कभी गगा कह दिया जाता है।

सोरठी का चरित्र—प्रस्तुत लोकगाथा में आदर्श एव स्फूर्ति का केन्द्र सोरठी का जीवन चरित्र ही है। इसी के कारण यह लोकगाथा 'सोरठी' नाम से अभिहित की जाती है। वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो विदित होगा कि लोकगाथा के कथानक में सोरठी ने विशेष भाग नही लिया है अपितु वृजाभार के कार्य कलापों का अधिक वर्णन है। परन्तु यह होते हुए भी सोरठी का चरित्र अनिवार्य रूप से महत्वपूर्ण है। समस्त लोकगाथा में वह परिमल की भाँति व्याप्त है। अन्य सभी चरित्रो का निर्माण उसी के हेतु हुआ है। शेष सभी चरित्र सोरठी को केन्द्र में रखकर अपनी लीलाएँ करते हैं।

यह प्रारम्भ में ही स्पष्ट किया जा चुका है कि 'गोरठी' एक साध्य के रूप में चित्रित हुई है। वृजाभार एक साधक है जो सोरठी को प्राप्त करने के लिये अनेक प्रयत्न करता है। इस प्रकार सोरठी का स्थान एक देवी के समान है। वह एक अत्यन्त उच्च धरातल पर स्थित हो जाती है, तथा वृजाभार के प्रयत्नो का अवलोकन करती है। वह ऐसी नायिका नही जो अपने प्रेमी को प्रत्येक सहायता देती है। वृजाभार और हेवन्ती के विवाह में सोरठी केवल इतना ही कहती है 'तुम सोरठपुर आना मै तुम्हारी प्रतीक्षा करूगी।" बस इसके अतिरिक्त किंचित प्रेम-संभाषण भी नही हुआ। सभव था कि वृजाभार वहा न पहुच पाता अथवा सोरठी को भूल जाता। परन्तु इधर सोरठी का तो निश्चय था जीवन भर उसकी प्रतीक्षा करना। वह बारहवर्ष तक उसी की प्रतीक्षा में बैठी हुई है। वृजाभार भी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल है, और अनेक दुर्गम यातनाओ को सहन कर बारह वर्ष के पश्चात् सोरठी को प्राप्त करता है। केवल एक बार सोरठी अभिसारिका नायिका की भाँति फुलवारी में वृजाभार से मिलती है। इसके पश्चात् सोरठी की इच्छानुसार ही सोरठीहरण होता ह। अर्द्धरात्रि में दोनो विमान पर बैठकर चल देते हैं। सोरठी की बस यही प्रेम कहानी है। प्रेमिका की भाति उसने इसके अतिरिक्त और कुछ भी नही किया। इसके चरित्र का शेष भाग एक आदर्श देवी, स्वर्गीय कृपा से युक्त एव अलौकिक शक्तियो से परिपूर्ण एक पूज्य देवी के रूप में चित्रित हुई है।

सोरठी का देवत्व उसके जन्म से ही प्रगट होता है। राजा उदयभान के अनेक वर्षों के तपस्या के फलस्वरूप सोरठी का जन्म होता है। वह जन्म लेते ही बोलना प्रारम्भ कर देती है। वह बारह जन्मो का हाल जानती है। विधि के विधान से उसे गगा में प्रवाहित कर दिया जाता है। उसके स्पर्श से काठ का सन्दूक सोने का हो जाता है, मिट्टी के बर्तन स्वर्ण में परिवर्तित हो जाते हैं। जहाँ भी जाती है वहा सुखसम्पन्नता छा जाती है। वह ऐसी पारसमणि है जिसके ससर्ग में आते ही सभी वस्तुयें एव व्यक्ति स्वर्णिम आभा से युक्त हो जाते है। वह एक कल्याणमयी देवी है। सब को सुख देने के लिए ही उसका जन्म होता है। इन्द्र का विमान एव उनकी अप्सरायें उसकी दासी के रूप में है। पिता और पुत्री के विवाह का जब करुणा जनक प्रसग उपस्थित होता है तो वह कहती है—

एकिया हो रामा तब तब सोरठी वचन उचारेले रेनु की
एकिया हो रामा नरक दुआरिया पंडित खोलावेले रेनु की

एकिया हो रामा बाप बेटी सग बियाह करावेले रेनु की
एकिया हो रामा जनम करमवा सब बिगारेले रेनु की

यह कह कर वह पिता को कुमार्ग से बचाती है। इस प्रकार से हम सोरठी के चरित्र में देवत्व एव अलौकिक शक्तियो का समावेष पाते हैं।

सोरठी के चरित्र के प्रत्येक अश मे आदर्श निहित है। सोरठी अपने को साधारण नारी एव प्रेमी के रूप में समझती है। उसके प्रेम में त्याग है ईर्ष्या नही। वह वृजाभार के अन्य प्रेमिकाओ का भी समुचित आदर करती हैं। यहाँ तक कि उन्हे वह सहायता भी देती है। तुच्छ से तुच्छ चरित्र को भी वह सम्मान देती है। सोरठपुर में जब वह विमान पर चढती है तो निर्जल मालिन को भी साथ में बिठा लेती है। इसी प्रकार मार्ग में वृजाभार की अनेको प्रेमिकाओ को समान स्थान देती है। प्रथम रात्रि में ही वह वृजाभार से कहती है कि 'हेवन्ती का तुम्हारे ऊपर अधिक हक है, प्रथम रात्रि उसी के महल में मनाओ।' इस प्रकार मे सोरठी के चरित्र में आदर्श स्त्री का भाव पाते हैं।

सोरठी के चरित्र में से अलौकिक शक्तियो को एक बार हटा दें तो हमें प्रतीत होगा कि वह एक आदर्श भारतीय महिला है। उसमें पतिप्रेम की उच्चतम साधना है। वह पति को ही अपना ईश्वर मानती है। उसीके साथ वह सती भी हो जाती है। अलौकिक शक्तियो से परिपूर्ण होकर भी पति के सम्मुख हीन बन कर रहती है। अलौकिक शक्तियो का उसने कभी भी दुरुपयोग नही किया। वह आर्य पथ की अनुगामिनी है और इस प्रकार वह एक महान आदर्श की स्थापना करती है।

वृजाभार का चरित्र—'सोरठी' की लोकगाथा में वृजाभार का चरित्र अत्यन्त व्यापक रूप से दर्शाया गया है। इसमें वह एक साधक, योगी तथा प्रेमी के रूप में दिखलाया गया है। भारत के मध्यकालीग युग में हमें [illegible]प्रकार के नायको का वर्णन मिलता है। प्रथम तो वे जो अपनी वीरता एव युद्ध में विजय प्राप्त कर एव दुष्टो को पराभव करके नायिका [illegible] थे। द्वितीय प्रकार के वे नायक जो कि नायिका को प्राप्त [illegible] का रूप धारण करते थे। योग मार्ग की यह परम्परा [illegible] समय के प्रचलित नाथ धर्म से ही प्राप्त हुई थी। राजा [illegible] की जीवन-गाथा उस समय अत्यन्त प्रसिद्ध थी। [illegible] के योगी के रूप में चित्रित किया गया है।

लोकगाथा में वृजाभार का जन्म गुरू गोरखनाथ की कृपा द्वारा वर्णित है। यद्यपि वृजाभार भी स्वर्ग च्युत एक गधर्व है, परन्तु मृत्युलोक में गुरु गोरखनाथ उस पर कृपा रखते है। वृजाभार भी उन्हीं का अनन्य भक्त एव आज्ञाकारी सेवक है। वह सब कार्य गुरू की आज्ञा लेकर ही करता है। सोरठी को प्राप्त करने में जो भी कठिनाइयाँ आती है उसे प्रथमत वह अपनी शक्ति से झेलता है अथवा गुरुकृपा से उसे विजय मिलती है। गोरख-नाथ की ही इच्छानुसार वह स्वयवर में हेवन्ती को अपनी ओर आकर्षित करके उससे विवाह करता है। मामा की इच्छा पूर्ति करने के लिए जव वह चलता है तो गुरू के पास जाकर उपाय पूछता है तथा योगी रूप धारण करता है।

अपने उद्देश्य की प्राप्ति में वह इतना लवलीन हो जाता है कि उसे स्त्री, माता, राज्य इत्यादि का भी कुछ ध्यान नही रह जाता है। मन को दृढ़ करने के हेतु वह स्वय अपने घर के द्वार पर भिक्षा मांगने के लिए जाता है। हेवन्ती भी उसे मोहित नही कर पाती है और वह सोरठपुर के दुर्गम मार्ग पर चल देता है। मार्ग में अनेकानेक कष्ट एव आकर्षण मिलते है परन्तु अनासक्त योगी की भाँति अपनी साधना को सफल करने के लिए किसी भी ओर विचलित न होते हुए वह आगे ही बढता जाता है। सोरठपुर में सोरठी से भेंट करता है, उसके हृदय में भी प्रेम जागृत होता है परन्तु वह अपने कर्तव्य को नही भूलता है। सोरठी तथा अन्यान्य स्त्रियो को लाकर प्रथमत वह अपने मामा के सम्मुख समर्पित करता है। मामा जव अपनी असमर्थता प्रगट करते है तव वह पुनः गुरू की इच्छानुसार सवसे विवाह करता है।

वृजाभार के चरित्र में कही लौकिक प्रेम एव वासना की गध नही मिलती है। वह एक अनासक्त प्रेमी के रूप में है। उसका कार्य है सभी स्त्रियो के सत् की रक्षा करना। जीवन के क्षणिक सुखो की उसे तनिक चिन्ता नही रहती है। सतियो के जीवन का उद्धार करना ही मानो उसकी साधना है। लौकिक सुख के क्षण जव-जव उसके जीवन में आते है तव-तव वह गुरू की आज्ञा से सुख त्याग करके चला जाना पडता है। इसके कारण उसके मन में तनिक भी रोष नही उत्पन्न होता है। उसके जीवन का उद्देश्य ही गुरू सेवा है। सासारिक मोह-माया उसे रोक नही पाती है। उसकी स्त्रियाँ उससे भले ही कुपित हो जाती है परन्तु वह कभी भी गुरू के प्रति कोई अन्य भाव मन में नही लाता।

वृत्राभार एक कर्मठ योगी है और गुरु का परम भक्त है। उसने जीवन में अन्त तक इसी आदर्श को निबाहा है। इन्द्र के साथ उसका झगडा होता है, परन्तु गुरू की इच्छा जान कर वह सहर्ष इस नश्वर शरीर को त्याग देता है। इस प्रकार से उसके जीवन मे भौतिक सुख की छाया भी नही पडती। वह अपने कर्त्तृत्व से समस्त समाज को सुखी कर अवधूत के समान सदा के लिए चल देता है। वास्तविक अर्थ मे वह एक योगी है।

---

(२) विहुला

विहुला की लोकगाथा समस्त भोजपुरी प्रदेश में प्रचलित है। विशेष रूप से उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलो एव समस्त विहार में तो अत्यन्त व्यापक है। वस्तुत: यह लोकगाथा केवल भोजपुरी प्रदेश में ही नही गाई जाती है अपित इसका विस्तार बंगाल तक हैं। वस्ती, गोडा एव गोरखपुर जिलो में यह लोक-गाथा 'वालालखन्दर' अथवा 'वारहलखन्दर' के नाम से अभिहित की जाती है। शेष भाग में इसे 'विहुला' ही कहते हैं।

'सोरठी' के समान विहुला भी एक पूज्य देवी के समान है। परन्तु सोरठी और विहुला में एक विशेष अन्तर है। सोरठी की लोकगाथा में नायक वृजाभार सोरठी को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयत्न करता है। परन्तु विहुला की लोकगाथा मे विहुला सती ही प्रधान चरित्र है। बिहुला अपने पति के पुनर्जीवन के लिए अनेक प्रयत्न करती है। विहुला का चरित्र, प्रसिद्ध पौराणिक कथा 'सावित्री सत्यवान' से साम्यता रखती है। जिस प्रकार से सावित्री को अपने मृत पति सत्यवान को जीवित करने के लिए यमराज का पीछा करना पडा, ठीक उसी प्रकार विहुला भी अपने मृतपति ''वालालखन्दर' के जीवन के लिए सदेह इन्द्रपुरी जाती है तथा इन्द्र को प्रसन्न करके अपने पति को जीवनदान दिलाती है। सावित्री के चरित्र से साम्यता रखते हुए भी, यह निश्चित है कि लोकगाथा उस पौराणिक कथा का रूपान्तर नहीं है। 'विहुला' की लोकगाथा मे एक अन्य तत्त्व निहित है। यह लोकगाथा 'मनसा देवी की पूजा से सम्वन्ध रखती है। 'मनसा' सर्पों की देवी मानी गई है। मनसा देवी का पूजा वगाल में विशेष रूप से होती है। 'मनसा' के पूजा के अन्तर्गत 'विहुला' की लोकगाथा का भी समावेश है।

ऐसा विश्वास है कि मनसा देवी की पूजा का उद्भव वगाल में ही हुआ। डा० दिनेशचन्द्र सेन के कथनानुसार 'मनसा पूजा' शाक्त एव शैवमत के अन्तर्द्वन्द्वों का प्रतीक है। लोकगाथा में चित्रित है, कि वालालखन्दर का पिता चाद सौदागर (भोजपुरीरूप-चदू शाह) शिव का उपासक था। सर्पों की देवी मनसा ने उसीसे अपनी पूजा करवानी चाही। चांद सौदागर ने उसका तिरस्कार किया। इसके पश्चात मनसा ने चाद सौदागर को अनेक कष्ट दिए और अन्त में विजयी रही। इस प्रकार मे शाक्त मत का शैवमत पर विजय दिखलाया गया है।

हम यह भली भाँति जानते हैं कि प्राय समस्त पूर्वी भारत में शाक्तमत, और शैवमत का प्रभाव अधिक है। दुर्गा, चडी, काली तथा मनसा देवी की पूजा इस भाग मे बहुत व्यापक है। अतएव शिव के उपासको से युद्ध होना स्वाभाविक है। शाक्त उपासना का उद्भव कब हुआ, इस विषय में हम आगे विचार करेंगे। परन्तु 'मनसा देवी' की पूजा निश्चित रूप से एक मध्ययुगीन पूजा है। इसी समय से बगाल में 'मनसा सप्रदाय' भी प्रचलित हो गया है जिसमें कि अधिकाश रूप मे वैश्य एव निम्न वर्ग के लोग हैं। प्रत्येक वर्ष श्रावण मास में 'मनसा' पूजा बगाल में बडे धूम से मनाई जाती है। बगाल के दक्षिणी भाग के सिलहट, बाकरगज इत्यादि जिलो में महीने भर यह पूजा होती है। हजारो की सख्या में लोग नदी के किनारे अथवा मदिरो में जाकर 'बिहुला' के गीत गाते हैं, नावो की दौड होती है तथा मनसा देवी के लिए भिन्न भिन्न पकवान बनते हैं।

बिहार के पूर्वीय भाग में भी श्रावण मास में नागपचमी के अवसर पर बिहुला की कथा का श्रवण किया जाता है तथा नदी में केले के पत्ते पर दीप-दान दिया जाता है।

वास्तव में प्रस्तुत लोकगाथा का भोजपुरी रूप प्रतिनिधि रूप नही है। वस्तुत इस लोकगाथा का उद्भव बगाल में हुआ था जिसका कि वर्णन हम आगे करेंगे। बगाल में 'मनसा मगल' के अन्तर्गत यह लोकगाथा सविस्तार वर्णित है। इसकी रचना में अनेक कवियो का हाथ है। भोजपुरी रूप बगला का ही लघुरुपान्तर है। भोजपुरी रूप में लोकगाथा में निहित सिद्धान्त का भी प्रति-पादन नही किया गया है। केवल एक कथा का वर्णन है जिसमे बिहुला का आदर्श चित्र उपस्थित किया गया है।

लोकगाथा गाने का ढग—प्रस्तुत लोकगाथा को दो व्यक्ति एक साथ द्रुतिलय में गाते हैं। वीच वीच जतसार तथा विरहा का गीत भी गाया जाता है। वाद्य यन्त्रो मे खजडी और टुनटुनी रहती है। सोरठी के समान इसे भी वडे पवित्र भाव से गाया जाता है। गायको का यह विश्वास रहता है कि बिहुला की गाथा सुनने के लिए सर्प भी आते हैं। इस लोकगाथा में करुण स्वर प्रधान रहता है। इस कारण करुणामय वातावरण उत्पन्न हो जाता है। गाथा की पहली पक्ति के प्रारम्भ में 'ए राम' तथा अन्त में 'रे दइवा' रहता है।

१—डा० दिनेशचन्द्र सेन-हिस्ट्री आफ दी बेंगाली लैंगुएज एण्ड लिटरेचर पृष्ठ २५०

दूसरे लाइन के अन्त मे केवल 'ए राम' रहता है। इस प्रकार इसमे टेक पदो की पुनरावृत्ति एक लाइन छोड़कर होती है।

संक्षिप्त कथा—चदूशाह दिल्ली शहर के निवासी थे। उनके छ पुत्र थे। यथासमय सभी का विवाह-दान इत्यादि कर दिया गया था। उनका जीवन आनद से बीत रहा था तथा लक्ष्मी की उन पर अनन्य कृपा थी। उसी नगर में विषहर नामक एक ब्राह्मण भी रहता था। उसने समस्त सर्पों को अपने वश मे कर लिया था। चन्दूशाह से एव विषहर ब्राह्मण से अनवन थी। चदूशाह को नष्ट करने के लिये उसने अनेक प्रयत्न किये। क्रम से उसने चदूशाह के छ पुत्रो को सर्प से कटवा कर मार डाला। चदूशाह पर इस प्रकार बहुत बडी विपत्ति आ पडी। कुछ काल पश्चात् भगवान की कृपा से चदूशाह को एक और पुत्र उत्पन्न हुआ। रोहिणी नक्षत्र में जन्में हुये बालक का नाम 'बाला लखन्दर' पडा। विषहर को पुन चिन्ता हुई कि किस प्रकार इस बालक को भी मारा जाय। परन्तु उसे उचित अवसर नही मिलता था। इधर शुक्ल पक्ष की चद्रमा की भाँति दिनो दिन लखदर की आयु बढती गई।

इन्द्र महाराज ने श्यामपरी और नीलमपरी नामक दो अप्सराओ को मृत्यु-लोक में जन्म लेने की आज्ञा दी। श्यामपरी ने मृत्युलोक में आने के पहले प्रत्येक सकट में इन्द्र और ब्रह्मा से सहायता लेने का वचन ले लिया। नीलमपरी ने मृत्युलोक मे नागिन के रूप में जन्म लिया। श्यामपरी, चीनानगर के चीना-शाह के यहाँ 'बिहुला' के नाम मे जन्म लिया। बिहुला के जन्म लेते ही चीना-शाह का घर धनधान्य से परिपूर्ण हो गया और व्यापार मे उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी।

इधर एक दिन लखन्दर गगा में मछली का शिकार करने के लिए गया। विषधर ने प्राण लेने का यह सुअवसर देखा। उसने लखन्दर को गहरे पानी में ले जाकर डुबाने का प्रयत्न किया। परन्तु लखन्दर की जान किसी प्रकार बच गई। लखन्दर को मार डालने के लिये विषहर ने अनेको प्रयत्न किये परन्तु सबमें वह असफल रहा। अन्त में उसने एक चाल चली। विषहर ने चदूसाह के सम्मुख लखन्दर के विवाह का प्रस्ताव रखा। लखन्दर विवाह योग्य हो भी चला था अतएव चदूशाह ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

इधर बिहुला के पिता चीनाशाह भी कन्या के लिये सब ओर वर खोजने लगे परन्तु कही योग्य वर न मिला। उधर चदूशाह से विचार विमर्श करके विष-हर ब्राह्मण,लखन्दर के लिये वधू-ढूढने चल पडा। चलते चलते वह चीना शहर

पहुँचा और जाकर चीनाशाह के महल के द्वार पर बैठ गया। बिहुला अपनी तीन सौ साठ सखियो के साथ बाहर निकली। विषधर ने देखते ही पहचान लिया कि यही बिहुला है तथा बारह जन्मों का हाल जानने वाली है। विषहर भी बिहुला के पीछे पीछे चल पडा। बिहुला गगा के किनारे पहुँची। विषहर ने मत्र-चलाकर सिंदूर और अक्षत गङ्गा के घाट पर छोड़ दिया। बिहुला की सखियो ने सिंदूर और अक्षत देखकर बिहुला से स्नान करने के लिये मना कर दिया। परन्तु बिहुला न मानी। वह अपने सत् से पुरइन के पत्ते पर बैठ करगङ्गा के बीच धार में स्नान करने के लिये चली गई। तीन डुबकी मारने के पश्चात् विषहर का छोडा हुआ सिंदूर खौर अक्षत उसके माँग और आचल में भर गया बिहुला को यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ। उसकी सखियाँ उसे छोडकर पहले ही चली गई थी। अब उसे भय हुआ कि यह सिंदूर देख कर घर के लोग क्या कहेंगे। यह सोचकर उसने प्राण देने का निश्चय किया। वह वन में चली गई, परन्तु बाघ बाघिन ने उस पर दया दिखलाई। विषहर वृद्ध का रूप घर कर उसके सम्मुख आया और कहने लगा कि यदि तुम विवाह के लिये तैयार हो जाओ तो यह कलक मिट जायगा। बिहुला ने यह स्वीकार कर लिया और उसके माँग और आचल से सिंदूर और अक्षत गायब हो गया।

विहुला ने घर पहुँच कर अपने विवाह की इच्छा प्रगट की। पहले तो माता-पिता को आश्चर्य हुआ। परन्तु बिहुला की दैवी शक्ति से सभी परिचित थे, अतएव विवाह के लिये तैयार हो गये। चीनाशाह से विषहर की भेंट हुई। चीनाशाह ने कहा कि आप देश-देश के भँवरा हैं, मेरी कन्या का विवाह ठीक करा दीजिए। विषहर ने चीनाशाह से दिल्ली शहर चलने के लिये कहा। दोनो व्यक्ति नाई ब्राह्मण और तिलक का सामान लेकर दिल्ली शहर पहुँच गये। पहले तो चदूशाह तैयार नही होते थे परन्तु अन्त में तिलक स्वीकार कर लिया। चदूशाह को अभी सतोष नही हुआ था। उडनखटोले पर बैठकर स्वय वे चीना-शहर में विहुला को देख आये। वापस आकर वडे धूम धाम से बारात की तैयारी करने लगे।

वारात जव चीनाशाह के घर पहुँच गई तो विषहर ने बिहुला की परीक्षा लेनी चाही। वारात जव अगवानी के लिये द्वार पर लगी तो चीनाशाह ने देखा कि वालालखन्दर के समान सैकडो वर पालकियो पर चढे हुये हैं। किसकी द्वारपूजा की जाय, वे यही सोचने लगे। घर में आकर उन्होने सव हाल बतलाय। बिहुला ने भी यह सुना। उसने पिता से कहा कि जिस पालकी पर मक्खियाँ भिनक रही हों उसी पालकी में वालालखन्दर है। चीनाशाह जाकर तुरन्त

पहचान लिया और द्वार पूजा किया। द्वार पूजा के पश्चात् विषहर ने पुन. लोहे की मछली पकाने के लिये चीनाशाह को दिया। चीनाशाह मछली लेकर महल मे आये। किसी से मछली कटती ही न थी। विहुला ने वडी सरलता से मछली को हँसिया से टूक-टूक कर दिया और पका कर विपहर के पास भिजवा दिया। इसके पश्चात् धूमधाम से विवाह हुआ। वारात वहाँ नौ दिन तक टिकी रही। खूव आदर सत्कार हुआ। विदा होते समय विहुला ने दहेज में अपने पिता से कुत्ता, विल्ली, गरुड पक्षी तथा नेवला माँग लिया। दिल्ली शहर पहुँचते ही अपने श्वसुर से सोहागरात मनाने के लिये 'लोहे का अचलघर' वनवाने के लिये कहा। एक ही दिन मे चदूशाह ने विशाल अचलघर वनवा दिया। पडित से सोहागरात की साइत पूछ कर बिहुला और वालालखन्दर को दासी से कहला-कर अचल घर में भिजवा दिया।

अचलघर में पहुँच कर विहुला ने पलग के चारो पाव में नेवला, कुत्ता, विल्ली तथा गरुड को वाँध दिया। शृंगार सज्जा करके वह पलग पर वैठ गई। वालालखन्दर भी भीतर आया। विहुला और वालालखन्दर वैठकर चौपड खेलने लगे। विषहर ने सोचा कि वाला को मारने का अव समय आ गया है। उसने डोडवा साँप से विष की मोटरी लाने के लिये कहा। डोड, विप की गठरी लेकर चला। मार्ग में उसे स्नान करने की इच्छा हुई और पोखरे में स्नान करने लगा। इसी वीच मछलियो ने आकर विष की मोटरी खोल दी। कुछ अन्य साँपो ने तथा कुछ विच्छियो ने विप पी लिया। डोडवा साँप खाली हाथ थरथर काँपता हुआ विषहर के सामने गया। विषहर ने क्रोध में उसे श्राप दिया कि तेरे काटने से किसी को लहर नही आवेगा। विपहर ने गेंहुअन साँप को वुलाया और उसे अचलघर में भेजा। परन्तु वह वहुत मोटा था, इस कारण उसे अन्दर जाने का मार्ग ही न मिला और लौट आया। विपहर ने काली नागिन (नीलमपरी) को वुलवाया और उसे भेजा। परन्तु वह भी मोटी पडी। फिर तो विषहर ने झावा से रगड-रगड कर उसे तागे की तरह पतला करके भेजा। अचल घर में वह समा गई। उसने विहुला और वाला को जागते देखा, इस कारण वह लौट आई। अव विपहर शिवजी के पास गया और उनसे सवा भार निद्रा माँगकर अचलघर में छोड दिया। नागिन पुन अचलघर में गई। वह विहुला को पहचान गई। वह सोचने लगी कि यह तो मेरी सखी है यदि इसके पति को डसूँगी तो नरक मिलेगा। विपहर से जाकर पुन उसने कहा कि विना कसूर के मैं किस तरह काटूँ? विपहर ने इस वार मच्छडो को छोडा और कहा कि मच्छड़ जव वाला के पैर मे काटेंगे तो वह हाथ चलायेगा जिससे तुम्हें

चोट लगेगी और फिर तुम उसे डँस लेना। नागिन जाकर बाला के समीप बैठ गई। मच्छड काटने के कारण बाला ने तीन बार हाथ चलाया। तीसरी बार नागिन ने उसे डँस लिया। बाला ने जब जग कर देखा कि उसे नागिन ने काट खाया है तो वह बिहुला को जगाने लगा। परन्तु बिहुला तो निद्रा में बेहोश थी। नागिन बिहुला के केश में छिप गई थी। इधर बाला का चिल्लाते-चिल्लाते प्राण निकल गया।

जब सवाभार निद्रा समाप्त हुई तो बिहुला जगी और बाला को मृत देखकर अपना सर पीट लिया। उसने सोचा कि लोग यही कहेगे कि अचलघर में बैठकर बिहुला ने अपने पति को मार डाला। वह अत्यन्त दुख के कारण विलाप करने लगी। प्रात काल ही रोना सुनकर लोग अचलघर के सामने एकत्र होने लगे। विषहर ने जाकर चन्दू शाह से कहा कि तुम्हारी पतोहू डायन है, उसी न बाला को मारा है। चन्दूशाह को उसके कथन पर विश्वास हो गया। विषहर ने कहा कि उसे भरी सभा में लाकर दड देना चाहिये तथा बाँस के कईन (बेंत) से मार कर और उसके घावो पर नमक डाल कर मार डालना चाहिये। बिहुला को भरी सभा में घसीटते हुये लाया गया। बिहुला ने भरी सभा में कहा कि 'यदि मैं कईन के मार से नही मरूंगी तो मुझे पति का लाश दे दिया जाय मैं उन्हें पुन जीवित करूगी।' बिहुला पर बुरी तरह से मार पडने लगी, परन्तु वह मरी नही। उसने लाश माँगी। इस पर विषहर ने अपत्ति की, परन्तु जनता ने लाश देने में कोई हानि नही माना। बिहुला ने लाश लेकर मटका भर दही मे लपेट दिया और गगा में वरिया (बेडा) बनाकर और उस पर लाश रख कर चल पडी। बिहुला गगा की उल्टी धार पर चल दी। विषहर ने मार्ग में अनेक विघ्न उपस्थिति किये परतु बिहुला सबसे बचती हुई चल निकली। मार्ग में उसके मामा का गाँव पडा। मामा, बिहुला को न पहचान सका। उसने कहा कि लाश फेंक दो और मेरी पत्नी बनकर रहो। बिहुला ने सोचा कि विपत् में अपने भी पराये हो जाते हैं। चलते-चलते वह नाथूपुर पहुँची। वहाँ नेतिया धोबिन इन्द्र का कपडा धो रही थी। बिहुला भी लाश को रेघवा मछली के सरक्षकत्व मे छोडकर नेतिया के कपडे धोने लगी। नेतिया ने उसका परिचय पूछा। बिहुला ने स्वय को उसकी भाँजी बतलाया।

नेतिया धोबिन उसके कपडे धोने से बडी प्रसन्न हुई। बिहुला ने कपडो की इस्त्री की। नेतिया कपडा लेकर उडन खटोले पर बैठकर इन्द्रपुरी पहुँची। वहाँ पहुँचकर नेतिया धोबिन कपडो का बटवारा ठीक से न कर पाई। यह देखकर परियाँ बहुत बहुत बिगडी। इस पर नेतिया ने कहा कि ये कपडे मेरी भाँजी के

लगाये हुये है। परियो ने उसे बुलाने की आज्ञा दी। नेतिया ने जाकर बिहुला को डाँटा और उसे साथ लेकर चली। बिहुला को देखते ही लालपरी पहचान गई। बिहुला से उसने कुशल समाचार पूछा। बिहुला ने आद्योपान्त सभी हाल कह सुनाया। सबूत के रूप में उसके केश में से छिपी नागिन भी निकल आई। बाला की लाश को दुर्गा ने स्वर्ग में पहुँचा दिया। लाश पर चरणामृत छिडका गया और बाला लखन्दर जीवित हो उठा। बिहुला ने शेष छ जेठो को भी जीवित कराया। इस प्रकार से सब को स्वर्ग से पृथ्वी पर ले आई। चन्दूशाह ने ऐसी सतवन्ती पतोहू पाकर अपने को धन्य माना।

चन्दूशाह ने विषहर को बुलवाया। विषहर ने सोचा कि उसे इनाम मिलने वाला है, परन्तु जाकर देखा तो बिहुला सम्मुख खडी है। विषहर का नाक-कान कटवाकर देश निकाला दे दिया गया।

लोकगाथा के अन्य रूप

प्रकाशित भोजपुरी रूप—लोकगाथा के मौखिक रूप तथा प्रकाशित रूप के कथानक में तथा चरित्रो के नाम मे विशेष अन्तर नही मिलता है। प्रकाशित भोजपुरी बारह भागो में वर्णित है।[1] कथानक के प्रमुख अश समान है—चन्दूशाह और विषहर का आन्तरिक वैमनस्य, बाला लखन्दर का जन्म, बिहुला का जन्म, बिहुला का विवाह, अचलघर का निर्माण, बाला की मृत्यु, बिहुला को दड मिलना, बिहुला का नेतिया धोबिन के पास जाना तथा कपडा धोना, बिहुला का स्वर्ग में जाना और पति को जीवित कराना तथा अन्त में विषहर को दड मिलना।

कथानक में अन्तर इस प्रकार है :—

प्रकाशित रूप में वर्णित है कि बिहुला इन्द्र के दरबार में जाकर नृत्य करती है तथा इन्द्र को प्रसन्न करके पति का जीवन माँगती है। मौखिक रूप में केवल यही वर्णित है कि बिहुला इन्द्रपुरी गई और उसकी भेंट लालपरी से होती है और तत्पश्चात् दुर्गा देवी बाला को जीवित करती हैं।

प्रकाशित रूप में विषहर को मृत्यु दड दिया जाता है तथा मौखिक रूप में विषहर को देश निकाला दिया जाता है।

१—दूधनाथ प्रेस, हवडा

चरित्रो के नाम में प्रमुख अन्तर इस प्रकार है —

प्रकाशित रूप में विहुला के पिता का नाम बेंचू शाह दिया गया है जो कि उज्जैन के निवासी बतलाये गये हैं। परन्तु मौखिक रूप में बिहुला के पिता का नाम चीना शाह दिया गया है जो कि चीना नगर के रहने वाले है। इसी प्रकार से बाला लखन्दर के पिता का नाम जादूशाह प्रकाशित रूप में है तथा वे सुरुज-पुर के निवासी है। परन्तु मौखिक रूप में चन्दूशाह, दिल्ली शहर के निवासी बतलाये गये है।

लोकगाथा के मैथली रूप की कथा—मैथिल प्रदेशमें यह लोकगाथा 'बिहुला' अथवा 'बिहुलाविषहरी' के नाम से अभिहित किया, जाता है। लोकगाथा के बगला एव मैथिली रूप में बहुत समानता है। मैथिली रूप नौ खडो में प्रकाशित भी हो चुका है। मैथिली एव बगला रूप में विषहरी स्त्री के रूप में वर्णित है।

मैथिली रूप में कथा विषहरी से प्रारम्भ होती है। विषहरी की पाँच बहनें है तथा इनके पति का नाम नागबासुकी है। विषहरी का विवाह जब नागबासुकी से हो जाता तो वह गौरा पार्वती को किसी त्रुटि के कारण डस लेती है। शिव के कहने से वह उन्हे पुन जीवित कर देती है। इस पर शिव आशीर्वाद देते हैं। शिव ने यह भी कहा कि मृत्युलोक में तुम्हारी पूजा चम्पानगर का चादो सौदागर करेगा। विषहरी चाँदो सौदागर से आकर मिलती है और पूजा करने के लिये कहती है परन्तु चाँदो सौदगर, जो कि शिव का उपासक था, विषहरी को पूजने से अस्वीकार कर देता है।

होरे हमे नही पूजब रे दइबा कानी बगाखौकी रे।
होरे बेंगवा बेंगवी रे छिकौ तोहार आहार रे॥

इस पर विषहरी चाँदो से न पूजने का दुष्परिणाम बतलाती है।

होरे विपहरी पूजब रे वनियाँ भल फल पइबे रे।
होरे विपहरी न पुजबें रे वनिया वडे दुख देवो रे॥

इसके पश्चात् प्रमुख कथा प्रारम्भ होती है। विपहरी चाँदो के छ पुत्रो को मार डालती है। इसके पश्चात वाला लखन्दर का जन्म होता है और कुछ काल पश्चात् विहुला से उसका विवाह होता है। विपहरी उसको भी मारने के प्रयत्न में है। विहुला लोहबाँसघर (अचलघर) का निर्माण करवाती है। विपहरी की आज्ञा से नागिन का लोहबाँसघर मे जाना और वाला लख-

दर को काटना, विहुला का अपन पति के लाश के साथ नेतुला (नेतिया) धोविन के यहाँ जाना, उसकी सहायता से इन्द्र के यहाँ जाना और दरवार में नृत्य करना, विहुला की प्रार्थना पर मनमा देवी का आना और वालालखन्दर को जीवित करना तथा चादो सौदागर का मनसा देवी एव विपहरी आदि पाचो देवी को पूजा देने का वचन देना। यहाँ पर लोकगाथा समाप्त हो जाती है।

लोकगाथा के भोजपुरी रूप में विपहर को एक इर्ष्यालु व्राह्मण के रूप में चित्रित किया गया है तथा जिसे अन्त में दड भी मिलता है। प्रस्तुत भोजपुरी रूप में मनसा देवी की पूजा के विपय कुछ भी नही वर्णित है अतएव कथा की भावभूमि दूसरी हो जाती है। मैथिली रूप में मनसा देवी का उद्‌भव, विपहरी और चाँदो का झगडा तथा अन्त में मनसा देवी की ही कृपा से वाला लखन्दर का जीवित होना वर्णित है। चाँदो सौदागर भी विपहारी की पूजा करता है। इस प्रकार कथानक में उपर्युक्त विशेप अन्तर हो जाता है। भोजपुरी मौखिक रूप में देवी दुर्गा वाला को जीवन दान देती है। इसमें मनसा का उल्लेख नही है।

स्थानो तथा व्यक्तियो के नाम में विशेप अन्तर मिलता है। भोजपुरी रूप में लखन्दर के पिता का नाम चदूशाह है तथा जो दिल्ली शहर के निवासी हैं। मैथिली रूप में लखन्दर के पिता का नाम चान्दो सौदागर है जो चम्पानगर का निवासी है। भोजपुरी रूप में विहुला के पिता का नाम चीनाशाह है जो कि चीनानगर में रहता है। मैथिली रूप में विहुला के पिता का नाम 'वासू सौदागर' है जो कि उज्जैन का निवासी है।

भोजपुरी रूप में चम्पानगर का कही उल्लेख नही है। शेप सभी नाम एव स्थान समान हैं।

लोकगाथा के वगला रूप की कथा—भगवान शिव ने मनसा देवी से कहा कि जव तक चम्पकनगर निवासी चाद सौदागर तुम्हारी पूजा नही करेगा तव तक मृत्यु लोक में तुम्हारी पूजा नही प्रारम्भ होगी। यह सुनकर मनसादेवी चाद सौदागर के पास गई। शिवभक्त चाद सौदागर ने मनसा का तिरस्कार किया। मनमा ने क्रुद्ध कर हो उसके 'गउवाडी' नामक सुन्दर वगीचे को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। परन्तु चाद सौदागर ने अपने वल से पुन वगीचे को हरा भरा कर लिया। चाद सौदागर के पास महाज्ञान था। मनसा ने सुन्दरी का

धारणकर उसके महाज्ञान को हर लिया। उस पर भी चाद सौदागर नही डिगा। मनसा ने चाद सौदागर के छ पुत्रो को मार डाला। सोनिका (चाद की स्त्री) को इससे बडा दुख हुआ, परन्तु चाद ने कोई परवाह न की। वह समुद्र यात्रा के लिए निकल पडा। मनसा ने उसके जहाज को डुबा दिया। चाद सौदागर को मनसा ने सहायता देनी चाही परन्तु चाद ने इस विपत्ति में भी उसकी सहायता न ली। वह किसी तरह बचकर अपने मित्र चन्द्रकेतु के घर पहुँचा। चाँदसौदागर बिल्कुल दरिद्र हो गया। उसने द्वार द्वार भिक्षा मागना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु प्रत्येक ओर से उसे अनादर मिला। किसी प्रकार वह घर लौटा। उसके पुन एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम 'लक्ष्मीन्द्र' रखा गया। निछानीनगर के शाह बनिया के यहा बेहुला ने जन्म लिया। बडे होने पर बेहुला और लक्ष्मीन्द्र (लखीन्दर) का विवाह हुआ। सोहाग रात के लिए सताई पहाड पर लोहे का घर बनवाया गया। मनसा ने कारीगर से उसमें एक छेद करने के लिए कहा। उस घर में जाने के पहले तीन अपशकुन हुए। परन्तु वर-वधू उसमें ले जाये गये। मनसा ने उदयनाग और कालदन्त को भेजा। बेहुला गभीर निद्रामें निमग्न हो गई। साप ने लखीन्दर को काट लिया। बेहुला अपने मृत पति को नदी के मार्ग से नेता धोबिन के यहा ले गई। नेता के मृत बालक को उसने जीवित कराया। नेता उसे इन्द्र के दरबार में ले गई। बेहुला ने मनसा की प्रार्थना की। मनसा ने प्रसन्न होकर लखीन्दर को जीवित कर दिया। बेहुला अपने पति के साथ भेष बदलकर निछानीनगर गई। उसके पश्चात् वे चम्पकनगर पहुँचे। चाद सौदागर ने मनसा के महात्म्य को स्वीकार किया और उसकी पूजा मृत्यु लोक में प्रारम्भ हो गई।

इस प्रकार से हम देखते है कि बिहुला की लोकगाथा, कथानक और चरित्र की दृष्टि से बहुत अश तक भोजपुरी रूप से मिलती जुलती है। लोकगाथा का बगला रूप अत्यन्त बृहद् है। इसमें चाद सौदागर को बिहुला से भी अधिक महत्व मिला है। बिहुला एक साधन है जिसके द्वारा मनसा विजय प्राप्त करती है।

स्थानो एव चरित्रो के नाम में भी कम अन्तर मिलता है। बगला रूप में बगाल के स्थानो का ही वर्णन आया है। वास्तव में लोकगाथा का प्रतिनिधि रूप बगला ही है। यही से यह लोकगाथा अन्य प्रदेशो में गई है। अन्य प्रदेशो में पहुँचते पहुचते कथा के भाव मे थोडा अन्तर पड गया है, यद्यपि प्रमुख चरित्र वही है। भोजपुरी रूप मे 'मनसा देवी' का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है।

लोकगाथा की ऐतिहासिकता

विहुला की लोकगाथा के अनेक रूपो पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रस्तुत लोकगाथा शाक्तमत से सबध रखती है। शाक्तमत के अन्तर्गत देवताओ के स्थान पर देवियो का अधिक समावेश है। प्रमुख रूप से उसमें दुर्गा, काली, भवानी, शीतला, तथा मनसा देवी का वर्णन है। इन सबको जगन्माता कहा गया है। ईश्वर की मातृस्वरूप में पूजा कब से प्रारभ हुई इसका स्पष्ट इतिहास नही प्राप्त होता है। वैदिक-युग में, इस प्रकार की पूजा का उल्लेख नही प्राप्त होता है।[१]

हिन्दू धर्म के अनुसार चडी और महिषासुर का युद्ध सत्ययुग के प्रारभ मे हुआ था, परन्तु इसका उल्लेख वेद के अन्तर्गत नही है[२]। अतएव यह निश्चित है कि वैदिक युग के पश्चात् ही, सभवत ब्राह्मणयुग में शाक्तमत का आविर्भाव हुआ होगा। इसी समय से 'शक्ति' को स्त्री रूप में मानकर उसकी पूजा प्रारभ की गई होगी। दुर्गा और चडी का इतिहास इसी समय से प्रारभ होता है। डा० दिनेश चन्द्र सेन के कथनानुसार शक्तमत के कुछ रूप चीन देश से आये जान पडते है। तत्रो में इस प्रकार की पूजा विधि मिलती है जो आज भी चीन में वर्तमान है।[३]

वास्तव में शाक्तमत का उद्भव अनार्यपूजा से है। वैदिक युग में आर्य लोगो में ईश्वर को स्त्री रूप में नही देखा जाता था। उस समय अनार्यों में इस प्रकार की पूजा वर्तमान थी तथा जिसका प्रभाव भी वहुत व्यापक था। आर्यों की सामजस्य नीति ने धीरे धीरे इन उपासनाओ को अपनाना प्रारभ किया। उसे वे विशुद्ध सस्कृत रूप देने लगे और इस प्रकार से धीरे धीरे आर्य जाति में शक्ति पूजा का भी विकास हो गया। शक्ति पूजा आर्य परिधि के अन्तर्गत आते ही नही लोकप्रिय हो गई, अपितु उसके लिए अनेक प्रयत्न करने पडे। उस समय के प्रचलित शैव धर्म से उसे टक्कर लेना पडा। शताब्दियो के सघर्ष के पश्चात 'शाक्तमत' भी अपना प्रमुख स्थान निर्माण कर पाया। शाक्तधर्म के विस्तार के साथ साथ अनेक कथाओ, गीतो एव गाथाओ का भी विकास हुआ। उन्ही में 'विहुला' की लोकगाथा एक प्रमुख स्थान रखती है।

१—डा० दिनेश चन्द्र सेन-हि० आ० दी बें० लें० एण्ड लिट० पृ० २५०

२—वही

३—वही

'विहुला' में सर्प पूजा को विशेष स्थान दिया गया है। सर्प पूजा के विषय में डा० इवान्स ने क्रीट देश में ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त किये है। उनके अनुसार ईसा के तीन हजार वर्ष पूर्व सर्पों की पूजा ससार में प्रत्येक स्थान पर होती थी।[1] इस प्रकार सर्प पूजा भी एक अनार्य पूजा थी। आर्यों ने इसे भी अपना लिया। महाभारत काल में नागवश की कन्या उलूपी से अर्जुन ने विवाह किया था। भगवान विष्णु को शेषशायी बतलाया गया है। इस प्रकार से सर्पों से सबधित मनुष्य जाति का भी इतिहास हम पाते है। अब यह पूजा पूर्ण रूप से आर्य पूजा हो गई है। वर्तमान समय में भी भारतवर्ष में नागपूजा का अत्यन्त महत्व है। नागपचमी के अवसर नागदेव की पूजा प्रत्येक घर में होती है। तत्रशास्त्र में सर्प की महिमा का विशद् वर्णन मिलता है। प्रस्तुत लोकगाथा भी सर्प पूजा के इतिहास को बतलाती है। साधारण जन समाज का मत है कि विहुला के जन्म के पश्चात् ही सर्प अथवा 'मनसा देवी' की पूजा प्रारम्भ हुई है। डा० दिनेश चन्द्र के मतानुसार मनसा पूजा वगाल में ही प्रारम्भ हुई। दक्षिण बगाल में निरन्तर वर्षा होते रहने के कारण सर्पों का अत्यधिक निवास है। यहाँ के लोगो ने सापो के भय के कारण उसे देवी देवता का रूप दे दिया है। अधिकाश लोग सर्पों को देवी मान कर उसकी पूजा करते हैं। चैतन्य भागवत में, जिसकी रचना १५३६ ई० में हुई थी, मनसा देवी की पूजा का उल्लेख मिलता है।[2]

वगला साहित्य में 'मगल काव्य' प्रमुख स्थान रखता है। 'मगल काव्य' के अन्तर्गत तीन प्रमुख भाग है। प्रथम 'धर्म मगल' काव्य है जिसमें धार्मिक देवी देवताओ, उत्सवो एव पूजाओ के विषय में प्राचीन कवियो की रचना मिलती है। द्वितीय 'चडी मगल' काव्य है, जिसमें चडी देवी के प्रताप का वर्णन अनेकानेक कवियो ने की है। तृतीय 'मनसा मगल' नामक काव्यों की परम्परा आती है। इसके अन्तर्गत प्राय साठ रचनायें प्राप्त होती हैं। यह सभी रचनायें मनसा-देवी की महिमा के हेतु लिखी गई हैं। 'मनसा मगल' में ही विहुला की लोक-गाथा स्थान रखती है। 'मनसा मगल' सम्बन्धी रचनाओ में सर्व प्रथम नाम हरिदत्त का आता है जिन्होने वारहवीं शताब्दी में मनसा देवी की प्रशसा में रचनायें की थी।[3]

१—डा० दिनेश चन्द्र सेन हि० आफ० दी वें० ल० एट लिट० है २६७

२—वही—पृ० २५२

३—वही—पृ० २७७

'मनसा मगल' के प्रथम रचयिताओ में क्षेमानद एव केतक दास का नाम आता है। तीन सौ वर्ष से भी पूर्व इनके द्वारा रचित 'पाचालि ग्रन्थ' नामक पुस्तक उपलब्ध होती है। इसमें मनसा देवी की वदना के साथ विहुला की कथा सविस्तार दी हुई है। मनसा-मगल की परम्परा में मगल कवि (जो जाति का कायस्थ था) का नाम आता है। उसके अनुसार विहुला की कथा चैतन्य के पहले प्रारम्भ हुई थी।[१]

क्षेमानद एव केतक दास द्वारा प्रस्तुत कथा में दो खड है। प्रथम है देव खड तथा द्वितीय मनुष्य खड। देव खड में मोथोनपाला (अमृत मथन) तथा ऊपाहरण, इत्यादि का स्थान आता है तथा मनुष्य खड में विहुला लखन्दर का स्थान आता है।[२]

मोथोन पाला में अमृत मथन, विप की उत्पत्ति, शिवजी का विष पी जाना तथा मनसादेवी का शिव की रक्षा करना वर्णित है।

ऊपाहरण में ऊपा और अनिरुद्ध की कथा वर्णित है। ऊपा और अनिरुद्ध मृत्युलोक में विहुला और लखन्दर के रूप में जन्म लेते हैं तथा मनसादेवी लखन्दर को जीवन दान देती हैं। इसके अन्तर्गत वडे विस्तार से विहुला की कथा वर्णित है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि विहुला की लोकगाथा का वास्तविक स्वरूप वगला साहित्य के 'मगल काव्य' में प्रमुख स्थान रखता है। विहुला का चरित्र पौराणिक देवियो के समान चित्रित है। इसकी ऐतिहासिकता पर अभी तक कोई निश्चित प्रकाश नही डाला जा सका है। लोकगाथा के वगला रूप में आये हुये स्थानो के द्वारा भी कुछ निश्चित इतिहास का पता नही चलता है। वगाल में यह लोकगाथा इतनी लोकप्रिय है कि वगाल के नौ जिले इसे अपने यहाँ की घटना वतलाते हैं। महाकवि होमर के विपय में भी इसी प्रकार झगडा ग्रीस देश के राज्यो में है। वहाँ के सात राज्य होमर को अपने यहाँ का मानता है।

लोकगाथा में चम्पकनगर एक प्रमुख स्थान का नाम है। चाँद सौदागर इसी नगर का सर्वश्रेष्ठ श्रेष्ठि था। वगाल, आसाम तथा दार्जिलिग आदि

१—ज्योतिन्द्र मोहन भट्टाचार्या—'मनसा मगल' भूमिका भाग पृ० १-८३

२—वही

स्थानो में चम्पकनगर नामक स्थान है जिनसे कि इस लोकगाथा का सबन्ध बतलाया जाता है।[१]

(१) बगाल के बर्दवान जिले में चम्पकनगर है। ऐसा विश्वास है कि चाँद सौदागर की राजधानी यही थी। इसी चम्पकनगर के समीप बेहुला नामक एक छोटी नदी भी बहती है, जो कि लोकगाथा की नायिका बिहुला के नाम पर ही रखा गया प्रतीत होता है।

(२) बगाल के टिपरा जिले में भी चम्पकनगर है। यहा के लोग चाँद सौदागर को इसी स्थान का बतलाते हैं।

(३) आसाम में ढुबरी नामक स्थान है। लोगो का विश्वाम है कि चाँद सौदागर इसी स्थान का निवासी था।

(४) बोगरा जिले में महास्थान नामक एक कस्बा है। इसे भी चाद सौदागर से सबन्धित बतलाया जाता है।

(५) दार्जिलिंग के लोगो का विश्वास है कि मनसा मङ्गल में वर्णित घटनाए रानीत नदी के समीप ही घटी थी।

(६) दिनाजपुर जिले में कान्तानगर के समीप सनकानगर स्थित है। लोकगाथा मे चाँद सौदागर की स्त्री का नाम सनका है। ऐसा विश्वास है कि चाँद सौदागर और सनका यही के निवासी थे तथा सनका के नाम पर ही इस नगर का नाम पडा है।

(७) मालदह जिले में भी चम्पाईनगर स्थित है। घटना का सबन्घ यहाँ से भी बतलाया जाता है।

(८) वगाल के बीरभूम जिले में बिहुला के आदर में प्रत्येक वर्ष मेला लगता है। ऐसा विश्वास है कि यह मेला बिहुला के समय से ही प्रारम्भ हुआ है।

(९) चिटगाँव में एक स्थान पर एक मकान है जिसे कालूकामार का घर कहते हैं। कालूकामार ने ही विहुला के लिये लाहे का घर वनवाया था। इसी के घर के समीप एक पोखरा है जिसे चाँदपोखर कहते हैं।

१—डा० दिनेश चन्द्रसेन-हिस्ट्री आफ बेंगाली लैंगुएज एण्ड लिटरेचर पृ० २५६-२५७

(१०) विहार के भागलपुर जिले में चम्पानगर है। यहाँ एक वहुत पुराना घर है, जिसे विहुला का 'अचलघर' समझा जाता है। यहाँ भी श्रावण में मेला लगता है तथा विहुला की पूजा होती है।

इस प्रकार लोकगाथा मे सवधित हमें अनेक स्थानो का पता चलता है, परन्तु किसी भी स्थान पर कोई ऐतिहासिक चिन्ह नही प्राप्त होता है जिससे ऐतिहासिकता को निश्चित किया जा सके। अतएव विहुला भी पौराणिक देवियो की परम्परा में आ जाती है। उसकी गाथा एक सर्वव्यापक लोकगाथा वन गई है। अव वह किसी एक स्थान की नही है अपितु सर्वकल्याणमयी है।

विहुला का चरित्र—लोकगाथा में विहुला का चरित्र प्रमुख है। वाला लखन्दर तो लोकगाथा के प्रमुख भाग में मृत पडा हुआ है। विहुला के महान् प्रयत्नों से ही वह पुन जीवित होता है।

विहुला का जीवन पातिव्रत धर्म का एक मूर्तिमत प्रतीक है। भारतीय स्त्री के लिए पति ही परमेश्वर है, इस लोकगाथा में यह भाव पूर्णतया चित्रित है। विहुला, नारी समाज को एक सन्देश देती है कि स्त्री अपने गुणो एव तपस्या से मृत को भी जीवित कर सकती है। सतयुग में यह सन्देश सती सावित्री ने दिया था जिसकी पूजा आज घर घर में वट सावित्री के नाम से होती है। कलियुग में पति सेवा का अन्यतम उदाहरण विहुला ने प्रस्तुत किया है। यह घटना शताब्दियों पूर्व हुई परन्तु आज भी भारत के पूर्वीय भाग मे श्रावण मास में इसकी पूजा होती है, तथा लोग उसकी जीवनकथा का श्रवण करते है।

विहुला का जीवन एक सघर्ष का जीवन है। उसका जीवन कठिन परीक्षाओ में ही वीता। चन्द्रूशाह से तथा मनसा से अनवन हुई, और इस झगडे का परिणाम भुगतना पडा विहुला को। विहुला के लिए तो यह जीवन-मरण का प्रश्न था। पति के विना स्त्रीजीवन की अभिव्यक्ति शून्य है। अतएव विहुला ने सतीत्व के चुनौती को स्वीकार किया। वह समस्त समाज से लडी, स्वर्ग में सदेह गई, और अन्त में अपने कर्तव्य से मनसा देवी को उसने प्रसन्न कर ही लिया। मनसा देवी की मनोकामना पूर्ण हुई। उसकी पूजा ससार में व्याप्त हो गई। परन्तु विहुला का विजय मनसा से भी श्रेष्ठ था। उसने समस्त ससार में पतिव्रत धर्म का, कर्मठ जीवन का महान् आदर्श रखा। समस्त स्त्री समाज में उसने चेतना उत्पन्न की जो कि आज के जीवन में परिलक्षित है। मनसा देवी का भी महत्व विहुला के कारण ही मिला। विहुला जैसी सती स्त्री न होती तो मनसा की मनोकामना कैसे पूरी होती। फिर कौन उसे समाज में पूजता ?

बिहुला के जीवन का कर्तव्य उसके पति तक ही नही सीमित रहता है अपितु वह अपने पति के छ बड़े भाइयो को भी पुन जीवित कराती है। नेता धोबिन की सेवा करती है तथा उसके पुत्र को भी मृत्यु मुख से बचाती है। वह सत्य के पथ पर चलने वाली देवी है, इसी कारण स्वर्ग की अप्सरायें एव देवी दुर्गा भी उसकी सहायता में तत्पर है। अपने कर्तृत्व शक्ति का उसे तनिक भी अभिमान नही है अपितु वह एक नम्र एव क्षमाशील देवी है। वह अपने ऊपर किए गए अत्याचारो का बदला क्षमा से लेती है। वह अपने श्वसुर को क्षमा करती है, अपने मामा को क्षमा करती है तथा काली नागन को भी क्षमा करती है।

बिहुला अपनेचरित्र से समाज को एक सदेश देती है कि लक्ष्मी ही सब कुछ नही है। प्रकृति के सहारी प्राणी भी कल्याणमय हो सकते है तथा मनुष्य की सहायता कर सकते है, यह सन्देश बिहुला के चरित्र से मिलता है। मानव समाज में सर्पों से बहुत घृणा है। परन्तु आज भी धार्मिक व्यक्ति सर्प को देव स्वरूप मानता है। अकारण उसे मारने का प्रयत्न नही करता है।

बिहुला का चरित्र समस्त नारी जाति को उच्च बनाने में सहायक सिद्ध हुआ है भले ही यह लोकगाथा निम्नश्रेणी में प्रचलित है, परन्तु जीवन में श्रद्धा, प्रेम एव कर्तव्य का जो सुन्दर चित्रण इस लोकगाथा में वर्णित है, वैसा अन्य साहित्य में क्वचित ही प्राप्त होता है।

अध्याय ६

भोजपुरी योगकथात्मक लोकगाथा का अध्ययन

भोजपुरी लोकगाथाओ के अन्तिम वर्ग में योगकथात्मक लोकगाथाओ का स्थान आता है। योगकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत 'राजा भरथरी' एव 'राजा गोपीचन्द' की लोकगाथाए आती हैं। जिस प्रकार से वीरकथात्मक लोकगाथाओ मे 'लोरिकी' की लोकगाथा अहीर जाति से सम्बन्ध रखती है। उसी प्रकार से प्रस्तुत दोनो लोकगाथाए एक जाति एव एक मत से सम्बन्ध रखती हैं। वह जाति जोगियो की है, तथा वह मत नाथ सप्रदाय है। एक जाति विशेष एव मत विशेष से सम्बन्ध रखती हुई भी यह लोकगाथाए आज समस्त समाज की लोकगाथाए हैं। नगरो तथा गावो, शिक्षितो तथा अशिक्षितो में, प्रत्येक समुदाय में ये लोकगाथायें बड़े चाव से सुनी जाती हैं। 'आल्हा' के पश्चात यह दोनो लोकगाथाए ही केवल नगरो में पदार्पण कर सकी हैं। समय समय पर जोगियो के झुड सारगी लिये हुये हमें नगर के बाजारो एव गलियो में दिखाई पड़ते हैं। ये गोपीचन्द, भरथरी तथा निर्गुण गाकर भिक्षा माँगते हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ म केवल इसी वर्ग की लोकगाथाओ द्वारा गायक जीविकोपार्जन करते हैं।

नाथ सप्रदाय से सम्बन्ध रखने के कारण ही इन लोकगाथाओ को योग-कथात्मक लोकगाथाए नाम दिया गया है। इसमें भरथरी एव गोपीचन्द के राजपाट, वैभव विलास त्याग कर गुरु गोरखनाथ एव जालधरनाथ के शिष्य होकर योगी रूप धारण करने की कथा वर्णित है। नाथ सप्रदाय के अनेक नामो में 'योगीमार्ग' नाम भी आता है। अतएव प्रस्तुत लोकगाथाओं को 'योग-कथात्मक लोकगाथा' कहना उचित है।

जोगी समुदाय—योगकथात्मक लोकगाथाओ के गायको के विषय में यहाँ विचार कर लेना अनुपयुक्त न होगा। क्योंकि जोगियो की जाति भारतवर्ष मे विशेष स्थान रखती है। लोकगाथाओ को एकत्र करते समय जोगियो से जो भी तथ्य प्राप्त हो सके हैं, उन्हें नीचे दिया गया है।

(१) जोगी नामक एक अलग जाति इस देश में अपना अस्तित्व रखती है। यद्यपि इनकी गणना हिन्दू जाति के अन्तर्गत होती है, परन्तु इनके जीवन

और परपरा से यह स्पष्ट होता है कि चार वर्णों से इनका कोई सम्बन्ध नही है।

(२) ये लोग शिव को अपना ईश्वर तथा गुरु गोरखनाथ को अपना गुरु मानते हैं। वस्तुत: इनकी दार्शनिक विचार धारा अत्यन्त उलझी हुई है। इन अपढ जोगियो से कुछ स्पष्ट पता नही चलता है। इतना निश्चित है कि इनका सम्बन्ध नाथ सम्प्रदाय से है। किन्तु ये लोग अन्य देवी देवता, राम, कृष्ण, हनुमान इत्यादि सबको मानते हैं।

(३) इनकी सामाजिक रीतियाँ साधारण हिन्दुओ की भाँति है। इनके विवाहसस्कार, श्राद्धसस्कार इत्यादि साधारण हिन्दू गृहस्थ की भाति होते हैं।

(४) जोगियो का अलग अलग झुड होता है। प्रत्येक झुड का एक मुखिया अथवा महत रहता है। महत की आज्ञा लेकर ही ये लोग भिक्षा माँगने निकलते हैं। अन्य सामाजिक कार्य भी उन्ही के अनुमोदन से करते हैं।

(५) जोगी लोग भगवा वस्त्र पहनते हैं। सर पर भगवे रग की पगडी, शरीर पर एक ढीला कुरता तथा भगवे रग की गुदडी, एक बडी झोली तथा एक सारगी। धोती का रग भी भगवा होता है, अथवा सादा भी रहता है।

(६) इनके जीवन मे विशेष सयम नही दिखलाई पडता है। यद्यपि ये भगवा वस्त्र पहनते हैं, परन्तु साथ ही गाँजा, चरस, भाँग, धतूरा, पान बीडी, सुरती इत्यादि इनके अनिवार्य अग हैं। जोगी लोग अब मास मदिरा भी खाने पीने लगे हैं।

नाथ सप्रदाय से सम्बन्ध होने के कारण इन जोगियो का कुछ महत्व है। इसी कारण अनेक भारतीय एव पाश्चात्य विद्वानो ने इनके विषय में गवेषणाए की हैं। इनमें से प्रमुख आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा श्री डब्ल्यू० क्रुक हैं।

'कबीर' नामक पुस्तक की प्रस्तावना में सन्तकबीर की जाति निश्चित करने के विवरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने जोगियो का भी उल्लेख किया है। वयन जीवियो की अनेक उपजातियो पर विचार करते हुये उन्होने जोगियो के विपय में लिखा है कि 'जोगी जाति का सम्बन्ध नाथपथ से है।

जोगी नामक आश्रम भ्रष्ट घर वस्तियो की एक जाति सारे उत्तर और पूर्व भारत में फैली थी। ये नाथपथी थे, कपडा बुनकर और सूत कात

कर या गोरखनाथ और भरथरी के नाम पर भीख मांगकर जीविका चलाया करते थे।"[१]

श्री डब्ल्यू० क्रुक के कथनानुसार भी जोगियो की जाति का सम्बन्ध नाथ-पथ से है। उत्तरी भारत के जोगी लोग गुरु गोरखनाथ को अपना गुरु मानते हैं।[२] इन्होंने हिन्दू योगी और नागपथी जोगियो के भेद को भी स्पष्ट किया है। इनके कथनानुसार एक जोगी वे होते हैं जो पातजल हठयोग के अनुसार योगिक क्रिया करते है। ये लोग हिन्दू शास्त्र सम्मत विधि से जीवन व्यतीत करते हैं। दूसरे जोगी वे होते हैं, जो कि नाथ धर्म के अन्तर्गत आते हैं। ये लोग नाथधर्म में वर्णित जोगी वस्त्र पहनते है। इनके कई प्रकार होते है जैसे, औघड, कनफटा, नन्दिया भड्डर तथा भरथरी जोगी। इनमें भड्डर जोगी मुसलमान जाति के होते है।[३]

उत्तरी भारतवर्ष में ही नही अपितु समस्त भारत में जोगियो की जाति फैली हुई है। दक्षिण भारत में भी जोगियो के अनेक प्रकार मिलते है जिनमें से प्रमुख घोड्डियाँ तथा जोट्टियाँ जोगी है। अधिकाश में ये शूद्र होते हैं तथा अनार्य देवताओ की पूजा करते हैं।[४]

वगाल में भी जोगियो की वहुत वडी वस्ती है। ये लोग 'जुगी' अथवा जोगी कहलाते है। यहाँ जोगियो में भिक्षा मांगने का कार्य समाप्त होता जा रहा है। ये लोग हिन्दू परिधि में वडी तेजी के साथ आ रहे हैं और अपने नाम के पीछे या पहले शर्मा या पडित भी लगाते है।[५]

इस प्रकार से हम समस्त भारत में जोगियो का विस्तार पाते है। वस्तुत अव इनका प्रभाव समाप्त होता जा रहा है। ये विशुद्ध हिन्दुत्व की ओर आकर्षित होते जा रहे हैं। परन्तु इन्हें आज भी निम्न दृष्टि से देखा जाता है। इसका प्रधान कारण यह है आश्रम भ्रष्ट व्यक्तियो को आज भी हिन्दू समाज में आदर नही है। डा० हजारी प्रसाद लिखते है कि जव तक सन्यासी अपने

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी-कवीर—पृ० ११-१४

२—डब्ल्यू० क्रुक—ट्राइब्स ऐण्ड कास्ट्स आफ नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज ऐन्ड अवध। वाल २ पृ० ५९

३—डब्ल्यू क्रुक—ट्रा० एड का० आफ ना० वे० एड अ० वाल २ प० ५९

४—ई० थर्स्टन—कास्ट्स एड ट्राइवल इन्डिया, वाल्न २ पृ० ४८४-८५

५—हजारी प्रनाद द्विवेदी—कवीर, पृ० ८

१—आदिनाथ
२—मस्येन्द्रनाथ
३—गोरखनाथ
४—गाहिणीनाथ
५—चर्पटनाथ
६—चौरगी नाथ
७—ज्वालेंद्र नाथ
८—भर्तनाथ
९—गोपीचन्दनाथ

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'योगिसप्रदाय आविष्कृति' नामक ग्रन्थ में वर्णित नवनाथों की सूची इस प्रकार प्रस्तुत की है[१] —

१—मत्स्येन्द्र नाथ
२—गाहिनीनाथ
३—ज्वालेन्द्रनाथ
४—करणिपानाथ
५—नागनाथ
६—चर्पटनाथ
७—रेवानाथ
८—भर्तृ नाथ
९—गोपीचन्द्र नाथ

उपर्युक्त सूची में 'आदिनाथ' और 'गोरखनाथ' का नाम नही दिया हुआ है। सत ज्ञानदेव की गुरुपरम्परा में गोपीचन्द्र की माता मैनावती का नाम तो दिया है, परन्तु गोपीचन्द तथा भर्तृनाथ का उल्लेख नही मिलता है।

इस प्रकार से नवनाथो के अतर्गत हमारे लोकगाथाओ के नायक भरथरी और गोपीचन्द का भी नाम आता है। भरथरी और गोपीचन्द नवनाथो में वर्णित ज्वालेंद्रनाथ (जलधर नाथ) के तथा गोरखनाथ के शिष्य थे। इन दोनो व्यक्तियो की जीवन गाथा अत्यन्त रोचक होने के कारण जोगियो ने इसे विशेष रूप से अपना लिया। जोगियो द्वारा प्रचार के कारण समाज में गोरखनाथ के पश्चात् नाथ परपरा में भरथरी और गोपीचन्द के नाम से ही लोग अधिक परिचित हैं।

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सप्रदाय—पृ २५

लोकगाथाओं की गाने की पद्धति—योगकथात्मक लोकगाथाओं को जोगी लोग सारगी पर गाते हैं। यह लोकगाथाए अत्यन्त करुण स्वर में गाई जाती हैं। इनमें स्वर और लय की प्रधानता रहती है, परन्तु स्थायी और अतरा का कोई निश्चित निर्देश नही रहता। वस्तुत लोकगाथाए कथोपकथन में गाई जाती हैं। राजा भरथरी का अपनी रानी सामदेई से सवाद, तथा राजा गोपीचद का का माता मैनावती एव बहन बीरम से सवाद, लोकगाथा में वर्णित है। अत-एव जोगी लोग भी इन्ही सवादो पर स्वर चढाकर गाते हैं। उनकी सारगी को 'गोपीचदी' भी कहा जाता है।

राजा भरथरी

समस्त उत्तरी भारत मे 'राजा भरथरी' की गाथा एक अत्यन्त लोकप्रिय लोकगाथा है। जोगियो के द्वारा यह लोकगाथा अन्य जनपदी बोलियो में भी प्रचलित हो गई है। लोकगाथा का भोजपुरी रूप ही प्रतिनिधि रूप प्रतीत होता है। क्योकि अन्य प्रदेशो मे गाई जाने वाली राजा भरथरी के गीत का कथानक एव रूप भोजपुरी से पूर्णतया साम्यता रखती है।

नाथ सम्प्रदाय के परवर्ती सत परम्परा के अन्तर्गत भरथरी का नाम आता है। अपने त्याग और तपस्या के कारण ये बहुत ही महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गये और इनका नाम नवनाथो के अन्तर्गत आ गया। इन्होने नाथ परम्परा के अन्तर्गत 'वैराग्यपथ' का भी प्रचार किया। इनके प्रधान शिष्यो में माईनाथ, प्रेम नाथ तथा रतन नाथ का उल्लेख होता है।[1]

प्रस्तुत लोकगाथा में भरथरी के दार्शनिक पक्ष को न प्रस्तुत करके उनके जीवन का विवरण दिया हुआ है। इसमें राजा भरथरी के वैराग्य लेने की कथा वर्णित है। राजा भरथरी एव रानी सामदेई का विवाह, रानी सामदेई का अपने पूर्व जन्म की कथा बतलाना तथा भरथरी का वैराग्य लेकर गुरु गोरखनाथ का शिष्यत्व ग्रहण करना, इस लोकगाथा मे वर्णित है। नारी के प्रति आकर्षण रहित होना नाथ सम्प्रदाय के दार्शनिक पक्ष का मुख्य अग था। अतएव गोरखनाथ ने भरथरी से रानी सामदेई को 'माँ' सम्बोधित करवा कर परीक्षा ली है। इस प्रकार से इस लोकगाथा में नाथ धर्म के व्यावहारिक पक्ष का सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है।

सक्षिप्त कथा—प्रस्तुत लोकगाथा में दो कथा वर्णित है। प्रथम, राजा भरथरी का वैराग्य लेकर चलना और रानी सामदेई का रोकना तथा पिंगला द्वारा रानी सामदेई के पूर्व जन्म की कथा कहना। दूसरी कथा है, राजा भरथरी का वन में मृग का शिकार करने जाना और वैराग्य भाव का उदय होना तथा गोरखनाथ का शिष्यत्व ग्रहण करना।

राजा भरथरी जब योगी का वेष धारण कर चलने लग तो रानी सामदेई ने उनका उत्तरीय पकड लिया और कहने लगी कि 'हे राजा उस दिन का तो तुम

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी नाथ सम्प्रदाय—पृ० १५१

ध्यान करो जिस दिन तुम मौर चढाकर आये थे और मैने तुम्हारे गले मे जय-माला डाली थी और तुमने मेरी माँग में अमर सुहाग भरा था। अभी तक गवने की पहनी हुई पीली धोती का दाग तक नही छूटा है, क्या इसी दिन के लिये तुम मुझे ब्याह लाये थे ?' इस पर राजा भरथरी ने जन्म कुडली में लिखित वैराग्य का उल्लेख किया। रानी सामदेई को तब भी सतोष नही हुआ। इस पर भरथरी ने रानी से प्रश्न किया कि, 'हे रानी यह बतलाओ कि जिस दिन तुम्हें गवना कराकर ले आया था, उसी दिन रात्रि में तुम्हारे पलग पर चढ़ते ही पलग की पाटी क्यो टूट गई ?' रानी सामदेई ने उत्तर दिया कि 'पलग टूटने का भेद मै तो नही जानती, परन्तु मेरी छोटी बहिन पिंगला जानती है'। पिंगला का विवाह दिल्लीगढ में हुआ था। राजा भरथरी ने पत्र भेज कर पिंगला को बुलवाया और उससे पलग टूटने का भेद पूछा। पिंगला ने कहा कि, 'हे राजा ! रानी सामदेई पिछले जन्म में तुम्हारी माता थी, इसी कारण पलग की पाटी टूट गई, अब तुम्हें भोग करना हो तो भोग करो अथवा जोग करना हो तो जोग करो।' यह सुन कर राजा उदास हो गया।

राजा भरथरी ने रानी सामदेई से शिकार खेलने का पोशाक मांगा। पोशाक पहनकर तथा घोडे पर चढकर राजा भरथरी सिहल द्वीप में शिकार खेलने चला गया। वह उस वन में पहुँचा जहाँ एक काला मृग रहता था, जो कि सत्तर सौ मृगिणियो का पति था। राजा का खेमा गडते हुए जब मृगिणियो ने देखा तो वे दौडती हुई राजा के पास पहुँची और पूछने लगी कि, 'हे राजा ! तुम यहाँ क्यो आए हो। अपने दिल का भेद बताओ।' इसपर डपटकर राजा भरथरी बोला कि, 'मैं यहाँ शिकार खेलने आया हूँ तथा काला मृग को मारकर उसके खून का पान करूँगा।' इसपर मृगिणियाँ बोली कि, 'हे राजा ! यदि तुम्हें शिकार खेलने और खून पीने का शौक है तो हम में से दो चार का शिकार कर लो।' राजा भरथरी ने उत्तर दिया कि, 'मै तिरिया के ऊपर हाथ नही छोडता हूँ, यह तो कलक की बात होगी।' यह सुनकर सत्तर सौ मृगिणियो में से आधी तो वहा राजा से बहस करने के लिये रुक गई और आधी काले मृग को वन में ढूढने चली गई। काला मृग बीच जगल में घूम रहा था। मृगिणियो ने वहाँ पहुँचकर कहा कि, 'हे स्वामी ! आज के दिन जगल छोड दीजिये, आज राजा भरथरी आप का शिकार खेलने आये है।' इसपर काले मृग ने उत्तर दिया कि, 'हे मृगिणियो सुनो, तुम लोग स्त्री जाति की हो इसलिए बात-बात में डर जाती हो। भला राजा मुझे क्यो मारेगा, उसका मैने क्या बिगाड़ा है ?' यह सुनकर मृगिणियाँ रोने लगीं और कहने लगी कि 'हे स्वामी ! आज जंगल छोड़ दो नही तो हम सभी राड़ हो जायंगी।'

काले मृग को अब कुछ परिस्थिति गभीर प्रतीत हुई। वह उडकर आकाश में गया, परन्तु वहां उसका ठिकाना न लगा। वहाँ से उडकर वह नैपाल के राजा के यहाँ गया, पर वहाँ भी उसका ठिकाना न लगा। मृगा हताश होकर राजा भरथरी के सम्मुख-पहुँचा और झुककर सलाम किया। राजा ने मृग को देखते ही धनुष पर तीर चढ़ाकर मारा। पहले तीर से तो कालामृग को ईश्वर ने वचा लिया। दूसरे तीर से गगा जी ने बचा लिया। तीसरे तीर से बनसप्ती देवी ने बचाया, चौथा और पाचवा गुरू गोखनाथ ने, छठा तीर मृग ने अपने सीग पर रोक लिया, परन्तु सातवें तीर से मृग घायल होकर गिर पडा।

मरते समय अत्यन्त करुण स्वर से काला मृग बोला कि, 'हे राजा! मुझे तो आपने मार दिया, मैं तो सीधे सुरधाम जाऊँगा। मेरी आँख को निकाल कर रानी को देना जिससे वह शृगार करेगी, सीघ निकाल कर किसी राजा को देना जो अपने दरवाजे की शोभा बढायेगा। खाल खिचवाकर किसी साधू को देना जिसपर वह आसन लगावेगा। शेष मेरा मास तुम तल कर खा जाना।' यह कह कर मृग ने राजा को श्राप दिया कि, "जिस प्रकार मेरी सत्तर सौ मृगिनियाँ कलपेंगी, इसी प्रकार तुम्हारी रानियाँ भी तुम्हारे बिना विलाप करेंगी।" राजा भरथरी ने जब यह सुना तो उसके हृदय पर चोट लगी। राजा विचार करने लगा कि आज यदि मृग को नहीं जिलाया जायगा तो सत्तर सौ मृगिणियो का कलपना लगेगा। यह सोचकर उसने काले मृग को घोडे पर लाद लिया और बावा गोरखनाथ के पास पहुँचा। गोरखनाथ, देखते ही बोले कि, 'वच्चा तुमने वहुत वडा पाप किया है।" भरथरी ने गोरखनाथ से कहा कि 'बावा काला मृग को जीवित कर दीजिए अन्यथा में धूनी में कूद कर स्वय को भस्म कर दूंगा।' बावा गोरखनाथ ने मृग को जीवित कर दिया। काला मृग वहाँ से उड कर मृगिणियो के वीच पहुँचा। मृगिणियो ने कहा कि 'एक तो पापी राजा भरथरी है जिन्होने सत्तर सौ मृगिनियो को रॉड कर दिया था, और एक वावा गोरखनाथ हैं जिन्होने सबके अहिवात (सौभाग्य) को वचा लिया।

इस घटना से राजा भरथरी को अपनी असमर्थता का ज्ञान हुआ। वे विरक्त हो गए। उन्होने गोरखनाथ से शिष्य वनाने की विनती की। गोरखनाथ ने कहा कि 'तुम राजा हो, तुम जोगी का जीवन नही व्यतीत कर पाओगे, तुम कुशा के आसन पर नही शयन कर पाओगे, तुम नीच घरो में भिक्षा नही माँग पाओगे। किसी गरभी (घमडी) ने कुछ वोल दिया तो तुमसे सहा नही जायगा, किसी के घर में सुन्दर स्त्री देख लोगे तो उस पर आसक्त हो जाओगे और इस

प्रकार योग विद्या नष्ट कर दोगे।' यह वचन सुनकर भरथरी ने उत्तर दिया कि, 'नीच के द्वार पर भिक्षा माँगने जाऊंगा तो बहरा बन जाऊँगा, काँटा कुश पर सोऊँगा, और यदि सुन्दर स्त्री देखूंगा तो सूर बन जाऊँगा।" अन्त में गोरख-नाथ उन्हे शिष्य बनाने के लिए तैयार हो गए, परन्तु उन्होने एक शर्त लगाई। गोरखनाथ ने कहा कि, 'यदि तुम अपनी रानी को 'माँ' कह कर भिक्षा माँग लाओ तो तुम्हें शिष्य बना लूंगा।' भरथरी योग वस्त्र धारण कर सारगी लेकर अपने नगर की ओर चल दिये। महल के सम्मुख पहुँच कर उन्होंने भिक्षा की पुकार लगाई। रानी सामदेई जब महल से बाहर निकली, तो राजा ने कहा कि 'माँ भिक्षा दे।' इस पर रानी सामदेई बोली कि, "हे राजा तुम कौन सा रूप लेकर शिकार खेलने गए थे और कौन सा रूप लेकर आये हो, मैं आपको जोगी नही बनने दूंगी, अरे! तीन पन में एक पन भी नही बीता, अभी तो वश को कायम रखने के लिए एक पुत्र भी नही हुआ।" यह सुनकर राजा भरथरी बोले कि, 'हे रानी! बेटे की लालसा तुझे है तो मेरे भाजे गोपीचन्द को बुलाले, दुख में वही तेरे काम आयेगा।' इसपर रानी ने कहा कि 'जो सुख तुम्हारे साथ है वह अन्य किसी से नही मिल सकता।' इस पर राजा ने उसे अपनी माता के घर चले जाने के लिए कहा। परन्तु रानी ने यह बात भी अनसुनी कर दी। रानी ने बडे आग्रह से कहा, 'मुझे भोग विलास से कुछ मतलब नही, तुम घर में ही रह कर योग साधन करो, मैं तुम्हारी केवल सेवा करती रहूँगी।' राजा न कहा कि, 'स्त्री जाति से और योग से वैर है, मैं यहाँ नही रहूंगा।' इस पर रानी भी योगिनी बनने के लिये कहने लगी परन्तु राजा ने कहा कि, 'फिर तो योग विद्या बदनाम हो जायगी, लोग हमें ठग कहेंगे, गुरू हमें श्राप दे देंगे।'

इसके पश्चात् रानी ने राज्य में ही रहकर योग करने की प्रार्थना राजा से की और सब प्रकार का प्रबन्ध कर देने का वचन दिया। इस पर भरथरी ने कहा कि 'जब तुम इतना प्रबन्ध कर सकती हो तो गगाजी भी क्यो नही यहीं बुलवा लेती?' रानी ने अपने सत् के द्वारा गगा को भी वहाँ उपस्थित कर दिया। इसपर राजा ने कहा "द्वार-द्वार पर गगा को गगा नही कहा जायगा, यह गड्ही और पोखरे के नाम से ही पुकारी जायगी। तुम तो अन्य लोगो के तीर्थ पुण्य करने का भी धर्म छीन रही हो।" अब रानी बहुत घबड़ाई। अन्त म उसने चौपड की बाजी खेलने को कहा और कहा कि 'जो जीतेगा उसी का मान रहेगा।' चौपड की बाजी में पहले तो रानी जीतने लगी, परन्तु अन्त में गुरु की कृपा से भरथरी ने रानी को हरा दिया। रानी मुरझा गई। राजा अपने गुरु के पास चले आये और शिष्यत्व ग्रहण कर लिया।

लोकगाथा का एक अन्य रूप—भरथरी की लोकगाथा का एक अन्य रूप 'विधना क्या कर्त्तार' द्वारा रचित 'भरथरी चरित्र' प्राप्त होता है। इसकी भाषा उर्दू मिश्रित खडी बोली है।[1] पुस्तक में दी हुई कथा सक्षेप में इस प्रकार है —

उज्जैन के राजा इन्द्रमेन और रानी रूपदेई से एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम पडितो ने भरथरी रखा। पडित ने यह भी बतलाया कि यह बालक बारह वर्ष तक राज्य करेगा और तेरह वर्ष में योगी हो जायगा।

सिंहलद्वीप के राजा के यहाँ एक कन्या हुई। इसका नाम सामदेई पडा। कन्या जब सयानी हुई तो वर के लिये चारो दिशा में नाई ब्राह्मण गये, परन्तु कही वर न मिला। अन्त में पडित ने राजा भरथरी और रानी सामदेई का सयोग बतलाया। पडित ने धूम धाम से राजा भरथरी का तिलक कर दिया। साज सामान के साथ बारात सिंहल द्वीप पहुँची। चन्दन पीढ़ा पर जब सामदेई बैठने लगी तो उसने राजा भरथरी को देखा। उसने देखते ही जान लिया कि यह तो पूर्व जन्म का मेरा पुत्र है। परतु वह चुप रही। राजा भरथरी विवाह के पश्चात गवना करा कर रानी सामदेई को उज्जैन में ले आये। रानी सामदेई सोचने लगी कि यदि भरथरी के साथ भोग किया तो सत् चला जायगा। भरथरी ज्योही आकर पलग पर बैठा तो पलग टूट गई। यह देख कर राजा को बडा आश्चर्य हुआ और उसने रानी से पलग टटने का भेद पूछा। रानी ने कहा, "मै तो इसका कारण नही बतला सकती, मेरी बहिन पिंगला दिल्ली नगर में ब्याही गई है, वही बतला सकती है।" उधर दिल्ली के राजा मानसिंह तथा रानी पिंगला से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। राजा मानसिंह ने अपने साढ भरथरी के पास निमत्रण भेजा। राजा भरथरी तो पलग टूटने का भेद जानना ही चाहते थे। उन्होने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। पूरी सेना सजा कर दिल्ली की ओर कूँच कर दिया। (फौज में आल्हा ऊदल भी थे।) राजा भरथरी दिल्ली पहुँचे। राजा मानसिंह इतनी बडी सेना देखकर घवडा गये। परन्तु पिंगला ने अपने सत् से सबका खर्चा जुटा दिया। एक माह तक डेरा पडा रहा। रानी पिंगला ने एक दिन राजा भरथरी को महल में बुलवाया। कुशल क्षेम के पश्चात् राजा भरथरी ने रानी पिंगला से पलग टूटने का भेद पूछा। रानी ने उस समय कुछ

१—विधना क्या कर्तार—भरथरी चरित्र—दूधनाथ प्रेस, हवड़ा

उत्तर न दिया। उसने कहा, "कि कल मैं नागिन द्वारा डसी जाऊँगी और कोइरिन के घर जन्म लूंगी। वही तुमको भेद वतलाऊँगी।"

रानी पिंगला ने कोइरिन के घर जन्म लिया। राजा भरथरी जव वहाँ पहुँचे तो रानी ने कहा कि दूसरे जन्म मे वतलाऊँगी। रानी पिंगला इसी प्रकार मरती गई और क्रमश सुअरी, कुत्ता, सर्पिणी, गाय का जन्म लेने के पश्चात राजा वोढनसिंह की पुत्री के रूप में गढगोदिया में जन्म लिया। उसका नाम फुलवा पडा। राजा भरथरी वहाँ भी पहुँचे तो फुलवा ने कहा कि, 'वारह वर्ष वाद मेरा व्याह रचा जायगा। उसी समय तुमको भेद वतलाऊँगी'। वारह वर्ष पश्चात फुलवा का व्याह दिल्ली के राजा मानसिंह के पुत्र वशीधर से हुआ। वारात जव वापस दिल्ली चलने लगी तो फुलवा ने राजा भरथरी को वुलवाया और पलग टूटने का भेद वतलाया। उसने कहा कि, "हे राजा! जिस प्रकार वशीधर मेरे पूर्व जन्म का पुत्र है, उसी प्रकार तुम भी रानी सामदेई के पूर्व जन्म के पुत्र हो, इसी कारण पलग की पाटी टूट गई थी।" यह सुनकर राजा उदास मन घर लौटा और शिकार खेलने चला गया।

इसके पश्चात् कथा भोजपुरी मौखिक रूप के समान ही है। राजा का काला मृग को मारना, गोरखनाथ द्वारा उसका पुन जीवित होना, भरथरी के मन में वैराग्य उठना, गोरखनाथ का भरथरी की परीक्षा लेना, भरथरी का भिक्षा मागने के लिये रानी सामदेई के पास जाना, रानी सामदेई का मनाना। अत में भरथरी का सामदेई का दूध पीना, भरथरी का अनेक दुर्गम यातनाओ को सहन करते गुरु गोरखनाथ के पास पहुँचना तथा गुरू गोरखनाथ का प्रसन्न होना और भरथरी को शिष्य वना लेना वर्णित है। इस रूप में गोपीचद और मयनावती का भी आना वर्णित है।

उपर्युक्त लोकगाथा के दो रूपो के अतिरिक्त भी भरथरी विषय अनेक कथाएँ प्रचलित हैं। उनमें से डा० रामकुमार वर्मा द्वारा प्रस्तुत एक कथा इस प्रकार है।[1]

राजा भरथरी की रानी का नाम पिंगला था। एक वार राजा शिकार खेलने गये। उन्होने शिकार में देखा कि किसी शिकारी को नाग ने काट लिया। शिकारी की स्त्री ने अपने पति को चिता पर रखकर अपना शरीर काटकर सती हो गई। यह दृश्य देखकर भरथरी ने अपनी रानी पिंगला की परीक्षा

१—डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ०—१७१

लेनी चाही और यह कथा रानी पिंगला को सुनाई। पिंगला ने कहा कि, "मैं तो तुम्हारी मृत्यु का सवाद मात्र सुनते ही सती हो जाऊंगी।' कुछ दिनो बाद जब भरथरी पुन शिकार खेलने के लिए गए तो उन्होंने झूठमूठ अपनी मृत्यु का सवाद प्रचारित कर दिया। रानी पिंगला सवाद सुनते ही चिता में भस्म हो गई। घर आकर भरथरी ने जलती हुई चिता देखी। वे शोक में डूब गये। उसी समय वहाँ गोरखनाथ पहुचे। उन्होंने यह दृश्य देखकर अपना भिक्षा पात्र गिर जाने दिया। जब वह भिक्षापात्र टूट गया तो वे भरथरी की ही भाँति रोने लगे। भरथरी ने कहा कि, 'भिक्षापात्र टूट जाने से आप क्यो रोते हैं, आपको दूसरा पात्र मिल जायगा।' इस पर गोरखनाथने कहा 'तुम क्यो शोक करते हो पिंगला तो फिर जीवित हो सकती है।' गोरखनाथ ने चिता में जल डाल दिया और चिता से पच्चीस रानियाँ पिंगला रूप में उठ खडी हुई। दुबारा जल डालने पर केवल पिंगला रानी रह गई। भरथरी का अब मोह दूर हुआ और वे योगी हो गए। पिंगला को माता कहकर उन्होंने भिक्षा प्राप्त की और गोरखनाथ का शिष्यत्व ग्रहण किया।

भरथरी के विषय मे एक कथा और है जिसका सक्षेप है कि भरथरी पतिव्रता रानी पिंगला की मृत्यु के पश्चात् गोरखनाथ के प्रभाव में आकर विरक्त हुए और उज्जैन का राज्य अपने भाई विक्रमादित्य को सौंप कर योगी हो गये।[1]

राजा भरथरी के विषय में प्रचलित दो लोकगाथाएँ तथा अनेक छोटी मोटी कथाएँ हमें प्राप्त होती हैं। सभी में राजा भरथरी के योगी होने का वर्णन है। इनमें सासारिक मोहमाया, भोगविलास, तथा ऐश्वर्य इत्यादि की निस्सारता, स्थान स्थान पर कथोपकथन के रूप में स्पष्ट किया गया है। जोगियो द्वारा नाथधर्म के महान् सिद्धान्त को हम लोकगाथाओ मे प्रतिपादित देखते है। नाथधर्म के दर्शन के अध्ययन से हमारे हृदयो में वैराग्य का भाव भले ही न उत्पन्न हो, परन्तु इन लोकगाथाओ के श्रवण से मन एक बार वैराग्य की ओर झुके बिना नहीं रहता।

प्रस्तुत लोकगाथा के मौखिक भोजपुरी रूप तथा प्रकाशित रूप की कथा एक समान है। प्रकाशित रूप में कथा वढ़ा चढ़ाकर वर्णित है। 'विधना क्या कर्तार' द्वारा रचित कथा में राजा भरथरी और सामदेई के विवाह का विधिवत वर्णन है जो कि भोजपुरी रूप मे नहीं है। प्रकाशित रूप में राजा

---

१ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय पृ० १६८

भरथरी स्वय रानी पिंगला के यहाँ जाते हैं और पलग टटने का भेद पूछते हैं। भोजपुरी रूप में राजा भरथरी पिंगला को अपने ही यहाँ बुलवाते हैं। प्रकाशित रूप में रानी पिंगला स्वय के उदाहरण से राजा को पर्लंग टूटने का भेद बतलाती है। भोजपुरी रूप में राजा भरथरी से भेंट करते ही वह भेद बतलाती है।

उपर्युक्त अन्तर के अतिरिक्त शेष कथा समान है, जैसे कि राजा भरथरी का शिकार खेलने जाना, काला मृग का मारा जाना, गोरखनाथ से भेंट, राजा भरथरी का विरक्त होना तथा अपनी स्त्री को माँ कहना तथा राजा का योगी होकर चल देना।

डा० रामकुमार वर्मा द्वारा प्रस्तुत कथा इन दोनो लोकगाथाओ से भिन्न है। इसमें राजा भरथरी की स्त्री का नाम 'पिंगला' दिया हुआ है तथा शिकार खेलने की कथा भी भिन्न रूप में दी हुई है। इसमे राजा भरथरी अपनी रानी पिंगला के पातिव्रत की परीक्षा लेता है तथा रानी जलकर भस्म हो जाती है। इसके पश्चात् भरथरी गोरखनाथ के प्रभाव में आ जाते हैं।

कथा का अन्तिम रूप लोकगाथाओ के समान है। इस कथा में भी राजा भरथरी का अपनी स्त्री को 'माँ' सबोधन करना वर्णित है।

लोकगाथा की ऐतिहासिकता

प्रस्तुत लोकगाथा राजा भरथरी के जीवन से सम्बन्ध रखती है, अतएव यहाँ भरथरी की ऐतिहासिकता पर विचार करना आवश्यक है। भरथरी के विषय में निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होते हैं —

(१) भर्तृहरि, जिन्होने शृंगारशतक, नीतिशतक, तथा वैराग्यशतक की रचना की थी। गोरख शिष्य भरथरी जिन्होने वैराग्य पन्थ प्रचलित किया।[1]

(२) भरथरी, जो उज्जैन के शासक थे और बाद में गोरखनाथ के शिष्य बन गये।[2]

(३) भरथरी, जिन्होने विरक्त होकर अपने भाई विक्रमादित्य को राज्य सौंप दिया। इनका सम्बन्ध बगाल के पालवश के राजा गोपीचन्द तथा मयनावती से था।[3]

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय—पृ० १६७

२—वही

३—वही

(४) एक किंवदती है कि भरथरी, गोरखपुर (उत्तर-प्रदेश) क्षेत्र के शासक थे।[1]

सस्कृत साहित्य मे भर्तहरि का नाम बहुत प्रसिद्ध है। इन्होने तीन अमर शतको की रचना की थी। वे तीन शतक हैं, शृगारशतक, नीतिशतक तथा वैराग्यशतक। भर्तृहरि ने स्वयं के जीवन से प्राप्त अनुभवो को बडे सुन्दर ढग से इन शतकों में चित्रित किया है। परन्तु इन शतको में भर्तृहरि ने किसी निश्चित धर्म या मत विशेष का प्रतिपादन नही किया है। यह सन्देह उठता है कि क्या लोकगाथा के भर्तृहरी और शतको के रचयिता भर्तृहरि एक ही व्यक्ति है ? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शतको के रचयिता भर्तृहरि तथा गोरख परम्परा के भर्तहरी को दो भिन्न व्यक्ति माना है। चीनी यात्री इत्सिग के अनुसार शतको के रचयिता भर्तहरि का समय दसवी शताब्दी का पूर्व भाग ठहरता है। इसके विपरीत गोरखनाथ के शिष्य भरथरी का समय दसवी शताब्दी के अन्त में ठहरता है। दोनो व्यक्ति भिन्न थे, इसका सवसे वडा प्रमाण शतक के रचयिता भर्तृहरि का 'वैराग्यशतक' है। 'वैराग्यशतक' के रचयिता ने कही भी गोरखनाथ अथवा नाथधर्म का उल्लेख नही किया है। गोरखनाथ के शिष्य तथा वैराग्यपन्थ के प्रणेता यदि वैराग्य शतक रचयिता भर्तृहरि ही होते तो उसमें कही न कही पथ अथवा गुरु का अवश्य ही उल्लेख होता। अतएव निश्चित रूप से दोनो भर्तृहरी भिन्न भिन्न व्यक्ति हैं। वास्तव में शतको के रचयिता भर्तृहरि अपनी किसी रानी के अनुचित आचरण के कारण विरक्त हुए थे और अन्त में 'वैराग्यशतक' की रचना की थी।[2]

भोजपुरी लोकगाथा में भरथरी को उज्जैन का राजा वतलाया गया है। 'विधना क्या कर्तार' द्वारा 'भरथरी चरित्र' में भरथरी उज्जैन के राजा इन्द्रसेन के पौत्र तथा चन्द्रसेन के पुत्र वतलाए गए है। लोकगाथा में दिए हुए नाम इतिहास में नही मिलते हैं और न कही यही मिलता है कि भरथरी उज्जैन के शासक थे। ऐसा प्रतीत होता है कि, भरथरी ने राजा बनते ही या राजा वनने के पहले ही वैराग्य ग्रहण कर लिया। यह भी सम्भव हो सकता है कि भरथरी का सवध उज्जैन से कभी भी न रहा हो, और लोकगाथा के गायको ने उज्जैन एक प्राचीन एव प्रसिद्ध नगर होने के कारण भरथरी को उसी नगर का राजा वना दिया हो। हम यह भली भाँति जानते हैं कि भारतवर्ष में प्रचलित अनेक कथाएँ

१—श्री दुर्गाशकर प्रसाद सिंह—भोजपुरी लोकगीत में करुणरस, पृ० १३

२—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय, पृ० १६८

किवदतियाँ तथा गाथाएँ रूढि रूप में उज्जैन से सवध रखती हैं । जिस प्रकार कहानियो मे राजा विक्रमादित्य का नाम रूढि के रूप मे वारवार आता है, उसी प्रकार नगरो के उल्लेख में उज्जैन का भी नाम अनेक कथाओ मे आता है।

भरथरी सवधी एक अन्य कथा मे यह वर्णित है कि राजा भरथरी अपना राज्य अपने भाई विक्रमादित्य को सौंपकर गोरखना का शिष्य हो गया । ब्रिग्स के अनुसार उज्जैन में एक विक्रमादित्य नामक राजा सन् १०७६ से १२२६ तक राज्य करता रहा । इस प्रकार से भरथरी का समय ग्यारहवी शताब्दी के मध्य भाग में ठहरता है।[1]

'विधना क्या कर्तार' रचित 'भरथरी चरित्र' में राजा भरथरी को गोपीचद का मामा वतलाया गया है । गोपीचद का सवध वगाल के पालवश से वतलाया जाता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं कि, 'पालवश के राजा महीपाल के राज्य में ही, कहते हैं, रमणवज्र नामक वज्रयानी सिद्ध ने मत्स्येन्द्रनाथ से दीक्षा लेकर शैव मार्ग स्वीकार किया था । यही गोरखनाथ हैं। पालो और प्रतीहारो (उज्जैन) का झगडा चल रहा था । कहा जाता है कि गोविदचद महीपाल का समसामयिक राजा था और प्रतीहारो से उनका सवध होना विचित्र नहीं' ।[2]

उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में एक जनश्रुति है कि राजा भरथरी यही के शासक थे। श्री दुर्गा शकर प्रसाद सिह ने भोजपुरी की व्युत्पति और प्राचीनता पर विचार करते हुए विहार के उज्जैन वशी राजपूतो की वशावली का उल्लेख किया है । 'तवारीख उज्जैनिया' का हवाला देते हुए वे लिखते हैं, "
२७४वी पीढ़ी मे राजा गवर्वसेन है जिनके ज्येष्ठ पुत्र का नाम महाराज विक्रमादित्य और छोटे का नाम भरथरी है । यही इतिहास प्रसिद्ध शकारि विक्रमादित्य कहे जाते हैं, और इन्ही का चलाया हुआ विक्रम सवत् भी कहा जाता है, पम्मारवश मात्र अपने को विक्रम (शकारि) का वश कहता है। राजा भरथरी (भर्तृहरि) का गोरखपुर जिला में होना आज भी किवदती से हमें ज्ञात है । और भरथरी गीत आज भी वही से शुरू होकर सर्वत्र भोजपुरी भाषी जिलो में गाया जाता है। जान पडता है भर्तृहरि गोरखपुर में आकर अपना राज अपने भाई विक्रमादित्य के अधीन ही कायम किए थे या विक्रम राज्य के इस प्रान्त के

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय—पृ० १६८

२—वही

स्वाभाविक चित्र को उपस्थित किया है। लोकगाथा के नायक गोपीचन्द, माता, स्त्री, बहन तथा प्रजा इत्यादि को मोह को समाप्त कर वैराग्य ग्रहण करते है। लोकगाथा में शरीर की नश्वरता, माया का जजाल, तथा योग के महत्व को अत्यन्त सुन्दर रीति से समझाया गया है।

भरथरी के समान गोपीचन्द की लोकगाथा भी करुणा रस से परिपूर्ण है। जिस प्रकार से भरथरी की लोकगाथा में सामदेई एव राजा भरथरी का कथोपकथन दिया हुआ है, उसी प्रकार इस लोकगाथा में गोपीचन्द एव माता मैनावती तथा बहिन बीरम का कथोपकथन वर्णित है।

लोकगाथा की संक्षिप्त कथा—राजसी पीताम्बर को फाडकर, उसकी गुदडी बनाकर राजा गोपीचन्द ने पहन लिया और इस प्रकार योगी का रूप धारण कर चलने को तैयार हुये। उसी समय माता गुदडी पकड कर खडी हो गई और विलाप करने लगी। गोपीचन्द ने माता से कहा, "का करवी माई वरम्हा लिखें जोगी"। इस पर माता ने कहा कि 'तुमको अपना दूध पिलाकर बडा किया है, उस दूध का दाम देते जाओ तब पीछे जोगी बनना।" गोपीचन्द ने दूध से पोखरा भराने को कहा परन्तु माता को संतोष न हुआ। अत में गोपीचद ने कहा 'हे माता चाहे मैं अपना कलेजा काटकर भी तेरे सामने रख दू, परन्तु तिसपर भी मैं तेरे दूध से उत्तीर्ण नही हो सकता।'

इस प्रकार राजा गोपीचन्द बावन किले की बादशाही, छप्पन कोस का राज तथा तिरपन करोड की तहसील छोडकर चलने लगा। प्रजा, दरबारी, तथा रनिवास के सभी लोग विलाप करने लगे। लचिया (पानवाली) बरई ने गोपीचद के सम्मुख आकर कहा कि 'मैंने पाच बिगहा पान का खेत तुम्हारे लिये लगाया था, उसका मूल्य देते जाओ।' गोपीचद नेतुरन्त लचिया के नाम पाच गाँव लिख दिया और कहा कि, 'मेरी माता को पान बराबर खिलाती रहना।' सबको रोता छोडकर गोपीचन्द चल दिये।

चलते चलते गोपीचन्द ने विचार किया कि बिना बहिन से भेंट किये वन जाना उचित नही, अतएव वे बहिन के घर की ओर चल दिये। चलते चलते वे केदली वन में पहुँचे। केदलीवन सदा अधकार से ढका रहता था और उसमें पशुओ का निवास था। मैया बनसप्ती ने गोपीचन्द के सुन्दर रूप को देखकर सोचने लगीं कि इन्हें तो वन में बडा कष्ट होगा। वे गोपीचन्द के सम्मुख प्रगट हो गई। गोपीचन्द ने कहा कि मुझे शीघ्र ही बहिन के घर पहुँचा दो अन्यथा श्राप दे दूँगा। बनसप्ती ने ले चलना स्वीकार कर लिया। उसने

हंस का रूप वना लिया और गोपीचन्द को तोता वनाकर, अपन पंख पर विठा लिया। वनसप्नी ने छ महीने के मार्ग को छ पहर में समाप्त कर दिया। गोपीचन्द ने नगर में वहिन के घर को ढू ढना प्रारम्भ किया पर न मिला। अत में उन्होंने देखा कि वहिन वीरम चन्दन के मुरझाये पेड को पकड कर रो रही है। वहिन के द्वार पर पहुच कर राजा गोपीचन्द ने सारगी वजा दिया। वहिन ने सारगी की ध्वनि सुन कर मुगिया दासी को द्वार पर भिक्षा देकर भेजा। गोपीचन्द ने कहा कि, 'मैं तेरे हाथ से भिक्षा नही लू गा क्योकि तू जूठन से पली है।' मु गिया ने ध्यान से गोपीचन्द को देखा और उसे कुछ सदेह हुआ। वह दौडकर महल में गई और वहिन से कहा, 'गोपीचन्द की सूरत का एक योगी द्वार पर खडा है'। वीरम भी देखने के लिए आई परन्तु वह भाई को पहचान न सकी। गोपीचन्द को इससे वहुत दुख हुआ। गोपीचन्द कहने लगे कि, 'तुझे कौन सा श्राप दू जिससे तेरा घमड चूर हो जाय।' वीरम ने कहा कि, 'यदि ऐसी वात करोगे तो मृत्युदड मिलेगा।' गोपीचन्द तव भी विचलित न हुये। इस पर वीरम ने गोपीचन्द की परीक्षा ली। उसने अपने तिलक, वारात, तथा विवाह इत्यादि के वारे में पूछा। गोपीचन्द ने सवका ब्योरा सुना दिया। वीरम को इससे भी सन्तोष नही हुआ। उसने गोपीचन्द की परीक्षा लेने के लिये पिता के घर से मिले हुये वौडहिया हाथी को छोड़ा। गोपीचन्द की आंखो से आसू निकलने लगा। हाथी उसे देखते ही पहचान लिया और अपने मस्तक पर बठा लिया। वीरम ने पुन अपने कुत्ते को गोपीचन्द पर ललकारा। कुत्ता भी गोपीचन्द को पहचान गया और उनके शरीर पर लोटने लगा। वीरम को फिर भी सतोष न हुआ। उसने वकापुर माता के पास पत्र लिखा। पत्र का उत्तर तोता उड कर लाया। वीरम ने अपने भाई गोपीचन्द को अव पहचाना। उसका योगी रूप देखते ही वह भाई के शरीर पर गिर पडी और रोते-रोते प्राण त्याग दिया। गोपीचन्द को इससे वड़ा दुख हुआ। वे दौडे हुये गुरु मछिन्द्रनाथ के पास पहुँचे और वहिन को जीवित करने का उपाय पूछा। गुरु ने कहा कि 'अपनी कानी अगुली चीर कर दो वू द खून पिला दो।' गोपीचन्द ने वैसा ही किया और वीरम जीवित हो उठी। गोपीचन्द न वहिन से भोजन वनाने के लिये कहा। वहिन वीरम भोजन वनाने के लिये वैठी। गोपीचन्द इधर पोखरे में स्नान करने के लिये सिपाहियों के साथ गये। गोपी-चन्द ने एक वुडकी लगाई जिसे सवने देखा। दूसरी वुडकी लगाई तव भी सवने देखा। परन्तु तीसरी वुडकी लगाते ही वे अन्तर्ध्यान हो गये, फिर किसी ने नहीं देखा। गोपीचन्द भँवरे का रूप धर, गुरु मछिन्द्रनाथ के पास चले गये।

बहिन ने पोखरे में जाल डलवाया पर कुछ पता नही चला। रोते कलपते बहिन महल में पहुँची और प्रजाजन उसे सात्वना देने लगे।

लोकगाथा के अन्य रूप—आज से प्राय सरसठ वर्ष पूर्व श्री ग्रियर्सन ने शाहाबाद जिले की भोजपुरी और गया जिले की मगही बोली के अध्ययन के निमित्त गोपीचन्द की लोकगाथा को एकत्र किया था।[1] अर्द्धशताब्दी पूर्व एकत्र की हुई इस लोकगाथा में और इसके वर्त्तमान मौखिक रूप में आश्चर्य जनक समानता है। मौखिक परपरा में निवास करने के कारण लोकगाथा के रूप में अन्तर आ जाना एक स्वाभिक बात है। परन्तु इन रूपो के कथानक एव चरित्रो में अन्तर नही आने पाया है। केवल ग्रियर्सन द्वारा एकत्रित रूपो के कथानक का अन्त वर्त्तमान मौखिक रूप से भिन्न है।

ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत शाहाबाद के भोजपुरी रूप का अन्त इस प्रकार होता है—

बहिन बिरना (वर्त्तमान रूप बीरम) जब अपने भाई गोपीचन्द को पहचानती है, तो अतिशय दुख के कारण उसका प्राणान्त हो जाता है। गुरू की कृपा से गोपीचन्द पुन उसे जीवित करते है, तथा वन के लिये चल देते है—

'चीर के अगुरिया बहिन के पियाए
जोगी रम के चल देले,

ग्रियर्सन द्वरा प्रस्तुत गया जिले के मगही रूप का अन्त इस प्रकार होता है—

गोपीचन्द बहिन को पुन जीवित करके चल देते ह, तो बहिन पुन दुख के कारण पछाड खा कर गिरती है तथा धरती फटती है और वह उसमें समा जाती है।

"बहिनी उठ बैठल। गली गली के रोए।
चन्दन के पेड धरि रोए, चन्दन के पेड जवाब कैलक,
तुम का रोऊ। तोहरा भाइ जोगी होइ गइल।
एतना में बहिनी हाय करे। फाटे धरती जाय समाय।
भाइ बहिन के नाते दुन्नो जने के टूट गेल।"

प्रस्तुत लोकगाथा के वर्तमान भोजपुरी रूप के कथानक का अन्त इस प्रकार है—

१—ग्रियर्सन-जे० ए० एस० बी० १८८५ वाल० ७१९ पृ०३५

गोपीचन्द जब पुन अपनी बहिन को जीवित कर देते हैं तो वह बहिन से भोजन करने के लिये कहते हैं। बहिन बीरम जब भोजन तैयार करके बुलाने आती है तो गोपीचन्द पोखरा मे स्नान करने के लिये कहते हैं। बहिन चार सिपाहियो के साथ भेज देती है। गोपीचद पोखरे में स्नान करते समय अन्तर्ध्यान हो जाते हैं और भवरा का रूप धरकर मछिन्द्रनाथ के पास चले जाते हैं

"आपन सगडवा (पोखरा) बहिनी देतू बताय,
विना असननवा कइले बहिनी भोजन नाही होई,
तब बहिनिया चारि सिपहिया अगवा चारि-पीछे
दिहनिन लगाइ,
विचवा में ना, अपने भइया गोपीचन्द के करे
तबतऽ सगड़े पर गइले करावे असनान
एक एक बुडइया मारे सब कोई देखे
दुसर बुडइया सब कोई देखे
तिसरे बुडकिया भइया नापता होइ गइले
भवरा के रुपवा धैके गुरु मछिन्दर लगे गइले
. .. .
तब जब बहिनिया बिरमा महजलिया नवावे
जेतना रहले सू स घरियार, घोघी सवार सब वधि गइले,
बकि भइया गोपीचन्द के पता नाही लगले
तबतऽ बहिनिया रोवत रोवत घरे चलि गइली
गउवाँ रैयत सबुर धरावे।"

उपर्युक्त तीनो रूपो में शाहाबाद जिले के भोजपुरी रूप एव मौखिक रूप मे बहिन बीरम की पुन मृत्यु नही होती है। परन्तु मगही रूप में बहिन धरती में समा जाती है।

लोकगाथा के तीनो रूप का शेष कथानक समान है। राजा गोपीचन्द का योगी रूप धारण करना, माता मयनावती का अपने दूध का मूल्य मांगना, गोपीचन्द का असमर्थता प्रकट करना; माता का गोपीचन्द को कचनपुर जाने से मना करना; सब को रोता छोडकर गोपी चन्द का केदली वन में जाना। केदली वन मे वनदेवी की सहायता से तोते का रूप धरकर कचनपुर बहिन के यहाँ जाना, बहिन के घर मुगिया दासी से भेंट होना, बहिन का भाई को पहचानना, विश्वास के लिये तिलक दहेज, विवाह का ब्योरा देना, गोपीचन्द का पागल हाथी और कुत्ते का सामना करना, अन्त में बहिन का

भाई को पहचानना तथा अतिशय दुख के कारण उसका प्राणान्त होना तथा गोपी चन्द का गुरू कृपा से बहिन को पुन जीवित करना ।

प्रकाशित रूप—गोपीचद की लोकगाथा का प्रकाशित भोजपुरी रूप नही मिलता होता है। इसका एक अन्य प्रकाशित रूप प्राप्त होता है जिसे कि बालकराम योगीश्वर ने रचा है । यह ३३६ पृष्ठो का ग्रथ है। भाषा ठेठ पँछाही हिन्दी है तथा जिसमें उर्दू फारसी शब्दो का धडाके साथ प्रयोग हुआ है । इसकी सक्षिप्त कथा इस प्रकार है ।

गोपीचन्द की माता मैनावती अपने पुत्र से योगी बनने के लिये कहती है। गोपीचन्द और मैनावती में योग के ऊपर बडी देर तक बहस होती है । गोपीचन्द, अन्त मे योगी बनना और जलन्धरनाथ का शिष्यत्व ग्रहण करना स्वीकार कर लेते हैं। परन्तु बीच में ही गोपीचन्द के सभासद उनसे जलन्धरनाथ के विषय में नाना प्रकार की बात कहते हैं। गोपीचन्द उनकी बातो में आ जाते हैं। गुरु जलन्धरनाथ इसी समय महलो में पधारते है। गोपीचन्द क्रोध यें आकर उन्हे कुँए में फिकवा देते हैं । मैनावती यह देख कर विलाप करती है। उसी समय गुरु गोरखनाथ का आगमन होता है। मैनावती उनसे सब हाल कहती है । गुरु गोरखनाथ, गोपीचन्द की गलती वतलाते है तथा उन्हें कुएँ पर जाने से मना करते है । गोरखनाथ, मछिन्द्रनाथ से कुएँ में समाधिस्थ जलन्धरनाथ को निकालने का उपाय पूछते हैं। इसी बीच म जलन्धरनाथ के शिष्य कानिपा आते हैं तथा गुरु को कुएँ मे से निकालने का उपाय करते है । परन्तु उन्हें सफलता नही मिलती है । मछिन्द्रनाथ से उपाय पूछ कर गोरखनाथ लौटते हैं तथा कुएँ पर गोपीचन्द के रूप के पाँच पुतले रखते है । जलन्धर अपनी दृष्टि ऊपर करते है तथा पुतले को गोपीचद समझ कर भस्म हो जाने का श्राप देते हैं । एक के वाद एक पाँचो पुतले भस्म हो जाते है तथा वे वाहर निकलते हैं। गोरखनाथ जलन्धरनाथ द्वारा गोपीचन्द को क्षमा करवाते हैं। गोपीचन्द, जलन्धरनाथ के पैर छूते है और उनके शिष्य हो जाते है ।

गोपीचन्द घर वार छोड कर चलने के लिये तैयार होते हैं। इसी समय उनकी माता, पुत्र के मोह मे पडकर गोपीचन्द को योगी वनने से मना करती है । गोपीचन्द नही मानते हैं। इस पर माता अपने दूध का मूल्य माँगती है। गोपीचन्द माता से क्षमा माँग कर वहन चन्द्रावली से मिलने चले जाते हैं । चन्द्रावली उन्हे पहचानती नही है। गोपीचन्द उसके विवाह इत्यादि

१—योगीश्वर वालकराम—भक्त गोपीचन्द ।

के विषय मे वतलाते है परन्तु तिस पर भी वह नही पहचान पाती है। गोपी-चन्द को अनेक सवूतो के पश्चात् वह पहचानती है तथा विलाप करने लगती है। गोपीचन्द उमे सोता छोडकर चल देते है। चन्द्रावली अपने भाई को न पाकर प्राण छोड देती है। गोपीचन्द पुन. लौट कर आते है तथा जलन्धरनाथ की कृपा से चन्द्रावली को पुन जीवित कराते हैं। चन्द्रावली भी वैराग्य ग्रहण करन के को कहती है। वहुत कहने सुनने पर गोपीचन्द उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हैं। चन्द्रावली भी योगिनी वनकर वन म चली जाती है। गोपीचन्द की भेंट केदललीवन मे मामा भरथरी से होती है। वे दोनो अनन्तकाल तक तप करते हैं।

उपर्युक्त कथा भोजपुरी रूप से अधिकाश में साम्यता रखती है। भोज-पुरी रूप में गोपीचन्द तथा जलन्धरनाथ का कथानक नही वर्णित है। परन्तु शेप कथा एक समान है। पुस्तक में दी हुई कथा के अनुसार गोपीचन्द की वहिन भी योग धारण कर लेती है तथा गोपीचन्द की भेंट भरथरी से होती है। भोजपुरी रूप में वहिन का योगी होना और भरथरी से भेंट नही वर्णित है। चरित्रों के नाम तथा स्थानो के नाम में प्रमुख दो अन्तर है। प्रकाशित रूप में वहन का नाम चन्द्रावली तथा उसके नगर का नाम ढाका दिया हुआ है। भोजपुरी रूप में वहन का नाम 'वीरम' तथा उसका घर कचनपुर में है।

प्रस्तुत कथा में प्रमुख चरित्रो के नाम भी भोजपुरी रूप से समानता रखते है। केवल इसमें वहिन का नाम 'चन्द्रावली' दिया हुआ है, परन्तु भोजपुरी रूप मे 'वीरम' या 'विरना' दिया हुआ है।

योगीश्वर वालकराम कृत पुस्तक में नाथपथ के प्राय. सभी सन्तो का नाम आता है तथा साथ ही राम, कृष्ण इत्यादि अवतारो का भी उदाहरण के रूप में उल्लेख किया गया है। इसकी भाषा उर्दू फारसी मिश्रित हिन्दी है तथा दोहा, चौवोला और दौड में लिखी गई है। उदाहरण के लिये गोरखनाथ जी वोलते हैं—

दोहा—जीम गाफ सनी दाल है, फ काफ़िर की जंजीर।
मिल सात हरफ होत है, जोगी सिद्ध फकीर॥

चौवोला—जोगी सिद्ध फकीर जीम जुगली सत साफ गदाई का,
अज सीन धमाई धर्म करो दिल दाल दिवानी सुनाई का,
वे फाका फ़कर फकीर करे वडी खे से खौफ इलाही का,
अजमेर रियासत अवरव की कह ये रस्ता जोग कमाई का,

दौड़—कुदरत से डरना। हरफ सातो सिद्ध करना। दुश्मन भी होय बुरा
उसका नही करना ॥

लोकगाथा का बङ्गला रूप[1]—बगाल में गोपीचन्द की लोकगाथा के अनेक रूप मिलते है। वास्तव में गोपीचन्द का सम्बन्ध बगाल से ही था, अतएव वहाँ इस लोकगाया का व्यापक होना स्वाभाविक ह। बगाल में गोपीचन्द विषयक तीन गाथाएँ (प्रकाशित) प्राप्त होती है। प्रथम विशेश्वर भट्टाचार्य द्वारा सपादित 'गोपीचन्द्रेर गान' है। इसमें गोपीचन्द की कथा विस्तार के साथ दी हुई है। इसमें विशेष रूप से गोपीचन्द (गोविन्द चन्द्र) का किसी दाक्षिणात्य राजा से युद्ध वर्णित है। वह दाक्षिणात्य राजा, राजेन्द्र चोल था जो कि १०६३ ई० तथा १११२ ई० के बीच में सिंहासनारूढ था। गोविन्दचन्द्र ने राजेन्द्र चोल को हरा कर उनकी दो कन्याओ से विवाह किया था।

द्वितीय गाथा दुर्लभचन्द्र का 'गोविन्द चद्रेर गीत' मिलता है। इसमे जालन्धरपाद तथा मयनामती की कथा, मयनामती के पति मानिकचद्र की मृत्यु की कथा तथा गोविन्द्रचन्द्र और जालन्घपाद का सघर्ष तथा गोरखनाथ द्वारा गोविन्दचद्र की रक्षा करना वर्णित है।

तृतीय गाथा श्री दिनेशचन्द्र सेन द्वारा सपादित 'मयनामती गान' है। इसमें मयनामती का विवाह; मयनामती के पति मानिकचन्द्र की मृत्यु, मयनामती के गर्भ से राजा गोपीचन्द्र का उत्पन्न होना, गोपीचन्द का विवाह और उसका अत में योगी होना वर्णित है।

उपर्युक्त तीनों गाथाएँ भोजपुरी से सर्वथा भिन्न है। परन्तु गोपीचन्द का वैराग्य ग्रहण करना सबमें वर्णित है। भोजपुरी रूप में गोपीचन्द के वैराग्य ग्रहण की कथा ही केवल सविस्तार वर्णित है।

गोपीचन्द विषयक कथाएँ—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'सिद्धान्त चद्रिका' में वर्णित गोपीचन्द के कथा को अपने ग्रन्थ में दिया है। कथा इस प्रकार है—

१—विशेप विवरण के लिए देखिए —
विशेश्वर भट्टाचार्य द्वारा सपादित 'गोपीचद्रेर गान'
डा० दिनेश चन्द्र सेन ' वग भापा ओ साहित्य'
आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथसप्रदाय पृ० ५२, १६८ से १७२

"गोपीचन्द वगाल के राजा थे। भर्तृहरि की वहन मैनावती इनकी माता थी। गोरखनाथ ने जिस समय भर्तृहरि को ज्ञानोपदेश दिया था, उसी समय मैनावती ने भी गोरखनाथ से दीक्षा ली थी। वह वगाले के राजे से व्याही गई थी। इसके एक पुत्र गोपीचन्द और एक कन्या चन्द्रावली दो सताने थी। चद्रावली का विवाह सिंहलद्वीप के राजा उग्रसेन से हुआ था। पिता की मृत्यु के वाद जव गोपीचन्द वगाले का राजा हुआ तो उसके सुन्दर कमनीय रूप को देखकर मैनावती के मन में आया कि विषय सुख में फँसने पर इसका यह यह शरीर नष्ट हो जायगा। इसलिये उसने पुत्र को उपदेश दिया कि "बेटा जो शाश्वत-सुख चाहता है तो जालधरनाथ का शिष्य होकर योगी हो जा।" जालधरनाथ सयोगवश वहाँ आये हुये थे। गोपीचन्द राजपाट छोड योगी हो कदली वन में चले गये। पीछे से वहिन चद्रावली के अत्यन्त अनुरोध पर उसे भी योगी वनाया।"[१]

डा० रामकुमार वर्मा ने 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' नामक ग्रथ में गोपीचन्द की कथा का वर्णन किया है। कथा इस प्रकार है—

"गोपीचन्द के गुरु ज्वालेन्द्रनाथ थे। गोपीचन्द की माता मैनावती भी ज्वालेन्द्र नाथ से प्रभावित थी। मैनावती आध्यात्मिक दृष्टि से अपने पुत्र गोपीचन्द को चाहती थी किन्तु गोपीचन्द ने इसका सासारिक दृष्टि से दूसरा ही अर्थ लगाया। मैनावती के मनोभावो में ज्वालेन्द्रनाथ का हाथ देखकर गोपीचन्द ने ज्वालेन्द्रनाथ को कुएँ में डाल दिया। किन्तु वे मरे नहीं। अपने योगवल से कुएँ में समाधि लगा कर वैठ गए। गोरखनाथ ने कुएँ पर आकर ज्वालेन्द्रनाथ से निकलने की प्रार्थना की। ज्वालेन्द्रनाथ मौन रहे। तव गोरखनाथ ने गोपीचन्द की प्रतिमा कुएँ पर रखकर उनसे वाहर आने का आग्रह किया। गोरखनाथ जानते थे कि यदि स्वय गोपीचन्द कुएँ पर खडा किया जायगा तो गोपीचन्द भस्म हो जायेगें। हुआ भी यही। श्री ज्वालेन्द्रनाथ के योगवल से गोपीचन्द की प्रतिमा जलकर भस्म हो गई। दुवारा प्रतिमा रखने पर भी ऐसा ही हुआ। अन्त मे गोपीचन्द को अत्यन्त विनय और प्रार्थना से खडे करते हुए गोरखनाथ न ज्वालेन्द्रनाथ को कुएँ से वाहर निकलने का अनुरोध किया और गोपीचन्द को अमरत्व का आर्शीवाद देते ज्वलेन्द्रनाथ कुएँ से वाहर निकले। इसके पश्चात् माता मैनावती की आज्ञा से गोपीचन्द ने वैराग्य धारण कर लिया।"[२]

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय पृ० १६८-१६६

२—डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ० १७२-७३

'सिद्धान्त चद्रिका' में वर्णित कथा गोपीचन्द के भोजपुरी मौखिक रूप से कुछ समानता रखती है। गोपीचन्द का वैराग्य ग्रहण करना, बहन से भेंट करना तथा तप करने के लिये बन चला जाना, दोनो रूपो में समान है। बहन के नाम का अन्तर मिलता है। प्रस्तुत कथा में भी चद्रावली नाम दिया हुआ है और भोज-पुरी रूप में 'बीरम'।

वस्तुत उपर्युक्त उद्धृत दोनो कथाएँ योगीश्वर बालकराम कृत 'गोपीचन्द भरथरी से पूर्णतया साम्यता रखती है। कथानक, चरित्रो के नाम तथा स्थानो के नाम इत्यादि सभी उसमें समान है।

गोपीचन्द की ऐतिहासिकता

लोकगाथा के अन्यान्य रूपो और कथाओ में गोपीचन्द को बगाले (बगाल) का राजा कहा गया है। अनेक विद्वानो ने भी गोपीचन्द को बगाल का ही राजा माना है तथा उनका सबध पालवश से बतलाया है। परतु ऐतिहासिक ग्रथो के अनुशीलन से गोपीचन्द का बगाल का राजा होना, नही प्राप्त होता है। पाल-वश के परवर्ती राजाओ का उल्लेख करते हुए श्री मजूमदार ने राजा मदन-पाल का उल्लेख किया है। उनके कथनानुसार मदनपाल, पालवश का अतिम राजा था।[1]

विहार में कुछ पालवश से सवधित राजाओ का नाम मिलता है। इनके नामो के अन्त में 'पाल' शब्द जुडा हुआ है। इन्ही में से 'गोविन्दपाल' नामक राजा का नाम मिलता है। गोविन्दपाल को आधुनिक गया जिले का राजा वतलाया गया है। कुछ हस्तलिखित प्रतियो एव शिला लेखो में इसे 'गौडाधि-पति' कहा गया है तथा यह भी उल्लखित है कि इनका राज्य ११६२ ई० में समाप्त हो गया। श्री मजूमदार का कहना है कि पालवश के अतिम राजा मदन-पाल का सवध गोविन्दपाल से अभी तक स्थापित नही हो सका है। यदि उप-र्युक्त प्राप्त तथ्य सत्य है तो मदनपाल के पश्चात् ही गोविन्दपाल सिहासनारूढ हुए होगे और इनके राज्य का विस्तार गया जिले तक रहा होगा।[2]

अतएव इतिहासकारो के मन में अभी सदेह है कि 'गोविन्दपाल' वगाल के अधिपति थे। परतु यदि यह सत्य है कि गोविन्दपाल गौडाधिपति थे तो निश्चित

१—आर० सी० मजूमदार—हिस्ट्री आफ वेंगाल, पृ०, १७१—१७२

२—वही

रूप से यही हमारे लोकगाथाओ एव कथाओ के नायक गोपीचन्द है। इनके राज्य का अत ११६२ ई० में वतलाया गया है, अतएव गोपीचन्द का समय वारहवी शताब्दी का पूर्वाद्ध अथवा मध्यभाग ठहरता है। नाथ सम्प्रदाय का उन्नतिकाल नवी से वारहवी शताब्दी तक वतलाया जाता है। इसलिये यह निश्चित है कि गौडाधिपति गोपीचन्द का सबध नाथ सम्प्रदाय से था।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं कि गोपीचन्द बगाल के राजा मानिकचद्र के पुत्र थे। मनिकचद्र का सबध पालवश से बताया जाता है जो सन् १०९५ ई० तक बगाल में शासनारूढ़ था। इसके बाद ये लोग पूर्व की ओर हटने को वाध्य हुये थे। कुछ पडितो ने इस पर से अनुमान किया है कि ये ग्यारहवी शताब्दी के आरम्भ में हुए होगे। गोपीचन्द का ही दूसरा नाम गोविन्दचद्र है। हमने मत्स्येन्द्रनाथ का समय निर्धारित करने के प्रसग में तिरुमलय से प्राप्त शैललिपि से इनका समय ग्यारहवी शताब्दी के आस पास होना पहले भी अनुमान किया है।'[1]

तिरुमलय की शैललिपि तथा 'गोपीचद्रेर गान' नामक ग्रथ में गोपीचन्द का दाक्षिणात्य राजा राजेन्द्रचोल से युद्ध वर्णित है। राजेन्द्रचोल का समय १०६३ से १११२ ई० तक था। अतएव इन दोनो तथ्यो के अनुसार गोपीचन्द का समय ग्यारहवी शताब्दी ठहरता है।[2]

तुफतुल किरान में पीरपटाव (सम्भावित गोपीचन्द) की मृत्यु १२०९ ई० में दी हुई है। इस अनुसार गोपीचन्द वारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वर्तमान थे।[3]

उपर्युक्त तथ्यो पर विचार करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि गोपीचन्द, निश्चित रूप से ऐतिहासिक व्यक्ति थे। उनका सबध पालवश से था तथा वे ग्यारहवी और वारहवी शताब्दी के बीच में सिहासनारूढ थे।

लोकगाथा में गोपीचन्द का सबध भरथरी से वतलाया जाता है। गोपीचन्द, राजा भरथरी के भांजे थे। जैसा कि हमने भरथरी की ऐतिहासिकता पर

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय—पृ० १६८

२—वही पृ० ५२

३—वही पृ० १६८

विचार किया है, उसके अनुसार यदि भरथरी शकारि विक्रमादित्य के भाई थे, तब तो गोपीचन्द से वे बहुत पहले हो चुके थे। यदि भरथरी उज्जैन के प्रतिहारो से सबध रखते है, तब उनका सबध गोपीचन्द से सम्भव हो सकता है। वस्तुत इस सबध की ऐतिहासिकता पूर्णतया सदिग्ध है।

भरथरी और गोपीचन्द का चरित्र—योगकथात्मक लोकगाथाओ के नायकों का चरित्र वर्णन अधिकाश रूप में समान है। अतएव यहाँ पर गोपीचन्द और भरथरी के चरित्र पर एक साथ ही विचार किया गया है। दोनो के चरित्र में प्रमुख अन्तर यही है कि राजा भरथरी के वैराग्य की कथा उनकी पत्नी सामदेई से प्रारम्भ होती है और राजा गोपीचन्द के त्याग की कथा माता मैनावती और बहन बीरम से सम्बन्ध रखती है।

योगकथात्मक लोकगाथाओ के नायक एक मत विशेष से सम्बन्ध रखते हुए भी सर्वसाधारण मे अपनी लोकप्रियता रखते है। इसका प्रमुख कारण है उनके जीवन का त्याग और तप। भारतीय सस्कृति की मूल भावना त्याग एव तप में ही निहित है। अतएव भारतीय जीवन में इनके चरित्र का लोकप्रिय होना एक स्वाभाविक बात है।

भरथरी का चरित्र एक प्रतापी एव अनुभूतिशील राजा के समान चित्रित हुआ है। अपने समय का महान् प्रतापी शासक, जीवन के विलास वैभव में रत रहने वाला, क्षत्रियत्व की प्रतिमूर्ति, राजा भरथरी घटनाक्रम में पडकर जीवन से अनासक्त हो जाता है। भारतीय इतिहास में इस प्रकार की अनेक घटनायें मिलती है जब कि महाप्रतापी व्यक्तियो ने स्त्री प्रेम के कारण अथवा प्रमिका के वियोग के कारण वैरागी हो गये है। राजा भरथरी भी इस प्रकार का एक व्यक्ति है जिसे मिलन की प्रथम रात्रि में ही भविष्य का सदेश मिलता है। उसकी स्त्री सामदेई पूर्व जन्म की मा सिद्ध होती है। भरथरी के हृदय को ठेस लगता है। घटनाक्रम आगे बढता है। गुरु गोरखनाथ द्वारा कालामृग पुन जीवित हो जाता है तो मृगिणियाँ भरथरी को धिक्कारती है—

> "एक त पापी हवे राजा भरथरी जे कइलें सत्तरसौ
> मिरगिन के राड।
> आउर एक त हवें बाबा गोरखनाथ जेरखलें सबकर
> अहिवात"।

भरथरी अपने गौरवपूर्ण जीवन की इस लाचारी को देखता है। उसका हृदय आन्दोलित हो उठता है। जीवन की निस्सारता पर तथा ऐश्वर्य के मिथ्या-भिमान पर उसकी सम्यक् दृष्टि जाती है। उसे अनुभव हो जाता है कि बिगाड़ने वाले से बनाने वाला अधिक महत्त्वपूर्ण एव श्रेष्ठ होता है। इस प्रकार उसके जीवन की दिशा निश्चित हो जाती है और वह गुरु गोरखनाथ के चरणो मे गिर पड़ता है।

परन्तु अभी तो शिष्यत्व की प्रथम परीक्षा उसे देनी ही थी। वह अपनी रानी के सम्मुख जाता है और उसको 'मा' कहता है। स्त्री-प्रेम तथा जीवन के वैभव विलास से उन्मुख होकर वह परीक्षा में उत्तीर्ण होता है तथा महान् सत के रूप मे अपना नाम अमर कर जाता है।

गोपीचन्द के कमनीय यौवन में भी भरथरी के समान विषम परिस्थिति उपस्थित होती है। माता का मोह भरा वात्सल्य, रनिवास की सिसकिया, प्रजाजनो की अटूट श्रद्धा और फिर उनके ऊपर एकमात्र प्रिय अनुजा वीरम का भ्रातृप्रेम, गोपीचन्द के वैराग्य मार्ग में उपस्थित होता है। परन्तु दृढ़ निश्चयी गोपीचन्द इस माया जाल से तनिक भी विचलित नहीं होता है। वह बधनमुक्त होकर चल देता है। चलते समय माता उससे अपने दूध का मूल्य माँगती है तो वह कहता है—

'कीनो विधवा माता तू देतू छुरिया कटारी,
काटि के करेजवा माता आगे धै देंती,
सिरवा कलफ के माता देती दुधवा के दाम
तीनो पर नाई होवें भाई तोरे दुधवा से उत्तिरिन।'

माता मैनावती कितना भी कहती है—

'बड बड जतनियाँ से बेटा गोपीचद पाली
कहली अइब गाढे दिन कामें'

परन्तु गोपीचन्द को अपनी माता की सेवा से बढकर ब्रह्मोपासना की धुन है। वह सब को बिलखता छोडकर गुरू के पास चला जाता है।

योगकथात्मक लोकगाथाओ में मोह एव त्याग का जितना खरा चित्र मिलता है, उतना अन्य किसी भी लोकगाथा में नही वर्णित है।

नाथ सप्रदाय के 'इन्द्रियनिग्रह' के सिद्धान्त को अति रोचक एव सुगम ढग से इन लोकगाथाओं में व्यक्त किया गया है। नाथधर्म में 'इन्द्रियनिग्रह' को सबसे प्रमुख स्थान दिया गया है। इन्द्रियनिग्रह में बाधा डालने वाली 'स्त्री होती है। इसीलिये नाथ सप्रदाय में 'स्त्री' को कही भी स्थान नही दिया गया है। प्रस्तुत लोकगाथाओ में इस सिद्धान्त का सुन्दर उदाहरण उपस्थित किया गया है। मोह एव माया की प्रतिमूर्ति स्त्री को भरथरी एव गोपीचन्द अपने दृढ़ सकल्पो से त्याग देते हैं। इसी पुनीत त्याग की गाथा को जोगियो ने अपनी सारगी की धुन पर चढाकर समस्त देश को वैराग्य एव तप का सदेश दिया है।

अध्याय ७

लोकगाथाओं में संस्कृति एवं सभ्यता

भोजपुरी सस्कृति एवं सभ्यता के मूल में प्रधान रूप से वीर प्रवृत्ति निहित है। श्री ग्रियर्सन तथा अन्यान्य विद्वानो ने इसी तथ्य को स्वीकार किया है। ग्रियर्सन ने भोजपुरी भाषा पर विचार करते हुये लिखा है कि, 'भोजपुरी उस शक्तिशाली, स्फूर्तिपूर्ण और उत्साही जाति की व्यावहारिक भाषा है जो परिस्थिति और समय के अनुकूल अपने को बनाने के लिये सदा प्रस्तुत रहती है और जिसका प्रभाव हिन्दुस्तान के प्रत्येक भाग पर पडा है।"[१]

अतएव भोजपुरी लोकगाथाओ मे भी प्रमुखरूप से वीरत्व की भावना पाई जाती है। भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ के अतिरिक्त प्रेमकथात्मक, रोमाचकथात्मक तथा योगकथात्मक लोकगाथाओ के अन्तर्गत भी यही वीरप्रवृति दिखलाई पडती है। वीरता का अर्थ युद्धवीरता ही नही है, अपितु जीवन की प्रत्येक जटिल परिस्थितियो का साहस के साथ सामना करना ही वीरता है। भोजपुरी लोकगाथाओ के प्रत्येक वर्ग के नायक अथवा नायिकाएँ इस कथन का समर्थन करती है।

भोजपुरी लोकगाथाओ के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्राय समस्त लोकगाथाए देश की मध्ययुगीन सस्कृति एव सभ्यता से सम्बन्ध रखती है। मध्ययुग, क्या राजनीतिक क्षेत्र में अथवा क्या धार्मिक क्षेत्र में, एक महान् उथल-पुथल का समय था। उस समय देश में विदेशियो का वेग के साथ आगमन हुआ। अनेक महान् राज्यो की स्थापना हुई तथा अनेक बडे राज्य उजड़ गये। जीवन की रक्षा का माध्यम खड्ग ही था। परन्तु इस राजनीतिक अराजकता में भी ग्रामीण जीवन में शान्ति और तारतम्य था। राजा, राजा से लडते थे, तथा सेना, सेना से लडती थी, प्रदेशो एव प्रान्तो का निपटारा होता जाता था, परन्तु गांवो का जीवन पुरातन काल ने शाति एव समान रूप से चला आ रहा था। वे राजनीतिक अधीनता चुपचाप स्वीकार कर लेते थे, परन्तु अन्य सभी क्षेत्रो म स्वतत्र थे। उनकी आन्तरिक चिन्ताधारा में कोई

१—ग्रियर्सन—लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इन्डिया—भाग ५

विशेष अन्तर नही आया था। धर्म के प्रति, देवी देवताओ के प्रति, वीरपुरुषो के प्रति उनकी आस्था अटूट थी।

राजनीतिक दृष्टि से शात रहते हुये भी गाव के जीवन में, धार्मिक विश्वासो में अनेक हेर फेर हुये, परन्तु गाव का धार्मिक जीवन अन्तत हिन्दू ही था। इस्लाम धर्म ने चाहे कितने वेग से क्यो न पदार्पण किया, परन्तु ग्रामीण जीवन के विश्वासो के सम्मुख वह अकर्मण्य सिद्ध हुआ। वे ग्रामीण हिन्दू, चाहे वैष्णव थे, चाहे शैव या शक्त अथवा वे नाथधर्म से भी क्यो न प्रभावित रहे हो, परन्तु सभी सिमट कर हिन्दू परिधि में ही सरक्षित थे। एक अद्भुत समन्वय उनके जीवन में था जो आज भी गावो में परिलक्षित होता है। इसी समन्यवयी जीवन ने ही कबीर एव तुलसीदास जैसे महात्माओ को उत्पन्न किया।

भोजपुरी लोकगाथाओ में इसी समन्वयकारी जीवन का मनोरम चित्र उपस्थिति किया गया है। लोकगाथाओ में युद्ध है, जीवन का सघर्ष है, मत मतान्तरो का अर्न्तद्वद्व है, परन्तु सभी में एक निहित एकात्मता है, सभी में सत्य, शिव एव सुन्दर का सन्देश है। खल प्रवृत्तियो का कितना भी प्राबल्य उनमें चित्रित किया गया हो, परन्तु अन्त में विजय उसी की होती है जो मानवता के चिरन्तन सत्य और आदर्श को लिए हुए हैं। उस सत्य और उस आदर्श का आधार भारतीय सस्कृति ही है। भारतीय सस्कृति की मल भावना में आध्यात्मिक जीवन को श्रेष्ठता मिली है। यही अध्यात्मिक जीवन इस देश में अनेकानेक धार्मिक रूपो में परिलक्षित हुआ है। धर्म के अनेकानेक रूप होते हुए भी 'ईश्वर' अथवा 'ब्रह्म' के विषय में मतभेद नही है। भोजपुरी लोकगाथाओ में इसी एक मूल भावना को लेकर धर्म में प्रगाढ आस्था प्रदर्शित की गई है। इसी धर्मध्वजा को लेकर लोकगाथाओ के नायक एव नायिकायें आगे चलते हैं। वे प्रेमी याचक है, परन्तु उनमें मर्यादा की सीमा लाघ जाने की प्रवृत्ति नही है। वे दैवी कृपा से युक्त हैं परन्तु मानवता के सरल जीवन से दूर नही है। लोकगाथाओ के चरित्र पाश्चात्य विचारको के अनुसार 'प्रिमिटिव कल्चर' से सम्वन्व नही रखते हैं अपितु उनका जीवन सुसस्कृत है। वे एक महान संस्कृति से सम्वन्ध रखते है जिसे पुन गतिशील वनाने के लिए भगवान को भी मनुष्य रूप में जन्म लेना पडता है। इसीलिए तो लोकगाथाओ के नायक एव नायिकायें अवतार के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं और 'परित्राणाय साधुना विनाशाय च दुष्कृताम्' का कर्त्तव्य सपन्न करके पुन ब्रह्म में विलीन हो

जाते है। लोकगाथाओ के नायक समाज मे सुव्यवस्था एव सामजस्य निर्माण करते हैं। सभी धर्मों को मान्यता देते हैं, सभी देवी देवताओ की पूजा करते है और इस प्रकार समन्वयकारी जीवन का अनुपम चित्र हमारे सम्मुख उपस्थिति करते हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओ मे जिम सामाजिक अवस्था का वर्णन किया गया है, वह एक अत्यन्त सभ्य एव सुसस्कृत समाज है। चातुर्वण्य अवस्था अपनी चरम सीमा पर है। ब्राह्मण अपने महत्व को रखता है, क्षत्रिय राजकारण एव युद्ध में कुशल है, वैश्य व्यापार में लगा हुआ है और शूद्रो का जीवन सेवारत है। इसके अतिरिक्त लोकगाथाओ में मानव की स्वाभाविक चित्त प्रवृत्तियाँ, उनका धर्माचरण, उनका सदाचार, उनकी ईर्ष्या एव कलह के जीवन का स्वाभाविक चित्रण हुआ है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में ब्राह्मण जाति का स्थान अनिवार्य है। इनमें ब्राह्मण जाति का चित्रण कुलपुरोहित के रूप में ही किया है गया। पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा तथा सस्कारो का सचालन करना ही उनका मुख्य कार्य है। वे कही शिक्षक अथवा उपदेशक के रूप में नही चित्रित किये गये हैं अपितु उनका कार्य है बालक के जन्म पर उसका लक्षण देखना, यात्रा के लिए शुभ साइत देखना, ग्रहदशा का विचार करना, वर-वधू खोजने जाना तथा उनका विवाह कराना इत्यादि। भोजपुरी की दो लोकगाथाओ में ब्राह्मणो की ईर्ष्या प्रवृत्ति भी प्रमुख रूप से चित्रित की गई है। सोरठी की लोकगाथा में व्यास पण्डित ईर्ष्या वश सोरठी को मार डालना चाहते हैं। इसी प्रकार विहुला की लोकगाथा में विपहरी ब्राह्मण, खलनायक है जो कि आदर्श पात्रो को अनेकानेक कष्ट देता है। इसके अतिरिक्त शेष सभी लोकगाथाओ में ब्राह्मण पुरोहित के रूप में ही चित्रित हुए हैं।

यह हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि भोजपुरी सस्कृति में वीरत्व की भावना प्रमुख रूप से वर्तमान है। इस दृष्टि से लोकगाथाओं में क्षत्रियो का जीवन अत्यन्त उदात्त रूप से चित्रित हुआ है। क्षत्रिय का धर्म है राज्य करना, तथा प्रजा की रक्षा करना। अतएव भोजपुरी लोकगाथाओ में क्षत्रिय जाति अत्यन्त प्रतापी एव लोकरजनकारी के रूप में वर्णित है। अधिकांश लोक-गाथाओ के नायक क्षत्रिय हैं जैसे बाबू कुँवर सिंह, विजयमल, आल्हा ऊदल, गोपीचन्द तथा भरथरी। इन सभी नायको का जीवन क्षत्रिय आदर्श मे ओत-प्रोत है। उनका राज-पाट, सुखवैभव, युद्ध और त्याग, तपस्या, उदारता सभी क्षत्रियत्व के योग्य हुआ है। उन्होने कभी भी कोई **निकृष्ट कर्म** नही किया

है। वे लोकरजनकारी, प्रजाहितकारी तथा दुष्टो का मानमर्दन करने वाले है। 'लोरिकी' की लोकगाथा जो अहीर जाति से सम्बन्ध रखती है, उसमें भी क्षत्रिय आदर्श का अत्यधिक प्रभाव पडा है। इस लोकगाथा का नायक 'लोरिक' स्वय को क्षत्रिय ही कहता है। उसके जीवन के समस्त कार्यकलाप क्षत्रिय वीर की भाँति है, अतएव उसका क्षत्रिय कहना उपयुक्त है। वस्तुत भोजपुरी प्रदेश में राजपूत क्षत्रियो की एक बहुत बडी आबादी है। मध्यकाल में तथा इसके पूर्व भी इनके वशधर बडे प्रतापी व्यक्तियो में थे। इसी कारण भोजपुरी समाज, क्षत्रिय जाति का बहुत आदर करता है। बाबू कुँवरसिंह इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं।

वैश्यो के जीवन का चित्रण 'शोभानयका बनजारा' की लोकगाथा में मिलता है। इसमें भोजपुरी समाज के व्यापार-वाणिज्य का सुन्दर उदाहरण उपस्थित किया गया है। शोभानयका इस लोकगाथा का नायक है जो कि सोलह सौ बैलो पर जीरा मिर्च लाद कर मोरग देश व्यापार के लिए जाता है। व्यापार की उसे इतनी चिन्ता है कि वह प्रथम रात्रि में ही अपनी प्रिय पत्नी को छोड कर चल देता है। वैश्यो का धर्म है व्यापार वाणिज्य करना, यह कथन अक्षरश इस लोकगाथा में लागू हुआ है। परन्तु इसके साथ-साथ भारतीय जीवन का आदर्श भी उसमें उपस्थित है। नायिका दसवन्ती अपने सतीत्व की रक्षा किस प्रकार करती है, यह श्रवण करने योग्य है।

प्राय समस्त भोजपुरी लोकगाथाएँ समाज के निम्नवर्ग में प्रचलित हैं। अतएव शूद्रो और अन्त्यज (हरिजन, चमार, दुसाध) के जीवन का व्यापक चित्रण इनमें मिलता है। सर्व साधारण रूप से प्रत्येक लोकगाथा में शूद्रो के जीवन का चित्र है। अधिकांश रूप में तो वे सेवा कार्य में ही निरत हैं, परन्तु दो एक लोकगाथाओ में खलनायक के रूप में भी वर्णित हुये है। लोकगाथाओ में शूद्रो की अनेक जातियो का वर्णन मिलता है जैसे, नाई, कहार, चमार, मल्लाह, धोबी, दुसाध तथा अहीर इत्यादि। यह सभी जातियाँ अपने परपरागत कर्मो को उचित रूप से करती है। परन्तु सबसे उल्लेखनीय बात तो यह है कि लोकगाथाओ का उच्च समाज उन्हें घृणा की दृष्टि से देखता है। यहाँ तक कि लोकगाथाओ के आदर्श नायक एव नायिका भी उनसे घृणा करती है। उदाहरण के लिये लोरिक अपने जन्म के समय मे कहता है—

"सुनवे त सुनव माता कहल रे हमार,
घरवा में चमाइन (चमारिन) माता लेवू जो बुलाय

हमरो धरमवा ये माता जाई हो नसाय
घर के बहरवे बगडिन के राखहु बिलमाय'

इसी प्रकार सोरठी भी अपने जन्म के समय कहती है—

'एक तो चुकवा हमरा मे भइल नुरे की
तेही कारण इन्द्र राजा दिहले सरपवा हो
नर जोइनी होई अवतार नुरे की
जब छुइ दीहे चमइन हमरी शरिरिया हो
हमरो धरमवा चलि जाइ नुरे की,

इस प्रकार से लोकगाथाओ मे शूद्रो एव अन्त्यजो के प्रति घृणा एव हीनता प्रदर्शित करने की परम्परा दिखलाई पडती है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में सामाजिक सस्कारो का मनोरम चित्रण मिलता है, विशेष करके जन्म एव विवाह सस्कार का तो विधिवत् वर्णन मिलता है। भारतीय समाज में यह दो संस्कार अत्यन्त महत्व का स्थान रखते है। प्रत्येक गृह में बालक जन्म लेता है तो उसे राम, कृष्ण का अवतार ही समझा जाता है। विवाह होता है तो घर की स्त्रियाँ यही गाती है कि भगवान राम, सीता से विवाह करने जनकपुर ही जा रहे हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ में बाबू कुवर-सिंह की लोकगाथा को छोडकर सभी मे जन्म और विवाह सस्कार अनिवार्य रूप से वर्णित है। अधिकाश लोकगाथाए तो नायक नायिकाओ के विवाह के पश्चात् समाप्त हो जाती हैं। नायक और नायिकाओ का जन्म खलप्रवृत्तियो के नाश के लिए होता है। वे अपने उद्देश्य को पूर्ण कर वैवाहिक बधन में आते है और इस प्रकार सुखी जीवन का सदेश देते हैं। इसीलिये भोजपुरी लोक-गाथाए अधिकांश रूप में मगलात्मक हैं।

वीर कथात्मक लोकगाथाओ में प्रत्येक नायक वीरता का अवतार है। उसके जन्म लेते ही चारो ओर आशा और विश्वास का वातावरण उत्पन्न हो जाता है। लोक जीवन मे आनन्द की लहर उमड पडती है। उदाहरण के लिए लोरिक के जन्म का वर्णन इस प्रकार है—

"दिन दिन बढत गरभवा नवइया होत ये जाय,
छव मास बितले महिनवाँ आठो भइले आए,
नउवा महिनवा रामा चढल अब रे आय,
"आधी रात होउते छयी जनमवा निहलस हो आए

जब तो जनमवा रे लिहले लोरिकवा मनि ए आर
सवा हाथ धरतिया ए रामा उहवा उठल हो बाय
महाबली भइल पैदवा गउरवा गुजरात
दीपक समान लोरिकवा महलवा बरत हो बाय"

कुवर विजयमल की लोकगाथा में और भी उत्साहपूर्ण वर्णन मिलता है—

"रामा कुवर बिजई लिहले जनमवा रे ना
रामा गढवा बाजेला नगरवा रे ना
रामा दुअरा पर झरे नौबतिया रे ना
रामा लागि गइले दुअरा झमेलवा रे ना
रामा मागे लगले नेगी आपन नेगवा रे ना
रामा आइ गइले भाट पवरिया रे ना
रामा गावे लगले मगल गीतिया रे ना
रामा देवे लगले राजा बहुदनवा रे ना
रामा अन्नधन लुटावे लगले सोनवा रे ना
रामा खुशी होइ गइले सब घरवा रे ना"

राजा उदयभान को बड़े तप के पश्चात् एक कन्या उत्पन्न हुई। सोरठी के जन्म का वर्णन कितना सुन्दर है—

"आठ तो महिनवा राजा नउआ चढ़ि गइले हो
तब भइले सोरठी के जनम नुरे की।
सवा पहर रामा सोना हीरा बरिसे हो
सोनवा के ढेरिया अगना में लागल नुरे की"

इस प्रकार लोकगाथाओ के नायिकाओ के जन्म के साथ धन-सपदा से सभी लोग भरपूर हो जाते हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओ में विवाह का विशद् वर्णन मिलता है। भोजपुरी प्रदेश अथवा यो कहा जाय कि जिस प्रकार उत्तरी भारत मे विवाह की प्रथा प्रचलित है, उसी का ब्यौरेवार वर्णन इन लोकगाथाओ में मिलता है। इन लोकगाथाओ मे वर देखना, फल्दान चढना, तिलक चढ़ना, और इसके उपरान्त बारात की धूम-धाम से तैयारी करना, कन्यापक्ष की ओर बारात के लिये तथा दहेज का भरपूर प्रबन्ध करना वर्णित है। इसके पश्चात् बारात की अगुवानी, द्वारपूजा, तथा लग्न मडप में विवाह का विधिवत् वर्णन मिलता है। उदाहरण के लिए शोभानयका बनजारा की लोकगाथा में विवाह का सागोपाग वर्णन इस प्रकार है—

"राम सजे लगले सुवर वरतिया रे ना,
रामा हाथी घोड़ा साजे ले पलकिया रे ना,
रामा रथ वग्घी साजि लिहले गड़िया रे ना,
रामा रहवा के खेवा से खरचवा रे ना,
रामा लादी लिहले गाड़ी पर समनवा रे ना,
रामा दल फल भइल नगरवा रे ना,
रामा हाथी घोड़ा होईं असवारवा रे ना,
रामा पहुँचल वरीयात धूम धामवा रे ना,
रामा नगर में भइल भारी शोरवा रे ना,
रामा वाजे लागल जोर से वजनवा रे ना,
रामा जुटी गइले नगर के लोगवा रे ना,
रामा मिली जुली लेई वरिअतिया रे ना,
रामा जाइके लगले दुअरिया रे ना,
रामा दुअरा पर हो लागल पुजवा रे ना,
रामा भने लगले वेद वभनवा रे ना,
रामा दुअरा के करिके रसमवा रे ना,
रामा टीकल वरियात जनवासवा रे ना,
रामा होखे लागल खातिर समानवा रे ना,
रामा सदिया के भईल जव वेरवा रे ना,
रामा मड़प में गइले दुलहवा रे ना,
रामा हो लागल विधि से विधानवा रे ना,
रामा भने लगले वेदवा वभनवा रे ना,
रामा होइ गइले कुशल विअहवा रे ना,
रामा वर कन्या गइले कोहवरवा रे ना,
रामा कोहवर में सखिया सहेलिया रे ना,
रामा करे लगली हसिया दिलगिया रे ना"

आल्हा के विवाह में वारात की तैयारी ऐसी हो रही है जैसे रणक्षेत्र में सव जा रहे हो।

"चलल परवतिया परवत केलग्कर वाघ चले तरवार
चलल वगाली वगला के लोहन में वड चड़ाल
चलल मरहट्टा दक्खिन के पक्का नौ नौ मन के गोला खाय
नौ सौ तोप चलल सरकारी मगनी जोते तेरह हजार

बावन गाडी पथरी लादल तिरपन गाडी बरूद
बत्तिस गाडी सीसा लद गैल जिन्ह के लगे लदल तरवार
एक रुदेला एक डेबा पर नब्बे लाख असवार"

वीर कथात्मक लोकगाथाओ में बारात की सजधज इसी प्रकार की है। विवाह मडप में तो युद्ध होना अनिवार्य ही है। शेष सभी लोकगाथाओ में विवाह का शान्ति एव सौजन्य पूर्ण वर्णन मिलता है।

लोकगाथाओ में दहेज की प्रथा आज से भी बढ चढ कर चित्रित की गई है। क्या गरीब क्या धनवान सभी भरपूर दहेज देते है। परन्तु आज की तरह उस समय किसी वस्तु की किल्लत न थी। लोकगाथाओ में समाज का प्रत्येक वर्ग सुसपन्न है, अतएव वह अपनी शक्ति भर धन न्योछावर करता है। लोकगाथाओ में देश के दारिद्र्य का वर्णन कही भी नही मिलता है। किसी भी वस्तु की कमी किसी के जीवन में नही है। चारो ओर राम राज्य है। गोपीचन्द की लोकगाथा में दहेज का वर्णन कितना भव्य है —

'तीन सौ नवासी गऊँवा तिलक के चढाई,
बारह सौ घोडवा देई वहिनी के दहेज,
पाँच सौ हथिया दिहली हँकवाई,
कहली आज बहिनियाँ के दिहले कुनफे नाही जाई।

•

सबका वदसहिया वहिनी कपडा पहिरोंई
अमीर आ दुखिया के वहिनी एक्के किसमवा कइली
सोने के पिनसिया बहिनी हम त ओठाई
चाँदी के डोलिया वहिनी तोहरे लौंडिन के भेजवाई।

इन लोकगाथाओ में विवाह के अतिरिक्त कही कही स्वयवर प्रथा का भी उल्लेख किया गया है। उदाहरण के लिये सोरठी की लोकगाथा में नायक वृजाभार अनेक राजाओ द्वारा आयोजित स्वयवर में जाता है और विजय प्राप्त करता है। परन्तु इसमें भी विवाह आदि की प्रथा उपर्युक्त वर्णन के समान है।

भोज पुरी लोकगाथाओ में जीवन के भौतिक स्तर का पूर्ण वर्णन मिलता ह। लोगो का रहन सहन, श्रृगार सज्जा एव भोजन इत्यदि वडे सुरुचिपूर्ण ढग का है। लोकगाथाओ के प्रमुख चरित्र अधिकाश रूप में विशाल महलो, अट्टालिकाओ में निवास करते हैं, सहस्त्रो दास दासियो से घिरे रहते है, सुन्दर से सुन्दर वस्त्र पहनते है तथा छप्पन प्रकार के व्यजनो का भोजन करते हैं। वस्तुत हमारे देश का लोकजीवन पुरातन काल से समृद्ध रहा है। उत्कृष्ट

वस्त्राभूषण तथा उत्कृष्ट भोज्य पदार्थों का वर्णन प्राय सभी ग्रन्थो में मिलता है। अतएव इन लोकगाथाओ मे इनका वर्णन अत्यन्त स्वभाविक है।

सोरठी की लोकगाथा में बृजाभार की स्त्री हेवन्ती के श्रृंगार का वर्णन कितना रोचक है—

"एकिया हो रामा हेवन्ती सिंगार करतौ वाडी रे नुकी
एकिया हो रामा पहिने पायल पाव जेववा रेनु की
एकिया हो रामा डड जोरे दखिन के चीर रेनु की
एकिया हो रामा चोली वका के पहिनऽ तारी रेनु की
एकिया हो रामा कान में कुंडल नाक में वेसर रेनु की
एकिया हो रामा सोनन के बन्हनिया पेन्हऽ तारी रेनु की
एकिया हो रामा वाह में वाजूवन्द बाघऽ तारी रेनु की
एकिया हो रामा नग के जड़ वल अगूठी पेन्हऽ तारी रेनु की
एकिया हो रामा सोरहो सिंगार वत्तीसो अभरनकइली रेनु की।

'आल्हा' की लोकगाथा में सोनवा का श्रृंगार कितना भव्य है—

खुलल पेटारा कपडा के जिन्ह के रासदेल लगवाय,
पेन्हल घाघरा पच्छिम के मखमल गोट चढ़ाय,
चोलिया पेन्हे मुसरुफ के जेहमें वावन वद लगाय,
पोरे पोरे अगुठी पडि गैल और सारे चुनरिया के झझकार,
सोभे नगीना कनगुरिया में जिन्ह के हीरा चमके दांत,
सात लाख के मगटीका है लिलार में लेली लगाय,
जूडा खुल गइल पीठन पर जैसे लोटे करियवा नाग,
काढ़ दरपनी मुंह देखे सोनवां मने मन करे गुमान"

इस प्रकार भोजपुरी नायिकायें दक्षिण की चीर और मुसरुफ की चोली ही पहनती है। प्रत्येक स्थान पर सोलहो श्रृंगार तथा वत्तीसो आभरण का उल्लेख मिलता है। नायिकाओ के प्रमुख आभूषणो, में चद्रहार, माँगटीका, वाजूवन्द पायजेव, नाक में कील (नकवेसर) अगूठी इत्यादि का वर्णन मिलता है। नायिकाओं के अतिरिक्त नायको के वेष मे पगडी, चौबन्दी, धोती, कटार और मस्तक पर तिलक देने का वर्णन मिलता है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में छत्तीस अथवा छप्पन प्रकार के व्यजनो से कम का वर्णन नही मिलता है। नैमित्तिक भोजन में किसी प्रकार की कमी नही है।

घी, दूध, दही, मिठाई इत्यादि का तो बाहुल्य है। उदाहरण के लिये शोभानयका बनजारा की लोकगाथा में भोजन का दृश्य कितना रोचक है—

"रामा उठि गइले सब बरिअतिया रे ना
रामा भोजन के भईल बिजइया रे ना
रामा चलि गइले करन भोजनिया रे ना
रामा जाइ बइठे अगना भितरिया रे ना
रामा बनल रहे सुन्दर भोजनवा रे ना
रामा छत्तीस रकम के चटनियाँ रे ना
रामा दही चीनी रबडी मलइया रे ना
रामा कहाँ तक करी हम बडइया रे ना
रामा करे लगले भोजन बरतिया रे ना"

इसी प्रकार प्रत्येक लोकगाथा में भोजन के वर्णन में छत्तीस या छप्पन व्यजन का ही वर्णन है। इसके साथ साथ पान तम्बाकू, फ़रशी इत्यादि का भी उल्लेख है—

"रामा रचि रचि सजइहें पान बिरवा रे ना
रामा भरि डिब्बा धरिहें सिरहनवा रे ना
रामा मुश्की भरिहें चिलम तमकुआ रे ना"

लोकगाथाओ में अधिकाश रूप में निरामिष भोजन का ही उल्लेख है। मदिरा और मास का केवल दो एक स्थान पर ही उल्लेख हुआ जो कि नगण्य है।

जीवन का यथार्थ चित्रण —भोजपुरी लोकगाथाओ में जीवन का सरल एव स्वाभाविक चित्र उपस्थित किया गया है। इस कारण इसमें स्थान स्थान पर अश्लीलता का भी समावेश हो गया है। लोकगाथाओ में समाज के अच्छे बुरे सभी लोगो का वर्णन किया गया है, अतएव इनमें अश्लील शब्दो एव सबोधनो का प्रयोग हो जाना स्वाभाविक है। लोकगाथाओ का गायक समाज के गुण दोष को स्पष्ट रूप में सम्मुख रखता है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में कही कही तो गायक भी गालीगलौज करते हैं। शृंगार-रस के वर्णनों ने कही कही पर अति यथार्थवादी रूप धारण कर लिया है। शोभानयका बनजारा की गाथा में शोभा नायक मनिहारी का वेष बनाकर नायिका दसवन्ती से भेंट करता है और सौदे के मूल्य में चुबन मांगता है।

"रामा कहे तव शोभा बनिजरवा रेना
रामा काहे भइ गइल मनरजवा रेना
रामा सुन ठिक सउदा के दामवाँ रेना
रामा चुम्मा पर हमरे सउदवा रेना
रामा विकेला त शहर बजरवा रेना
रामा दिहें मोही जिन्ही एक चुम्बवा रेना
रामा मनमाना लिहे उ सउदवा रेना
रामा इहे मोरे सउदा के दामवा रेना"

लोकगाथाओ में भोग विलास का भी चित्रण मिलता है। विजयमल की लोकगाथा में पुत्र प्राप्ति के हेतु, शुभ साइत देखकर विलास किया गया है—

"रामा तव गइली रानी राजमहलिया रेना
रामा राजा रानी सुते सगे सेजरिया रेना
रामा आधी रात बीते जब समइया रेना
रामा राजा डाले रानी गइले बहिया रेना
रामा बाए हथवा फेरेले अचवरिया रेना
रामा हसि रनियाँ बोलेली बचनियाँ रेना
रामा करे लगले प्रेम से पियरवा रेना
रामा पूरा भइले मौज बहरवा रेना"

पुत्र प्राति के हेतु इस प्रकार के कम ही चित्र मिलते है। लोकगाथाओ में नीच स्त्रियो तथा जादूगरनियो का भी विलास चित्रण मिलता है। ये नायक को देखकर मोहित हो जाती हैं और येनकेनप्रकारेण उसे चगुल में फसाकर रतिदान मागती हैं।

लोकगाथाओं में गालियो में 'सरवा' 'छिनरो' शब्द का अधिक प्रयोग है। इस प्रकार की गालियाँ आदर्श से आदर्शवादी पात्र को परिस्थिति में पड़कर सुनना पडता है।

उपर्युक्त प्रकार के अति यथार्थवादी जीवन का वर्णन होते हुए भी हम यह कदापि नहीं कह सकते है कि लोकगाथाओ में असभ्य जीवन का चित्र उपस्थित किया गया है। भोजपुरी लोकगाथाओ में आदर्श इतना महान् है कि सभी बुराइयाँ उस आदर्श से ढँक जाती हैं। इन लोकगाथाओं का श्रवण करने से हृदय में कभी भी अपवित्र भाव नही उठने पाता।

प्रस्तुत अध्याय में लोकगाथाओ में भोजपुरी सस्कृति एव सभ्यता की अभिव्यक्ति किस सीमा तक हुई है, हमने विचार किया है। स्काटलैंड के प्रसिद्ध

देशभक्त फ्लैचर का कथन है कि किसी भी देश का लोक साहित्य उसके विधान से भी बढकर होता है। वास्तव में यह कथन अक्षरश सत्य है। किसी भी देश को यदि मूल रूप में समझना हो तो वहाँ के लोकजीवन से बिना परिचय पाए हुए, उस देश की सास्कृतिक चेतना को हम नही समझ सकते। किसी भी देश के साहित्य और विज्ञान की उन्नति को देखकर हम वहाँ के तत्कालीन समाज की उन्नत अवस्था का अनुमान लगा सकते हैं। परन्तु अपनी कमजोरियो और मजबूतियो के साथ वह देश किन विशेष आधारो पर अवस्थित है, उसके जीवन का मूल क्या है तथा समाज की आकाक्षाएँ क्या है, इत्यादि जानने के लिए वहाँ के लोक साहित्य का पूर्ण परिचय प्राप्त करना होगा।

इस दृष्टि से देखने से हमें भोजपुरी लोकगाथाओ में भोजपुरी जीवन का आदर्श एव भव्य चित्र मिलता है।

— ० —

अध्याय ८

भोजपुरी लोकगाथा में भाषा एवं साहित्य

भाषा—भोजपुरी लोकगाथाओ में भाषा एव साहित्य का स्वाभाविक प्रवाह है। लोकगाथाओ में भोजपुरी ग्रामीण समाज की दैनन्दिन भाषा का प्रयोग किया गया है। लोकगाथाओ का एकत्रीकरण भोजपुरी प्रदेश के तीन जिलो से किया गया है, प्रथम छपरा जिले से द्वितीय वलिया जिले से तथा तृतीय गोरखपुर जिले से। अतएव हमारे सम्मुख भोजपुरी के अनेक रूपो में केवल आदर्श भोजपुरी रूप उपस्थित होता है। आदर्श भोजपुरी का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है। आदर्श भोजपुरी प्रधानतया शाहावाद, वलिया, गाजीपुर जिले से पूर्वी भाग और सरयू एवं गंडक के दोआव में वोली जाती है। इसमें गोरखपुर तथा सारन जिले का भी समावेश हो जाता है।

आदर्श भोजपुरी में दो प्रधान भेद हैं। एक है दक्षिणी आदर्श भोजपुरी जो कि शाहावाद, वलिया और गाजीपुर के पूवी भाग में वोली जाती है तथा दूसरी उत्तरी आदर्श भोजपुरी रूप जो कि गोरखपुर और उससे पूर्व की ओर वोली जाती है। इसके भेद स्पष्ट हैं। शाहावाद, वलिया और गाजीपुर आदि दक्षिणी जिलो में सहायक क्रिया में जहाँ 'ड' का प्रयोग किया जाता है, वहाँ उत्तरी जिलो में 'ट' का प्रयोग होता है। इस प्रकार उत्तरी आदर्श भोजपुरी में जहाँ 'वाटे' का प्रयोग किया जाता है वहाँ दक्षिणी आदर्श भोजपुरी में 'वाडे' का प्रयोग होता है। वलिया और सारन, दोनो जिलो में आदर्श भोजपुरी वोली जाती है, परन्तु दोनो में कुछ शब्दो के उच्चारण में अन्तर है। वलिया या शाहावाद के लोग 'ड' उच्चारण करते हैं परन्तु छपरा वाले 'र' उच्चारण करते हैं। उदाहरणार्थ जहाँ वलिया निवासी 'घोडा गाडी आवत वा' कहता है वहाँ छपरा निवासी 'घोरा गारी आवत वा' वोलता है।

लोकगाथाओ में भी उपर्युक्त अन्तर स्पष्ट है—

उत्तरी आदर्श भोजपुरी (गोरखपुर)

"तव तो डपटी वचनिया वोली सत्तर सौ मिरगिन
कि राजा सुन मोरी वात
जो राजा खेलने के सौक वाटे सिकार
तो मिरगिन मार लेंई दुइ चार"

दक्षिणी आदर्श भोजपुरी का उदाहरण—

राजा जनम लेले बाड़े लड़िकवा रेना
रामा जलदी बोलाव धगढिन के रेना
रामा लडिका रोवे लागे त गिरे मोतिया रेना
रामा हँसे लागे त गिरे हीरवा रेना

इन दोनो रूपो में हम 'ट' और 'ड' का स्पष्ट अन्तर देख सकते है। इसी प्रकार से दोनो रूपो में किचित अतर मिलता है, वस्तुत दोनो रूप अधिकाश में समान ही हैं।

साहित्य—लोकगाथाओ की प्रमुख विशेषता है उसकी वर्णनात्मकता। भोजपुरी भाषा के माध्यम मे गायको ने लोकगाथाओ को अति रोचक एव प्रवहमान बना दिया है। विस्तृत वर्णन के लिये भोजपुरी भाषा बडी उपयुक्त है। हम सभी जानते है कि भोजपुरिये खडी बोली हिन्दी को भी बिलम्बित उच्चारण (रेघाकर) से बोलते हैं। इससे उनके स्वर मे गेयता आ जाती है। इसलिये भोजपुरी लोकगाथाओ में वर्णनात्मकता के साथ साथ स्वाभाविक गेयता भी रहती है।

वास्तव में लोकसाहित्य के प्रत्येक अग में साहित्य का अभाव रहता है। इसका सब से प्रमुख कारण है कि यह साहित्य ग्रामीण जनता में निवास करता है तथा साथ ही जो मौखिक परम्परा का अनुगामी है। ग्रामीण जनता 'साहित्य' शब्द से परिचित नही रहती। वे काव्य-कला, रस अलकार एव छन्द से अनभिज्ञ रहते हैं। अतएव लोकसाहित्य में साहित्यिकता का अभाव, एक प्रमुख विशेषता है।

लोकगाथाओ के गायक, घटनाओं का वर्णन करते हैं। उनके वर्णन में नायक अथवा नायिकाओ का सांगोपांग जीवन रहता है। इसलिये वे द्रुतगति से तथा अत्यन्त विस्तार के साथ घटनाओ का वर्णन करते हैं। लोकगाथाओ में जीवन की समस्त घटना वर्णित रहती है तथा क्रमबद्ध कथानक का सिलसिला रहता है। गायक को यही चिन्ता रहती है कि कही भी कोई घटना अथवा कथानक छूटने न पाये। अतएव वह धाराप्रवाह रूप में वर्णन करता चलता है। इसी प्रवाह में कथानक के अनुसार गायक के स्वर में परिवर्तन होता रहता है। लोकगाथा के चरित्र को यदि दुख मिल रहा है तो गायक का स्वर करुणा से परिपूर्ण हो जायगा, यदि वह युद्ध स्थल में है तो उसके स्वर में वीरत्व का ओज

आ जाता है। इन्ही मार्मिक एव सुखद् अनुभूतियो के फलस्वरूप लोकगाथाओ मे अनायास ही 'अलकारो' एव 'रस' का परिपाक् देखने को मिल जाता है।

यह विशेषता भोजपुरी लोकगाथाओं की ही नही है अपितु ससार के सभी देशो की लोकगाथाओं में है। इसलिये तो पडित रामनरेश त्रिपाठी ग्राम गीतो को अलकृत कविता से पार्थक्य बतलाते हुये लिखते है कि "ग्राम गीत हृदय का धन है और महाकाव्य मतिष्क का। ग्राम गीत में रस है, महाकाव्य में अलकार, रस रचनात्मक हैं और अलकार मनुष्य निर्मित। ....
ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार है, इनमें अलकार नही केवल रस है छन्द नही केवल लय है, लालित्य नही केवल माधुर्य है।"

भोजपुरी लोकगाथाओ में प्रधान रूप से तीन रसो का परिपाक हुआ है। वह है वीर रस, शृगार रस तथा करूण रस। अतएव हम यहाँ पर इनके उदाहरण प्रस्तुत करेंगे।

वीर रस —आल्हा की लोकगाथा में युद्धो का रग पूर्ण वर्णन है। ऊदल की वीरता का एक चित्र इस प्रकार है--

"फांद बछेडा पर चढ़ि गइल गगा तीर पहुँचल बाय
पडल लडाई है छोटक से
तडतड़ तेगा बोले उन्ह के खटर खटर तरवार
जैसे छेरियन में हुँडडा पडि गइल वैसे पलटन में पडल
रूदलवबुआन
जिन्हके टगरी धँके बोगे से त चूर चूर होइ जाय
मस्तक झारे हाथी के जिन्हके डोगा चलल बहाय
थापड ऊँटन के चार टाँग चित हो जाय
सवा लाख पलटन कटि गइल छोटक के
जौ तक मारे छोटक के सिरवा दुइ खण्ड होय जाय
भागत तिलग छोटक के राजा इन्दरमन के दरबार
कठिन लका बा बघ ऊदल के काटि कइल मयदान।"

इसी प्रकार लोरिक की वीरता का वर्णन कितना भव्य है—

'एक बेरी छरकल उहवाँ लोरिकवा खिसिये आय'
छरकी के उहवाँ लोरिकवा तेगवा दिहलस घुमाय

नौ सौ फउदिया मुडवा काटी दिहलस गिराय
जैसे त काटे य दादा खेती लोग किसान
तैसे त कटत फउदिया लोरिकवा मनि ये यार
पुरूब से पैठे लोरिकवा पछिम चलि रे जाय
दखिन से पैठे लोरिकवा उतर निकलि रे जाय
घुमि घुमि पलटन के दादा काटत रे बाय'

विजयमल की बीरता का चित्र कितना यथार्थ है—

रामा हिछल घुरिया उडवलस सरगवा रेना
रामा घेरे जैसे सावन बदरवा रेना

श्रृङ्गार रस —वीर रस के पश्चात भोजपुरी लोकगाथाओ में श्रृङ्गार रस का अनुपम चित्र मिलता है। इसमें विप्रलभ एव सयोग श्रृगार का मनोरम वर्णन मिलता ह।

सोरठी की लोकगाथा मे विप्रलम्भ श्रृगार का वर्णन—

एकिया हो रामा लीला पुर में तडपत बाडी फुलिया फुल कुवरी हो
देखतारी बटिया तोहार रेनुकी
एकिया हो रामा सुरुज मनावतारी करिके अरिजिया हो
कहिया ले अइहें बृजाभार रेनुकी
एकिया हो रामा अब कुवर अइहें मनसा पुरइहें हो
लागल बाडे असरा बहुत दिनवा से रेनुकी"

बृजाभार की रानी हेवन्ती का उपालम्भ वर्णन—

एकिया हो रामा गवना करवलऽ घरे लेई अइलऽ हो
ना कइलऽ कोहवर हमार रेनुकी,

एकिया हो रामा जोगवा रमवलऽ गइलऽ सोरठपुर नगरवा हो
हमरा के सामी छछनाई के रेनुकी
एकिया हो रामा पछवा लागल गइली नदी के किनरवा हो
तवहूँना कइलऽ मोर खयेलवा रेनुकी
एकिया हो रामा हमरा से गइलऽ सामी करके दगवा हो
बारह बरिस के दिनवा देई के रेनुकी
एकिया हो रामा तोहरे वचनवा पर धइली तिहवा हो
मनवा में करिके सबुरवा रेनुकी।

सयोग शृगार—

"एकिया होरामा बगिया मे सोरठी जब पहुँचलि रेनुकी
"एकिया हो रामा देखि के फुलवरिया खुशिया भइल रेनुकी
"एकिया हो रामा जोगिया के लगवा सोरठी गइल रेनुकी
"एकिया हो रामा चारु नजरिया जब मिलल रेनुकी
"एकिया हो रामा प्रेमवा के मारे निरवा ढरेला रेनुकी

सोरठी के सौन्दर्य का वर्णन—

रामा जब सोरठी भइली जवनिया रेना
'सुरती बरेला सुरज जोतिया रेना'

आल्हा की वीरकथात्मक लोकगाथा में भी सोनवा के सौन्दर्य का नर्णन कितना रोचक है—

"काढ दरपनी मुह देखे सोनवा मने मन करे गुमान
मरजा भइया राजा इन्दरमन घरे बहिनी राखे कुवार
बैस हमार बीत गैल् नैनागढ में रहली बार कुआर
आग लगाइब एह सूरत में नैसौवली नार कुआर।"

'विजयमल' की लोकगाथा मे मुग्धा नायिका का वर्णन कितना सुन्दर है—

'रामा पहिले लाघे तिलकी जब देवढिया रेना
रामा कडके लगली चोली अनमोलिया रेना
रामा दूजे देवढी लाघे तिलकी देइया रेना
रामा चोली बन्दवा टूटल ओहि समइया रेना
रामा तिसरी देवढी लाघे तिलकी रनियाँ रेना
रामा खसकि गइल कमर के सरिया रेना
रामा हँसे लगली सखिया सहेलिया रेना
रामा पीटे लगली मव मिली तलिया रेना
रामा सुन सुन चल्हकी भउजिया हमरी वचनिया रेना
रामा केहिरे करनवें चोली बन्दवा टूटल एराम
रामा केहिरे करनवें असगुन भइल ए राम
रामा नान्ही से पेन्हली भउजी हम सारी चोलिया रे ना
रामा कबही ना अइसन अचरज भइल ए राम
रामा रहि रहि आवे भउजी हमरा रोअइया ए राम
रामा नयना टपकि नवरग भीजेला ए राम

ए राम हमरा के लागी भारी कलंकवा रे दइबा
सब लोगवा दोसवा दिहें ए रामा
ए राम एक मोर जरले करमवा रे दइबा
दूजे बदनमवा होइ ए राम
ए राम, सब लोग मिलि मोहें कहिहे रे दइबा
बिहुला आयन पुरसुवा मरली ए राम
ए राम इहे सब सोची बिहुला रोवे रे दइबा
नयना से निरवा ढारी ए राम"

इन उपर्युक्त उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि भोजपुरी लोकगाथाओ में रस का परिपाक अत्यन्त स्वाभाविक ढग से हुआ है। उसमें प्रयत्न-पूर्वक रस निर्माण की चेष्टा नही की गई है। उपर्युक्त पद्याशो को पढने से भी सभवत हृदय मे रस की अनुभूति न हो परन्तु श्रवण करने से तो अवश्य ही रसानुभूति होती है। इस रसानुभृति को उत्पन्न करने का श्रेय कथानक एव गायक को है। कथानक के अनुरूप ही गायक विभिन्न स्वरो से रसोद्रेक करता है।

छद-शैली—भोजपुरी लोकगाथाओ में छन्द विधान नही पाया जाता है। वास्तव में यदि इसे छन्द नाम अभिहित भी किया जाय तो उसे हम 'द्रुतगति-छन्द' कह सकते हैं। जिस प्रकार ग्रीस के आदि-कवि ने 'रन-आन-वर्सेस के द्वारा गाथाओ की रचना की थी, ठीक उसी प्रकार भोजपुरी गायक इसी छन्द के द्वारा लोकगाथा को गाते हैं। योगकथात्मक लोकगाथाओ में सगीत शास्त्र के अनुसार थोडा सा क्रम रहता है, परन्तु इसमें भी लय प्रमुख है, मात्रा नही। वस्तुत यह कथोपकथन में गाया जाता है अतएव इसमें भी छन्द का अभाव रहता है।

अलकार—यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि लोकगाथाओ मे साहित्यिकता का पूर्ण अभाव रहता है। अतएव स्वाभाविक रूप से भोजपुरी लोकगाथाओ में छन्द, अलकार इत्यादि का समावेश नही रहता। स्वाभाविक प्रवाह म हमें कही कही अलकार का प्रयोग दिखलाई पड जाता है। भोजपुरी लोकगाथाओ में विशेप रूप से 'उपमा अलकार' का ही उदाहरण प्राप्त होता है। 'शोभानायका वनजारा' की लोकगाथा मे शोभानायक के सुन्दर रूप की उपमा की गई है—

'रामा नयका के सुरतिया जैसे उगल सुरुजवा रेना'

सोरठी की सुन्दरता का एक वर्णन इस प्रकार है—

"एकिया हो रामा सुरज के जोतिया सम वरेली सुरतिया हो,
केसवा नागिनिवां लहरावे रेनुकी"

वस्तुत लोकगाथाओ में अलकार का विधान बहुत कम पाया जाता है। उनमें तो प्रत्येक पक्ति के साथ कथा आगे बढ़ती रहती है। घटनाओ का समावेश इतना अधिक रहता है कि गायक को भाषा सजाने का अवसर ही नही मिलता।

कुछ ठेठ भोजपुरी शब्द—भोजपुरी लोकगाथाओ में गायक वृन्द कथानक एव चरित्रो के मनोभावो को स्पष्ट करने के हेतु कुछ ठेठ शब्दो का प्रयोग करते है। इन शब्दो का भावार्थ बडा ही सटीक रहता है। अध्ययन की दृष्टि से निम्नलिखित कुछ चुने हुए शब्द बहुत महत्वपूर्ण है।

खुखसान—पीट पीट कर मृत्यु की अवस्था तक पहुँचा देना।

लजकोकड—अतिशय लज्जा करने वाला (झेंपू)।

निकसुआ—घर से निकाला हुआ।

अम्मल—अवधि।

फर—यह अग्रेजी शब्द 'फायर' का भोजपुरी रूप है।

सोगनो—हरजाई।

भकसी—भठ्ठी।

हनरहनर—एक विशेष ध्वनि।

लेवरुआ—गाय का बछडा।

छछनाइ—चिढना।

तिहवा—सतोष रखना।

खिखिआइ—क्रोधित होना।

वुडवक—वुद्धिहीन।

तिवई—स्त्री।

लोरिक पर जब विपत्ति पड़ती है तो वह भी देवी की पुकार लगाता है।

देवी के उपुकारवा उहवाँ लोरिकवा करत रेबाय
देई वरदनवा ये देविया छलब कइले ग्राज
नाही ग्रापन त सिरवा काटि के देब चढ़ाय
ग्रतना तो कहिके लोरिकवा खड़गवा लिहले रेबाय
तले उहवाँ त बोलतिया देवी दुरुगुवा
सुनब त सुनब लोरिक कहलि रे हमार
थोरही बतिया में चेलवा गइले घबयेंडाय

कुँवर विजयमल जब बावन-गढ़ के लिए प्रस्थान करता है तो उसकी भाभी सोनवामतिया देवी से सहायता माँगती है तथा पूजा पकवान देने का भी बचन देती है—

"रामा सुनि लेहु देवी मोर ग्ररजिया रे ना
रामा देविया ग्राज मोर होखहु सहइया रे ना
रामा देविया दुधवे पोतइबो तोर चउरवा रे ना
रामा देविया गुलगुले करइबो तोर हवनवा रे ना
रामा देविया बावन जोडि देबि तोहि करहवा रे ना
रामा देविया सोरह लाख खिग्रइवें बमनवा रे ना"

इस प्रकार देवी प्रसन्न होती है ग्रौर विजयमल को विजयी कराती है।

शोभानायक वनजारा की लोकगाथा में देवी दुर्गा, नायिका दसवन्ती को डाँटती है कि तेरा पति परदेस जा रहा है ग्रौर तू यही पड़ी है—

"रामा जहाँ सूतल रहली दसवन्तिया रेना
रामा घिच के मारे देवी चटकनवा रेना
रामा जेकर कन्ता जैहें परदेसवा रेना
रामा काहे तू सूतेलू निरभेदेवा रेना"

इसी प्रकार से सोरठी, विहुला इत्यादि लोकगाथाग्रो में दुर्गा का उल्लेख है। दुर्गा, प्रेमियो का मिलाप कराती है, दूती कर्म करती है, तथा युद्ध में सहायता देती है। दुर्गा के पश्चात् प्रधान रूप से 'मनसा' का नाम ग्राता है। 'मनसा देवी' का सम्बन्ध विहुला की लोकगाथा से है। विहुला के भोजपुरी रूप में मनसा की प्रतिमूर्ति 'विपहर ब्राह्मण' है जो कि खल नायक के रूप में चित्रित किया गया है। इस कारण इसमें मनसा के महात्म्य का वर्णन नहीं

है। परन्तु विहुला के मैथिली एव बगला रूप में मनसा का सागोपाग वर्णन है। मनसा सर्पों की देवी है तथा अत्यन्त शक्तिशालिनी है। वह बालालखन्दर को काटती है तथा अन्त में विहुला की विनती एव इन्द्र की प्रार्थना से बाला को पुन जीवित कराती है। इस प्रकार उसकी पूजा ससार में प्रारभ होती है। विहुला के उद्‌भव के पूर्व मनसा को लोग कष्ट देने वाली देवी ही समझते थे, परन्तु बालालखन्दर को जीवित करने के पश्चात्, जन समाज उसे कल्याणमयी देवी के रूप में भी देखना प्रारभ करता है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में शक्ति की उपासना अत्यधिक चित्रित की गई है। अतएव हम यह सकते हैं भोजपुरी प्रदेश ही नही अपितु समस्त पूर्वी-भारत शाक्त धर्म से विशेष रूप से प्रभावित है।

नाथ धर्म—भोजपुरी लोकगाथाओ में शैव एव शाक्त धर्म के पश्चात् नाथ धर्म का प्रभाव पडा है। भोजपुरी की तीन लोकगाथाएँ इस धर्म से सबंध रखती हैं। वे हैं, सोरठी, भरथरी तथा गोपीचन्द। वस्तुत ये मध्य युगीन लोक-गाथाएँ हैं। नाथ धर्म का भी उद्‌भव एव विकास इसी युग में हुआ था, अतएव इसका प्रभाव लोकगाथाओ पर पडना स्वाभाविक ही था। इन लोक-गाथाओ में नाथ धर्म की सैद्धान्तिक विवेचना नही है, अपितु इनमें गुरु गोरख-नाथ, मछिन्द्रनाथ तथा जालन्धरनाथ आदि नाथ सप्रदाय के महान सन्तो के नाम का उल्लेख मिलता है। इसके साथ योगीरूप और तप साधना का भी वर्णन मिलता है। इन लोकगाथाओ में नाथ सप्रदाय के सन्त, जिसमें विशेष रूप से गोरखनाथ, एक सहायक के रूप में चित्रित किये गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि लोकगाथाओ में महान धर्मप्रणेता गुरुगोरखनाथ के नाम का भी समावेश गायको ने कर लिया है। मध्ययुग में नाथधर्म अपनी चरम सीमा पर था। बडे बडे राजे महाराजे इस धर्म से प्रभावित हो रहे थे। अतएव साधारण जन समाज में उसका प्रभाव पडना अत्यन्त स्वाभाविक था। इसी कारण लोकगाथाओ में अन्य देवी देवताओ के साथ गोरखनाथ इत्यादि के नामो का मिश्रण हो गया है। इसका स्पष्ट उदाहरण 'सोरठी' की लोकगाथा है।

सोरठी की लोकगाथा में नायक बृजाभार गुरु गोरखनाथ का शिष्य कहा गया है। उसका जन्म भी गोरखनाथ की कृपा से हुआ था। गोरखनाथ उसे स्वयवर में ले जाते हैं, उसका विवाह करते हैं, अनेक सती स्त्रियो का उद्धार करवाते हैं तथा बृजाभार जब अनेक विपत्तियो में पडता है, तो उसे बचाते हैं। इस लोकगाथा में बृजाभार योगीरूप धारण करता है, साध-नायें एव तप करता है, परन्तु ब्रह्म की प्राप्ति के लिये नही अपितु सोरठी

को प्राप्त करने के लिये। सोरठी ही उसकी आराध्य देवी थी। यदि इस कथानक पर आध्यात्मिक धरातल से विचार करें, तो भी यह नाथ धर्म के सिद्धान्त के अनुकूल नहीं पडता है। क्योकि नाथ धर्म में ईश्वर अथवा ब्रह्म का रूप 'स्त्री' नहीं मानी गई है। इसलिए हमें यही कहना पडता है कि यह केवल गायको का मनमौज था जिन्होने उस समय के प्रभाव पूर्ण नाथ धर्म के सन्तो को भी अपनी लोकगाथा में स्थान दिया।

सोरठी की लोकगाथा में गोरखनाथ, बृजाभार को जब शिष्य बनाते हैं, तो गायको ने वहाँ समस्त देवताओ को भी गवाही के रूप में ला खडा किया है—

"एकियाहोरामा गुरू गोरखनाथ के सुमिरन कइले हो बाढे रेनुकी
एकियाहोरामा गुरू गोरखनाथ अइले फुलवारी में रेनुकी
एकियाहोरामा सगरे देवतवा अइलेफुलवारी में रेनुकी
एकियाहोरामा चेलवा ना अब जोगी के बनवले रेनुकी
एकियाहोरामा पिठिया त ठोकले सगरे देवतवा रेनुकी"

इसी प्रकार बृजाभार को शिष्य बनाकर योगी के लिये आवश्यक वस्तु भी देते है।

"एकियाहोरामा अतना सुनत गुरू आइ के पहुँचले हो
सकल सरजमवा देई देले रेनु की
एकियाहोरामा झोरी गुदरिया गुरू दिहले बसुरिया हो
झुनुकी खडउवा देई देले रेनु की
एकियाहोरामा डुगी खजडिया गुरू चेलवा के दिहले हो
देई के असथनवा चलि जाले रेनु की।
एकियाहोरामा पेन्हे लगले रामा कुवर बृजाभरवा हो
जोगिया के रुपवा बनवले रेनु की।
एकियाहोरामा गुदडी पहिनी झोरी बगल झुलवले हो
झुनुकी खडउवा पगवा पेन्हले रेनु की।
एकियाहोरामा डुगी खजरिया रामा मोहिनी बसुरिया हो
लेइ चले जोगी बृजाभार रेनु की।"

इसमें 'मोहनी बसरी' का उल्लेख है जो कि जोगियो की वेशभूषा का आवश्यक अग नही है। साथ ही जोगियो के लिये अनिवार्य वस्तु 'सारगी' का उल्लेख लोकगाथा में नही है।

'सोरठी' के पश्चात् भरथरी एव गोपीचन्द की लोकगाथा शुद्ध रूप से नाथ सप्रदाय से सबंध रखती है। ये दोनो महापुरुष नाथ सप्रदाय के महान सन्त परपरा में आते हैं। इनका उल्लेख नवनाथो में भी हुआ है। इन दोनो लोकगाथाओ में नाथ धर्म के व्यवहारिक पक्ष का सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है। माया, मोह, माता, स्त्री, पुरजन का त्याग, वैभव विलास की तिलांजलि, इन्द्रिय निग्रह तथा गुरू भक्ति का अन्यतम उदाहरण इन लोकगाथाओ में प्रस्तुत किया गया है।

योग साधना के कष्ट को गोरख नाथ कितने सरल ढग से भरथरी को बतलाते हैं—

"अरे तू त हव राजा के लडिका जोगवा नाई
लागी तोह से पार,
कॉटा कुसा में सुत नाही पइबऽ
कौनो गरभी दिहें बोल बच्चा सह न जैहें
कौनो सुन्दर घरवा तिरियवा देखबऽ
त जोगवा तोहार होजइहें खराब"

इस पर भरथरी उन्हें आश्वासन देते हैं—

"कौनो गरभी दुअरिया बाबा भिक्षा मगबें
कान के बहिरे बन जाब
कौनो जो कॉटा कुसा के आसन पइबें
उहवां सोइब आसन लगाय
कौनो जो सुन्दर घरवा तिरियवा देखबें
त आँखे के होइ जाइब सूर।"

इसके पश्चात गोरखनाथ उसकी कठिन परीक्षा लेते हैं। भरथरी अपनी स्त्री को 'माँ' कहते है और परीक्षा में उत्तीर्ण होकर योगी हो जाते हैं। इसी प्रकार से 'गोपीचन्द' की लोकगाथा में नाथ धर्म के व्यवहारिक पक्ष क सुन्दर प्रतिपादन किया गया है। माता, बहन स्त्री तथा प्रजा का मोह ससार में भला किसको नही होता है। उस पर से गोपीचन्द तो एक युवक सम्राट था। परन्तु उसे इस ससार की असारता का ज्ञान हो गया था। माता उसे रोकती है, अपने दूध का मूल्य मॉगती है, परन्तु वह कहता है—

'सिरवा कलफ के माता देती दुधवा के दाम
तौनो पर नाई होवें माई तोरे दुधवा से उसिरिन

इस प्रकार सब को रोता कलपता छोडकर बहिन के पास जाता

"तब पकडि के गोडवा बहिनी बीरम लागे भेंटे
भेंटत भेंटत बहिनी प्राण छोड दिहली।"

परतु गुरू की कृपा से उसे भी पुनः जीवित करके वह गुरू की पहुँच जाता है।

इन्द्र एवं अप्सराएँ—शैव, शाक्त तथा नाथ धर्म के पश्चात भोजपुरी गाथाओ में इन्द्र तथा अप्सराओ का स्थान आता है। योककथात्मक ल थाओ को छोड कर शेष सभी में इन्द्र तथा स्वर्ग की अप्सराएँ वर्णि इन्द्र, अप्सराओ एव गधर्वो को उनके त्रुटियो के दड स्वरूप मृत्युल जन्म लेने की आज्ञा देते हैं। इस प्रकार लोरिक, विजयमल, सोरठी, इत्यादि नायक नायिकाए स्वर्ग से पदच्युत होकर कुछ काल के लिये पृ आ जाते है और पुन अपनी लीलाए समाप्त कर के चले जाते हैं। इन्द्रपुरी आनन्द की भूमि है, वहाँ पर सदैव वसन्त अठखेलियाँ खेल सदैव नृत्य रास रग होता रहता है। स्वर्ग की यही कल्पना लोकगाथ की गई है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में इन्द्र के साथ ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश इत्य नाम का भी उल्लेख किया गया है। परन्तु ये नाम स्वाभाविक वर्णन गए हैं। इनका लोकगाथा के कथानक में प्रमुख स्थान नही है।

गंगा—गगा नदी का नाम सभी लोकगाथाओ में आता है। कही कहीं भौगोलिक दृष्टि से गलत नाम आता है। वस्तुत: हमारे देश में प्राय नदी को यहाँ तक की कठौती के पानी को भी गगा कह दिया जाता है इसी प्रकार गगा के नाम उल्लेख किया गया है। गगा जी भी सहायक में आदर्श चरित्रो को सहायता देती हैं। सोरठी जब गगा में बहा दी जाती वह डूबती नही है। गगा उसे किनारे लगा देती है। इसी प्रकार विहु गगा में नहीं डूबने पाती है। गगा उसके लिये वर भी ढूढती हैं।

वनस्पति देवी—गगा के पश्चात वनसप्ती (वनस्पति) देवी का भ आता है। वनस्पति देवी अधकारमय वन में नायक नायिका की सहायता हैं। वनस्पति, देवी, वन की रानी हैं। अगम, दुर्गम, विशाल तथा स्थानो को देवी देवता का रूप दे देना हमारे धार्मिक विश्वासों मे सदैव है। अतएव दुर्गम जगलो में वन देवी के रूप में कल्याणमयी वनस्पति

मंत्र, जादू टोना—भोजपुरी लोकगाथाम्रो में मत्र, जादू टोना इत्यादि का भी वर्णन है। लोकगाथाम्रो के खलनायक एव खलनायिकाएँ मत्र, जादू तथा टोना इत्यादि अनार्य शक्तियो के कारण प्रवल दिखाए गए हैं। प्रत्येक लोकगाथा में जादूगरनिम्रो द्वारा नायको को कष्ट मिलना, तान्त्रिको द्वारा वाघा पहुँचना तथा नायक नायिकाम्रो का भेंडा वन जाना, तोता वन जाना इत्यादि वर्णित है। 'लोरकी' की लोकगाथा में 'फुलिया डाइन' समस्त सेना को पत्थर वना देती है। सोरठी की लोकगाथा में 'हेवली केवली' जादू की लडाई करती हैं। शोभानयका बनजारा की लोकगाथा में एक कलावारिन (शराब वेचने वाली) शोभानायक को भेडा वना देती है। विहुला की लोकगाथा में विषहर ब्राह्मण मंत्र शक्ति से सर्पों को वश में रखता है।

लोकगाथाम्रो में इन शक्तियो का प्रावल्य होते हुए भी अन्त में इनका पराभव ही दिखलाया गया है। सत्य एव आदर्श मार्ग पर चलने वाले नायक एव नायिकायें इन शक्तियो पर विजय प्राप्त करते हैं।

कुछ विश्वास—भोजपुरी लोकगाथाम्रो के प्रचलन के साथ साथ कुछ विश्वासो का भी प्रचार हो गया है। गायको का विश्वास हैं कि जव से लोकगाथाम्रो का अथवा उनमें वर्णित चरित्रो का उद्भव हुम्रा तभी से कुछ विश्वास प्रचलित हुए हैं।

(१) 'लोरिकी' की लोकगाथा में नायक लोरिक को गायक लोग 'कनौजिया' अहीर, तथा लोकगाथा के खलनायक राजा शाहदेव को 'किसनौर' अहीर वतलाते हैं। 'लोरिक' का चरित्र आदर्श नायक की भाति है, इसलिये 'कनौजिया' अहीर आज भी श्रेष्ठ माना जाता है तथा ये लोग 'किसनौर' मे विवाह दान नही करते हैं।

(२) 'सोरठी' की लोकगाथा में जव सोरठी को सन्दूक में वन्द करके गगा में वहा दिया गया, तो काठ का सन्दूक सोने में परिवर्तित हो गया। घाट के किनारे एक धोवी ने सोने की सन्दूक को वहते देखा और लालच में पडकर सन्दूक पकडना चाहा। परन्तु वह पकड न सका। उसने कोंका नामक कुम्हार को वुलाया। वह धर्मात्मा व्यक्ति था, उसके हाथ सन्दूक लग गया। धोवी के लालच को देखकर उसने सोने का सन्दूक उसे दे दिया और सोरठी को घर ले गया। धोवी जव सन्दूक को घर लाया तो वह पुन काठ का हो एया। इसी समय वह 'हाय हाय' कर उठा।

गायको का विश्वास है कि धोवी लोग, कपडा धोते समय 'हायछियो' जो करते हैं, इसका प्रारम्भ वही से है।

(३) 'बिहुला' की लोकगाथा के विषय म गायको का विश्वास है कि सर्प भी आकर सुनते हैं।

(४) बिहुला की लोक गाथा में विषहरी ब्राह्मण (खलनायक) पनिहा (डोडवा) साँप को विष का गट्ठर लाने के लिए भेजा। पनिहा साँप जब विष की मोटरी ला रहा था तो मार्ग में उसे स्नान करने की इच्छा हुई, और तालाब के किनारे मोटरी रखकर स्नान करने लगा। तालाब की मछलियो तथा बिच्छुओ ने आकर विष लूट लिया। सर्प खाली हाथ पहुँचा। विषहर ने क्रोध मे आकर श्राप दिया कि तेरे काटने से किसी पर विष नही चढ़ेगा।

ऐसा विश्वास है कि इसी समय से पनिहा साँप विषरहित हो गया तथा बिच्छुओ में विष आ गया, क्योकि उन्होने मोटरी में से विष खा लिया था।

अनेक धर्मों, देवी देवताओ तथा विश्वासो पर विचार करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि भोजपुरी लोकगाथाओ में धर्म का स्वरूप अत्यन्त व्यापक एव समन्वयकारी है। वस्तुत लोकगाथाए धर्म नही अपितु चरित्र प्रधान हैं। आदर्श चरित्रो के विकास के लिये ही उनमें धर्मों का तथा विश्वासो का समावेश हुआ है। इन लोकगाथाओ में सभी धर्मों के देवी देवता एव सन्त लोग सहायक के रूप में ही चित्रित किये हैं। इनका स्वतत्र अस्तित्व कही नही है। लोकगाथाओ के नायक नायिकाओ के साथ साथ ये चलते हैं तथा आदर्श मार्ग को प्रशस्त करते रहते हैं। इन्ही भिन्न भिन्न देवी देवताओ एव सन्तो के नाम के उल्लेख के कारण ही लोकगाथाओ में उनके धर्म विशेष की प्रतिछाया पड गई है। इसीलिये लोकगाथाओ के धार्मिक स्वरूप पर विचार किया गया है। यह हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं इनमें सिद्धान्त का अथवा कर्मकाड का प्रतिपादन नही हुआ है। केवल लोकगाथा में देवी देवताओ के नाम तथा उनके कार्यों का ही वर्णन है। अतएव भोजपुरी लोकगाथाओ में धर्म का स्वरूप अति विशाल एव सामजस्यकारी है। वस्तुत उसमें मानव धर्म चित्रित किया गया है जिसमें वीरता, उदारता, सदाचार, त्याग, परोपकार तथा ईश्वर में विश्वास का प्रमुख स्थान रहता है।

अध्याय १०

(१) भोजपुरी लोकगाथाओं में अवतारवाद

भारतवर्ष में अवतारवाद की भावना अत्यन्त प्राचीन है। भारतीय मनीषियों ने सृष्टि के क्रमिक विकास को अवतारवाद के द्वारा ही स्पष्ट किया है। मत्स्यावतार से लेकर बुद्धावतार तक हम सृष्टि के निरन्तर विकास को भलीभाति समझ सकते है । यह भारतीय चितन है कि समस्त ब्रम्हाड में ईश्वर व्याप्त है, उसी के निर्देश से समस्त सचराचर परिचालित होता है, तथा वही अनेक रूपो में इस पृथ्वी पर अवतार लेता है । इस प्रकार से सृष्टि का विकास होता है, और उसमें सस्कृति एव सभ्यता पनपती है । इसी को पुन पुन गतिमान बनाने के लिये भगवान मानव रूप में जन्म लिया करते हैं ।

पाश्चात्य विद्वानो ने लोकसाहित्य में निहित देववाद (डिविनिटी) को केवल मनुष्य के आदिम अवस्था का ही द्योतक माना है ।१ यह सिद्धान्त भारतीय लोकसाहित्य के लिए उपयुक्त नही है। यहाँ की परिस्थिति दूसरी है । यहाँ की लोकभावना आदिम अवस्था से सबध नहीं रखती अपितु देश की चिरतन सास्कृतिक एव आध्यात्मिक साधना से सामीप्य रखती है ।

अवतार का होना अर्थात् मगल भावना का उदय होना है । अवतरित व्यक्ति सत्कर्म करने के लिये ही आता है। वह संसार में सुख शाति का सदेश देने आता है। भोजपुरी लोकगाथाओ में अवतारवाद की यही प्राचीन कल्पना निहित है। लोकगाथाओ के प्राय सभी नायक-नायिका अवतार के रूप में हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओ में अवतारो के तीन रूप मिलते हैं। प्रथम भगवान लालदेव (हनुमान) वीर रूप में जन्म लेते हैं, जैसे कि लोरिक, विजयमल, शोभानायक इत्यादि ।

द्वितीय, इन्द्रपुरी से च्युत अप्सराए एव गधर्व पृथ्वी पर आकर जन्म लेते हैं, जैसे सोरठी, बिहुला तथा हेवन्ती इत्यादि।

तृतीय देवी दुर्गा एव गोरखनाथ की कृपा से नायको का जन्म होता है, जैसे बृजाभार तथा विजयमल ।

१—सी० एस० बर्न—दी हैंड बुक आफ फोकलोर पृ० ७४

भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ में अधिकाश रूप में भगवान लालदेव के अवतार लेने का वर्णन है। भोजपुरी क्षेत्र में हनुमान जी को लालदेव, कहा जाता है। हनुमान वीरता एव सेवा भक्ति के प्रतीक माने जाते है। वीरकथात्मक लोकगाथाओं के नायक भी वीर वृत्ति एव सेवा वृत्ति रखते है। अतएव इनकी समानता लालदेव से करना उपयुक्त है। प्राय सभी लोकगाथाओ में वर्णित है—

"रामा आधी रात गइले लिहले लालदेव अवतारवा होना"

वीरकथात्मक लोकगाथाओ के अतिरिक्त भी शेष लोकगाथाओं में लालदेव के अवतार का वर्णन है। 'बिहुला' में बालालखन्दर जन्म का वर्णन इसी प्रकार है—

"ए राम रहल महेसरा के गरभ रे दइबा
पुरे दिन बलकवा भइले ए राम
ए राम लालदेव लिहले जनमवाँ रे दइया
सासुनी महेसरा कोखी ए राम"

इन्द्रपुरी में त्रुटि हो जाने के कारण लोकगाथाओ के कई नायक-नायिकाओ का जन्म होता है। सोरठी अपने जन्म के समय कहती है—

"एकिया हो रामा इन्द्रपुरी में रहली रामा इन्द्र परिया हो
एक त चुकवा हमसे भइल रेनुकी।
एकिया हो रामा तेही कारण इन्द्र राजा दिहले सरपवा हो
नर जोइनी होई अवतरवा रेनुकी।"

इसी प्रकार विहुला का भी जन्म होता है—

"ए राम एक दिन इन्द्र महराज रे दइवा
श्याम परी के वुलाइ कहे ए राम
ए राम जाहूँ श्याम परी मृत्यु लोकवा रे दइवा
जाई मानुप जनमवाँ लेहूँ ए राम"

'सोरठी' का नायक वृजाभार भी मेघदूत के यक्ष की भाति इन्द्रपुरी से निकाला गया है। परन्तु मृत्यु लोक में उसका जन्म गुरु गोरखनाथ की कृपा से ही है। इसी प्रकार दुर्गा देवी की कृपा से विजयमल का भी जन्म होता है। वह वरदान देती हैं—

'रामा पुत्र जनमी दसवें महिनवा रेना ।
रामा छत्रबली लीही अवतरवा रेना ।'

भोजपुरी लोकगाथाओ में एक ही व्यक्ति का समय समय पर अवतार लेने का वर्णन है । लोरिक अपने पिता से कहता है—

"सुनव त सुनब ए बाविल कहलि रे हमार
अतने में तूहूँ गइलऽ घव ये डाय
तीन अवतरवा ये बाविल भइल हो हमार
पहिला अवतरवा हो भईल मोहवा में हमार
नइयाँ त रहे ये बाविल ऊदल हो हमार
नैनागढ़ में कइले हो रहली आल्हा के वियाह
तेकर त हलिया जाने सब सब ये सार
दोसर जनमवाँ के हलिया सुन बाविल हमार
तिलकी से कइली बिअहवा बावनगढ में जाय
बावनगढ के किलवा बाविल दिहली हो गिराय
तिसरे जनमवाँ बाविल गउरवा में भइल हमार
तोहरा ही घरवा नइयाँ लोरिकवा परल हमार
चौथे जनमवाँ ए बाविल बाकी अवही हो बाय
सेकरो त हलिया तुहे कही समुझाय
दक्षिणी शहरवा ए बाबिल लेबी अवतार
नउवाँ पडी बृजाभार हो हमार"

इस प्रकार से भगवान के विभिन्न अवतारो के समान लोरिक भी अपने अवतार लेने का क्रम बतला रहा है । उपर्युक्त उद्धरण से ऐसा प्रतीत होता है कि गायको ने समस्त भोजपुरी लोकगाथाओ के नायकों को एक में समेट लिया है और इस प्रकार उनमें एकरूपता लाने की चेष्टा की है। उपर्युक्त पद्यांश से एक बात और स्पष्ट होती है । इससे हम लोकगाथाओ के प्रारम्भ का क्रम भी जान सकते है । इस उद्धरण के अनुसार 'आल्हा' की लोकगाथा पहले व्यापक हुई । इसके पश्चात् विजयमल का समय आता है, तत्पश्चात 'लोरिकी' और 'सोरठी' का ।

भोजपुरी लोकगाथाओ में अवतारवाद एवं पुनर्जन्म का विश्वास अति रोचक ढंग से व्यक्त हुआ है । लोकगाथाएं समाज की निम्नश्रेणी में प्रचलित हैं परन्तु इनमें देश की प्राचीन परम्परा और मगल आदर्श का जितना भव्य एव उदात्त चित्रण हुआ ह उतना लिखित साहित्य में नही मिलता है ।

(२) भोजपुरी लोकगाथाओं में अमानव तत्व

भोजपुरी लोकगाथाओ में अमानव तत्व का समावेश विस्तृत रूप से हुआ है। उसमें नदी, तालाब, पहाड, वन, पशु पक्षी प्रमुख भाग लेते हुए वर्णित किए गये हैं। लोकगाथाओ में समस्त चराचर की कोई भी वस्तु जड नही चित्रित की गई है, अपितु सभी गतिमान हैं और कथानक में प्रमुख स्थान रखते हैं। वस्तुत लोकगाथाओ मे अमानव तत्व का समावेश, कोई नवीन परपरा नही है। ससार के सभी प्राचीन महाकाव्यो में अमानव तत्व का प्रधान स्थान दिखलाया गया है। भारतवर्ष में तो यह परपरा अति प्राचीन और व्यापक है। सस्कृत वाङ्मय में स्थान स्थान पर पशु, पक्षी, यक्ष, किन्नर, वृक्ष, लता सभी यथोचित्त सहयोग लेते हुए चित्रित किये गये हैं। इसी परपरा का पालन लोकगाथाओ के गायको ने भी किया है।

लोकगाथाओ का प्रथम गायक सचमुच में एक कवि रहा होगा। उसने अपनी रचना में सच्चे कवि की भाँति समस्त विश्व को आत्म सात कर लिया। उसने प्राकृतिक जगत में मानव और अमानव में, अन्तर नही देखा। समुद्र जैसे सब नदियो को अपने उदर में स्थान देता है, उसी प्रकार लोकगाथाओ के गायक ने समस्त ब्राह्माड को उसमें ला रखा है। वह पृथ्वी, आकाश और पताल में अन्तर नही मानता है। उसकी कल्पना तो दिग् दिगन्त में उडती है। उसकी रचना में अश्व भूमि पर ही नही अपितु आकाश में भी उडता है, मत्स्य पानी में रहते है परन्तु वाहर निकल कर नायक की रक्षा करते हैं। वन के वृक्ष स्थावर नही है अपितु नायक को सहायता देते हैं। लोकगाथाओ के गायक का दृष्टिकोण अत्यन्त विशाल है। वह समस्त सृष्टि से प्रेम करता है। उसकी प्रेम की व्यापकता में ही सभी अमानव, मानवोचित व्यवहार करते है। आचार्य विनोवा भावे ने भी एक स्थान पर लिखा है "कवि में व्यापक प्रेम की आवश्यकता है। ज्ञानेश्वर महाराज भैंसे की आवाज़ में भी वेद श्रवण कर सके, इसलिये वह कवि हैं। वर्षा शुरू होते ही मेढको का टर्राना देख वसिष्ठ को जान पडा कि परमात्मा की कृपा की वर्षा से कृत्त् कृत्य हुये सत्पुरुष ही इन मेढको के रूप में अपने आनन्दोद्‌गार प्रकट कर रहे हैं और उन्होंने भक्तिभाव से उन मेढको की स्तुति की।"[1]

१—आचार्य विनोवा भावे—विनोवा के विचार भाग १ पृ० १०-११

लोकगाथाओं का गायक भी इसी अमल वृत्ति से सकल चराचर को देखता है। सृष्टि के प्रति उसकी उदार बुद्धि है इसी कारण वह सबको क्रियावान देखता है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में अमानव तत्व अधिकाश रूप में सत्य एव आदर्श का ही पक्ष लेते हैं। वे शेक्सपियर के अमानव तत्व नही है जो नायको को द्विविधाजनक परिस्थिति में डाल देते हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ म अमानव तत्त्व सशरीर उपस्थित होकर नायक के आदर्श की रक्षा करते हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओ में अमानव तत्त्व के अन्तर्गत प्रमख रूप, से गगा यमुना, वनदेवी एव वनदेवता, हस हसिनी, घोडा, केकडा और मछली का वर्णन आता है।

प्राय सभी भोजपुरी लोकगाथाओ में गगा और यमुना नदी का नाम आता है। गगा नदी तो सक्रिय रूप में नायक नायिकाओ की रक्षा करती है। 'सोरठी' की लोकगाथा में 'सोरठी' को डूबने से बचाती है। 'विहुला' की लोकगाथा में विहुला गगा में डूबना चाहती है परन्तु गगा उसे डवने नही देती है तथा उसके सम्मुख प्रगट होकर उसके दुख का निवारण करती है।

'भरथरी' की लोकगाथा में वनदेवी उसकी सहायता करती है। उसे हिंस्र पशुओ से बचाती है तथा हस का रूप धर कर भरथरी को पीठ पर विठला कर उसे पिंगला के यहाँ पहुँचाती है। सोरठी की लोकगाथा मे वनदेवता नायक वृजाभार की हिंस्र-पशुओ से रक्षा करते हैं। वे रात भर खडा होकर पहरा देते हैं।

शोभानायका वनजारा की लोकगाथा म हस हसिनी शोभा नायक की सहायता करते हैं। हस अपनी पीठ पर विठा कर शोभानायक को उसकी प्रिय पत्नी दसवन्ती के पास पहुँचा देता है।

'आल्हा' की लोकगाथा में 'वेदुला घोड़ा' का सुन्दर वर्णन है। ऊदल उसी की सवारी करता है। वेंदुला घोड़ा आकाश मार्ग से भी उडता है और युद्ध में ऊदल को विपत्तियों से वचाता है। इसी प्रकार 'विजयमल' की लोकगाथा में 'हिंछल वछेडा' (घोडा) विजयमल का अभिन्न सहचर और गुरु है। हिंछल वछडा उसे आकाश मार्ग से ले जाता है। युद्ध में जव विजयमल वुरी तरह घायल हो जाता है तो उसे उठाकर दुर्गादेवी के पास ले जाता है और उसे स्वस्थ कराता है। हिंछल, विजयमल की प्रेमिका तिलकी से मिलन कराता है तथा उसकी गलतियो पर उसे डाटता भी है।

सोरठी की लोकगाथा में 'गगाराम केकडा' का वर्णन है। 'गगाराम केकडा' वृजाभार के साथ चलने की प्रार्थना करता है। वृजाभार उसे अपनी झोली में डाल कर चल देता है। गगाराम केकडा वृजाभार को मृत्यु के मुख में से बचाता है। वृजाभार को जब सर्प ने डस लिया तो गगाराम केकडा ने ही झोली से बाहर निकल कर कौवे और सर्प को दड दिया और वृजाभार के पुन जीवित कराया।

'सोरठी' और 'बिहुला' की लोकगाथा में 'रेघवा' मछली का वर्णन आता है। वृजाभार जब सोरठपुर के मार्ग में जादूगरनियो द्वारा मारा जाता है, तो रेघवा मछली उसके मस्तक की मणि को निगल जाती है और पाताल लोक चली जाती है। वृजाभार की स्त्री हेवन्ती रेघवा मछली से भेंट करती है और उसी मणि की सहायता से वृजाभार को पुन जीवित कराती है।

'बिहुला' की लोकगाथा में रेघवा मछली बिहुला को इन्द्रपुरी जाने का मार्ग बतलाती है। बिहुला अपने मृत पति बालालखन्दर के शरीर को रेघवा मछली के सरक्षकत्व में छोड़ जाती है।

ससार की सभी भाषाओ की दन्तकथाओ में अमानवतत्व का समावेश है। इसका मुख्य कारण यह है कि प्राचीन युग में विज्ञान की इतनी उन्नति नही हो पाई थी जिसके द्वारा ससार की विभिन्न घटनाओ की व्याख्या की जाय। इस प्रकार के अमानवतत्त्वपूर्ण कहानियो का तुलनात्मक अध्ययन टानी ने अपने कथासरित्सागर के अनुदित ग्रथ में किया है।[1] भोजपुरी लोकगाथाओ में भी अमानवतत्व इसी रूप में मिलता है, जिसका ऊपर वर्णन किया गया है।

उपर्युक्त उदाहरणों से हमें यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि भोजपुरी लोकगाथाओ के गायको ने उसमें अमानव चरित्रो की सफल एव भावपूर्ण योजना की है। वास्तव में प्रकृति के प्रत्येक अवयव का मानवीकरण सस्कृति के उन्चतम अवस्था का द्योतक है। कुछ विद्वानो का यह कथन कि लोकसाहित्य में अबुद्धिवाद रहता है, इसे हम कदापि नही मान सकते। यदि हम सम्यक् एव भावपूर्ण दृष्टि से इन लोकगाथाओ पर विचार करें तो हमें स्पष्ट होगा कि इनमें देश की सस्कृति, देश की आकांक्षाएँ एव ललित भावनाओ का अनुपम

१—सी० एच० टानी—दी ओशन आफ स्टोरी-वाल[1] पृ० २५
'नोट्स आन दी 'मैजिकल आर्टिकिल्स, मोटिफ इन फोकलोर' तथा देखिए।
सी० एस० वर्न—दी हैन्डबुक आफ़ फोकलोर पृ० ७५-९०

एव आदर्शचित्र उपस्थित किया गया है। सृष्टि के गूढ रहस्य एव समाजहृदय की सूक्ष्म भावनाओ को सीधी एव सरल वाणी में निश्छल गायकों ने हमारे सम्मुख उपस्थित किया है, इसकी अवहेलना हम कदापि नही कर सकते।

---

(३) भोजपुरी लोकगाथाओं में कुछ समानता

प्रथम अध्याय में लोकगाथाओ की विशेषताओ पर विचार करते हुए 'पुनरुक्ति' की विशेषता पर भी प्रकाश डाला गया है। लोकगाथाओ में पुनरुक्ति वर्णन अत्यधिक मात्रा में पाया जाता है। इस पुनरुक्ति वर्णन के साथ-साथ भोजपुरी लोकगाथाओ में व्यक्तियो तथा स्थानो इत्यादि में भी समानता मिलती है। इनका यहाँ क्रम से स्पष्टीकरण कर देना अनुपयुक्त न होगा।

(१) 'आल्हा' की लोकगाथा मे माहिल का चरित्र खलनायक के रूप में चित्रित किया है। माहिल, राजा परमर्दिदेव की रानी मल्हना का भाई था। माहिल के उकसाने के कारण ही आल्हा ऊदल को अनेक लडाइयाँ लडनी पडीं।

'लोरिकी' की लोकगाथा में भी 'माहिल' का नाम आता है। इसमे भी माहिल खलनायक की भाँति चित्रित किया गया है। वह सुरवलि के राजा बामदेव का पुत्र है। माहिल के बहन का विवाह उसी के कारण नही हो रहा था, क्योकि उसका प्रण था कि जो उसे हरायेगा वही विवाह करेगा। लोरिक ने अपनें बडे भाई सवरू का विवाह वही पर किया। उसने माहिल को युद्ध में हरा कर उसका गर्व चूर किया।

(२) आल्हा की लोकगाथा में बावन सूबा तथा बावन गढ किले का नाम आता है।

'विजयमल' की लोकगाथा में भी वावन सूबा तथा वावन गढ का नाम आता है। विजयमल ने वावन सूवा को मार कर अपने पिता का बदला लिया। वावन गढ को भी उसने ध्वस कर दिया।

'लोरिकी' की लोकगाथा में भी राजा बामदेव का नाम आता है जो कि 'वावन सूवा' से साम्यता रखता है। राजा वामदेव सुरवलि का राजा था तथा अहकारी था। लोरिक ने अपने वडे भाई सवरू का विवाह उसी की कन्या मे किया तथा उसके अहकार को नष्ट किया। 'लोरिकी' के अन्य रूपो मे 'वावन वीर' अथवा 'वीर वावन' का नाम आता है, जो सभवत 'वावन सूवा' का ही रुपान्तर है।

(३) प्राय: सभी भोजपुरी लोकगाथाओं में नायिकाओं की प्रमुख दासियों का नाम 'हंमा' अथवा 'मुगिया दासी' वर्णित है। विजयमल, सोरठी, भरथरी, गोपीचन्द में तो निश्चित रूप से यह दोनों नाम प्रयुक्त हुए हैं।

(४) गंगानदी का स्थान तो प्रत्येक लोकगाथा में रहना अनिवार्य सा है। गंगा के बिना कोई भी लोकगाथा पवित्र नहीं हो सकती, अतएव गायकों ने प्रत्येक लोकगाथा में--चाहे वह भौगोलिक दृष्टि से गलत क्यों न हो--गंगा का वर्णन किया है।

(५) 'भौंरानन पोखरा' का नाम आल्हा और विजयमल की लोकगाथा में वर्णित है। आल्हा की बरात 'भौंरानन पोखरे' के समीप ही ठहरती है। 'विजयमल' की लोकगाथा में कुंवर विजयमल 'भौंरानन पोखरे' के समीप ही तिलकी से मिलन करता है।

(६) 'सोरठी' और 'बिहुला' की लोकगाथा में 'रेघवा' मछली का नाम आता है। भोजपुरी लोकगाथाओं में अमानव तत्व पर विचार करते हुए 'रेघवा मछली' के कार्यों का वर्णन हो चुका है।

(७) 'कदलीवन' का उल्लेख आल्हा, सोरठी तथा भरथरी की लोकगाथाओं में किया गया है। लोकगाथाओं में कदलीवन को बड़ा भयानक एवं अंधकार-मय वन बतलाया गया है। उपर्युक्त लोकगाथाओं के प्रत्येक नायक को उस वन में जाना पड़ा है। किंवदंती है कि 'आल्हा' कदलीवन में आज तक बैठा हुआ है।

आल्ह-खंड पर विचार करते हुए डा० श्यामसुन्दर दास ने कदलीवन (अथवा कजलीवन) को निर्जनता और अंधकार की व्यंजना मात्र माना है।[१]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कदलीवन को भौगोलिक सत्य माना है। 'मत्स्येन्द्र नाथ विषयक कथाएँ और उनके निष्कर्ष' पर विचार करते हुए कदलीवन (कदली देश) के विषय में अनेक तथ्य उपस्थित करते हुए वे लिखते हैं, " कदलीवन या स्त्री देश से वस्तुतः कामरूप ही उद्दिष्ट है। कुलूत, सुवर्ण गोत्र, भूत स्थान, कामरूप में भिन्न-भिन्न ग्रंथकारों के स्त्री राज्य का पता बताना, यह साबित करता है कि किसी समय हिमालय के पार्वत्य अंचल में पश्चिम से पूर्व तक एक विशाल प्रदेश ऐसा था जहाँ स्त्रियों की प्रधानता थी। अब भी यह बात उत्तर भारत की तुलना में बहुत दूर तक ठीक है"[२]

१—डा० श्याम सुन्दर दास--हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० २६२

२—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—नाथ सम्प्रदाय, पृ० ५५

द्विवेदी जी का मत यथार्थ प्रतीत होता है। हिमालय की तराई के घने जगलो को अवश्य ही प्राचीन काल में 'केदलीवन' कहा जाता होगा। इस वन की भयानकता एव दुर्गमता के कारण ही गायको ने लोकगाथाओ में केदलीवन का वर्णन किया है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में उपर्युक्त समानताओ का प्राप्त होना, इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि लोकगाथाओ के गायको ने उस समय के प्रचलित अनेक चरित्रो, तथा स्थानो को प्रत्येक लोकगाथाओ में सम्मिलित कर दिया है। हमे नायक-नायिकाओ के चरित्रो तक में भी समानता मिलती है। विशेष रूप से भोजपुरी वीरकथात्मक लोकगाथाओ के नायक (बाबू कुँवरसिंह के अतिरिक्त) एक समान ही चित्रित किए गए है। लोरिक, विजयमल तथा आल्हा ऊदल के चरित्र एव कार्य कलापो में अधिकाश समानता मिलती है।

वस्तुत मौखिक परपरा में निवास करने के कारण ही उपर्युक्त अनेक समानताएँ हमें भोजपुरी लोकगाथाओ में मिलती है।

भोजपुरी लोकगाथाओ में मिलने वाली उपर्युक्त समानता कोई एकागी विशेषता नही है। अन्य देशो की लोकगाथाओ एव लोककथाओ में इस प्रकार की समानताएँ मिलती हैं। सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान् श्री टानी ने इस प्रकार की समानताओ (मोटिफ) का तुलनात्मक विवरण अपने 'कथा सरित्सागर' के अनूदित ग्रथ में दिया है।[१]

वास्तव में लोकसाहित्य में समानता एक विशेष महत्व रखता है। विद्वानो ने इसे 'अभिप्राय' अथवा 'कथात्मक रुढि' की सज्ञा दी है। भोजपुरी लोक-गाथाओ में अमानव तत्व तथा समानताओ का आकलन करने के पश्चात इन्ही द्वारा कथानक रूढियो का निष्कर्ष निकलता है। वस्तुत अमानव तत्व और समानता का सम्बन्ध किसी विशिष्ट अभिप्राय अथवा कथानक रूढि से होता है। कथानक रूढियाँ प्रत्येक देश की लोकगाथाओ, कथाओ तथा महाकाव्यो में मिलती है। ये कथानक रूढियाँ वस्तु कथा को रोचक एव भावपूर्ण बनाती है तथा कथा का परिवहन सुगम रीति से करती हैं। कथानक रूढियो की परिकल्पना सबसे पहले लोकसाहित्य में ही प्राप्त होती है। महाकाव्य रच-यिताओ ने कथानकरूढियो की महत्ता को समझ कर अपनी कल्पना और

विशेष विवरण के लिए देखिए।

१—सी० एच० टानी—दी ओशन आफ स्टोरी—नोट्स आन दी मोटिफ इन स्टोरीज—वाल १ से १०

विवेक के अनुसार लोकगाथाओ से ही ग्रहण किया है। ' महाकाव्यो में निम्न-
लिखित रूढियाँ अधिकाश रूप में मिलती हैं—१

१—कहानी कहने वाला सुग्गा
२—स्वप्न में प्रिय का दर्शन
३—चित्र देख कर मोहित हो जाना
४—मुनि का शाप
५—रूप परिवर्तन
६—लिग परिवर्तन
७—परकाय प्रवेश
८—आकाश वाणी
९—नायक का औदार्य
१०—हस, कपोत द्वारा सदेस भेजना
११—वन में मार्ग भूलना
१२—विजनवन में सुन्दरियो से साक्षात्कार
१३—उजाड शहर का मिलना
१४—किसी वस्तु के सकेत से अभिज्ञान
१५—समुद्र में तूफान, जहाज डूबना

भोजपुरी लोकगाथाओ के अध्ययन से हमें स्पष्ट ज्ञात होता है कि महा-
काव्यो में प्रयुक्त उपर्युक्त रूढ़ियाँ लोकगाथाओ के लिए नवीन नही हैं। भोजपुरी
लोकगाथाओं में निम्नलिखित कथानक रूढियाँ प्राप्त होती हैं:—

१—गगा यमुना का मानव रूप में प्रगट होना।

२—वन में नायक नायिका की सहायता के लिए वनसप्ती देवी प्रगट होना।

३—जन्म लेते ही बालिका को अशुभ समझ कर नदी में वहा देना।

४—घोडे का आकाश में उडना।

५—हस हसिनी द्वारा सदेश भेजना।

६—जादूगरनियो से लडाई।

७—केकडा द्वारा प्राण रक्षा।

१—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी—हिन्दी साहित्य का आदि-का[ल]
पृ० ७४

८—मछली का मणि निगल जाना और बाद में प्रगट करना।

९—नायक का अवतार के रूप में जन्म लेना।

१०—रूप परिवर्तन हो जाना—बकरा, मैना, अथवा पत्थर के रूप में।

११—पुरोहित की दुष्टता, राजा के कान भरना, बाप बेटी में ही विवाह कराना इत्यादि।

१२—तोते द्वारा रूप वर्णन सुनकर मोहित हो जाना।

१३—ऐसा नगर जिस पर राक्षस अथवा डाइन का राज्य हो।

१४—दुर्गा इत्यादि देवियो का प्रगट होना।

इस प्रकार हम देखते है कि लोकगाथाओ मे, लोककथाओ में तथा भारतीय एव विदेशी साहित्य के निजन्धरी कथाओ (legends) तथा महाकाव्यो में कथानक रूढियो का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया गया है। हमारा विश्वास है कि इन कथानक रूढियो का प्रादुर्भाव लोक साहित्य के द्वारा ही हुआ है। इन कथानक रूढियो को देखकर प्रतीत होता है कि लोकगाथाओ तथा लोककथाओ के प्रणेता कितना उर्वर और कल्पनाशील मस्तिष्क रखते थे। पाश्चात्य विद्वानो का कथन कि लोक साहित्य में विकसित बुद्धि का अभाव है, भ्रामक है। इस कथन के विपरीत हमें उनकी सवेदनशील मस्तिष्क की सराहना करनी चाहिए। लोकगाथाओ के प्रणेताओ ने जिन कथानक रूढियो का प्रयोग किया वे कालान्तर में चलकर और भी व्यापक हुई तथा लिखित सहित्य, महाकाव्य आदि में, इनका धडल्ले से प्रयोग किया गया। भोजपरी लोकगाथाओ में निहित अवतारवाद, अमानवतत्व तथा समानताओ की उपयोगिता देखकर हमें कथानक रढियो के महत्व का आभास मिलता है।

---

(४) भोजपुरी लोकगाथा—एक जातीय साहित्य

भौगोलिक स्थिति एव जलवायु के फलस्वरूप प्रत्येक देश अथवा जाति के अन्तर्गत सभ्यता एव सस्कृति का विकास होता है। वहाँ के प्राकृतिक जीवन के अनुरूप ही लोगो की स्वतन्त्र प्रतिभा प्रस्फुटित होती है तथा इतिहास एव साहित्य का निर्माण होता है। इसलिए हमें प्रत्येक देश अथवा जाति के साहित्य में कुछ न कुछ अन्तर मिलता है। जब हमारे सम्मुख अग्रेजी साहित्य तथा भारतीय साहित्य का परस्पर उल्लेख होता है तो निश्चित रूप से हमारे मस्तिष्क मे दोनो साहित्यो में निहित अन्तर एव विशेषताएँ स्पष्ट हो जाती है। किसी देश के साहित्य के आधार में वहाँ का आधिभौतिक जीवन प्रकाश मे आता है तथा किसी देश के साहित्य में आध्यात्मिक जीवन की छाप दिखलाई पडती है।

भारतीय सस्कृति एव सभ्यता के आधार में आध्यत्मिक जीवन को महत्त्व मिला है। अतएव स्वाभाविक रूप से यहाँ के साहित्य में आदर्शवाद एव आध्यात्मिकता का गहरा पुट है। भारतवर्ष में भौतिक सुख को जीवन की चरम स्थिति नही मानी गई है अपितु यहाँ के जनसमूह की दृष्टि भविष्य के पूर्ण आनन्दमय अमर जीवन पर ही लगी रही है। यही सामूहिक भावना हमारे यहाँ की अनेकानेक साहित्यिक रचनाओ में परिलक्षित हुई है। अमरत्व प्राप्त करने की सामूहिक भावना ही हमारी जातिगत विशेषता है। यही जातिगत विशेषता हमारे साहित्य में प्रत्येक स्थान पर मिलती है। इसी विशेषता के फलस्वरूप 'जातीय साहित्य' की सज्ञा साहित्य को मिलती है।

यह हम पहले ही स्पष्ट कर चुके है कि किसी भी देश की सस्कृति एव सभ्यता को सहज रूप मे व्यक्त करने वाला साहित्य 'लोक साहित्य' ही होता है अतएव भोजपुरी लोकगाथाओ में देश की सामूहिक अन्तश्चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। अत' हम भोजपुरी लोकगाथाओं को 'जातीय साहित्य' के अन्तर्गत रखेगें।

प्रथम अध्याय में ही स्पष्ट किया जा चुका है कि लोकगाथाए किसी एक व्यक्ति की सपति न होकर समस्त समाज अथवा जाति की सपति होती हैं। अतएव स्वाभाविक रूप से उसमें समाज का मन मुखरित होता है। भोजपुरी लोकगाथाए भी युग युग के जनजीवन को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती हैं।

भोजपुरी लोकगाथाओ में भारतीय जीवन के आध्यात्मिक पक्ष का पूर्ण रूपेण समावेश हुआ है । भोजपुरी लोकगाथाओ के नायक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्' के कथन का पालन करते हैं । उनके जीवन मे असीम कर्म-वाद भरा पडा है। भारतीय जीवन में कर्म से विमुख होना घोर पाप माना गया है । क्योंकि हमारा विश्वास है कि प्रत्येक सत् कार्य का करना अर्थात् ईश्वर की सृष्टि में सौन्दर्य निर्माण करना है। इसीलिये भारतीय जीवन में अध्यात्म के साथ साथ कर्मवाद का महान सन्देश दिया गया है। फल की चिन्ता न करते हुए कर्म करना ही परमधर्म है । इस भावना का सुन्दर चित्र लोक-गाथाओ में उपस्थित किया गया है । लोकगाथाओ के आदर्श चरित्र सत्कर्म में निरत हैं । वे समस्त ससार को आदर्शवान बनाना चाहते हैं । ईश्वर की सृष्टि को सजाकर वे पुन उसी में लीन हो जाना चाहते हैं । वे जीवन के क्षणिक आनन्द एव वैभव को भली भाँति समझते हैं। उन्हें यह जीवन प्यारा नही है अपितु वे तो अक्षय आनन्द की खोज में हैं।

इस प्रकार भोजपुरी लोकगाथाओ में सासारिक जीवन के भारतीय दृष्टिकोण को स्पष्ट एव सहज रूप में उपस्थित किया गया है ।

जीवन के आध्यात्मिक पक्ष का अतीव चित्रण होते हुये भी भोजपुरी लोकगाथाओ में समाज के जीवन स्तर की उपेक्षा नही हुई है। भोज-पुरी लोकगाथाओ में जीवन का स्तर अत्यन्त वैभव पूर्ण है। सभी ओर राम-राज्य है, सभी अन्न-वस्त्र से सुखी हैं । सुन्दर नगरो एव विशाल भवनो मे लोग निवास करते हैं। समाज का निम्न से निम्न व्यक्ति भी किसी अभाव में नही है । यह हम ऊपर ही विचार कर चुके है कि भारतीय जीवन में कर्म को प्रधानता दी गई है, अत लोकगाथाओ में सभी जातिया, सभी वर्ण अपने अपने कर्म में निरत हैं। अतएव इस दृष्टि से भी भोजपुरी लोकगाथाओ में समाज के जीवन का सच्चा रूप चित्रित हुआ है ।

भोजपुरी लोकगाथाए एक जातीय साहित्य के रूप में ही नही उपस्थित होती है, अपितु इसका स्थान विश्वसाहित्य में भी आता है । किसी भी देश, अथवा जाति के मनुष्यो के हृदय में प्रेम, उत्साह, करुणा, क्रोध आदि नाना भावो का उद्‌भव सदा एक सा ही होता है। उन भावो के व्यक्त करने के प्रकार अर्थात् भाषा शैली और परिस्थिति की भिन्नता के कारण उनकी अनुभूति के स्वरूप में कोई अन्तर नही पड सकता । अनुभूति की इस व्यापक एकरूपता में यदि हम चाहे तो विश्व भर के साहित्य को एक कोटि कर सकते है ।

इस दृष्टि मे भोजपुरी लोकगाथाए मानवमात्र की अभिव्यक्ति करती हैं। लोकगाथाओ के चरित्रो में आदर्श है, ईश्वर में विश्वास है, वीरता है, करुणा है तथा त्याग और उदरता है। इसके विपरीत उनमें दुष्टता, ईर्ष्या और क्रोध के भाव भी वर्तमान है। सदाचार और दुराचार दोनो का यथार्थ चित्र है। ससार में प्रत्येक समय में दोनो प्रकार के लोग रहते थे और रहते हैं। उनके साधन चाहे भिन्न हो परन्तु भावभूमि समान ही है। अतएव भोजपुरी लोकगाथा आदर्श के साथ साथ मानवता के यथार्थ चित्र को भी प्रस्तुत करती हैं।

---

(५) उपसंहार

गतपृष्ठो में भोजपुरी लोकगाथाओ पर विचार करने से हमें स्पष्ट-रूप से ज्ञात होता है कि लोकगाथाएँ देश की सस्कृति एव सभ्यता की अग्रदूत हैं। इनसे हम देश की विगत ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक, भौगोलिक एव राजनीतिक अवस्था का परिचय प्राप्त कर सकते हैं। यद्यपि इनकी कथा पुरानी है, परन्तु इनमे इतनी नवचेतना भरी है कि ये वर्तमान युग को भी कर्मशीलता और आनदमय आदर्श जीवन का सदेश देती हैं।

हिन्दी लोक साहित्य में खोज का कार्य कुछ अवश्य हुआ है। इनमें प्रमुख हैं डा० सत्येन्द्र तथा डा० कृष्णदेव उपाध्याय। दोनो महानुभावो ने अपने ग्रथ में 'लोकगाथा' के विषय पर विचार किया है, परन्तु उसे हम सकेत मात्र ही कह सकते हैं। भोजपुरी लोकगाथाओ पर प्रस्तुत विचारविमर्श लोकगाथा सबधी अध्ययन की दिशा में पहला कदम है। प्रबध को प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण बनाने का भरसक प्रयत्न लेखक ने किया है, परन्तु कुछ कमियाँ तो होगी ही। वास्तव में लोकगाथाओ का अध्ययन एक अत्यन्त जटिल विषय है। लोकगाथाओ में इतनी विपुल सामग्री भरी पडी है कि प्रत्येक लोकगाथा को अध्ययन का अलग ही विषय बनाया जा सकता है। उदाहरण के लिये आल्हा, लोरिकी, विजयमल तथा सोरठी इत्यादि लोकगाथाओ को हम ले सकते हैं। इन लोकगाथाओ का आकार और प्रकार इतना विशाल और विविध है, कि इन्ही पर एक एक ग्रथ तैयार किया जा सकता है।

लोकगाथाओ का सागोपाग अध्ययन, उनके विविध रूपो का सग्रह तथा सरक्षण का कार्य शीघ्रातिशीघ्र प्रारभ होना चाहिए। क्योकि आज के सक्रमण काल में लोकगाथाए विस्मृत होती जा रही है। गावो में अब कठिनाई से गाथा गाने वाले मिलते हैं। जो मिलते है उन्हें भी आधा-तीहा याद रहता है। इस परिस्थिति का लेखक को प्रत्यक्ष अनुभव है। विशेप रूप से 'आल्हा' के भोजपुरी रूप तथा 'बाबू कुवरसिंह' के मौखिक रूप को खोजने में अति कठिनाई का

१—डा० सत्येन्द्र एम० ए० पी० एच० डी०—'व्रज लोक साहित्य का अध्ययन'।

२—डा० कृष्णदेव उपाध्याय एम० ए० डी० फिल०—'भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन'।

अनुभव हुआ। आजकल भोजपुरी प्रदेश में 'आल्हा' का प्रकाशित वैसवारी रूप की अधिक प्रचार में है। इसी कारण प्रस्तुत अध्ययन में लेखक ने श्री ग्रियर्सन द्वारा एकत्रित भोजपुरी रूप से सहायता ली है। यही परिस्थिति 'बाबू कुवरसिंह' की लोकगाथा की है। भोजपुरी प्रदेश में 'बाबू कुवरसिंह' विषयक लोकगीत, लोकगाथा से अधिक लोकप्रिय हैं। इसके गानेवाले भी बहुत कम मिलते हैं। जो मिलते हैं वे भी प्रकाशित पुस्तको की सहायता से ही गाते हैं। इसी लिए लेखक ने भी प्रकाशित पुस्तक से सहायता ली है।

वास्तव में लोकगाथाओ का सग्रह एक विद्यार्थी के लिए असभव नही तो अति कठिन अवश्य है। एक एक लोकगाथा के विविध रूपो को एकत्र करने के लिए कई मास का समय चाहिए। इस कार्य से लिए आर्थिक सहायता अत्यन्त आवश्यक है। वस्तुत इस जटिल कार्य को एक सस्था ही कर सकती है। उत्साही कार्यकर्त्ताओ का समूह आर्थिक सहायता से परिपूर्ण होकर जब इस कार्य में लगेगा तभी लोकगाथाओ का वैज्ञानिक सग्रह सभव है।

देश के कुछ प्रमुख विद्वानो ने लोकसाहित्य विषयक अध्ययन की ओर ध्यान देना प्रारभ कर दिया है। उत्तरप्रदेश में 'हिन्दी जनपदीय परिषद' की स्थापना हमारे हृदयो में आशा और उत्साह का सचार कर रही है। हिन्दी के अन्य प्रादेशिक क्षेत्रो समितियो और परिषदो की स्थापना एक नए युग की सूचना दे रही है। लखनऊ में स्थापित 'लोक सस्कृति परिषद्' गत् कई वर्षो से लोक साहित्य सबधी कार्य कर रही है। बुन्देलखड में 'लोकवार्त्ता परिषद्', मालवा में 'मालवा लोक साहित्य परिषद', राजस्थान में 'भारतीय लोककला मडल', पजाव में 'लोकसाहित्य परिषद' तथा भोजपुरी और व्रज जनपद में कई छोटी मोटी सस्थाए लोकसाहित्य सबधी कार्य को आगे बढ़ा रही हैं।

उपर्युक्त सस्थाओ के होते हुए भी आज भारतीय लोकसाहित्य के अध्ययन के निमित्त राज्य से मनोनीत एक केन्द्रीय सस्था की परम आवश्यकता है। इस सस्था में विद्वानो एव कार्यकर्त्ताओ की नियुक्ति होनी चाहिए। भिन्न-भिन्न प्रदेशों में लोकसाहित्य की सामग्री एकत्र कर उनका तुलनात्मक अध्ययन ऐसी ही सस्था कर सकती है।

अन्त में आकाशवाणी (आल इडिया रेडिओ) के विषय में कुछ निवेदन करना अनावश्यक न होगा। पटना, लखनऊ तथा इलाहाबाद केन्द्रों से भोजपुरी

एतना वोली घोडा मुन गइल श्रोडा जरि के भइल अगार
वोलल घोडा डेवा से वाबू डेवा के बलि जाश्रो
बज्जर पडि गइल श्राल्हा पर श्रोपर गिरे गजब के धार
जब से श्रइलो इद्रासन से तब से बिपत भइल हमार
पिल्लू वियाइल वा खूरन में ढालन में भाला लाग
मुरचा लागि गइल तरवारन मे जग में डूब गइल तलवार
श्राल्हा लडइया कबहो न देखल जग में जीवन है दिनचार
श्रतना बोली डेवा सुन गइल डेवा खुशी मगन होइ जाय
खोले श्रगाडी खोले पिछाडी खोले सोनन के लगाम
पीठ ठोक के जब घोडा के घोडा सदा रहो कलियान
चलल जे राजा ब्रहमन घुडवेनुल चलल बनाय
घडी श्रढ़ाई का श्रतर में रूदल कन पहुँचल जाय
देखिके सुरतिया बेंदुल के रूदल हसके कहल जवाब
हाथ जोड के रूदल बोलल घोडा सुनेले वात हमार

भूजे उड पर तिनक बिराजे परतापी रूदल बीर
फांद वछेडा पर चढ गइल घोडा पर भइल श्रसवार
घोडा बेनुलिया पर वघ रूदल घोडा हसा पर डेवा वीर
दुइए घोडा दुइए राजा नैनागढ चलल बनाय
मारल चावुक है घोडा के घोडा जिमीन डारे पाँव
उडि गइल घोडा सरगे चलि गइल घोडा चला बरावर जाय
रिमझिम रिमझिम घोडा नाचे जैसे नाचे जगल मोर
रात दिन का चलला में नैनागढ लेल तकाय
देखि फुलवारी सोनवाँ के रूदल बड माँगन होय जाय

× × ×

वेर वेर वरजो वघ रूदल के लरिका कहलऽ न माने मोर
वरिया राजा नैनागढ के नइया पडे इदरमन वीर
वावन गुरगुज के किल्ला है जिन्ह के रकवा सरग पताल
वावन थाना नैनागढ में जिन्ह के रकवा सरग पताल

वावन दुलहा के सिरमौरी कहवोलक गुरैया घाट
मारत ल जइव वावू रुदल नाहक जइहे प्रान तोहार
पिंडा पानी के ना वचवे हो जइव वन्स उजार
एतना वोली रुदल सुन गइल तरवा से लहरल ग्राग
पकडल झोटा है देवी के धरती पर देल गिराय
आँखि सनीचर है रूदल के वावू देखत काल समान
दूचर थप्पर दूचर मुक्का देवी के देले लगाय
लेके दावल ठेहुना तर देवी राम राम चिचियाय
रोए देवी फुलवारी में रुदल जियरा छोड हमार
भेंट कराइव हम सोनवा से

× × ×

नाम रुदल के सुन के सोनवां वड मगन होय जाय
लोडी लौंडी के ललकार मु गिया लौंड़ी वात मनाव
रात सपनवा में सिव वावा के सिव पूजन चली वनाय
जौने झपोला है गहना के कपडा कइले ग्राव उठाय
खुलल पेटारा कपडा के जिन्हके रास देल लगवाय
पेन्हल घाघरा पच्छिम के मखमल के गोट चढाव
चोलिया मुसरुफ के जेह में वावन वन्द लगाय
पोरे पोरे ग्रगुठी पडि गइल सारे चुनरियन के झझकार
सोभे नगीना कनगुरिया में जिन्हके हीरा चमके दांत
सात लाख के मग टीका है लिलार में लेली लगाय
जूडा खुल गइल पीठन पर जइसे लोटे करियवा नाग
काढ़ दरपनी मुँह देखे सोनवां मने मन करे गुमान
मरजा भइया राजा इदरमन घरे वहिनी राखे कुग्रार
वइस हमार वित गइले नैनागढ़ में रही वार कुग्रार
ग्राग लगाइवि एह सूरत में नैना सँवली नार कुग्रार
रे त लागल कचहरी इन्दरमन के वगला वड़ वडे ववुग्रान
ग्रोहि समन्तर लौंडी पहुँचल इन्दरमन कन गइल वनाय
ग्राइल राजा वघरूदल सोनवां के डोला धिरावलवाय
माँगे विग्रहवा सोनवां के वरियारी से माँगे वियाह
हवे किछु वूता जांघन में सोनवां के लाव छोडाय

मने मन झाँके राजा इन्दरमन बाबू मनेमन करे गुमान
बेर बेर बरजो सोनवाँ के बहिनी कहलन मनलऽ मोर
पडि गइल बीडा जाजिम पर बीडा पडल नौ लाख
है केउ राजा लडवइया रूदल पर बीडा खाय
चाहड कापे लडवइया के जिन्हके हिले बतीसो दाँत
केकरा जियरा है भारी रूदल से जान दियावे जाय
बीडा उठावल जब लहरासिंघ कल्ला तरदैल दबाय
मारू डका बजवाये लकडी बोले जुझान जुझान
एकी एका दल बटुरल जिन्हके दल बावन नबे हजार
बूढ मकुना बियाउर के गिनती ,नाही जब हाथ के गनती नाहि
वावन मकुना के खोलवाई राजा सोरह सै दन्तार
नब्बै सौ हाथी के दल में मेंडल उपरे नाग डम्बर मेंडराय
चलल परबतिया परबत के लाकर बाँघ चलै तलवार
चलल बगाली बगला के लोहन में बड चडाल
चलल मरहट्ठा दक्खिन के पक्का नौ नौ मन के गोला खाय
नौ सौ तोप चलल सरकारी मगनी जोते तेरह हजार
बावन गाडी पथरी लादल तिरपन गाडी बरूद
बत्तिस गाडी सीसा लद गइल जिन्हके लगे लदल तरवार
एक रुदेला एक डवा पर नब्बे लाख असवार

× × × ×

तड तड तड तेगा वोले उन्हके खटर खटर तरवार
जैसे छेरियन मे हुँडडा पर वइसे पलटन में पडल रुदल बबुआन
जिन्हके टगरी धैके बीगे से त चूर चूर होइ जाय
मस्तक मारे हाथी के जिन्हके डोग चलल वहाय
थापड मारे ऊँटन के चारु टाँग चित होय जाय
सवालाख पलटन कटि गइल छोटक के
जौ तक मारे छोटक के सिरवा टुइखड होइ जाय
माँगल तिलका छोटक के राजा इन्दरमन के दरवार
कठिन लका वा वध रूदल सभ के काटि देल मैदान
एतो वारता इन्दरमन के रूदल के देखे छाती मारै वजर के हाथ
लै चढावल पालकी परदर डोली में महल वनाय

बीड़ा पड़ि गइल इन्दरमन के राजा इन्दरमन बीड़ा लेल उठाय
एकी एका दल बट्टुरे दल बावन नब्बे हजार
बावन मकुना खोलवाइन एकदता तीन हजार
नौ सौ तोप चले सरकारी मँगनी जोते तीन हजार
बारह फेर के तोप मगाइल छुरी से देल भराय
किरिया पड़ि गइल रजवाडन में बाबू जीअल के घिक्कार
उन्हके काटि करो खरिहान
चलल जे पलटन इन्दरमन के शिव मदिर पर पहुँचल जाय
तोप सलामी दगवावल मारू डङ्का देत बजवाय
खबर पहुँचल वा ऊदल कन भइया आल्हा सुनो मोरी बात
कर तैयारी पलटन के शिव मदिर पर चली बनाय
निकलत पलटन ऊदल के शिव मदिर पर पहुँचल जाय
बोलल राजा इदरमन बाबू ऊदल सुनो मोर बात
डेरा फेर एजनी से तोहार महाकाल कट जाय
तब ललकारे ऊदल बोलल रजा इदरमन के बलि जाओ
कर द बियहवा सोनवाँ के काहे बढइब रार
पडल लडाई हैं पलटन में झार चले लागल तलवार
ऐदल उपर पैदल गिर गइल असवार उपर असवार
भुइय पैदल के मारे नाही घोडा असवार
जेती महावत हाथी पर सबके सिर देल दुखराय
छवे महीना लडते बीतल अबना हूटे इन्दरमन बीर
चलल जे राजा बघ रूदल सोनवाँ कन गइल बनाय
हाथ जोड के रुदल बोलल भौजी सोनवाँ के बल जाओ
केह के मरला से भुइहें अप्पन करल बीर कटाय
जबहीं तू कटब भइया इनदरमन के तब सोनवा के होइ बियाह
अतना बोली मोनवाँ सुनके रानी बड मँगन होय जाय

× × × ×

काँचे महुहवा कटवाये छये हरीअरी बाँस
तेगा के माडो छववाल वा
नौ सौ पडित के बोलावल मँडवा में देत बिठाय
सोना के कलसा वइठले वा मँडवा मे
पीठ काठ के पीढा बनावे मँड़वा बीच मँझार
जांघ काटि के हरिस बनावे मँडवा के बीच मँझार

मूडी काट के दिया बरावे मँडवा के बीच मँझार
पलटन चल गइल ऊदल के मँडवा में गइल समाय
बइठल दादा है सोनवाँ के मँडवा में बइठल बाय
बूढा मदनसिंघ नाम धराय
एक बेर गरजे मँडवा में जिन्हके दल के दस दुआर
बोलल राजा बूढ़ा मदनसिंह सारे रूदल सुन बात हमार
कतबड सेखी है बघ रूदल के मोर नतिनी से करे बियाह
पडल लडाई ह मँडवा में ऊदल मन में करे गुमान
आधा पलटन कट गइल बघ रूदल के सोने के कलसा बूडलबा
बीचें दोहाई जब देबी के देबी माता लागू सहाय
घीचल तेगा है बघ रूदल बूढ़ा मदनसिंघ के मारल बनाय
सिरवा कटि गइल बूढ़ा मदनसिंघ के
हाथ जोड के समदेवा बोलल बबुआ रूदल के बलि जाओ
कर बिऊहवा तू सोनवा के नौसे पडित बोलाय
आधी रात के अम्मल में दुलहा के ले ले बोलाय
ले बइठावल जब सोनवा के आल्हा के करे बियाह
कैल वियहवा अऊर सोनवा के बरिआरिया सादी कैल बनाय
नौ से कैदी बांधल ओहि माडो में सबके बेडी देल करवाय
जुग जुग जीअ बाबू ऊदल तोहार अमर बजे तरवार
डोला निकलल जब सोनवाँ के मोहबा के लेलतकाय
राति क दिनवाँ का चलला में मोहबा में पहुँचल बाय

--.o--

(२) लोरिकी

लोरिक और चनवा का विवाह, (चनवा का ओढ़ार)

हे राम जी के नइयाँ जपे सभियाँ चाहे बिहान
जेकर जपले बनी मुकुतिया आ सुरधाम
एहवर भइया दुरुगा होई अपई बिहान
छुटल त दुरुगा हमार अछरिया हमार कठ
गावे मनवा करता लोरिकायन मनियार

× × × ×

अरे जब लडत लडत माई पर नजरिया लोरिक के परिजाय
लोरिक देखेले के मइया इहवा आइलिवाय
तव दूनो वीर हटी के फरकवा होले ठाढ
छोड़ी दिहले लडल दूनो अखाड़ा से वहिराय
लोरिक कहेले कहु ए माई गऊरवा के हाल
अतना सुनके माई खुलइन साजेली जवाव
कहेली जे सुन ए ववुआ का कही गउरा के हाल
गउरवा में आइल वाटे वाठवा हो चमार
राजा साहदेव के वेटी चानवा ह जेकर नाम
सीलहट में भइल रहल जेकर वियाह
भागत आवतिया गउरवा गुजरात
विचवे जगलवा वाठवा के लिहलसि पिछियाय
इजती वचाके चानवा गउरवा में अइली पराय
ओकरे के वाठवा गउरवा में ले आइल पिठिआइ
आइ कर सऊसे गउरा में कहलसि चिचिआय
सउसे गउवाँ मिलि के कदऽ चना से हमार वियाह
डर का मारे काहे केहू ना वाठवा के दिहल जवाव
वाठवा के डरे साहदेव के तरवा चटकल वाय
नाहीं केहू दिहल वाठवा के जवाव
हाड ले आइ के फेंकलसिहा इनरवा में लगाय

पानी भरे गइलि हा बेटी मजरिया हो हमार
छोरी के पटकी दिहलसि घरीला बाठवा चमार
अतना सुनेला जब लोरिकवा बीर माल
खिसिया के मारे देही लहरवा चटकल बाय

× × × ×

होई के तैयार दूनो मरद करेले उहा भिडान
गँसवा में गसावा दुनो बीर के मिली जाय
छाती में छाती सिरवा से सिर सटी जाय
दाँव त काटी के लोरिक बाठवा के बिगे उठाय
जाके बाठा गिरल करका धरती पर भहराय
तब लोरिक फानिके छाती पर हो गइले असवार
नाक हाथ काटि के बाठवा के भगवान
भागल बाठवा उहवाँ से जगलवा के धरे राह
इहाँ सउसे गउरा डका पिटी जाय
अरे सुनेले गढवा में चनवा डकवा हो पिटाय
मने मने अपना चनवा करेले बिचार
कहेले जे लोरिक अइसन ना जगत में केहू बाय
केही भाँति होई मोरा लोरिक से मुलाकात
कवना जुगती से करी लोरिक से मुलाकात
बइठ के चनवा लिखेले पतिया बताय
एवाविल छत्तीसो वरन गउरा के कराव जेवनार

× × × ×

हो गइल विजइया लोग राजा के पहुँचे दुआर
करे लगले भोजन लोगवा भितरा से वहरा मकान
नाना विधि के वनलवा जेवनार
मार्हा का वने से माँड के नदिया वहि जाय
लोरिक के सरतिया चनवा देखति रे वाय
हाथवा के लेले वारे चानवा पान के खिल्ली लगाय
सोचतिया उहाँ कइसे गिराईं खिल्ली लोरिक के पतलवा
वीरा जव गिरवलस गिरे लोरिक के पातल जाय

जइसे खिल्ली गिरन लिहले लोरिक उठाय
परल नजरिया लोरिक के चानवा के ऊपर जाय

× × × ×

खापीले सउसे गउरवा के लोगवा सुती जाय
जब उहाँ हो गइल रतिया आके निसुआर
घमेलागल राजा डेवढी पर चौकीदार
वरहा उठावे लोरिक गइले महला के पिछुआर
उहवे त विगेला वरहा लोरिक ना सरिहाय
भईले सवदवा चनवा उठे चिहाय
उठी के चनवा खिडिकिया पर पहुँचल जाय
देखतिया चनवाँ लोरिक भइल वाडे ठाढ
जइसे जोर कइले लोरिक वढे के परवान
तइसे चाना वारहा छोडिके हटी जाय
देवे लगले लोरिक उहवाँ चनवा के गारी सुनाय
कहेले जे रहुआ जामल छिनरी नान्हे के वदमास
अतना कही के लोरिक वरहा वीगे घुमाय
धइकर वारहा चनवा खिरकी में देले वान्ह
लोरिक ओही वारहा से चढि जात
चढ़ी कर गइले लोरिक चनवा के महलान।

× × × ×

दस पाँच दिनवा एही विध करत वीति जाय
एक पख वीतल एक दिनवाँ चनवा चदरिया गइल लोरिक से वदलाय
चदरी त वान्ही के मुडिया पर लोरिक चलि जाय
लोरिकवा पहुँचल अपना अगनवा
भइल रहे भिनुसाहरा मुँहवा लउकत रहे उजियार
ओही वैठल आँगना वहोरेले मजरिया मनियार
मजरी के नजरिया परिले लोरिक पर जाय
देखी के सतिया उहवाँ हँसली ठठाय
कहेले जे सुन ए मइया खलइनी कहल हमार

देखऽ आके आँगना म बाड़े ठाढ बरैठा के दमाद
अतना त सुनिके लोरिक चादर देखे उतार
देखी के चदरिया लोरिक चलि भइले मिता के दुआर
कहेले बड़ी त बेजतिया राती हमरा भइल बाय
चानवा के चादर से चादर मोर गइल बदलाय
अइसन करऽ जे केहूना जाने पावे एकर हाल
अतना सुनिके बिरिजा चदरी के चपति के लेले साथ
चलि त भइली बिरीजा राजा के महलान
एते रतिया जगली चनवा सूतल बा अलसाय
सुतल सुतल दिन चढल अधिकाय
तब उहाँ मुँगिया लऊँडी चाना के देले जगाय
लोरिक के चदरिया मचिया चाना के देखे पास
मुँहवा सुखलवा चाना के बिखरल बाटे सिंगार
ओठवा के ऊपर चाना का पपरिया परल बाय
देखी के हलिया चाना के मुँगिया कहे सुनाय
कहेले सुन ए बहिनी चाना कहल हमार
तू आजु कहऽ अपना दिलउवा कर हाल
बड़ा अचरजवा आजु बहिनी बारे बुझात
अतना त कही के चेरिया रानी के जाले पास
झटकल गइली माता गगेवा कर पास
जाई के कहेले चेरिया रानी से समुझाय
कहेले जे सुनिए रानी गगेवा मोरे बात
चानवाँ का महल बा कवनो मरद से मुलाकात
तले चादर लेके बिरिजा पहुँची उहाँ जाय
जाइकर बोले बिरजा उहाँ सुनात
चदरी त बदला गइले बहिनी हमार
अतना कही के बिरिजा चदर देले धराय
आपन चदर लेके चाना लोरिक के देले आय
अब उहाँ के बतिया के परदा चाना का परि जाय
भेद नाही खुलल गइल एतने से हो ओराय

× × × ×

चानवा के लेके लोरिक हरदिया से जाले बजार

दिन राती रहिया धइले मजीलिया तुरतजाय
आइके पहुँचले वगसर हेल गइले दरिआव
धइले सड़किया सदर हरदिया के चली जात
एही त सडकिया सवर वसत वा सारगपुर गाव
जवना सारगपुर में वाटे महीपतिया हो जुआर
सुघरी चाना के उ हा मएदनवा में वइठाय
अपने त जुआ खेले महिपत के सग जाय
दावा पर धइले लोरिक सोनवा के जाइ पेटार
धरेला महिपतिया दाँव पर सारगपुर गाव
थपरी वजा के जुआडी दिहले लोरिक के उलू वनाय
सव धन हरके वाचल चनवा रहली हाय
सेकरो के धरे दिहले दाँव पर चानवा के लगाय
तव फेरु धरे महीपति सारगपुर हो गाँव
वडे त खुशी से महीपति पासा लेला उठाय
मारेला घिरनी नचा के परिच्च से लगी लगाय
तव उहाँ गइल अकिल लोरिक के हेराय
मने मने चनवा अपना करेले हो विचार
करिके चानवा मन ही में कहती वाय
अवही त एक दाँव हमारा वाचल असवाव
एक दाव के वाचल वाटे गहनवा हमार
एक हाथ महीपती खेलऽ जुआ हमारा साथ
पासा लेके हाथ में महिपति सुमिरेला पुजमान
दाव पर वइठी के जाना सारदा के धरे ध्यान
मवही निहारतारे चनवा के सुरतिया
पासा त फेंके जहाँ महीपतिया वनाय
नाचल पासा गिरे तेरहवें पर जाय
दाव त वटोरी के चानवां थपरी देले वजाय
सव कुछ जीति के जितलसि सारंगपुर गाँव
हाथ जोरि के चनवा लोरिक से कहती वाय
कहेले जे सुनए सइया कहनवा मानऽ हमार
डरा अन्न कवार इहाँ से हरदिया के धरऽ राह
तव उहा महीपतिया जुआडिन से कहे सुनाय

कहेला जे सुने ए जुआडी कहल हमार
जीतल तिवई ले अब मोरा पास
तिवई के सूरत मइया तेजली नाही जाय
हमरा नजरी से नाही सूरती बिसरत बाय
जैसे हारे तइसे ले आव मोरा पास
होखे लागल मारपीट उहवा लोरिक सगे साथ
सवापहर उहवा लोरिक वजवले हथियार
सब त जुआडी के मारी के गरदा दिहले मिलाय

× × × ×

चलत चलत लोरिक पहुचल हरदिया के बजार
चनवा के लेके रहे लागल लोरिक मनियार
एने पहुचल खबरिया राजा महीचनवा के पास
पहुँचल भागे लगले लोरिक महीचन राजा बिचवा
भइल लडइया लोरिक महीचन राजा
लाख फौजी काटि दिहलेसि लोरिक मनियार
तब त लगले जोड़े राजा महीचन हाथ
राजा पहुचलि अपना मन्त्रि के लिहल बुलाय
तब उहाँ राजा से रचेले मतीरी हाथ
कहेले जे सुन ए राजा से बतवा तू हमार
अहिर के बाटे सहजे जुगुति हो उपाय
हरसाल राजा हरेवा हरदी के आवे बजार
साल भरे एक वेर आवेला तोहरे गाव
छव महीना पहिले चिठी देला भेजाय
एक दिन राती राजा हरदी में करे मौकाम
तवहूँ ना जुटेला राजा हरेवा के वुतान
लुटी ले खाइ जाला राजा हरदी के बाजार
राजा त हरेवा के आवे के होता जब मोकाम
सऊसे त हरदी में तवही सेपरी जाला हयकार
जहवा जे बत्तीसई वहत्तर सूवा सहतारे बनीमार
आन नाही देला राजा ना बोले मियाद
बन्हुआ के मास काटी बन्हुआ खाइ जाय

ओही जे त अहीर के राजा भेजेला एह बार
अहीर के बोला के कहऽ अहीर के समुझाय
कहऽ जे बेटा मोर राजा हरेवा बन्हले बाय
नेउरपुर जाके लेआव बेटा के मोटा छड़ाय
बड़ा हम नेकिया मानव जनम जनम भरी तोहार
लिखी हम देवी तोहरा के हरदी के ठकुराय

लोरिक इस षडयन्त्र को समझता है परन्तु अपनी वीरता को प्रगट करने के लिए वह नेउर पुर जाकर हरेवा को मार डालता है और विजयी होकर हरदी लौटता है, तथा राजा से आधा राज्य ले लेता है।

गउरा का हाल .—

अरे रोये त मंजरिया अपना अगना
जियत भाई खोलइन रहली घरवा
भसुर त रहले सवरू बिरवा
सवा लाख गइया रहली बोहवा
बहगी पर दुधुवा आवे गउरा
दुधवा के कुलवा हम कइली गउरा
हे लागल हमार सेजिया फुलवा
दादा एहवर परिगइल विपतिया गउरा
सवालाख गइया बेर केले गइल बा दुसाध
गउरा के राजा बाड़े साहदेव
ओकरे बेटी रहे चनवा हो राम
जेकरा ना जुरल मोगल आ पठान
अरे मजरी का रोवे धरती डोले
लागल डोले इन्दरपुर कैलाश
डगमग होखे लागे इन्दर के दरबार
जेतना रहले आपुस में करे लगे विचार
देख मृत्युभुवनवा केकरा परल बा विपतिया
साती मइया इनार के गइल सहाय
बहिन हमार दुरुगा सेवक पर विपतिया परलबाय
हो जाय दुरुगा तू सहाय

अरे त दुरुगा पहुचल गउरा हो ठाढ़
दाहिने बोलले मजरी सती
रोइ रोइ कहे दुरुगा से आपन हाल
ए दुरुगा जब तक बनल रहें गउरा
तब त देत रहनी दोहरा पूजा तोहार
बिपत के पडल केहू ना देता साथ।

इसके पश्चात् दुरुगा हरदी पहुचती है और गउरा का सब हाल लोरिक से कहती है। लोरिक यह सुनकर चनवा को साथ लेकर गउरा चल पडता है। गउरा पहुचकर अपने गाव की दशा को सुधारता है, तथा मजरी और चनवा के साथ सुख से रहने लगता है।

---

३ विजयमल

हम त सुमिरी ढेर के मिनतिया रे ना
हाइ हाइ रे विधाता करतरवा रे ना
अब सुनीं पचें आगें के हवलवा रे ना
रामा सपना देले देवी माई दुरुगुवा रे ना
बवुआ तोहरा पुतर होइहें तेजमनवा रे ना
रामा चलि जइहें रगरे महलिया रे ना
रामा पसवा में रानी मनवतिया रे ना
रामा चलि गइले धुरुमल सिंघवा रे ना
रामा चलि गइले रगवा महलिया में ना
रामा तव कइले भोगवा विलसवा रे ना
रामा रहि गइले तव दुनिया दरवा रे ना
रामा नउवा मसवा भइले लरिकवा रे ना
रामा महल में भइल खुसहलिया रे ना
रामा वेटा भइले राजा धुरमुलसिंघवा रे ना
रामा अनधन सोनवा लुटवले रे ना
रामा भइल वाटे खुसी कचहरिया रे ना
रामा एजों केतऽ रहल एजा वतिया रे ना
रामा आगे सुनी आगे के वचनवा रे ना
रामा सुनी आगे के वचनवा रे ना
रामा वेटी भइलि वावन सुवेदरवा रे ना
रामा नाव परल तिलकी ववुनिया रे ना
रामा एते नाव परल कुंवर विजयमलवा रे ना
रामा वाप जी के नाव धुरुमल सिंघवा रे ना
रामा भाई के नाव धिरानन छतिरिया रे ना
रामा माता जी के नाव मनवतिया रे ना
रामा भउजी के नाव सोनवा मतिया रे ना
रामा मोर नाव कुंवर विजइया रे ना
रामा वावन देस में वावन सूवेदरवा रे ना

रामा बेटा के नाव मानिकचन्दवा रे ना
रामा रनिया के नाव मयनवा रे ना
रामा भउजी के नाव फुलवामतिया रे ना
रामा नाव परल तिलकी बबुनिया रे ना
रामा लागल खोजै बावन सूबेदरवा रे ना
रामा भेजै लागल देस देस घनवा रे ना
रामा बबुनी के खोजी देहु लरिकवा रे ना
रामा बान्हि चलले बावन वरिअतिया रे ना
रामा केहू नाही लिहले तिलकवा रे ना
रामा लौटि अइले जाति के घवनवा रे ना
रामा केहू नाही लेला तिलकवा रे ना
हाइ हाइ रे बिधाता करतरवा रे ना
मालिक कवना बिधि लिखला लिलरवा रे ना
रामा ब्रह्मा के लिखले लिलरवा रे ना
रामा मारल टाकी नाही होई निभेदवा रे ना
रामा बोले लागल बावन सुबदरवा रे ना
बबुआ सुनिलेहु बेटा मानिकचनवा रे ना
बेटा चलि जाहू घुरुमल पुरवा रे ना
बबुआ तिलकी कइब तिलकवा रे ना
बबुआ घुरुमल सिंघ का भइल वा लरिकवा रे ना
रामा तव भेजेले जाति के घवनवा रे ना
रामा जाइ त दगले सलमिया रे ना
रामा सुनि 'लेहु हमरी अरजिया रे ना
बावा विदा कइले बावन सुबेदरवा रे ना
बाबू बोले लागल जाति के घवनवा रे ना
बाबू देहू देहू आपन लरिकवा रे ना
रामा वोले लगले घुरुमल सिंघवा रे ना
रामा नाहीं करवि सदिया विअहवा रे ना
रामा डरऽ तारे घुरुमल सिंघवा रे ना
तबले वेटा अइले धिरानन छतिरिया रे ना
बाबू का हवे इहो ना हमलिया रे ना
रामा सादी खातिर मागता लरिकवा रे ना

रामा लेइ लेवि वावन के तिलकिया रे ना
रामा लेइ लिहले ओजा पतिरिकवा रे ना
रामा रोपि दिहले तिलक के विनवा रे ना
रामा नाही मनले वाप के कहनवा रे ना
रामा जेहिया रोपले तिलकके दिनवा रे ना
रामा तहिया आइल तिलकी के तिलकवा रे ना
रामा तेलवा से गोडवा घोअयले रे ना
रामा घिव दिहले पानी एवजवा रे ना
रामा तव खिआइल मानिक चनवा रे ना
रामा पानी वेगर मरलसि ह त जनवा रे ना
रामा जहिया चलिहें वावन देश मुलुकवा रे ना
रामा देखिलेवि इनकर गियनवा रे ना
रामा चलि गइले वावन देश मुलुकुवा रे ना
रामा देखिलेवि इनकर नमवा रे ना
रामा चलिगइले वावन देश मुलुकवा रे ना
रामा वइठल वाड़े मितवी देवनवा रे ना
रामा तहाँ वइठल वावन सुवेदरवा रे ना
रामा पूछे लागल ओइजा के कुसलिया रे ना
रामा रोवे लागल वेटा मानिकचनवा रे ना
रामा मारि घललसि पानी वेगर परनवा रे ना
रामा जइसे मरले पानी वेगर जनवा रे ना
रामा तइसे वान्हवि जेहल वरिअतिया रे ना
रामा चललि वाटे आपु वरिअतिया रे ना
रामा चललि वाटे छपनि लाख फउदिया रे ना
रामा रास गिरल भवरानन पोखरवा रे ना
रामा होखे लागल घोड़ा घोडदउरिया रे ना
रामा लागल वरिअतिया दुअरिया रे ना
रामा होखे लगइल सादी केर विअहवा रे ना
रामा सोचै लागल वेटा मानिकचनवा रे ना
रामा कव लेवि तिलक के वदलवा रे ना
रामा वोलत वाडे मतिरी देवनवा रे ना
रामा सुनि लेहू वेटा मानिकचनवा रे ना

रामा अइहें मौडो बरिअतिया रे ना
रामा तब दीह सब के जेहलिया रे ना
रामा कुले खूँटे बन्हिह बरिअतिया रे ना
रामा बाघल बाटे हिछल बछेडवा रे ना
रामा दिहल बाटे अगली पछडिया रे ना
रामा दिहल बाटे आँखि में छोपनिया रे ना
रामा तब उहे दिहलसि हुकुमवा रे ना
रामा तब गइल सब बरिअतिया रे ना
रामा होखे लागल ओइजा मडउवा रे ना
रामा बहरी से हनेला केवरिया रे ना
रामा खाली घुरेला हिछल बछेडवा रे ना
रामा छुटि गइले भवरानन पोखरवा रे ना
रामा घोखवा से मगलसि फउदिया रे ना
रामा दिहलसि धरवाइ हथिअरवा रे ना
रामा अइसहिं त दिहलसि सब के धोखवा रे ना
रामा मारि कइलसि ओइजा सजइया रे ना
रामा बाप बेटे डललसि ओजवाँ रे ना
रामा नीचे मुडि ऊपर कइलसि गोडवा रे ना
रामा लोहवा में दिहलसि खपचरवा रे ना
रामा बान्हि घललसि छपनलाखि पलटनिया रे ना
रामा रोए लगले बाबू घुरमुलसिघवा रे ना
रामा नाहीं मनले बेटा मोर कहनवा रे ना
रामा सब हाथि घोडवा के बन्हलसि रे ना
रामा डालि दिहलसि सब के जेहलिया रे ना
तब बोलतारे धीरानन छतिरिया रे ना
बाबू सुनि लेहु हमरो कहनवा रे ना
रामा घोखवे बन्हलसि बरिअतिया रे ना
हाइ हाइ रे बिघाता करतरवा रे ना
रामा आजु रहिले मोर हथिअरवा रे ना
रामा मारि घललीं आल्हर परनवा रे ना
रामा तिलकी के सगी चल्हकी नउनिया रे ना
रामा उहो रहे तिलकी के मगिया रे ना

रामा बान्हि घलेला छपनलाख पलटनिया रे ना
रामा रहि गइले कुँवर विजयमलवा रे ना
तव वोले लागल वेटा मानिकचनवा रे ना
सुनि लेहु चल्हकी नउनिया रे ना
रामा वान्हि घलली सब पलटनिया रे ना
रामा वान्हि गइले कुँवर विजयमलवा रे ना
रामा अगना में साजि अगिन कुड़वा रे ना
रामा कुलवा में रहेला फतिगवा रे ना
रामा नउवा त वुते घुरुमलसिंघवा रे ना
रामा रोए लागलि चल्हकी नउनिया रे ना
रामा कैसे बिचहैं कुवर विजइया रे ना
रामा मनवा में करेले विचरवा रे ना
रामा मानिकचन से करेले वहानवा रे ना
रामा मधुरे से बोलले वचनिया रे ना
वेटा नथिया छुटलि वा पोखरवा रे ना
रामा गइली भवरानन पोखरवा रे ना
रामा हिछल से ए राम हलवा रे ना
रामा अखिया के खोलले छोपनिया रे ना
रामा वोले लागल हिंछल वछेड़वा रे ना
रामा खोलि देहु अगली पछड़िया रे ना
रामा हिछल मारे लगले मेंडरिया रे ना
रामा हिछल दउरल अइले खिरकिया रे ना
रामा चल्हकी गइली घर के भितरवा रे ना
रामा कोरवा में लिहलसि विजय मलवा रे ना
रामा नाही जाने पवले वेटा मानिकचनवा रे ना
रामा वइठा दिहलसि पीठि का उपरवा रे ना
रामा घोड़वा उडल वा अकासवा रे ना
रामा नीचे छोडे धरति धरमवा रे ना
रामा जाइले त पहुँचल घुरुमुलपुरवा रे ना

× × × ×

रामा पोसे लगली सोनवा मतिया कुवरा के रे ना

रामा कुवर के करेलीं सिगरवा रे ना
रामा कुवर भइले दुइचार बरिसवा रे ना
रामा खेले लगले लछमन के सगवा रे ना
रामा लरिका खेलतु गुली डडवा रे ना
रामा कुवर गइले लरिकन के मितरवा रे ना
रामा करे लगले लरिका से जवबिया रे ना
लरिके हमरो के खेलाय गुलीडडवा रे ना
रामा तब बोलत बा कनवा लरिकवा रे ना
रामा हम न खेलाइब तोर खेलिया रे ना
बबुआ आपन तू ले आव गुली डडवा रे ना
तब हम खेलाइब तोहार खेलिया रे ना
इरिखा लागल बाबू कुवरसिंह बिजेमलवा रे ना
बबुआ चलि गइले आपन घरवा रे ना
रामा जा के सुतले पतरि दलनिया रे ना
उपरा तानि दिहले मखमल चदरिया रे ना

× × × ×

हेमिया चलि जाहु ढोढना लोहरवा रे ना
रामा हेमिया गइलि ढोढा का दुअरवा रे ना
ढोढा गोसया से महल वा हुकुमिया रे ना
रामा लेइल बसुलवा रुखनिया रे ना
रामा चलि चलऽ राज दरबरावा रे ना
रामा हुकुम के रहल दलिनवा रे ना

× × × ×

रामा ओजा जाइ के करेले सलमवा रे ना
गोसया सुनि लिहली रानी सोनवामतिया रे ना
बबुआ बनि गइले तोहरी गुली डडवा रे ना
रामा लागल बाटे गाडी आ वरघवा रे ना
रामा दर छोडत नइखे गुली डडवा रे ना
रामा उठिगइले कुवर मल विजयना रे ना
रामा चलि गइले कुवर ढोढा के दुअरिया रे ना

रामा एक हाथ लिइले उत गुलिया रे ना
रामा दोसर हाथे लिहले अपना डडवा रे ना
रामा लेके गइली वारी वगइचवा रे ना
रामा उमरि रहलि वारह वीसवा रे ना
रामा उहा रहले सभकेह लरिकवा रे ना
रामा तव मारे एगो चपवा रे ना
चपवा जाके गिरल वावन गढमुलुकवा रे ना
रामा मुदई त वारे हमार जिनवा रे ना
उहवा किरिया खाले कुवर विजेमलवा रे ना
वाप किरिए हम मरले वानी चपवा रे ना
तले गारी देता काना सार लरिकवा रे ना
सरऊ झुठी मूठी खालऽ तु किरिअवा रे ना
तोहरे वजवा के नइखे ठेकनवा रे ना
तोहार माई वाप वाडे जेहलखनवा रे ना
रामा चलि गइले पतरि दलनिया रे ना
रामा तानि दिहले मखमल चदरिया रे ना
रामा छाती धुने रानी सोनवामतिया रे ना
रामा कवन पापी जनमल मोखलिफवा रे ना
रामा जेहि रे वतावे राम भेदवा रे ना
रामा उठि गइले कुवर विजइया रे ना
रामा फेंकि दिहले मखमल चदरिया रे ना
रामा आगा चललि रानी सोनवामतिया रे ना
रामा पाछे चलते कुवर विजइया रे ना
रामा जहवाँ रहले हिछल वछेडवा रे ना
रामा राखल रहे आवा के भितरवा रे ना

× × × ×

रामा नाही मनले विजइ कुवरवा रे ना
रामा धानि चढले हिछल असवरवा रे ना
रामा भउजि से कइले परनमवा रे ना
रामा नीचे छोडे हिछल धरतिया रे ना
विचे मारत वाडे हिछल मेंडरिया रे ना

जैसे मारतिया चिल्हिया पखेरिया रे ना
रामा डरे काँपे कुवर बिजेमलवा रे ना
तब गारी देला हिछल बछडवा रे ना
सरउ डरे कपलऽ पिठि का उपरवा रे ना
तब कइसे जितबऽ बावनगढ किलवा रे ना
बबुवा मति होख तुह अघीरवा रे ना
रामा चलि गइले एही तरें दुरिया रे ना

× × × ×

रामा हिछल उतरले भवरानन पोखरवा रे ना
रामा उहा रहली तिलकी बबुनिया रे ना
ओकरा सगे रहलि सोरह सइ लडकिया रे ना
ओइजा हुकुम देले तिलकी बबुनिया रे ना
चलि जइबू लउडी भवरानन पोखरवा रे ना
रामा लेइ अइबू पोखरवा के जलवा रे ना
रामा पियासल बाडे जेलवा के लोगवा रे ना
रामा हुकुम पवली सोरह सइ लडकिया रे ना
रामा करइ लगली सोरह सिगरवा रे ना
रामा गावै लागली झूमरि सोहरहवा रे ना
रामा पोखरा रहले हिछल बछेडवा रे ना
रामा कनखी देखेला हिछल बछेडवा रे ना
तवले तडपल वाडे हिछल वछेडवा रे ना
रामा उठि ववुआ कुवर बिजयमलवा रे ना
ववुआ आइ गइली सोरह सइ लडकिया रे ना
रामा इहै हअइ तिलकी के लउडिया रे ना
रामा उठि के देखे सोरह सइ लउडिया रे ना
रामा देखि मुरछी खाले कुवर विजयमरवा रे ना
रामा जेकर हउई अइसन लउडिया रे ना
रामा रानी कइसन होइहैं तिलिकिया रे ना

× × × ×

रामा तव वोलल कुवर विजेमलवा रे ना

रामा मधुरे से बोलेला बचनिया रे ना
रामा भउजी से कइली कररवा रे ना
रामा पहिले छोडाइब आपन भइया रे ना
तवना बाद छोडाइबि बाप घुमुंलसिंघवा रे ना
तवना बाद छोडाइबि पलटनिया रे ना
रामा तबै करबि आपन हम गवनवा रे ना
तबे रोए लागलि चल्हकि नउनिया रे ना
ओकरा रोअला के नइखे ठेकनवा रे ना
रामा मधुरे से कइली बचनिया रे ना
पाहुन नइखे लश्करि पलटनिया रे ना
रामा कइसे जीतवऽ बावनगढ सुववा रे ना
तब बोले लागल कुँवर विजयमलवा रे ना
हमरा सगे आइल हिछल बछेडवा रे ना

× × ×

रामा माता जी से लेहली हुकुमवा रे ना
रामा चलि गइली तिलकी बुबनिया रे ना
रामा चुपे चुपे करली सिंगरवा रे ना
रामा पहिरे लगली गगा आ जमुनिया रे ना
रामा चलि गइली सोरहसइ लउडिया रे ना
रामा सगे चलली तिलकी बबुनिया रे ना
उनके पीछे चलली चल्हकी नउनिया रे ना
रामा चलि गइली राह का भितरवा रे ना
रामा होखे लागल ओइजा मुमुरिया रे ना
रामा चलि गइली कुछ दूर रहतिया रे ना
रामा खरके लागल चोली के त बनवा रे ना
रामा कहतिया चल्हकी नउनिया रे ना
चल्हकी जानि गइली बाय मोर भइअवा रे ना
अब त होत बाटे बहुत असगुनवा रे ना
तबले तडपलि बाटे चल्हकी नउनिया रे ना
रामा नाहीं जनले तोर बाप भइअया रे ना
रामा चले लगली सोरहसइ लउडिया रे ना

सगे जाति बाडी तिलकी बबुनिया रे ना
तवना बाद चल्हकी नउनिया रे ना
तले कनखी देखे हिछल वछेडवा रे ना
ओइजा तडपल बाटे हिछल बछेडवा रे ना
सरऊ फेंक तुहूँ मखमल चदरिया रे ना
रामा फेंकि दिहले मखमल चदरिया रे ना
रामा देखतारे तिलकी के सुरतिया रे ना
रामगिरि परले पोखरा के उपरवा रे ना
तबले तडपल हिछल बछेडवा रे ना
रामा तब बोलल छितरी बुनेलवा रेना
रामा घर अहवे हमार घुमुलपुरवा रे ना
रामा माता जी के नाव मयनावतिया रे ना
रामा भउजी के नाव सोनवामतिया रे ना
रामा हमार नइया कुँवरबिजैया रे ना
रामा एतना बतिया सुनलस तिलकी बबुनिया रे ना
रामा हाथ मारि के घूघट लटकवली रे ना
रामा ओजा बोलल कुँवर बिजइया रे ना
रामा ससुर जी के नाव बावन सुबवा रे ना
रामा सरहज के नाम फुलवामतिया रे ना
रामा सरवा के नाम मोतिचनवा रे ना
राजा तिरिया के नउवा त कइसे धरिहे रे ना
रामा काढि लेली हाथ मारि के घुघटवा रे ना
रामा रोए लगली जार से बेजरवा रे ना
हाई हाई रे विघाता करतरवा रे ना
रामा ओइजा कहे मुख से मुख सुबचनिया रे ना
सामी सुनि लेहु हमरा कहनवा रे ना
राम वाप भाई हएउ हतियरवा रे ना
रामा नाही गुनहे आपन दमदवा रे ना
रामा मारि घलिहें आल्हर परनवा रे ना
सामी चलि जा तू अपना मुलुकवा रे ना
तव वोलले कुँवर विजैमलवा रे ना
रामा सुनि लेहु पातरि मोर तिरिअवा रे ना

सामी नाही लउटवि हम आपन मुलुकवा रे ना
छोडाइब आपन बाप मइयवा रे ना
तब करवि आपन हम गवनवा रे ना

× × × ×

रामा कुँवर भइले हिछल असवरवा रे ना
रामा उडि गइले जेहल भीतरवा रे ना
रामा सवका के छोडवले हथकडिया रे ना
रामा जेल के फटकवा गिराय दिहले रे ना
रामा सजी वरिअतिया ले गइले पोखरवा रे ना
रामा करवले सवका हजमतिया रे ना
रामा सवका करवले जलपनिया रे ना
रामा एने हाल मचल वावनगढवा रे ना
रामा वेटा मानिकचन साजे ले फौजिया रे ना
रामा होखे लागल विकट लडइया रे ना
रामा हिछल मारे लगले मेंडरिया रे ना
रामा कुँवर काटि घलले सगरे फौजिया रे ना
रामा कइले विघस वावन गढ़वा रे ना
रामा मुसुकि वँधउले मानिकचनवा रे ना
रामा हथकडी पहिनवले वावनसूववा रे ना

इस प्रकार विजयमल ने सवके सम्मुख अपने गवने का रस्म पूरा किया और पूरी फौज के साथ तिलकी को डोली में वैठाकर घुमुंलपर चल दिया। घुमुंलपुर के किले में मानिकचन्द और वावन सूवा को कैद कर दिया।

४—बाबू कुंवर सिंह

रामा सुनी सब धरि के धयनवा रे ना
रामा बाबू कुवर सिंह के हवलवा रे ना
रामा जतिया के रहले उजैनवा रे ना
रामा घर रहे जगदीशपुर नगरवा रे ना
रामा आरा जिला हबे शाहाबादवा रे ना
रामा जानतारे दुनिया जहानवा रे ना
रामा कुवर सिंह के रहले छोटका भइया रे ना
रामा नाम उन्हकर बाबू अमर सिंहवा रे ना
रामा राजा भोज कर रहले बशवा रे ना
रामा ऊच कुल ऊच खनदनवा रे ना
रामा रहले इहो त राजघरानवा रे ना
रामा नगर उजैन के बसिनवा रे ना
रामा आइकर पुरूषा पुरनियाँ रे ना
रामा भोजपुर में कइले राजधनिया रे ना
रामा उहवे मे फैली चारू ओरिया रे ना
रामा गाँवां गाई कइले रजधनियाँ रे ना
रामा बढि गइले बश त उजैनवा रे ना
रामा लिहले बसाई त नगरवा रे ना
रामा कुवर सिंह के राज त महलवा रे ना
रामा रहे जगदीशपुर नगरवा रे ना
रामा नगर के चारू ओरिया रे ना
रामा बड़ा भारी रहे विकट बनवा रे ना
रामा रहत जलवर अजारवा रे ना
रामा वालेपन से वाबू कुवर सिंहवा रे ना
रामा खेले जात नितही शिकरवा रे ना
रामा रहे उनकर अजब निशानवा रे ना
रामा खाली नाही जात एको वारवा रे ना
रामा गोल गोली रोज तो कटरवा रे ना
रामा इहे रहे उनकर खेलनवा रे ना

रामा एही विधि बीते खुशी दिनवा रे ना
रामा अब सुनो आगे के हवलवा रे ना
रामा खेल कूद में बीते बालेपनवा रे ना
रामा बीतल जवानी राजकजवा रे ना
रामा पहुँची गइले आई चौथे पनवा रे ना
रामा भइले अस्सी बरस के उमरवा रे ना
रामा एही समय आई के तुफनवा रे ना
रामा देशवा में उठल गदरवा रे ना
रामा सुनि लेहू तेकर हवलवा रे ना
रामा देशवा में भइल जो तुफानवा रे ना
रामा सन् सत्तावन के उहे सलवा रे ना
रामा बडा भारी भइल गदरवा रे ना
रामा देसक बङ्गाले के मुलुकवा रे ना
रामा बजकपुर बाटे एक नगरवा रे ना
रामा उहमें से उठल बीरो बनवा रे ना
रामा आगी लगल चारु मुलुकवा रे ना
रामा अइसन जे उठल लहरवा रे ना
रामा कोने कोने तक भइल शोरवा रे ना
रामा भइले फिरंगी त फिरन्टवा रे ना
रामा मार काट करत अपारवा रे ना
रामा भइल त भारी हुलडवा रे ना
रामा दिल्ली मेरठ तक के लोगवा रे ना
रामा काशी लखनऊ परेयागवा रे ना
रामा ग्वालियर तक भइले बालवा रे ना
रामा उठे बलवा ई चारु ओरवा रे ना
रामा सुनि कर जस तो हवानवा रे ना
रामा रानी भइली झाँसी क तेऊरवा रे ना

× × × ×

रामा आगे कर कहीले हवालवा रे ना
रामा पटना के टेलर कमिश्नरवा रे ना
रामा कुँवर सिंह के भेजले परवनवा रे ना

रामा भइल उनका मुंशी के तलशवा रे ना
रामा सोचे तब कुँवर सिंह मनवा रे ना
रामा भइले फिरगी दगाबजवा रे ना
रामा इनकर नाबा तनी बिशग्रसवा रे ना
रामा करत रहले कुँवरसिंह बिचरवा रे ना
रामा ताहि समय ग्राई कर लोगवा रे ना
रामा दानापुर से पहुँचे उनके पसवा रे ना
रामा हाथ जोरि करि के ग्ररिजवा रे ना
रामा कहे लगले मधुरे बचनवा रे ना
रामा कहेले जे सुनी सरकरवा रे ना
रामा ग्रापही के बाडे ग्रब ग्रासवा रे ना
रामा बडा भारी भईल ग्राफतवा रे ना
रामा भइले फिरगी दुशमनवा रे ना
रामा नाहक़े फासी वो जेहलवा रे ना
रामा देत बाडे कहिके हवालवा रे ना
रामा सुनिकर इतना बचनवा रे ना
रामा गरजी के उठे कुँवर सिंह वा रे ना
रामा तुरते भइले तेग्ररवा रे ना
रामा जायके लडाई मयदनवाँ रे ना
रामा चली भइले कुँवरसिह सगवा रे ना
रामा जाइ पहुँचे दानापुर मोकमवा रे ना
रामा ग्राधी रात गगा के किनरवा रे ना
रामा भइल लडाई बडे जोरवा रे ना
रामा ले के महावीर जी के नमवा रे ना
रामा झुकी परले देशी तो सयनवा रे ना
रामा एकदम गोरा के ऊपरवा रे ना
रामा रतिया रहल निसनदवा रे ना
रामा चारू ग्रोर रहल सनटवा रे ना
रामा सुनल नगर के लोगवा रे ना
रामा सगरे रहल सुन सनवा रे ना
रामा ग्रइसन वेरा के समइया रे ना
रामा होखे लागल कठिन लडइया रे ना

रामा छूटे लागल वन्दूकवा रे ना
रामा सुनिके वन्दूक अवजिया रें ना
रामा लागल तराही चारू ओरिया रे ना
रामा कापी उठल सगरे नगरिया रे ना
रामा कहिका वह घरीकर हलिया रे ना
रामा देहिया के सुखि गइलपरनवा रे ना
रामा लेई कर निजनिज जानवा रे ना
रामा घर छोडि भागे सव वहरवा रे ना
रामा करन लगले वालक रोदनवा रेना
रामा भईल भगाहट चारू ओरवा रे ना
रामा जहँवा जे पावे आपन मोकवा रे ना
रामा रहे से छिपाई देखि अडवा रे ना
रामा अईसन देहात कर हलिया रे ना
रामा गगा तीर होखत लडइया रे ना
रामा दानापुर में रहल छपनिया रे ना
रामा वीगड गइले सवही सिपहिया रे ना
रामा होखे लागल जोर मे लडइया रे ना
रामा गोरा भागे छोडि मयदनवा रे ना

× × × ×

रामा दानापुर से करिके विजइया रे ना
रामा आरा पर कइले चढइया रे ना
रामा आई कचहरी के उपरवा रे ना
रामा कुँवर सिह कइले अधिकरवा रे ना
रामा तव भइल देशी देशी सोरवा रे ना
रामा कुँवर सिंह के जय जय करवा रे ना
रामा आरा पर से भइले गयववा रे ना
रामा सव अगरेजी सरकरवा रे ना
रामा नाही होखे पावल अत्याचरवा रे ना
रामा भागे अगरेज लेके जनवा रेना
रामा भागि गइले किला के भितरवा रे ना
रामा आयर साहव सुनले खवरिया रे ना

रामा आरा कर सकल सबलिया रे ना
रामा बक्सर से होइके तेअरवा रे ना
रामा आयर साहब चलके सयनवाँ रे ना
रामा सग में कठिन तोपखनवाँ रे ना
रामा बहुत रहे फौज लशकरवा रे ना
रामा होइके पूरा तैयरवा रे ना
रामा चढि आइ ये आरा के ऊपरवा रे ना
रामा बक्सर से आयर सहेबवा रे ना
रामा औरी दल रहे उनका सगवा रे ना
रामा सुनि लेहु तेकर हवलवा रे ना
रामा कहिका मैं होला भारी दुखवा रे ना
रामा देशवा के कुछ तो अदमियाँ रे ना
रामा होइ भइले देश के द्रोहिया रे ना
रामा मिली भइले आयर के सगवा रे ना
रामा भारी दल लेके उनके साथवा रे ना
रामा आरा पर कइले चढइया रे ना
रामा होखे लागल कठिन लडइया रे ना
रामा कइसे जीत सकें कुवर सिंह वा रे ना
रामा अपने जो भइले बिरनवा रे ना
रामा आरा से उखड गइल पयारवा रे ना
रामा कुँवर सिंह भइले लचरवा रे ना
रामा मसल जे कहल बाटें बतिया रे ना
रामा घर फूटे केकर भलइया रे ना

× × × ×

रामा कुवर के देखि दुशमनवा रे ना
रामा कइले वन्दूक के निशनवा रे ना
रामा गोली आई लागल दहिना हथवा रे ना
रामा हाथ होइ गईल वेकारवा रे ना
रामा जानिकर हाथ वेकमवा रे ना
रामा काटि दिहले लेके तरवरवा रे ना
रामा कहेले जे लेहु गगा हाथवा रे ना

रामा देतबानी आज उपहरवा रे ना
रामा कही कर उतना बचनवा रे ना
रामा डाली दिहले गगा जी मे हाथवा रे ना
रामा गगा जी के रहल नजरानवा रे ना
रामा कुवर सिंह अइले फिरि घरवा रे ना
रामा कुंवर सिंह के पाई के हालवा रे ना
रामा दुशमन घवडइले अगरेजवा रे ना
रामा फौज लेके लीग्रन्ड सायवा रे ना
रामा लडे अइले करि मन सुववा रे ना
रामा जोति मह नाही पावे सग्रामवा रे ना
रामा विजई रहले कुवर सिंहवा रे ना
रामा पाई कौन सके उनसे पेशवा रे ना
रामा कुछ दिन कर फिर वादवा रे ना
रामा चढि कर अइले अग्रेजवा रे ना
रामा घायल रहले कुवर सिंह वीरवा रे ना
रामा जीतल नाही रहल सहजवा रे ना
रामा इहे रहल कुवर सिंह के सेसवा रे ना
रामा आखिर इहे त सग्रामवा रे ना
रामा शत्रु के सगे आठ महनिवा रे ना
रामा लडे कुवर सिंह मरदनवा रे ना
रामा विना कुछ कइले विसरामवा रे ना
रामा रात दिन कइले सगरामवा रे ना
रामा घायल परल रहले महलवा रे ना
रामा सकती सव भइल वेकमवा रे ना
रामा नाही ठहरी सके वीर वावू कुवरवा रे ना
रामा चलि भइले वीर सुरधामवा रे ना
रामा दुनियाँ में रही गइले नामवाँ रे ना

५—शोभानयका बनजारा

रामा जहाँ लागल रहे लवगिया रे ना
रामा जहाँ सुतल रहली जसुमतिया रे ना
रामा घिच के मारे चटकनवा रे ना
रामा जेकर कन्ता जैहें परदेसवा रे ना
रामा रामा उठी ले बारी रे ना
रामा रामा बारी उठेली बहारी ले अँगनवा रे ना
रामा भउजी आके ठढा हो गइल रे ना
रामा बारी काहे तू बहारेले अगना रे ना
रामा भौजी तू कइलू हमरा वियहवा रे ना
रामा सामी हमार जाला मोरग के लदनिया रे ना
रामा गिरी रे जैहैं चढल हमार जवनिया रे ना
रामा कदऽ हमरो गवनवाँ रे ना
रामा चलल बिया भौजी ओही जगवा रे ना
रामा जहाँ रहली बुढनी सहुनी रे ना
रामा सुन सुन मोर सास कहनवा रे ना
रामा देत बा गरिया हजार रे ना
रामा सुन सुन पतोहिया रे ना
रामा दादा बारी के लुटेरे घरमिया रे ना
रामा वारी अबही बाडी कम उमरवा रे ना
रामा लूगा पहिने के नाही सहुरवा रे ना
रामा झूठा झूठा तू अदरगवा लगवेल रे ना
रामा तव भौजी किरिया खाले रे ना
रामा जाके वुढिया कहे साहू जादुआ रे ना
रामा अपनी वारी माँगत वाडी गनववा रे ना
रामा त साह करे फजिहतिया रे ना
रामा वुजरो हमरा वारी के लगइलू अदरगवा रे ना
रामा सुनी जा पँचे एक वनिजरवा रे ना
रामा पहुँचल सुघड वनिजरवा रे ना
रामा सगें लिहले मघवापगहिया रे ना

रामा लेइ लेले सरब गहनवा रे ना
रामा धइले वाडे भेसवा मनियरिया रे ना
रामा किनी लेला सरब सौदवा रे ना
रामा चली गइले शोभा के ससुररिया रे ना
रामा शोभा चलि गइले रहल थोड़े दिनवा रे ना
रामा तीन सौ साठि रहली सखिया रे ना
रामा एगो सखी आइल वजरिया रे ना
रामा देखि लिहले सोना के सौदवा रे ना
रामा देखि के होगइल वेहोसवा रे ना
रामा वोले लागल मगही पगहिया रे ना
रामा नातवा में लागल सरहजिया रे ना
रामा जल्दी छोडाव उनका लागल दतिया रेना
रामा पानी भर के शोभा छोडावे मुर्छवा रे ना
रामा लौंडी गइल किला भीतर रे ना
रामा अइसन आइल वाटे सौदागर रे ना
रामा छनले वा चोली वनकरवा रे ना
रामा लीलार जरे अगरवा रे ना
रामा सुनी लेले वाटे दसवन्तिया रे ना
रामा वारी घूमे गइली वजरवा रे ना
रामा देखे लगली ओहिजा सौदवा रे ना
रामा ठाढी ठाढी देखे लौंडिया रे ना
रामा कइली चोलिया के सौदवा रे ना
रामा वोले लहगा के दमवा रे ना
रामा जे तोहरा में होखे सरदरवा रे ना
रामा उहे करे हमसे खरीदवा रे ना
रामा अतना सुने वारी जसुमतिया रे ना
रामा मगवा पगहिया वोले लागल रे ना
रामा पहिले पहिनी झुलवा रे ना
रामा तव करी एकर दमवा रे ना
रामा नयका देखले लालसम वदनिया रे ना
रामा वरी हो गइल मनवा जोगवा रे ना
रामा तव वोले वनिजरवा रे ना

रामा अबना झूला के कही दमवा रे ना
रामा हम त हुई शोभा के यरवा रे ना
रामा तोहार तिरियवा सखी सगे घूमे बजरिया रे ना
रामा अतना सुन लेली दसवन्तिया रेना
रामा भागल जाली किल्ला भीतरवा रे ना
रामा नव हाथ के काढी लेली घुँघटवा रे ना
रामा हमरे से कइले बाडे ठिठोलवा रे ना
रामा तव नयका हाँकि देले बरघवा रे ना
रामा वारी चलि गइली अपना महिलिया रे ना
रामा अपना मनवा मे करेले विचरवा रे ना
रामा सुनि सुनि बाबू जी कहनिया रे ना
रामा हमरा के दी पलटनिया रे ना
रामा हम चलि जाइब भजवल घरनिया रे ना
रामा करब उहाँ असननिया रे ना
रामा उहाँ पडि गइल तम्बुहा रे ना
रामा तब ले गइले बनजरवा रे ना
रामा उहाँ पुलिस रोकेले रसतवा रे ना
रामा बावन लाख कौडिया रे ना
रामा तब घटवा पार जाये देब रे ना
रामा शोभा कहे लागल कब हू न देली कौडिया रे ना
रामा पुलिस वोले लागल ढेर वढइव बखेड़वा रे ना
रामा बाँध देब मुसुकवा रे ना
रामा नयका थर थर काँपे लगले रे ना
रामा मुरूगा के खाई तू मसुइया रे ना
रामा तव छोडब तोहार कौडिया रे ना
रामा जाके कहले नयका पुलिसवा रे ना
रामा नयका के सगे कोई रहले रे ना
रामा सभे नौकरवा चल खाइल जा रे ना
रामा सुन सुन नौकरवा खाइल जा रे ना
रामा वाँचि जैहे वावन लाख कौडिया रे ना
रामा नयका जाके करे भोजिनिया रे ना
रामा लिखी लेले वारी जसुमतिया रे ना

रामा तव छोडले घाट के कौडिया रे ना
रामा तव नयका जाला अपना घरवा रे ना
रामा उहवाँ से जाके भेजे गवन के दिनवा रे ना
रामा आइल वाडे वारी हजमवा रे ना
रामा दूसर वेर गइले पडितवा रे ना
रामा गवना के दिनवा धराइल रे ना
रामा भइल वारे कौल करारवा रे ना
रामा सुन सुन धावू वनिजरवा रे ना
रामा करऽ अव गवना के तेअरिया रे ना
रामा लादि देला छकडवा रे ना
रामा नयका वैठल वारे सोने के पलकिया रे ना
रामा चल दिहले वालापुर सहरिया रे ना
रामा उठे लागल गरदवा रे ना
रामा वारी के होई आज गवनवा रे ना
रामा नयका चलि गइले कोहवरवा रे ना
रामा साजे लगली वारी जववियां रे ना
रामा दहेज में मगिह वछेडवा तिलगवा रें ना
रामा साहुजी वोलले ओही जगवा रे ना
रामा माँगऽ तू इनामवा र ना
रामा वोले लागल सुघड वनजरवा रे ना
रामा नाही वाटे अनधन कामवा होना
रामा वछवा देदऽ हमरा तिलगवा रे ना
रामा इहे खूटा देव हमारा के रे ना
रामा ढेर तुहूँ मागेलऽ दहेजवा रे ना
रामा उहे त वाडे हमार लछनिया रे ना
रामा रोके देला सहुआ रे ना
रामा नयका लेके चलेला गाँव के सिवानवा रे ना
रामा हो गइल किलवा कोइला रे ना
राम कुछ आगे वढल वछेडवा रे ना
रामा गिर गइल गढवा रे ना
रामा मारी विपतिया सहुआ देवउल रे ना
रामा वुढऊ वइठल वाटे किलवा रे ना
रामा नयका गाडि देले नदवा अपना दुअरिया रे ना

रामा ओही दिन मोरंग के पैंतवा रे ना
रामा चलल बाटे सुघड़ बनिजरवा रे ना
रामा गइले गाव के पुरबवा रे ना
रामा तहवा लागल डेरवा रे ना
रामा उहाँ रहल हँस हँसीनिया रे ना
रामा बोले लागल हँसिनिया रे ना
रामा सामीसग कटि जैहे आज के रतिया रे ना
रामा बोले लागल हँसवा रे ना
रामा जौन कइले आज होई गवनवा रे ना
रामा कइले होई आज कोहबरवा रे ना
रामा उनका होई लड़िका मोतीललवा रे ना
रामा हँसिहे तो गिरिहें लालवा रे ना
रामा रोइहें तो गिरिहें हीरवा रे ना
रामा सुनत बाटे शोभानयका रे ना
रामा करे लगले अरजवा हसावासे रे ना
रामा हसी पीठ पर बइठा के ले गइल अगनवा रे ना
रामा किलिया भिड़ल कोठरिया रे ना
रामा बोले दसवन्तिया केहवऽ घर के देवता रे ना
रामा किया हवे भूत बैतलवा रे ना
रामा बोले लागल बनिजरवा रे ना
रामा कहलस सब हालवा रे ना
रामा खोल बारी जलदी केवरिया रे ना
रामा तब बोले दसवन्तिया रे ना
रामा रामा के जाने राहीगिरवा रे ना
रामा नाही मानी इहवां के लोगवा रे ना
रामा दादा लागी हमरा पर कलकवा रे ना
रामा हम नाही खोलब केवड़िया रे ना
रामा वोलत शोभनयकवा रे ना
रामा हमार भैया बाटे चतुरगुनवा रे ना
रामा उनही से कहब हलिया रे ना
रामा बारी खोले किवरिया रे ना
रामा चलि गइली सूते लाली पलगिया रे ना
रामा शोभानयका कइले कोहबरवा रेना

रामा लौटे लागल नयका रेना
रामा लपटि के लागल दसवन्तिया रेना
रामा हमरा देवऽ कौनो निसनवा रेना
रामा शोभा दिहले रुमलिया रेना
रामा शोभा कहले चतुरगुन से हलिया रेना
रामा हसा चढि गइले नयकवा रेना
रामा ले गइल गाव पुरववा रेना
रामा हो गइले भिनुसारवा रेना
रामा उहवा से नयका कइले बाटे पयतवा रेना
रामा चलल रे नयका मोरग के देसवा रेना
रामा जहवा रहली हिरियाजिरिया बगालिनिया रेना
रामा चलि गइले ओहि जावा रेना
रामा कुछ दिन बीतेला मोरगवा रेना
रामा हिरिया जिरिया देखली नयका के रेना
रामा हो गइले देखके छकितवा रना
रामा जहवा मार कइली भेंडवा रेना
रामा इहाँ के हाल छोडऽ अब उहाँ के हाल सुन रेना
रामा बारी के देहिया भइल भारी होना
रामा भौजी नैयहर के ले आइल गरभवा रेना
रामा बारी बोले लागल भइया से रेना
रामा राति में अइले रतिये कइले कोहवरवा रेना
रामा ननदी देतिया गारी ओइजा रेना
रामा सुन सुन भाई चतुरगुनवा रेना
रामा तोहरे बुझावा हवे गुनवा रेना
रामा भइया के घर कइली अलगा रेना
रामा जेने रहे नगनिया रेना
रामा उहें देले रहे के घरवा रेना
रामा खाइयो के ना देले ननदिया रेना
रामा, भारी अब पडल विपतिया रेना
रामा दिन भर करे चतुरगुन बनियारी रेना
रामा साझि के बनावे भोजनिया रेना

रामा एही तरे लागल बीते दिनवा रे ना
रामा बारी रोवे जारि बेजारवा रे ना
रामा बीति गइले नोमहनिवा रे ना
रामा जनम लेले बाडे लडिका जनमवा रे ना
रामा भाई बोलाव घगडिन के रे ना
रामा लडका रोवे लगे त गिरे मोतिया रे ना
रामा हसे लागे त गिरे हीरवा रे ना
रामा बारी सुपवन देतिया हीरवा रे ना
रामा झाकि झाकि देखे फुलवन्तिया रे ना
रामा सुति गइली भौजी निर्भेदवा रे ना
रामा ननदी उठवली लडिकवा रे ना
रामा आवा के भीतरा डरली लडिकवा रे ना
रामा भौजी के गोदवा धइली इटवा रे ना
रामा ननदी कहली हल्ला भइल इटवा रे ना
रामा आइल भाई चतुरगुनवा रे ना
रामा सुन सुन घरिकरवा रे ना
रामा लेजा भौजी के जगलवा रे ना
रामा काढि लेआव जिगरवा रे ना
रामा बुजरो हमरो झुकौली मुडिया रे ना
रामा चारियो घरिकरवा लेके चलले रे ना
रामा जहाँ रहे भारी जगलवा रे ना
रामा वोले दसवन्तिया रे ना
रामा हमार जान मरले का होई फयदवा रे ना
रामा हमरा के ले चल वजरिया रे ना
रामा कौन कीन लिहे वनिजरवा रे ना
रामा सुनि के ले चले घरिकरवा रे ना
रामा ठीक त कहतिया वतिया रे ना
रामा ले गइले वारी के लुवदी के वजरिया रे ना
रामा वजरिया में रहले सोभा के पहुनवा रे ना
रामा देखे वारी के दीपचनवा रे ना
रामा घरिकरवा वोली वोले नवलाख रे ना
रामा चलल वाटे साहू दीपचन्दवा रे ना

रामा चल गइल बाटे किला भीतरवा रेना
रामा नव लाख असरफी लेके देला रेना
रामा तिरिया ले के आइल दीपचन्दवा रेना
रामा अब हमहू खरीदनी तिरियवा रेना
रामा हमहू करब सदिया रेना
रामा ओइजा बोले दसवन्तिया रेना
रामा हम अबहीना करब बिअहवा रेना
रामा तेरह बरिस के होइ जाइ पँतवा रेना
रामा तब हम करब बिअहवा रेना
रामा सोचे लागल दीपचन्दवा रेना
रामा एकर कौन मतलबवा रेना
रामा बरस बिरस बीत जँहें असहीना रेना
रामा बने लागल रवटी महलिया रेना
रामा एने घरिकरवा कुकुर के कलजेवा काढि रेना
रामा ले गइले ननदिया के लगेला रेना
रामा अरे रामा ओने त होइ गहले अइलवा सोना के रेना
रामा जी आवा त रहले लडिकवा रेना
रामा लडिका के ले गइल कोहरा घरवा रेना
रामा सहर में मचल हलचलवा रेना
रामा कोंका कोहरा के घरे महल लड़िकवा रेना
रामा नथका चलि गइले मोरग देसवा रेना
रामा करे लगली जयजय करवा रेना
रामा सुनी सुनी पडित जी बतिया रेना
रामा हिरियाजिरिया बोलइली अपना दुअरिया रेना
रामा देविया गइली उनकर दुअरिया रेना
रामा बैठल बाटे देवी दुरुगवा रेना
रामा सोचे लागल दाव पेंचवा रेना
रामा जेतना मारे दाव पेंचवा रेना
रामा खेलत खेलत सात दिन सात रतिया रेना
रामा देवी जीत गइली हिरया जिरिया के किलवा रेना
रामा रामा सुनसुन तू हिरिया जिरिया रेना
रामा जै दिन तू बन:लू बाडे भेटवा रेना
रामा बना द ओकरा के अदमिया रेना

रामा हिरिया जिरिया गइली फुलवरिया रे ना
रामा होगइल शोभा भेंडा से अदमिया रे ना
रामा शोभा गइल अपने डेरवा रे ना
रामा बोले लागल मगवापगहिया रे ना
रामा केतना भइल फयदवा रे ना
रामा चलियँ लेके नफये लहनिया रे ना
रामा अपने हेल गइले जङ्गलवा रे ना
रामा आगे चलले बरहज बजरिया रे ना
रामा पोखरा में लगले नहाय रे ना
रामा उहाँ से फेरल देले वरघिया रे ना
रामा हेल गइले लघी सहरिया रे ना
रामा जहाँ लगली लुवदी कै बजरिया रे ना
रामा जहाँ बाडे भाइ दीपचनवा रे ना
रामा जेकरा बाजी से भइल बा नफवा रे ना
रामा उनकर चुकाई करजवा रे ना
रामा चलि गइले तिलग वछेडवा रे ना
रामा जेकर घु घटी वाजे अस्सी कोसवा रे ना
रामा लौटल बारे सामी बहुत दिनवा रे ना
रामा जाकर इनारवा सग गिरावे वरधी रे ना
रामा सोभा जाला रसोइया रे ना
रामा वारी वनावे रसोइया रे ना
रामा देखि लेली सुघड बनिजरवा रे ना
रामा काढ के विगले रुमलिया रे ना
रामा काढि के विगेले अगु ठिया रे ना
रामा बनिजरवा करेला विचरवा रे ना
रामा सुन सुन पहुना कहनवा हमार रे ना
रामा कहवाँ से ले आइल वाडऽ तिरिया हमार रे ना
रामा दीपचन्द कइले इन्करवा रे ना
रामा कह गइले जरिये से सब ए हलवा रे ना
रामा खोलि देला सोरह सो सहनिया रे ना
रामा दादा दूनो ओर से होला वडइया रे ना
रामा जीत लेला शोभादीपचन्दवा रे ना

दशवन्ती का सब हाल कहना, कि तुमको लडका है जो कोहार के यहाँ पल रहे है ·

रामा नयका चलि गइल आपन दुआरवा रे ना
रामा उहत्रें गिरावे ले बरधिया रे ना
रामा भेज देला केका के घरे पुलिसवा रे ना
रामा केका जवाब देला कि हम ना जाइब रे ना
रामा नयका खीसि भइल की धन के घमडवा रे ना
रामा कोहरे के दुआर पर लागल कचहरिया रे ता
रामा लगले बोलावे लडिकवा रे ना
रामा कहाँ से पवले वाडे लरिकवा रे ना
रामा लगले कहे पहली लडिका आवा के भितरवा रे ना
रामा दादा हमनी के कइनी पाल पोसवा रे ना
रामा दादा हम ना देव लडिकवा रे ना
रामा केका बोलावे आपन जनानवा रे ना
रामा बोले लागल हमरे कोखि जनमवा रे ना
रामा हम चौथ के कइनी दड हवानवा रे ना
रामा सात गो तावा बांधे छतिया दशवन्ती रे ना
रामा रामा सातवां तो तावा वाधे कोहइनिया रे ना
रामा दमवन्ती के मारे दुघवा जोरवा रे ना
रामा हो गइले फैसलवा रे ना
रामा लडिका के ले गइले घरवा रे ना
रामा घरे जा के बोलाये वहिना फुलझरिया रे ना
रामा बोलावे त भाई चतुरगुनवा रे ना
रामा तोहार तिरिया के मरवइली इहे रे ना
रामा अगन मे खोदवाले वाडखढवा रे ना
रामा जल्दी से ले अइबू सूपवा भर चउरा रे ना
रामा पहिनलस पियरी वहिना रे ना
रामा गइली वहिनी खदवा के भितरवा रे ना
रामा ऊपर से भरइलस खदरवा रे ना
राम उनकर छूटल मतलरगवा रे ना
रामा सोभा बोलावे भाई चतुरगुनवा रे ना
रामा जे सोचत रहल नो मन के **बसवा** रेना

रामा उनकर बढ़ल रहल हजमतिया रे ना
रामा हजमतिया बनवले कपड पेन्हवले रे ना
रामा उनकर के घरवा के मलिक बनवले रेना
रामा लगले करे राज शोभा नयकवा रे ना
रामा जैसे दसवन्ती के लौटल दिनवा रे ना
वैसे सब कर लौटे दिनवा रे ना

---

(६) सोरठी

एकियाहोरामा वृजभार वीरा उठवले रेनुकी
एकियाहोरामा वीरा उठा के चलले शहर गुजरात रेनुकी
एकियाहोरामा चलते चलते सातो सावरी के पास रेनुकी
एकियाहोरामा सातो वहियाँ पकडि ले गइली महलिया रेनुकी
एकियाहोरामा सेजवा पर ले गइली रेनुकी
एकियाहोरामा अतर गुलाव छिटकावेली रेनुकी
एकियाहोरामा लगली चरन दवावे लगले रेनुकी
एकियाहोरामा हाल चाल भगिना मे पूछेली रेनुकी
एकियाहोरामा वोलल कुँवर वृजभार रेनुकी
एकियाहोरामा सुन सुन भाभी रेनुकी
एकियाहोरामा हम गवना करवनी रेनुकी
एकियाहोरामा हम कोहवरवा कइनी रेनुकी
एकियाहोरामा इहवाँ अपनी मामा कचहरी रेनुकी
एकियाहोरामा नाही आसीरवदवा दिहेले मामा रेनुकी
एकियाहोरामा महराके कहले सोरठपुर चलि जाहु रेनुकी
एकियाहोरामा भगिना विरवा उठावे ले रेनुकी
एकियाहोरामा सोरठी के ले आइव रेनुकी
एकियाहोरामा एतना सुन सातो सावरी वोले लगली रेनुकी
एकियाहोरामा हुकुम त हमके देई देतिन रेनुकी
एकियाहोरामा जहुआ चलाके उनके मुआं देति रेनुकी
एकियाहोरामा एतना सुन कुँवर वृजाभार वोलेने रेनुकी
एकियाहोरामा तीन सौ साठि भाभी रडा होइहैं रेनुकी
एकियाहोरामा एकर खरचवा कवन चलाई रेनुकी
एकियाहोरामा सोरठपुर के तुहूँ भेदवा वताव रेनुकी
एकियाहोरामा कैसे हम जाइव त रस्ता वताव रेनुकी
एकियाहोराया एतना वचनिया सातो सावरी सुनावलेली रेनुको
एकियाहोरामा सुन सुन ववुआ तोहरा मामा वाडे वडा कजुमवा रेनुकी
एकियाहोरामा तीन त गुलुकुवा के कौडी लेआव रेनुकी
एकियाहोरामा उनकी खडाऊँ मांगऽ रेनुकी

एकियाहोरामा भसम के झोरवा तैयारी रेनुकी
एकियाहोरामा मोहनी बाँसुरी उनकर माँगऽ रेनुकी
एकियाहोरामा मिरगा के हलवा उनसे मगववा रेनुकी
एकियाहोरामा तब त उहो नाही दिहे नाही रेनुकी
सोरठपुर तोहरो नाही जाइब रेनुकी

× × ×

मामा के पास जाकर वृजाभार ने उपर्युक्त चीजें माँगी। इसपर खेंख मल मामा बोले :

एकियाहोरामा एतना बचनिया सुनले रेनुकी
एकियाहोरामा उनही के झगडा लगावले रहले रेनुकी
एकियाहोरामा बोलले व्यास मुनि पडत रेनुकी
एकियाहोरामा कि सोरठी से अब दरसन नाही रेनुकी
एकियाहोरामा सजी त तेअरिया कइ दिहले मामा रेनुकी
एकियाहोरामा लेइके चलले मामा के फुलवारी में रेनुकी
एकियाहोरामा कइले असननवा फुलवारी में रेनुकी
एकियाहोरामा देवता सुमिर ले रेनुकी
एकियाहोरामा गुरु गोरखनाथ के सुमिरन कइले बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा गुरु गोरखनाथ अइले फुलवारी में रेनुकी
एकियाहोरामा सगरे देवतवा अइले फुलवारी मे रेनुकी
एकियाहोरामा चेलवा त अब जोगी के बनावले रेनुकी
एकियाहोरामा पिठिया तो ठोकले सगरे देवतवा रेनुकी
एकियाहोरामा मधुरे से साजेले देवतवा जवाब रेनुकी
एकियाहोरामा सुन सुन चेला अव हमनी के करिह सुमिरनवा रेनुकी
एकियाहोरामा हमनी के तोहरा के लगे आइब रेनुकी
एकियाहोरामा अब त जोगी माता से असिरबदवा लेत रेनुकी
एकियाहोरामा अरे सबके चरन छुअले वृजाभार रेनुकी
एकियाहोरामा उहवाँ से चलले कुवर वृजाभार रेनुकी
एकियाहोरामा भाभी साँतो साँवरी लगे रेनुकी
एकियाहोरामा झोलवा पहिनले वँसिया में छत्तीसो से रागवजावले रेनुकी
एकियाहोरामा वँसिया के सवदिया सुनली तीन सौ साठ सँवरिया रेनुकी
एकिया हो रामा आड गइले देवढिया पर सभ कोई रेनुकी

एकिया हो रामा ऐसन जोगी कवहूँ ना देखनी रेनुकी
अरे राम जी के नैया
एकिया हो रामा भामी सात सावरी मड्ये चीन्हत रेनुकी
एकिया हो रामा ऐसन जोगी कवहीना देखले रहली रेनु की
एकिया हो रामा तले त जोगी सलामवा कइले रेनुकी
एकिया हो रामा तले सातो सावरी मलमिया कइली रेनुकी
एकिया हो रामा ऊपरी के जोग जोगी के पकडले रेनुकी
एकिया हो रामा महला में तैयारी सभ कइले रेनुकी
एकिया हो रामा सव तर फुलवा छिनरीले रेनुकी
एकिया हो रामा अनर गुलाव छिटोली रेनुकी
एकिया हो रामा चग्न दवावेली वेनिया डुलावले रेनुकी
एकिया हो रामा समाचार जोगी से पूछत बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा मधुरे में वोलले वृजाभार रेनुकी
एकिया हो रामा सोरठपुर के जनरा हम करते वानी रेनुकी
एकिया हो रामा सोरठपुर के हलिया कहै रेनुकी
एकिया हो रामा सोरठपुर में कवन रहतवा जाइ रेनुकी
एकिया हो रामा सुनके सातो सावरी बोलली रेनुकी
एकिया हो रामा विपत में हमरा के सुमिरऽ तोहरा लगे हम आइव रेनुकी
एकिया हो रामा तोहरो विपतवा दूर करवइ रेनुकी
एकिया हो रामा इहा के हाल त हम जानत वानी रेनुकी
एकिया हो रामा सगरे त हलवा तोहार विआहिया जाने रेनुकी
एकिया हो रामा तू त अपना दुअरिया चलि जाहूँ रेनुकी
एकिया हो रामा ओही सुनके जोगी चलि दिहले वृजाभार रेनुकी
एकिया हो रामा चलल चलल कुछ दुरवा गइले रेनुकी
एकिया हो रामा कोसवा पचास जोगी गडले रेनुकी
एकिया हो रामा अपना सहर में चलि गइले रेनुकी
एकिया हो रामा उहा करेला पयकरमा रेनुकी
एकिया हो रामा चारो ओर गाँव के पयकरमा कइले रेनुकी
एकिया हो रामा तव सहर में जोगी घुम गइले रेनुकी
एकिया हो रामा वसिया वजाव लोगवा घेरेला रेनुकी
एकिया हो रामा देखले त जोगी मेलवा लागलवा रेनुकी
एकिया हो रामा अपना दुअरिया जोगी चलि गइले रेनुकी
एकिया हो रामा आसन लगइले अलग्ग जगवले रेनुकी

एकिया हो रामा वसिया उचटवा वजावले रेनुकी
एकिया हो रामा लोग अपने घरे सबट गइले रेनुकी
एकिया हो रामा तले जोगी भसम चन्दन चढावेला रेनुकी
एकिया हो हो रामा मन में विचरवा करत बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा महल के तिरियवा कैसे जानी रेनुकी
एकिया हो रामा मोहनी बाँसुरिया ओठ का लगावले रेनुकी
एकिया हो रामा बजवले छत्तिस गढ रागनियाँ रेनुकी
एकिया हो रामा महल में बँसिया के गइल अवजवा रेनुकी
एकिया हो रामा महल में रहले विअहिया हेवन्ती रेनुकी
एकिया होरामा मुंगिया लौडी साजेले जवाब रेनुकी
एकिया हो रामा तोहरा त दुआरे एगो जोगी आइल बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा करे लगली मुंगिया लौडी सभ तैयारी रेनुकी
एकिया हो रामा कचन के थार में तिल चउरा धइली रेनुकी
एकिया हो रामा मुंगिया लौडिया लेइके चलल रेनुकी
एकिया हो रामा चलल सात देवढिया हेलल रेनुकी
एकिया हो रामा जहाँ रहले वृजाभार रेनुकी
एकिया हो रामा देखते जोगिया के बेहोसवा भइली रेनुकी
एकिया हो रामा ऐसन जोगी हम ना देखले रहली रेनुकी
एकिया हो रामा चिटुकी बजादेले वृजाभार रेनुकी
एकिया हो रामा होसवा त भइले के रेनुकी
एकिया हो रामा फिनु मधुरे से लौंडी साजेले जवाब रेनुकी
एकिया हो रामा कहवा से आइल कहवा जालऽ रनुकी
एकिया सो रामा कवन करनवा जोग सधले बाडऽ रेनुकी
एकिया हो रामा किया तोहरे अनधन धरलवा रेनुकी
एकिया हो रामा किया तोहरे चढने घोढवा परलवा रेनुकी
एकिया हो रामा कि तोहरे वियहिया करिरवा मारेले रेनुकी
एकिया हो रामा केतनो लौडी पूछेली सवालवा रेनुकी
एकिया हो रामा मुखसे जोगी ना वोलले रेनुकी
एकिया हो रामा लौडी मन में खिसिया गइल रेनुकी
एकिया हो रामा ऐसन जोगी वनल वाडे रेनु की
एकिया हो रामा कि तनिको वोलत नइखे रेनुकी
एकिया हो रामा तवले साजेले लौंडी जवाव रेनुकी

एकिया हो रामा भिछवा त जोगी लेलऽ दूसर घर देखावे रेनुकी
एकिया हो रामा मन में जोगी विचरवा कइले बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा हमरे ही लौडिया कइसन बोलतवा रेनुकी
एकिया हो रामा त बोलतारे जोगी ओही जा रेनुकी
एकिया हो रामा ए लौडी तोरा हाथ जा भिक्षा हम नालेव रेनुकी
एकिया हो रामा महल के भितरवा रानी बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा कालि हे गवना कइके आइल बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा उनही के हाथ से भिक्षा लेव रेनुकी
एकिया हो रामा जल्दी मे जाहू के खवरिया तू दे रेनुकी
एकिया हो रामा उहाँ मे लौडिया बोलत वा रेनु की
एकिया हो रामा ऐसन जोगिया बनल बाडे रेनु की
एकिया हो रामा रानी के हाथ से भिक्षवा मागऽ तारे रेनुकी
एकिया हो रामा अधिका ज वहवऽ त कहव रेनुकी
एकिया हो रामा ववुआ बृजभार से रेनुकी
एकिया हो रामा कोड़वा से मार खियादेव रेनुकी
एकिया हो रामा अतना सुनत बाडे जोगी रेनुकी
एकिया हो रामा चिटुकी वजावले रे रेनुकी
एकिया हो रामा लउडी के देहिया में खजुली मचल रे रेनुकी
एकिया हो रामा हाय जोड मिनतिया करतारी रेनुकी
एकिया हो रामा हमरो कसुरवा माफ करए जोगी रेनुकी
एकिया हो रामा अतना वचनिया जोगी सुनतो बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा जोहवा लागल वा रेनुकी
एकिया हो रामा फेर से चिटुकिया जोगी वजावल बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा देह से दुखवा छुटल वा रेनुकी
एकिया हो रामा धावल धुपल लौडी महल में गइली रेनुकी
एकिया हो रामा रानी जल्दी आवे भेदवा कहतारी रेनुकी
एकिया हो रामा लौडी कहे कि ऐसन जोगी हमना देखली रेनुकी
एकिया हो रामा वारह वरिस आगे पीछे जानत बाडे रेनुकी
एकिया सो रामा तोहरे त हाथ से भिक्षा मांगतो बाडे रेनुकी
एकिया हो रामा अतना वचनिया'रानी सुनतो बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा मधुरे से लाजेली रे जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा तू त लौडी रानी के भेसवा धऽके जा रेनुकी

एकिया हो रामा सिगरवा करतो बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा उहवाँ त लौडी करे सिंगार रेनुकी
एकिया हो रामा पहिने पायल पवजेबवा रेनुकी
एकिया हो रामा डड जोरे दक्खिन के चीर रेनुकी
एकिया हो रामा चोली बका के पहिनतारी रेनुकी
एकिया हो रामा दुलरी से तिलरी चन्दहार रेनुकी
एकिया हो रामा कान में कुँडल नाक में वेसर रेनुकी
एकिया हो रामा सोनन के बन्हनिया पेन्हतारी रेनुकी
एकिया हो रामा बाँह ले बाजू बद बाँधतारी रेनुकी
एकिया ही रामा नग के जडवल अगूठी रेनुकी
एकिया हो रामा सोरहो सिंगार बत्तीसो अभरन कइली रेनुकी
एकिया हो रामा भिछवा सहेजली रानी हेवन्ती रेनुकी
एकिया हो रामा कचन के थार में हार मुहर रेनुकी
एकिया हो रामा पाच हरदी तुलसीतिल चारो धरत बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा सवा हाँथ के घूँघट लौडी काढतो बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा हाथ बा ऊपर भिच्छा ले पावे पावे चले रेनुकी
एकियाहो रामा चले मुगिया चले रेनुकी
एकिया हो रामा सात डेवढी रहे दरवाजा रेनुकी
एकिया हो रामा चलले चलल छहो डेवढी घर करे रेनुकी
एकिया हो रामा सात डेवढी रहे दरवाजा रेनुकी
एकिया हो रामा वृजभार देखले की हमरे लौडिया रेनुकी
एकिया हो रामा भिच्छा लेके आवतारी रेनुकी
एकिया हो रामा अरे पलवा पकडि मुगिया खडा भइल रेनु की
एकिया हो रामा डपटि साजेले जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा देव सरपवा जरि जइबू रेनुकी
एकिया हो रामा रानी वनके जवाव देतारू रेनुकी
एकिया हो रामा ऊरे महल में चलल चलल भागेले रेनुकी
रामे रामे रामे भजले वृजाभार रेनुकी
एकिया होरामा करेले विचार रेनुकी
एकियाहोरामा लौडी त भिच्छा देवे आइल रहल रेनुकी
एकियाहोरामा हमरो से धोखा देवे आइल रहल रेनुकी
एकियाहोरामा लौंडी पहुचल महलवा रेनुकी
एकियाहोरामा ऐमन त चडाल जोगी वाडे रेनुकी

एकियाहोरामा देहिया तोपले जोगी चिन्हले रेनुकी
एकियाहोरामा तोहरे ही हाथ से भिछवा मागत वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा मन में विचारवा हेवन्ती करतो वाडी रेनुकी
एकियाहोरामा सास जी से अज्ञा लेवे चलली रेनुकी
एकियाहोरामा माता सुनयना से आज्ञा लेवे चलली रेनुकी
एकियाहोरामा देखली माता सुतलवाडी रेनुकी
एकियाहोरामा सुतलमाता के कइसे जगाई रेनुकी
एकियाहोरामा चरनदवावेली कन्या हेवन्ती रेनुकी
एकियाहोरामा चिहुकी उठी माता सुनयना रेनुकी
एकियाहोरामा मधुरे से साजेली जवाव रेनुकी
एकियाहोरामा कौने करनवा हमरे महलवा में अइली रेनुकी
एकियाहोरामा काल्हे त गवनवा भइल वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा कौन दुखवा पडल रेनुकी
एकियाहोरामा कन्या हेवन्ती हाथ जोड विनती करेलागल रेनुकी
एकियाहोरामा वारह वरिस हम वरत करली रेनुकी
एकियाहोरामा तीन त अवतार कइनी रेनुकी
एकियाहोरामा जहिया से तोहरा घरवा अइनी रेनुकी
एकियाहोरामा एकहु ना दान कइली रेनुकी
एकियाहोरामा हुकुम तू देतू त भिक्षा देअहती रेनुकी
एकियाहोरामा एतना वचनिया सुन वोलली रेनुकी
एकियाहोरामा कि कैसन रहनिया तोहरे गाँवके रेनुकी
एकियाहोरामा कालिहे तू अइलू आज त भिछवा देवू रेनुकी
एकियाहोरामा एतना वचनिया कन्या हेवन्ती सुने रेनुकी
एकियाहोरामा नयना से नीर ढरेले रेनुकी
एकियाहोरामा माता सुनयना कहली कि हमरो त कहलका रेनुकी
एकियाहोरामा दुखवा भइल रेनुकी
एकियाहोरामा अरे सुन मुन कन्या वात हमार रेनुकी
एकियाहोरामा तीन सौ साठ लौंडी वाडी महलवा रें रेनुकी
एकियाहोरामा हमहू सगवा चलव रेनुकी
एकियाहोरामा तूहू त होलऽ तैयार रेनुकी
एकियाहोरामा विचवा में तू रहिह रेनुकी
एकियाहोरामा अतना सुन कन्या हेवन्ती वडा खुश भइली रेनुकी

एकियाहोरामा महल में जाके लउडी लगवा गइली रेनुकी
एकियाहोरामा महल में होता री तैयारी रेनुकी
एकियाहोरामा कन्या हेवन्ती सिंगार करतारी रेनुकी
एकियाहोरामा सोलहो सिंगार कइली रेनुकी
एकियाहोरामा चले माता उहाँ पहुचल बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा कचन के थार में दुसलवा धरताडी रेनुकी
एकियाहोरामा पाँचगो मोहरवा धरत बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा उपरा से फुलहार रखतारी रेनुकी
एकियाहोरामा आगे मु गिया के हाथ के हाथ के भिच्छा दियाइल रेनुकी
एकियाहोरामा भु गिया लौंड़ी चले रेनुकी
एकियाहोरामा तवना के पाछे माता चलली सुनयना रेनुकी
एकियाहोरामा तवना के पाछे सभ लौंडी कुल रेनुकी
एकियाहोरामा तवना के पाछा हेवन्ती कन्या बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा सभे लौटत हेलत बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा कैसन जोगी हवैं कहाँ से आइल रेनुकी
एकियाहोरामा कन्या त हेवन्ती एक देवढ़ी हेली रेनुकी
एकियाहोरामा माता सतवा देवढी हेलली रेनुकी
एकियाहोरामा देखली जोगी के उहवें से रेनुकी
एकियाहोरामा अरे जइसन बाडे वृजभार रेनुकी
एकियाहोरामा वैसन तो जोगी बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा दुनो एके सम लागत बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा मधुरे से बोलली काहे जोग सधले बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा हमरा त घरवा चल बबुआ रेनुकी
एकियाहोरामा नयका उमिरिया चढल बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा दुनों एके सगे रहिह रेनुकी
एकियाहोरामा तब वृजभार साजेले जवाव रेनुकी
एकियाहोरामा धन को गरब देखावत बाडू रेनुकी
एकियाहोरामा वहल पानी रमता जोगी रेनुकी
एकियाहोरामा देव सराप तोहरा के रेनुकी
एकियाहोरामा तोहरो त बेटा महल में रेनुकी
एकियाहोरामा देवी सरापथ होइ जैहैं जोगी रनुकी
एकियाहोरामा जहेलिया कलपिहैं महले में रेनुकी

एकिया हो रामा अतना वचनिया जोगी कहले रेनुकी
एकिया हो रामा अरे तर उहवाँ बोलली माता सुनयना रेनुकी
एकिया हो रामा सुन सुन ववुआ हमार वात रेनुकी
एकिया हो रामा ऐसन बोलिया तु काहे बोलले रेनुकी
एकिया हो रामा अतना वचनिया कन्या हेवन्ती सुनली रेनुकी
एकिया हो रामा उनही के विग्रहिया रहली कन्या हेवन्ती रेनुकी
एकिया हो रामा सुन सुन माता हमरो वचनिया रेनुकी
एकिया हो रामा नौ त महिनवा रखलू पेटवा में रेनुकी
एकिया हो रामा छः त महिनवा तेलवा फुललवा रेनुको
एकिया हो रामा अपना वेटवना नइखू चीन्हत वाड़ रेनुकी
एकिया हो रामा एक दिन सामी हमरा घरे गइले रेनुकी
एकिया हो रामा कोहवर मे झाकि झुकि देखली रेनुकी
एकिया हो रामा अतना वचनिया जोगी सुनत वाड़े रेनुकी
एकिया हो रामा डपटि के साजेले जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा सुन सुन वुढिया हमार वात रेनुकी
एकिया हो रामा तोहर पतोहिया वाड़े रेनुकी
एकिया हो रामा आन के खसमवा अपना वनावले रेनुकी
एकिया हो रामा अतना कहके हँसि दिहले रेनुकी
एकिया हो रामा वतोमिय चमकत देखत वा हेवन्ती रेनुकी
एकिया हो रामा हवे हवे सामी हमार सोरठपुर के जतरा करतवाड
एकिया हो रामा लपटि के कान्हा धरतो वाडी रेनुकी
एकिया हो रामा माता सुनयना देखत वाडी रेनुकी
एकिया हो रामा लाजे से मुह फेरत वाडी रेनुकी
एकिया हो रामा कन्या हेवन्तो जोगी के ले अइनी रेनुकी
एकिया हो रामा पलंग के तैयारी करनी वाटी रनुकी
एकिया हो रामा तोसक तकिया मखमल विछौना रेनुकी
एकिया हो रामा फुलना ऊपर से छितरोले रेनुकी
एकिया हो रामा अतर गुलाववा छिरकावेली रेनुकी
एकिया हो रामा पाँच पचन के वीरा वनवली रेनुकी
एकिया हो रामा हाल चाल समाचार पुछेली रेनुकी
एकिया हो रामा कौने कारनवा जोगी जोग साधले रेनुकी
एकिया हो रामा भेदवा वताद देल हेर होल वाड़े रेनुकी
एकिया हो रामा अतना वचनिया सुनत वाड़े रेनुकी

एकिया हो रामा बोलत बाड़े सुन सुन पतरो हमार रेनुकी
एकिया हो रामा गवना करइली कोहबर नाकहनी रेनुकी
एकिया हो रामा मामा के इहाँ गइनी रेनुकी
एकिया हो रामा अरे बीड़ा उठवली सोरठी के ले आइब रेनुकी
एकिया हो रामा सोरठपुर के जतरा करत बानी रेनुको
एकिया हो रामा बारह बरिसवा के कइले बानी पयथान रेनुकी
एकिया हो रामा तेरहे बरिस तोहरे महल आइब रेनुकी
एकिया हो रामा धीरज धर पतरो हमार रेनुकी
एकिया हो रामा हेवन्ती बोले सुनी सामी बात हमार रेनुकी
एकिया हो रामा सोरठपुर जाइब जीअतो न अइब रेनुकी
एकिया हो रामा हमरा के हुकुम दे दीतऽ एके घटा में सोरठी ले आइव रनुकी
एकिया हो रामा अतना बचनिया जोगी सुनतो बाड़े रेनुकी
एकिया हो रामा डपटि के साजेले जवाब रेनुकी
एकिया हो रामा मरदा के जामल मरद हइ रेनुकी
एकिया हो रामा आगे के डेगवा पाछ्व न वराव रेनुकी
एकिया हो रामा तुहुँ त जोगी मगइबू सोरठी रेनुकी
एकिया हो रामा मरदा के मुड़िया गड़ जइहें रेनुकी
एकिया हो रामा कलियुग तोहरे नाव चलजाइ रेनुकी
एकिया हो रामा उहवाँ त अतना सुने कन्या हेवन्ती, रेनुकी
एकिया हो रामा अगना त सोचत वाड़ी हेवन्ती रेनुकी
एकिया हो रामा अब तिरिया चरितर हम करव रेनुकी
एकिया हो रामा इनकर जतरावा बिलवाइब रेनुकी
एकिया हो रामा रातिभर जागव राति भर चौपड खेलव रेनुकी
एकिया हो रामा अतना सोचत वाड़ी रेनुकी
एकिया हो रामा जोगी त उहँवा झूठी के नकिया वजावले रेनुकी
एकिया हो रामा हेवन्ती देखली की राहल के मारल सामी रेनुकी
एकिया हो रामा सामी के निंदिया लागल रेनुकी
एकिया हो रामा उठके भोजन बनावली रेनुको
एकिया हो रामा बारहो व्यजना कइले तैयार रेनुकी
एकिया हो रामा कचन के थार जेवनार परोसत वाड़ी रेनुकी
एकिया हो रामा मन में सोचऽनारी कि सुतल खसम कैसे जगाई रेनुकी
एकिया हो रामा वृजाभार सोचले कि विश्रहिली के फगनवा पड़े रेनुकी

एकिया हो रामा तले हेवन्ती साजेली जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा चलऽ चलऽ जेवनार रेनुकी
एकिया हो रामा जोगी मन में करेले विचार रेनुकी
एकिया हो रामा एकरा हाथे जो करब जेवनार रेनुकी
एकिया हो रामा त हो जाता सोरठपुर जात्रा भंग रेनुकी
एकिया हो रामा त जोगी करतारे देवता के सुमिरनवा रेनुकी
एकिया हो रामा तैंतीस कोटि देवता आइ गइले रेनुकी
एकिया हो रामा देवता साजेला जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा सुन सुन जोगी का विपत पडल रेनुकी
एकिया हो रामा जोगी वोलत वाडें जेवना परोसत वाडी रेनुकी
एकिया हो रामा एकर उपइ वतेलादीं रेनुकी
एकिया हो रामा तवले देवता सजेले जवाव रेनुकी
एकिया हो रामा अतना सिखौनी वुडवक भइलवाड रेनुकी
एकिया हो रामा एक ओर एन्ने एक ओर ओन्ने ओर उठाय रेनुकी
एकिया हो रामा कन्या के नजरिया वंध जइहैं रेनुकी
एकिया हो रामा इहे कहे देवता चलि गइले रेनुकी
एकिया हो रामा चन्ननके पीढवा पर वइठल जोगी रेनुकी
एकिया हो रामा हेवन्ती सोचेली कि न जैहैं जोगी रेनुकी
एकिया हो रामा खुशिया दहिया ले आवइ गइली रेनुकी
एकिया हो रामा अरे दहिया ले के अइली रेनुकी
एकिया हो रामा देखिके जोगी गनना करत वाडी रेनुकी
एकिया हो रामा विरहीं के हाथ नदिया गिर गइले रेनुकी
एकियाहोरामा छटकी जोगी के मथवा पर पडगैले रेनुकी
एकियाहोरामा इ देख जायी खुस भइले रेनुकी
एकियाहोरामा कि जतरावा शुभ भइले रेनुकी
एकियाहोरामा जोगी अव चलि देहले रेनुकी
एकियाहोरामा पीछे हेवन्ती चलल रेनुकी
एकियाहोरामा कहले फिर सुमिर देवतवा के रेनुकी
एकियाहोरामा गनवा हयवा दिहले वाडी रेनुकी
एकियाहोरामा हम महल में नाजाइब रेनुकी
एकियाहोरामा अरे अतना वचनिया देवता लोग उगले रेनुकी
एकियाहोरामा चेला के समुझावत वाडे रेनुकी

एकियाहोरामा जेकरा से मतलब लेवे के रहेला रेनुकी
एकियाहोरामा ओकर बतिया सहेके पडेला रेनुकी
सोरठपुर के भेदवा तोहरा बिअहिता रेनुकी
एकियाहोरामा अरे जोगवा होइहैं अब तोहार रेनुकी
एकियाहोरामा देखले सामी केने जाले रेनुकी
एकियाहोरामा अरे महल में समइले बृजाभार रेनुकी
एकियाहोरामा महल में लै गइले तिरिया रेनुकी
एकियाहोरामा महल में बइठइली जोगी रेनुकी
एकियाहोरामा सोरहो सिंगरवा बतीस अभरनवा रेनुकी
एकियाहोरामा हेवन्ती तइयार करेले रेनुकी
एकियाहोरामा देखिहे त मोहित होइ जइहैं रेनुकी
एकियाहोरामा अतना विचार करेले हेवन्ती रेनुकी
एकियाहोरामा एक ओर जोगी बइठले पलगवा रेनुकी
एकियाहोरामा चौपड खेलै लगली रेनुकी
एकियाहोरामा आधी रात बीत गइल रेनुकी
एकियाहोरामा कुवर सोचले बियही तिरियाचरितर करतारी रेनुकी
एकियाहोरामा रातभर जगैहैं जतरा भग करैहे रेनुकी
एकियाहोरामा सात भार जोगी मगले निद्रा रेनुकी
एकियाहोरामा मन में करत बाडी विचार रेनुकी
एकियाहोरामा अँचरा से बाँधी जोगी डडा जोगी रेनुकी
एकियाहोरामा धरेले तिलकवा रेनुकी
एकियाहोरामा जिन खोलिहें गठबधन हो रेनुकी
एकियाहोरामा खचड के जामल खाचड होई जइहैं रेनुकी
एकियाहोरामा जोगी के अँगुरिया दाँत तर दावै रेनुकी
एकियाहोरामा हथवा त दहिनवा धैके सुतै निरभेदवा रेनृकी
एकियाहोरामा धइके सुतली कन्या त देवन्ती रेनुकी
एकियाहोरामा अब कैसे सामी सोरठपुर जैहें रेनुकी
एकियाहोरामा तले जोगी महल में विचारवा कहले रेनुकी
एकियाहोरामा तिऊली तो बडा मन्दवा कहली रेनुकी
एकियाहोरामा कैसे सोरठपुर जाइब रेनुकी
एकियाहोरामा तैंतिस कोट देवता के सुमिरले रेनुकी
एकियाहोरामा देवता सभ आ गइले रेनुकी

एकियाहोरामा बोले देवता कि कौन सकटवा परलवा रेनुकी
एकियाहोरामा बोलेले जोगी बृजाभार रेनुकी
एकियाहोरामा हमरा के बाँध के डांड में बन्धन में रेनुकी
एकियाहोरामा बन्धन तो गठबन्धन बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा ओही पर तिलकवा धइले रेनुकी
एकियाहोरामा एकर उपइया बताइब रेनुकी
एकियाहोरामा एतना वचनिया देवता सुनले रेनुकी
एकियाहोरामा अतना सिखइनी बुड़बकवा बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा तोहरा ता हमें सरोता बाड़े रेनुकी
एकियाहोरामा एक हाथ काढ सरौता रेनुकी
एकियाहोरामा दुइखड करऽ सुपारी के रेनुकी
एकियाहोरामा कन्या हेवन्ती के दांत पर धराइ रेनुकी
एकियाहोरामा आपन अँगुरिया छोडल रेनुकी
एकियाहोरामा कटारी निकाल के गठबन्धन करइलन रेनुकी
एकियाहोरामा खोल के तिलकवा उहे क लेवाडे रेनुकी
एकियाहोरा उह त उपइया जोगी कइले बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा अँगुरी त छोड़ाइ दिहले रेनुकी
एकियाहोरामा कढले कटारी झोली मे से रेनुकी
एकियाहोरामा निकरले पजर जोगी रेनुकी
एकियाहोरामा उतरले पलग पर से रेनुकी
एकियाहोरामा झुमुकी खडउ वा पर भइले असवा रेनुकी
एकियाहोरामा गुदरी उठवले भसम लगावेले रेनुकी
एकियाहोरामा मृगा के छलवा काखतर दववले रेनुकी
एकियाहोरामा चौरासी मन के झोरा रहल रेनुकी
एकियाहोरामा तूम से कमडल उठावेले रनकी
एकियाहोरामा सवरन कमडल उठावेले रेनुकी
एकियाहोरामा सातो त देवढ़िया किला तुडवा बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा तव जोगी हो गइने महल के वहार रेनुकी
एकियाहोरामा सोचत बाडे की सुतल तिरिया छाडेन हमें उपरवा रेनको
एकियाहोरामा सातो भार निद्र खोच दले रेनुकी
एकियाहोरामा तिरिया तव जाग गइली रेनुकी
एकियाहोरामा के कोना में खोजत बाडी रेनुकी

एकियाहोरामा पलग तरे खोजन वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा रोइ रोइ कहत बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा गवना कराके वइठा गइलल बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा तवले नजरिया पडल बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा चिल्हिया के रूपवा वरत वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा जोगी त भाग चलि जाले रेनुकी
एकियाहोरामा जहाँ त रहत बा पकडी के पेड रेनुकी
एकियाहोरामा पकडी से वोलेले रेनुकी
एकियाहोरामा हमरा के जल्दी से लुकाव रेनुकी
एकियाहोरामा कौनो जो अदमिया पुछिह तू रेनुकी
एकियाहोरामा तू हमरा के जन वतइह रेनुकी
एकियाहोरामा नाही त देव सरपवा हो रेनुकी
एकियाहोरामा कुँवर वृजाभार के पकडि लुका लिहली रेनुकी
एकियाहोरामा पकडि तर जोगी अव लुकाइल वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा तले त पहुँचली जोगी के विहहिया रेनुकी
एकियाहोरामा मधुरे में साजेली जवाव रेनुकी
एकियाहोरामा सुन सुन पकडी वहिना हमरो बचनिया रेनुकी
एकियाहोरामा अरे जाहू त रहववा कौना मुसाफिर गइले रनुकी
एकियाहोरामा अतना वचनिया पकडि सुनेली रेनुकी
एकियाहोरामा वोलेली पकडी सुन वहिना बतिया रेनुकी
एकियाहोरामा अरे हम नाही देखेली मुसाफिर रेनुकी
एकियाहोरामा दूसर अव रास्ता देख रेनुकी
एकियाहोरामा चलल चलल अब दूर कुछ लाइली रेनुकी
एकियाहोरामा दूसर रास्ता गइले वृजभार रेनुकी
एकियाहोरामा अव जोगी चलि गइले रेनुकी
एकियाहोरामा जहाँ रहले जमुना के धार रेनुकी
एकिया होरामा अरे वेटवा उहाँ रहले मल्लाह रेनुकी
एकियाहोरामा जल्दी मे भइया खोलव हो रेनुकी
एकियाहोरामा आरे पचा मोहरा गुदरा के टका रेनुकी
एकियाहोरामा केवटा के आगे मोहरा विगी दिहले रेनुकी
एकियाहोरामा वड सुख भइले मलाहवा हो रेनुकी
एकियाहोरामा पहिले जतरावा वनि गइले रेनुकी
एकियाहोरामा घाट से नइया खोलत वाडे रेनुकी

एकियाहोरामा बडा सुख भइले मलहवा रे रेनुकी
एकियाहोरामा चलते बाडे कुवर बृजमार रेनुकी
एकियाहोरामा आधा दरियाव मे नइया पहुचल बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा तले पहुचल वाडी कन्या हेवन्ती रेनुकी
एकियाहोरामा जहाँ मलहिया भउजी रेनुकी
एकियाहोरामा भउजी के दुखवा भउजी त बुझिहैं रेनुकी
एकियाहोरामा अरे सुन सुन मोरा बहिना बचनिया रेनुकी
एकियाहोरामा अरे नइया त तनी फेरावाव रेनुकी
एकियाहोरामा तोहरा के देवा गहना से गुरियवा रेनुकी
एकियाहोरामा अरे लोहरा पटेहवा हो रेनुकी
एकियाहोरामा लालच में पडली मलाहिनी रेनुकी
एकियाहोरामा हथवा उठावले मलहनिया रेनुकी
एकियाहोरामा उहाँ देखले केवटा त मलाहवा रेनुकी
एकियाहोरामा नइया फेरे लगले अव रेनुकी
एकियाहोरामा देखले जोगी उपरी के त वोलल रेनुकी
एकियाहोरामा अरे तिरिया दुसेरे मे तूह पडली वाडी रेनुकी
एकियाहोरामा झूठ मूठ के लालच अव त देखावतारी रेनुकी
एकियाहोरामा उनका त अनघन कहाँ से आइ रेनुकी
एकियाहोरामा अरे दुइ ठो मुहरो जोगी फिर देले रेनुकी
एकियाहोरामा हमरा के पार मोर उपराव रेनुकी
एकियाहोरामा पाछे तनहया लेइ जाइहऽ रेनुकी
एकियाहोरामा नइया उतर के मलाहवा रेनुकी
एकियाहोरामा अरे ओकर गइले रेनुकी
एकियाहोरामा गइले झुनुकी खडाऊं गइले रेनुकी
एकियाहोरामा हेवन्ती सोचतारी अरे सामी सोरठपुर जैहैं
एकियाहोरामा हाल वेहाल होत वाडी रेनुकी
एकियाहोरामा साजेली जवाव कन्या हेवन्ती रेनुकी
एकियाहोरामा अरे पार हेलि गइली नगदरि कइलऽ रेनुकी
एकियाहोरामा अरे हमरो वचनिया सुनि गइले रेनुकी
एकियाहोरामा अरे देवो सराप आ सोरठपुर के जतरा न गहो जाइ रेनुकी
एकियाहोरामा अतना वचनिया जोगी सुनले रेनुकी
एकियाहोरामा आगे के डव आगे वाडे रेनुकी
एकियाहोरामा अरे कन्या त साजेले जवाव रेनुकी

एकियाहोरामा सामी सुन सुन बात हमार तु रेनुकी
एकियाहोरामा जल्दी से देव जवाब तु रेनुकी
एकियाहोरामा एकरा तू भेदवा तू बता देव रेनुकी
एकियाहोरामा अगना में तुलसी में चउतरा बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा जब तू देखिह महरल पात रेनुकी
एकियाहोरामा जनिह ज कतहू बानी रेनुकी
एकियाहोरामा तब कन्या हेवन्ती बोलत बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा सोरठपुर जतरा बतावत बाडी रेनुकी
एकियाहोरामा करिह सुन्दरबन पोखरा स्नान रेनुकी
एकियाहोरामा दुसरे डुबुकी गगा राम केकडा मिलिहै रेनुकी
एकियाहोरामा लेके झोरा मैं केकडा के रखिह रेनुकी
एकियाहोरामा उहवा से चलिह रेत मैं रेनुकी
एकियाहोरामा उहवा से चलहि ठूठी पकडि रेनुकी
एकियाहोरामा ठूठि पकडि रावल कागवा बाडे रेनुकी
एकियाहोरामा ठगपुर सहरिया चलि जैहै रेनुकी
एकिया हो रामा उहवा बाडे देव जुआडिया रेनुकी
एकिया हो रामा बुढिया दनुइया बाडी उहवा रेनुकी
एकिया हो रामा सुबुकी में ननद भौजी बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा जात के तेलिनिया बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा काठ के ठगवा सिलिया बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा उनही से होई, हमार विचार रेनुकी
एकिया हो रामा यहवा से जैतपुर जइहै रेनुकी
एकिया हो रामा उहवा रानी जयवन्ती बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा उहवाँ से जइह जमुनी पुरी रेनुकी
एकिया हो रामा उ हवा बाडी जमुनी रेनुकी
एकिया हो रामा उ हवा से जइह केदली रेनुकी
एकिया हो रामा उ हवा बाडी अपनी सपती रेनुकी
एकिया हो रामा चौदह तओ कोस में राज करत बाडी रेनुकी
एकिया हो रामा उहवां से चलिह सोरठपुर में जइह रेनुकी
एकिया हो रामा चारो कठ वसिया वारे रेनुकी
एकिया हो रामा सहर में तू जइह करिके पकरमा रेनुकी
एकिय ाहो रामा वारे वरिस के उकरल फुलवरिया रेनुकी

एकिया हो रामा तोहरा गइले हरिहर होई जइहँ रेनुकी

× × × ×

इस प्रकार वृजाभार हेवन्ती के वतलाए हुए रास्ते पर चल पडा और य
समय सोरठी मे मिलन हुआ ।

---

(७) बिहुला

रामा रामा रामजी की नइयाँ, राम जी बिहान कइली
दुर्गा आजी हो जइहऽ कठ दयाल
रामा दिल्ली सहरवा में रहले चदू सहवा रे ना
रामा जेकर प डित बिसहर पडितवा रे दइबा
रामा भ गइल छ गौत लडिकवा रे ना
रामा सजी लोक के कइनी बिअहवा रे दइबा
रामा सजी गइले सुरधमवा रे ना
रामा सजी गइले सुरधमवा रे दइबा
रामा सातवा भइले बेरवा रे ना
रामा पडित जी देखऽ कइसन पीरवा रे दइबा
रामा पडित खोल देले पतरवा रे ना
रामा अइसन लडिकवा जनम लिहले बाडे रे दइबा
रामा कुछहूना पडित के इनमिया ना दिहले रे ना
रामा हे राम घरवा से पडित खिसवा चलि गइले रे दइबा
रामा ऐसन सेठ सहर हमरा के मिलवले रे ना
रामा रामा इहाँ के बरतवा इहें छोडतानी रे दइबा
रामा आगे के बचनवा सुनी हो राम
रामा छहो भौजाइया बाला के राड रहली रे दइवा
रामा ए बबुआ बिसहर चडलवा बाटे रे ना
रामा रहिहऽ इनसे होशियार रे दइवा
रामा बाला हथवा लिहले तिरिया धनुहिया रे ना
रामा चिडिया बतक मारे लगले रे दइवा
रामा तिल तिल कोसवा चारु ओर मारे लगले रे ना
रामा बिसहर पडित महल में बिचार कइले रे दइवा
रामा कवन ऐसन बली भइला रे ना
रामा तिन तिन घेरवा चारो ओर चिरैया मोर दइवा
रामा बिसहर पडितवा मछरी लगावेला रे ना
रामा चलि गइल गगा के किनार पर रे ना

रामा बोले त लगले विसहर पण्डितवा रे दइवा
रामा सुन वावा सवलिया हमार रे ना
रामा वाला तोहरा न घटिया सिघरी चढ़ै रे दइवा
रामा हमरा घाटे मछरिया वाटे रे ना
रामा हमरा त घाटे ठेहुना गगा जी वाडी रे ना
रामा हमरा त लगे आवे मार मछरिया रे दइवा
रामा पण्डित के कहना में लखन्दर पडले रे ना
रामा हेले लगले गगा जी के घरवा रे दइवा
रामा ठेहुना पनिया भइल हो रामा
रामा विच धारा गइले वाला लखन्दर रे दईवा
रामा तव विसह चनिया छोडल लागल रे ना
रामा भर मुंहे गइल वाला के पनिया रे दइवा
रामा लपटि के विसहर घइले वाडे पहूचवा रे ना
रामा वालू में घसाई देत वाडे रे दइवा
रामा तव त विसहर चल दिहले अपना घरवा रे ना
रामा आपन फटही मिरजइया पेन्हले रे दइवा
रामा हथवा के ले लिहले विसहर छडिया रे ना
रामा रामा चदू साह के दुअरवा गइले रे दइवा
रामा तव ओइजा वोलै विसहर पण्डितवा रे ना
रामा ऐसन संतनवा डगवा वाटे तोहार रे दइवा
रामा कहा त वाडे वाला लखन्दर दइवा रे ना
रामा जल्दी से वोनाय देव देरी होत रे दइवा
रामा तव ओइजा मचल हलचलवा रे ना
रामा नाही जेकर पतवा लागल रे दइवा
रामा विसहर साजे लगले जवाव रे ना
रामा ववुआ वालू रेत में वाडे रे दइवा
छहो मौजिया वोनाय के गइली रे ना
रामा वालू रेतवे देखता लोग रे दइवा
रामा तनी तनी ससवे चलत रहे वाला के रे ना

× × × ×

होत फजीरवा चौना के दुअरवा रे ना

राम तब चीना साहू कइले परनाम रे दइबा
रामा रउवा त हुई पन्डित देस के भवरवा रे ना
राम बबुआ के जाके कतही लडकवा रे दइबा
रामा त धीरे धीरे लगले बोले बिसहर रे ना
रामा दिहले कौल कररवा रे दइबा
रामा तब बिसहर दइबा लडिकवा रेना
रामा हे चीना साह जल्दी से होख तू तैयार रे दइबा
रामा हमरा सगे तुहूं चलि चलऽ दिल्ली सहरिया रेना
रामा चन्दू साह उहा बाहे उन्ही के लड़िकवा रे दइबा
रामा गइले बिसहर चन्दू के दुआरवा रे ना
बाला त खेलेला धनहिया रे दइबा
रामा बिसहर त ओइजा देखले बाटे रे ना
रामा हउवे त लरिकवा हवन हे राम रे दइबा
रामा लरिका त परि गइले पसनवा रे ना
रामा तब त बारी हजामवा बोलता रे दइबा
रामा पडित के बुलाय आपन दुअरवा रे ना
रामा आपन दुअरवा गननवा करी ए रामा रे दइबा
रामा तब त ओइजा बोलेले चदू सहुआ रे ना
रामा हम ना करब बिअहवा रे दइबा
रामा पहिले हम देब जवबवा रे ना
रामा छेकवा फलदनवा ओइजा बरियारी दिहाइल रे दइबा
रामा चन्दू साह काटे ना पइले रे ना
रामा चन्दू साह वडा खातिर से बिदइया कइले रे दइबा
रामा तिलकवा के दिनवा पडित जी लिखी रे ना
रामा बारी हजाम के चिठिया दिहले रे दइबा
रामा बारी हजाम गइले चीना के मुलुकवा रे ना
रामा ऐसन वडा उनकर अकिलवा रे ना
रामा कहाँ ले वखानवा करी हे राम
रामा ववुओ के जोगे तोहार लडिकवा रे दइवा
रामा किलावा के जोगे वाडे किला रे ना
रामा तेरसी के तिलकवा रे दइवा
रामा जल्दी से तइयरिया करऽ रे ना

× × ×

रामा इहाँ के वरता इहाँ छोडी रे ना
रामा आगे हवलिया सुनी हे राम
रामा विसहर के साहू पुछले रे ना
रामा सुनी विसहर वतिया हमार रे दइवा
रामा विना हमरा देखले नाही त विग्रहवा रे ना
रामा कइसन उ तिरिया मिली ए राम रे दइवा
रामा अतना वचनिया विसहर पडित सुनले
रामा उडन खटोलवा इदरपुर से मँगवल रे दइवा
रामा चन्दू साह के वइठा लिहले रे ना
रामा लिया आके गइले चीना के मुलुकवा रे ना

× × ×

राम तीन सौ साठ वरवा साजेला पलकिया रे ना
रामा ओहमें वाला त लखदर वइठले रे दइवा
रामा साजि के वरियात गइल चीना के दुआर रे ना
रामा चीना साह के दुआर लागल वरतिया रे दइवा
रामा तीन सौ साठि विसहर साजेले वरवा रे दइवा
रामा सभे पर साजेले एक से एक से नौसवा रे ना
रामा लिखिके भेजेला चीना के पान पतिया रे दइवा
रामा चीना साह त वाला लखन्दर के दुआर पुजवा रे ना
रामा दुअरा पर लागल रहे वरिअतिया रे दइवा
रामा लडकी जामल हमार त सुघरवा रे ना
रामा एक से एक वाडे दुलहवा रे दइवा
रामा किलवा भीतर चीना साहुआ रोये रेना
रामा तव विहुला सतवरता सुनली रे दइवा
रामा तव हे वावू जी रउवां काहे रोईले रेना
रामा हमही वताइव दुलहवा रे दइवा
रामा जेकरा पर माछी लागे रे ना
रामा उहे हवन वाला वरवा रे ना

× × × ×

बिषहर ने बाला लखन्दर का विवाह बिहुला से कराया और चन्द्रूशाह से बदला लेने के लिए बाला को मारने का षडयन्त्र करने लगा। उसने लोहे के अचलघर मे कई प्रकार के साँप भेजे परन्तु कोई काट न सका। अन्त में विषहर नागिन को भेजा।

रामा बिहुला केसिया पर नगिनिया चढे रेना
रामा देखि दूनो के सुरतिया रे दइबा
रामा देखिके नागिन बेजारवा होवेली रेना
रामा ओने त होता देरवा रे दइबा
रामा ओतने होता बिसहर बिसमदवा रेना
रामा गोडवा के तरवा भइले गेंदुरवा बालाके रे दइबा
रामा बाला के ले बिहुला सुतावे रेना
रामा बाला लगले गोडवा चलावे रे दइबा
रामा नागिन के घउवा लागल रेना
रामा उहाँ नागिन करेले जवबिया रे दइवा
रामा हे रामा बिसहर के बिल्कुल दोसवा रे ना
हे रामा चौथी बेरा नागिन घुसली काटे के रे दइबा
रामा कानी त अगुरिया में होता पिडवा रे ना
रामा बाला अब त जागि भइले रे दइबा
बाला लखन्दर बिहुला के जगावत बाड़े रे ना
रामा सुन तिरिया गजब होखतबा रे दइबा
रामा हमरा के डसले बा नगिनिया रे ना
रामा अब हमार परनवा जाला रे दइवा
रामा तवो नाही उठे बिहुला सतबरना रे ना
रामा रिसिया चढे लखन्दर के रे दइवा
रामा पीयर पीयर भइले आँखिया बाला के रे ना
हो रामा गिरि गइले बाला लखन्दर रे दइवा
रामा जुडवा में विहुला के नागिन छिप गइली रे ना
रामा भिनुसरवा लोहिया लागल टुटल निदिया रे दइवा
रामा विहुला जगावत वाडी वाला लखन्दर के रे ना
रामा जल्दी से उठऽजल्दी से जाहू किलवा रे दइवा
रामा सभे लोग जगले सभी कुल लउड़िया रे ना

रामा केतना जगावें विहुला सतवरनो रे दइवा
रामा वाला लखन्दर नइखत उठल रे ना
रामा देखे लोग लागल वाला के मुहवा रे दइवा
रामा विहुला देखके लगले रोवे रे ना
रामा हलचल मचल साह के किलवा रे दइवा
रामा ऐमन चन्दू के पतोहिया अइली राम रे ना
रामा वाला के कोहवर मरलस डइनिया रे दइवा
रामा हथवा के विसहर लेहले सटुहिया रे ना
रामा फटही मिरजइया पहिन के रे दइवा
रामा ओइजा वोले साहु में कि रे ना
रामा तोहरा तो पतोहिया हइ डइनिया रे दइवा
रामा वाला के परनवा लिहली रे ना
रामा वुजरो त हवे डइनिया रे दइवा
रामा सात वोझा कटइले कइनिया चन्दू रे ना
रामा सोचे लागल विसहर मन में एक दहवा रे दइवा
रामा दूसर के ना मार लागी विहुला के रे ना
रामा धीरे धीरे लोग मरिहें विहुलाके रे दइवा
रामा वुजरो के हमही मारव रे ना
रामा विहुला के ववना के मगइलस रे दइवा
रामा विहुला के ववना के मगइलस रे दइवा
उहाँ वोलेली विहुला सतवरता रे ना
हम ना जो मरव कइनी से रे दइवा
रामा हमरा के दीहS इनमवा रे ना
मामी के देदीहS लगवा रे दइवा
रामा अरे विहुला के कइन से पीटे लगले रे ना
रामा विहुला के कूटे लागल चामवा रे दइवा
रामा लगली रोवे जार वेजारवा रे ना
रामा ऐसन चडलवा वाडन हो रे दइवा
रामा केहू नाही वाडे भलमानुसवा रे ना
रामा सातो वोझा कइनिया टूटल रे दइवा
रामा तवो नाही मरे विहुला सतवरता रे ना
रामा तव वोलतारी विहुला सतवरना रे दइवा
रामा हमरो कौल करार पूर भइले रे ना
रामा ममिया के लगिया देहि रे दइवा

रामा बकस में लशिया के बन्द कइली बाडी रे ना
रामा कुकुरा के लिहली साथवा रे दइबा
रामा एक तोला दहिया ले लिहली रे ना

× × ×

रामा गगा जी में बरिया डाल दिहली रे ना
रामा अपने चढ़ि गइली उपरा रे दइबा
रामा ले चलली अपने ममहर के नगरिया रे ना
रामा नाथूपुर सहरिया उनकर मामा रहल रे दइवा
रामा बिहुलाके देखले मामा उनकर सूरता रे ना
रामा मामा ओइजा बोलऽ तारे रे दइबा
रामा हे तिरिया काहे लशिया लेके घुमत रेना
रामा हमरा सगे महलिया में चल ए रामा
रामा चौदह कोस के बा हमार रजवा रे ना
रामा अपने भगिनिया मामा नाही चिन्हत बाडे रे दइबा
रामा उहवाँ से हाँकि दिहली बरियारेना
रामा नाथूपर घटिया पर नेतिया धोबिन रे दइबा
रामा मामी के नतवा लगइली उहवे बिहुला रे ना
रामा तब बिहुला सभे हाल जरिये से कहली
रामा लगली बिहुला धोवें कपडा रेना
रामा करे गइली घरवा के कमवा रे दइवा
रामा कपड़ा के तहवा बिहुला सतवरता लगावेली रेना
रामा थोकवा लागे के बिहुला तैयरिया कइली रे दइवा
रामा तवले नेतिया धोविन आइल रे ना
उडन खटोलवा मगवले इन्दर पुरवा रे दइवा
रामा इन्दर पुर नेतिया गइली रे दइवा
रामा परलोकवा के कपड़ा घरे घर दिहली रे ना
रामा कपडा के तहवा नाही मालुम भइले रे दइवा
रामा ऐसन कपडवा तहवा लगइले रे ना
रामा उन्ह कर सुरतिया हम देखव ए राम
रामा परी लोग वोलावत वाडी ए दइवा
रामा उड़न खटोलवा पर चढि दूनो जाला रे ना

रामा पहिले त गउवे लाल परी के दुआरा रे दइवा
रामा लाल परी चीन्ही गइली विहुला के रे ना
रामा इत हवे हमरे इन्दर के परिया रे दइवा
रामा कैसे कैसे तोहार हलवा रे ना
रामा जरिया से कहै खिलकतिया विपहर के रे दइवा
रामा विहुला कहले विया विहुला सतवरता रे ना
हाल सुनि गइल लालपरी इदर के लगवा रे दइवा
हमनी के रखलऽइनरपुरवा एवजवा रे ना
रामा विहुला के भेजलऽ परलोकवा रे दइवा
रामा विसहर के देखी हाल रे ना
रामा तले जुडवा से निकलल नगनिया रे दइवा
रामा जरिया से कहे लागल नागिन वखैडवा रे ना
रामा वरम्हा के वुलवले इन्दर रे दइवा
रामा सुन हमार सुन वतिया रे ना
रामा विरिया गगा जी मैं रखले विया रे दइवा
रामा वकसए मैं वा लसिया रे ना
रामा जहँवा त वाडे चनरामिरतवा रे दइवा
रामा वसिया त वजाव ओही कीरा से अदमिया से होइ जइहैं रे ना
रामा सजी परी अइली गगा तीरैं रे दइवा
रामा दुरगा सातो वहिन अइली रे ना
रामा लसिया लेके अइली इन्दर के कचहरिया रे दइवा
रामा जहँवा लागल महफिलवा रे ना
रामा वाकस मे से निकलल वा वाला के लसिया रे दइवा
रामा देवी के हथवा मे खप्पर दिहले रे ना
रामा चरनामित के घरिया छिटाइल रे दइवा
रामा वानालखन्दर उठ गइले रे ना
रामा सातो भाई लेके चलली गगा के तीर रे द
रामा रववा लगली हाके विहुला रे ना
रामा छवो दयादिन देने नगनी तनसवा रे द
रामा गउवा के पछिमवा रतन फुलवरिया :
रामा दिहले वाडी अपना घर खनरिया रे न
रामा तीन तो नाठ पहुँचल पटरनिया रेना
रामा विहुला के डोलिया कहरवा ले आवे

रामा सातो भाई घोड़वा गइले रेना
रामा हलचल मचल बाटे सहरवा में ना
रामा अइसन पतोहिया हमार सतवन्ती रहले रेना
रामा आज मेटाई दिहले दुखवा रे दइबा
रामा त डोलिया घरे पहुचल बाड़े रेना
रामा बाबू जी के परनमवा रे दइबा
रामा बोले लागल बिहुला सतबरता रेना
रामा सुन कहनवा ससुर जी हमार रे दइबा
रामा बिसहर के जल्दी बोलाय रेना
रामा ओकर दुनो पहुचा कटवाइब रे दइबा
रामा पूरा करब बचनिया रेना
रामा बिसहर के बोलाइब पुलिसवा रे दइवा
रामा बिसहर कइले विचार अपनी महलिया रेना
रामा कौन इनमवा हमरा कै मिलि रे दइबा
रामा लालच में पडि गइले उहवा रेना
रामा नकिया पहुचवा कटवइले रे दइबा
रामा निकारि दिहेल गइले रजवा रेना

---

(८) राजा भरथरी

जग मे अम्मर राजा भरथरी, कर में लिखा वैराग
मेरी मेरी करके जग में अइलें ।
मेरी माया की जजाल, पहिरी गुदडी राजा रम के चललें
तो रानी गुदडी धय ठाढ

रानी—सामी सुनो मेरी वात, ओहदिन सामी स्याल करी
जेहि दिन रचे मोर वियाह
कि जेह दिन गवना ले अइली हमार
हथवा सामिया वधल कागन
मथवा मौरवा चढाई सामी
गले में डलली जयमाल
अम्मर सेनुरा देई माग
देके से सेनुरवा सामी प्राण के गोवल दिनवा के लगैहे पार
गवने की धोती सामी धुमिल ना भइले
नाइ छुटल पियरी दाग

—जा—सोरही गैया के राजा गोवर मगा
आगन दिया लिपाय
गजमोती चौके पुरा के कचन कलसे धराय
कासी से पडित वोला, भेदवा रचाय
पहिला तो भेदवा वावा पडित वाचे, निकला ईश्वर क
दूसरा पन्नवा वावा फिन तो वाचे निकला राजन का
चौथा पन्नवा वावा फिन तो मिला जोगी भरथरी क
एन्ना वोलिया रानी सामदेव सुने कि धरती पटके
आ घोडा जोडा वावा तुहें देई, देई पाचो पोसाक
जोगिया के नाम वावा काट देई
तो एन्ना वचन वावा पडित वोले, रानी सुनो भे
कगदा होते रनिया काट देतो, करमा काटल न
इनके करम रनिया लिखल वा जो वरहे वरस
तेरहे में वनिहें ये जोगी
तो एन्ना वचनिया रानी सामदेव सुने

कि जोगिया बने हमरा देब
जवने दिन राजा गवसा ले अइलें
और पैर पालन पर धरें राजा
कि पलग गइल टूट
ये पलगे टुटले के भेदिया पूछे राजा भरथरी
पलगे के टुटले के भेद हम ना जानी,
जाने छोटी बहिनिया पिंगल मोर
तो एतना बचन राजा भरथरी बोले
कि कवने सहरिया तोर बहिनिया पिंगली हु रान
तो राजा पाती लिखा तो डिल्ली गढ में भेजा
पाती लेके दिल्ली गढ नाऊ गइले तो रानी पिंगला
तो वहाँ से पाती पाते राजा को दरबार आइल
तो राजा पूछे लागल कौने कारण पलग गइले टूट
रानी भेदिया दे बताय
तो फिन बोलत वा राजा भरथरी कि रानी सुन मेरी बात
पलगे के भेदिया रानी जबले न पइबे पलग कसम होइ जाय
रानी बोली कि सामदेव
हई पुरब जनम के माव।
राजा सुन उदास हो गइले ।
हाय हो सकल राजा भरथरी।

× × × ×

पहिरि के पोसाक राजा चल दिहलें
खेले गइलें वन में काला मिरगा के सिकार
तो झाकि करती है मिरगिन परनाम
कहवा अइली राजा दिल का भेदिया देई बताइ
तव तउ डपटि वचनिया बोले राजा भरथरी
कि मिरगी सुनो मेरी वात
इहवाँ अइली सिंघल दिपवा खेलन अइली सिकार!
काला मिरगा के परनवा आज में मरबो कि गुरु के चले नाम
तवतो डपटि वचनिया बोली सत्तर सौ मिरगिन
कि राजा सुन ले मोरी वात

जो राजा के खेलने के गाँक करे गिनाग
तो मिरगिन मारि लयी दुइ चारि
राजा मिरगा के राजा जनवा छोड देई
नाइ त सब मिरिगिन होइ जहिहें राड
तव वोलत वा राजा भरथरी, कि मिरिगिन सुनो मोरी वात
तिरिया के ऊपर हयवा नाही छोडल
कि जेहमन कलम नाई चली नाव
तव सत्तरसी मिरगिन वोले, ग्रावा गइलिन राजा के पास
ग्रावा जोड, खोजन गइली
तो वीच जगल में मिरगा चरत रहले
मिरगन रोई रोई करली जवाव
कि ग्राज के दिनवा सामी जगल देई छोड
तोहरे सर पर नाचत वा काल
गिर गइल वावा भरथरी के झडा
कि खेलिहे तोहके सिकार
तव डपटि वचनिया राजा मिरगा वोलल
कि मिरगिन सुनो मोरी वात
तिरिया जतिया तू डेराकुल भइली
तू त गइलू डेराय
नाई कौनो राजा के कइली कसूरा नाई उनकर कइली नुकसान
विना कसुरवा राजा काहे मरिहे
तो मिरगिन फिर करती है जवाव
ग्राज के दिनवा राजा जगल देई छोड
नाई त हम्मन के हो जइवे राड़
तो एन्ना वचनिया काना मिरगा सुने
तो उडता ही चलता है ग्राकाश
उहवा नाही लागल ठेकान
फिन हुवा से से उड गइले नेपाल के राजा
उहँ नाही लागल ठेकान
तो फिन मिरगा सोचा कि भगले मे न वचिहें जान
तो फिन तो ग्राया वेदरपुर जगल मे
चला राजा मे करने परनाम
झुक के गइले राजा मिरगा परनाम

तब ले त राजा देता हैं अपने बान के चढाय
पहिला तो बान राजा घीच के मारा ईश्वर लिहले बचाय
दूसर बान राजा फिर तो मारे लेतिया गगा जी सम्हार
तीसर बनिया राजा फिर त मारे, लेति हैं बनसप्ती सवार
चौथा बनिया फिर तो मारेन लिहले सिंघियन पर ओढ़
तो छठवा बनिया राजा भिन तो मारेल गोरखनाथ लिहले बचाय
तो सतवा बनिया राजा घीच के मरले कि मिरगा धरती गिर जाय
गिरता के बखत राजा से मिरगा कइले नयना से जवाब
बिना कसुरवा राजा हमके मरली सीधे जइबें सुरधाम
अखिया काढि के राजा दीन्हें रानी के कि बैठल करिहें सिंगार
सिंघिया काढ़ि कौनो राजा के दीहऽ के दरवाजा के शोभा बनि जाय
खलवा खिचाय कौनो साधू के दिहल कि बैठे आसन लगाय
मसुआ तलहरि राजा रउरे खाइब कि जोगवा अम्मर होइ जाइ
एतना कहत मिरगा प्रान के छोडैं तो मिरिगिन करती है उवाब
कि जैसे सत्तरसौ मिरगिन कलपे, वैसे कलपे रनिया
तब त राजा भरथरी के गोली लगे के समान
कि आज जो दिनवा मिरगा के न जियेहैं
कि सत्तरसौ मिरगिन दिहली सराप
तो अपने त राजा कूद के घोडा पर भइलें सवार
और काला मिरगा के लेता है लाद
चलला बाबा गोरखनाथ के पास
लगवें से राजा भरथरी झुक कर करता है परनाम
डपिट वचनिया गोरखनाथ बोले, वच्चा सुनो मेरी बात
भारी वच्चा तुमने पाप किया काला मिरगा के जान लिया मार
तव बोले राजा भरथरी वावा सुनो मोरी वात
काला मिरगा के वावा जिन्दा कर देही नाही त धुइया में जरि जाव
तव तो बाबा गोरखनाथ मिरगा के कइलें जियाय
तव तो उहाँ से उड्ले गइले जगल के पास
तो सत्तर सौ मिरगिन खुसी भइलिन कि राजा सुनो मोरी वात
एकतो पापी रहले राजाभरथरी किसत्तर सौमिरगिन के कइदिहलें राड
एक तो धरमी वावा गोरखनाथ कि सवके कइले एहवात
तव तो वोलल राजा भरथरी कि वावा सुनो मेरी वात

नाई त धुइया में भसमें होइ जाव
तव त वावा गोरखनाथ करते हैं जवाव
ए वच्चा सुनो मेरी वात
अरे तू त हवे राजा के लडिका, जोगवा नाई लगी तोहसे पार
कांटा कुसा सोव न पइव
आ नीच दुअरिया जो भिच्छा मागव
कौनो गरमी दिहलें वोल, तव त भिच्छा लेइ न जैवे
कौनो तिरिया सुन्दर घरवा देखव
तो जोगवा तोहरा होइहैं खराव
तव तो एन्ना वचनिया राजा वोल भरथरी
कि सुनो वावा मोरी वात
कौनो नीच दुअरिया वावा जो भिच्छा
मगले, कान के वहरे वहरे वन जाव
कौन जो काटा कुन वावा सोने पइवे
उहवा सोउव आसन लगाय
कौनो सोरठी सुन्दर घरवा तिरिया देखव
तो आँख के होइ जाव सूर
तव त वावा गोरखनाथ लिहलें चेला वनाय
वावा गोरखनाथ कहलें वच्चा इन तरीके जोग नाहीं पूरा होई
माता के भिच्छा ले आव माँग
पुत्र जान कर भिच्छा देव
तेरा जोगवा होइ जाये अम्मर
तव तो राजा चलता अपने मकान
दुआरे पर दिहले सरंगी वजाय
भिच्छा दे झोली माँ
तवले त महलो मे निकरी रानी सामदेव
कि पति सुनो मोरी वात
आज तो दिनवा गइली सिघन रोपना लेने निनार
कौन रूपवा तानी दिन-धरली
जोगिया हम वने नाई देव
तीनी पनवामें एकलो पनवा नाहीं वीतल
नाहीं वृढ नाही जवान
नाहीं गोदिया नामी वेटा महले मारे देटा ले फरती

तोहरा पछेड सामी नाही धरली
तव एत्ना वचनिया बोले राजा भरथरी
कि तनी सुन मोरी बात
बेटा के ललसा रनिया तोहरे बाटे
बाटे गोपीचन्द भयने लगे तोहार
जाने बेटा मोर, पाली पोसी तू करबू
गाढे दिनवा अइहैं तोहरे काम
एतना बचन रानी सामदेव सुने
कि कौन बोलिया सामी आज दिन बोलला
मोसे सही न जाय
जगल भितरा सामी खरहा भइले पछी सुगवा जो होय
मानो सामी तन में भयने भइले तीनो नमक हराम
इहै तीनो जतिया पास न माने
जौने दिनवा सामी खुलि जइहें पिंजडा जगल सरहा चलि जाय
जाने दिनवा सामी पिजडा खुलि जइहें सुगवा बिरछा चढि जाय
मानुख तनवा में सामी भयने बचिहे
अवसर परले पर भयने दगा करिहे,
पिछल करिहैं गोबरा के हेत
तव त रानी रोइ रोइ करती है जवाब
जौन सुखवा रानी रउरे सथवा तवन सुखवा नाई होय
तव बोलत राजा भरथरी रानी सून मेरी वात
डोलवा फनाव रानी नैहर जइहें करिहऽ सोरहो सिंगार
सोरहो सिंगार बतीसो रग करिहौ बारवारी लिह मोती गुहाय
चउमुख देना रानी महली वाटे, रहिहऽ माता के गोद
हमरा पछेड रनिया छोड तू देती
तो रानी करती है जवाव
कौन वोली सामी आ दिन बोलल
हमसे सही नहि जाय
अगिया लगावें सामी नैहर मैनी जरिजा नेहर मोर
जानै दिनवा सामी नैहर जइबै करबै सोलहो सिंगार
सिमिसि सिदूर कौर सामी मगिया देव
उग जाव दुइजै के चांद
देखि देखि लोग ताना मरिहैं कि इनके इतना गुमान

ग्राधा गुमान सामी नैहर टूटीं तव जोहव मैं केकर ग्रास
तव वोलिया वोले राजा भरथरी कि रानी सुन मोरी वात
हमरे करम में रानी जोगी लिखलें
तो फिर रानी करती है जवाव
कि घरवा के जोगी सामी घरही रही रही नयना हजूर
जैसे लोगवा सामी सालिग पूजे तैसे पूजव दिन रात
भुखिया लागी सामी भोजन देवै, प्यासे गगा भरि लेवै ग्राय
तोहरे गुरु सामी चेलिन वनवै तोहार
भोगवा विलसवा सामी मतलव नाही
तो राजा भरथरी फिर करता है जवाव
कि घरवा के जोगी फिर घर न रहिहैं
नाही नयना हजूर, त्रिया जतिया है सलोनी
हँस के करिहैं खराव
तो वोलिया वोले रानी सामदेवा
कि सामी सुनो मोरी घात
जैसे समिया रउरे जोगी छली
जोगिन हमहूँ देल वनाय
तो डपटि वचनिया वोले राजा भरथरी
कि रानी सुनो मोरी वात
जोगी के सगवा तिरिया ना सोभै
गरिया दीहे गुरु गँवार
कोई तकिहै दूनो माता पिता
कोई त वहिन भाई वनाय
कोई त कहिहै ह त जोगी ठग हवें
कि तो जात हवे वनाय
विडन रनिया कोई ज्ञानी होइहैं दूनो जोड़ दिहैं वनाय
तो तीनी गरिया रानी ठावें पडिहैं कि गुदडी में दाग न लागै जाय
दिहे नराप वावा गोरखनाथ, गुदडी साफै जरि जाय
तो एन्ना वचन रानी सामदेय सुने कि रोई
रोई करती है जवाव
सामी सुनो मोरी वात
जोगी वनन सामी भल तू कइलऽ
कहना मानऽ हमार

सरगी मगा देई सामी नैहर से जिसमें बत्तीसो हैं तार
लाखो गुदडिया सामी नैहर से बनवाइब सोने के मूरत देइब ढरकाय
चाँदी के शिवाला देइब बनवाय
आ गगा सामी दरवाजे के लेव बुलाय
लवगा इलाइची के लखरा देई जोरवाय
बैठल रहिहऽ द्वारे पर तीरथ बरत मैं ही कइ जाय
तो एन्ना बचन राजा भरथरी सुनै रानी से करता है जवाब
एतना जो समरथ ते रनिया, तोहरे बाटै
सवे पहर में गगा लाव दुआरे पर मँगाय
तो एतना बचन रानी सामदेव सुने
कि सामी सुनौ मेरी बात
छ महीना के सामी गगा बहल सवा पहर में कैसे ले आइ बुलाय
दिन भर के सामी मुहलत मिलते गङ्गा ले अवती मँगाय
एतना बचनिया राजा भरथरी बोले
रानी सुनो मेरी बात
सवे पहर में रनिया गङ्गा न अइहैं तो जोगी हम बन जाब
तो अपने मनवा में रानी करती है विचार
भारी हरावन सामी आज दिन डरलें
कि दरवाजे पर राजा भरथरी आसन डरले बा गिराय
छोड के घर रानी सामदेव चललिन गङ्गा जी के पास
गङ्गा जी में रनिया डुबकी मारे की हाथ जोड के करती है परनाम
तोहर कारन सामी जोगी हौलें गगा सुन मोरी परनाम
आज के दिनवा गगा तू चलतू कि चलतऽ गगा हमरे दुआर
तो एतना बचनिया भाई बोले तब तो रहले सतयुग के जमनवा
कि गगा जी जैसे रहलिन सतयुग में बोलत
वैसे गगा के माई कुछ होइहै मान
केकर केकर पिया जोगी होइहै होइहै हमर पास
केकर केकर रनिया मान हम राखब
कलम नाई चली नाम
हमरो रनिया मगनी पडि जैहै नाम
तो एतना बचन रानी सामदेव बोले
रोय रोय करती हैं जवाब

आज के दिनवा गगा चलऽ हमरे दुआर
ले चलके हम गगा तोहार नाहर नुदवाय
छोडत रानी सामदेव नाहर खोदवाय
वहुत मारे गगा के धार
सवे पहर में अइली राजा के दरवार
लौ गा इलाची लखराव दिहली जा जोताय
सोने के मूरत रानी देलिन दरवाजे धराय
चादी के सिवाला रानी कइले वा तैयार
तव जाके राजा से कहती है कि राजा सुनो मोरी वात
जो न सामी कवूल किया कि गगा ले अइवी दुआर पर वुलाय
उठ सामी कुछ ग गा जी में कर दरसन आज
तव वोलत हैं राजा भरथरी
रानी सुनो मेरी वात द्वार गङ्गा गङ्गा नाही वोलिहैं
वोले गडही पोखरी गङ्गा के वनल
लूल लगड रहे विना चारो धामवा कइले रनिया नाई मानव हम आज
तव रानी गुदडी धैके दुअरवा रोवैं
स्वामी सुनो मेरी वात
जानत रहली समिया जोगी वनते काहे कइली राउर वियाह
नन्हवे निकर सामी जोगी वनती लगती दुसर के डार
हाय हो सकल राजा भरथरी
फिर राजा करता हैं जवाव कहना मान मेरी रानी
तव फिन रानी गुदडी दे ठाट
जोगी एतर वने नाई देव राजा सुनो मेरी वात
आज तो राजा लेआई चौपर तास
जेकर जीत होई राजा कहना मान मोर
जो राउर पास जीती तवतऽ वन जाई जोगी आज
नई तो राजा हम ना जीती तो जोगी न वने न देई तुहे आज
तो मार रानी करती है जवाव सामी सुनो हमारी वात
कौने गुरु के सामी चेला भइली जाई लेई दिलमाय
वाको समीया आज दिन जोगी नाई वने देव
तो राजा फिर करता है जवाव
कि वडे गुरु की चेली भइली तुहूँ के लिहे जाहु न दिलमाय

तब एतना बचनिया रानी सामदेव बोले
हमार जाइ बिरथे होइ जाय
अब तो राजा रानी खेले जुआ पास
तो पहिला पास जीतें साम देई
तब तो मालूम हुआ गोरखनाथ बाबा को
मक्खी का भेस धैके गइल राजा के पास
जाके राजा भरथरिन कानें दिहलें फूंक
अभी राजा तुमको मालूम नाही रानी जादू
से लेतिया तुहें बिलमाय
तब त राजा भरथरी कहलें हैं कि रानी पास दो मिलाय
तब तो फिर राजा रानी खेलन लागे तास
तो दूसरा जीत हुआ राजा भरथरी रानी गई मुरझाय
राजा गए अपने गुरू के पास
बाबा गोरखनाथ लिहले चेलवा बनाय
हाय हो सकल राजा भरथरी

१—राजा गोपीचन्द

मैनावती माता—फारि के पितम्बर मइया गुदरी बनावें
वनल गुदरिया मइया अवर अनमोल
माता है गुदरिया धइल, दुअरिया पर समझाव
वड वड जतनिया से वेटा गोपीचद पाली,
कहली अइवऽ गाढे दिनवा गोपीचन्द कामें
नौ नौ महिनवा वटा कोखिया में सेई
तोहरे करनवा वेटा प्राग नहइली
तोहरे असकरनवा वेटा तिरथवा नहइली
गोपीचन्द— का करवी माई वरह्मा लिखे जोगी।
माता—सात सौतियन के दुलरू दुधवा पियवली
ओही दुधवा गोपीचन्द दिहले जइवऽ दाम
तव पछवा निकर के दुलरू वनिहऽ जोगी
गोपी—गैया औ भइसिया दुधवा जो माता चहतू
तलवा और पोखरिया देती मइया भरवाय
वाकी तोहरे दुधवा मैया रहवे मैं लाचार,
माता—गैया अरु भैंसिया दुधवा दुलरू नाही लेवें
गैया दुधवा भैंसिया के विके सहरै वाजार,
माता जी के दुधवा ववुआ वडा अनमोल
ओही हमरै दुधवा गोपीचन्दा देवऽदाम
गोपी—कौनो विधवा माता तू देतू छुरिया और कटारी
काट के कलेजवा माता आगे धइ देतीं
सिरवा कलफ के माना देती दुधवा के दाम
तौनो पर नाई होवें माई तोरे दुधवा से उत्तीरिन
माता—वावन किलवा गोपी चन्दा छोडल वादनाही
छप्पन कोसवा ललऊ छोटल तू आपन वाजार
त्रिपन कडोर छोडल तहसील
रह नौ कुवरा रोवें, दलवा के सिंगार
रह सौ कुवरवा ववुआ रोवें दर सिंगारी
रह सौ नौकरवा ललऊ रोवें वगले पर

तेरह सै मुगलवा रोवै, चौदह सौ पठान
और रोवत बाडे बबुआ रैयत परजा लोग
और पक्की हवेलिवा मैया रोवे तोहार मैना
धरम के बजरिया रोवे लचिया बरई
पाँच बिगहा पनवा जइहे ललऊ भुराइ
हमरे पनवा गोपीचन्द दिहले जा दाम
त पछवा निकर के बनिहऽ तू गोपीचन्द फकीर
गोपी—झोरिया से निकारत बाटे गोपीचद मसिहानी
पाच गउवा लिखि दिहले बरइन के माफी
नाई लगी पोत बरइन नाई लगी मलगुजारी
जब ले तू जीहऽ बरइन तबले बइठ के खाही
बकि हमरे माता जी के पनवा तू खियाये
जियत मोर जिन्दगनिया रहिके जोगी बनके आये
मुअले के मिलनवा बरइन भेंट नाई होई
एतना कहिके गोपी चन्दा जैसे छोडे गगा जी अडार
वैसे छोडे गोपीचन्दा छप्पन कोस राज
तब चलत बा गोपीचन्दा बहिन के मकान
पहिला तो मोकाम नावें गउवां के बजार
सवासै महाजन उनके सूरत देखि के रोव
मुन्सी दरोगा थाने जिनकर रोवे
तब बोलत बा गोपीचन्दा विना आज बहिनिया देखे
घरवा नाहीं दुआर,
तव दूसर मुकमवा नावें राज गोपी चन्दा
जाते जाते बबुआ के कदेरी जगल में साँझ हो गइले
जौने में केर जगल बबुआ मानुष के नाही निबाह
दिनवा और रतिया वाबू वाघ और भालू घूमें
तौने जगल में गोपीचन्दा आसन गिरावें
देख के सुरतिया रोवैं मइया बनसत्ती
तव वोलतिया मइया वनसत्ती, इ हमर जगल में काहे चलि अइलीं
कौने अब्वे आघे भलुइया के नजर परिहे
अल्ल तोहार जनवा जगल चलि जैहें
घुम जा गोपी चन्दा अपने तू मकान
तव उपर वचनिया वोले गोपीचन्दा

छत्री के जतिया हुई रन्न के चढाई
आगे मार कदमिया छोड के पीछे न जाई
चाहे एक जगल मोर मृतलोक होइ जाहे
तव वोलतिया मइया वन के वनसप्ती
हमरे त जगलवा में ववुआ अन्न नही पानी
भूख त लगै त ववुआ वन पतई चवाई
तव वोलत वा गोपीचन्दा
तीन दिनवा तीन रतिया वीत गइला अन्न पानी छूट गइल
तव फिर वोलत वा गोपीचन्दा कि वहिन कि देसवा
देवू हम्मै वतलाई
सीधा साधा रहिया वन के जल्दी दऽ वताई
नाही देवें सरपवा तोहार जगल जरि जाई
तव एतना वचनिया सुनले मइया वनसप्ती
त अपने त वनत वाडिन हसा चिरैया
गोपीचन्दवा के लिहली अव सुगवा वनाई
अपने अव डैनवा मइया लेहले वैठाई
छवे महिनवा के राह रहल वहिनिया के
छवे पहर में दिहली पहुँचाई
घुमि घुमि गोपीचदा फेरिया लगावे
नाई पहचानत वाडे वहिनिया के दुआर
तव वोलत वा गोपी चदा, सात दिनवा सात रतिया
वीतल वे अन्ने पानी
तवन आज वहिनिया वीरम भाई के नाही चीन्हे
एक ठो गोपीचन्दा वहिन के दिहले
चन्नन पेड निसानी
तवन वहिनिया चन्नन पकड भेंटे
वारह त वरिसिया चन्नन गइली मुरझाई
तव चन्नन के भेदिया पूछे राजागोपीचन्दा
कौन कारनवा आज गइले चन्नन झुराई
कि वहिनिया डाढ श्रोड लिहली
कि वहिनिया कौनो नोकर चाकर से मरलिन
कौने तऽ कारनवा गइले चन्नन मुरझाई

तब चन्नने के भेंदिया पूछे राजा गोपीचन्दा
कि सच्चा सच्चा भेदिया रैयत देत बताई
तब गरब के बोलिया बोले रैयत परजा लोग
मागे क भिखिया बाबा आ पूछी गवा जमोह
तब बोलत बा गोपीचन्दा
गरब के बोलिया रैयत तिनका न बोले
नाई देबें सरपवा गउवा भसम होइ जाइ
तब एतना बचनिया सुने रैयत परजा लोग
सुघे सुघे रहिया बहिनी के देले बताय
नीचवारे नाही बाबा ऊँचवा अटारी
हीरा और रतन जडल बा बहिन के दुअरवा बाबा निसानी
तब बहिनी के दुअरवा गोपीचन्दा आसन गिराये
तब सोने के सरगिया दिहले गोपी चन्दा बजाई
सरगी के शबदिया जब बहिनी विरमा सुने
तब जाके बहिनी मुंगिया लौडिन के बोलवाव
बोलतिया वहिनिया बीरम सुन मुंगिया लौडी
जाके ना तू सेर भर सोना लेलऽ बाबा सेर भर चीनी
सवा सेर तिल लेलऽ सवा सेर चाउर
जाके ना कहिदऽ लौडी लेलऽ बाबा मोर गरीबे घर के भीख
तब छोटरहलिन मुंगिया लौडी बनी अक्किलदार
लेके भिखिया जोगी देबे जाली
तब डपटि बचनिया बोले राजा गोपीचन्दा
तोहरे हाथवा के लौडी भिखिया न लेवे
जौने मुगिया लौडी जुठवन पाली
तौने मुंगिया लौडी आज भिच्छा देवे आवे
तवन मुंगिया लौडी के आज सुबहा हो गइली
बिचवा मुंगिया लौडी जाके मुहवा निरखे
तवतऽ घावल घुपल मुगिया महल में जाली
तब बोलतविया मुंगिया लौडी सुन बहिनी बीरम
जैसे वीरम गोपीचन्दा छोडल तू अपने नइहरवा
वैसे सुन्दर जोगी दुअरवा पर अइली
तब फिर रात और भीतर में गोपीचन्द कडले चन्नन कचनार
बारहे बरिसवा रहले चन्नन मुरझाइ

फिन बोलल वहिनी बीरम
वड वड हम जोगी देखली, वड वड देखी तपसी
ऐसन सुन्दर जोगी दुअरिया हम नाही देखी
तब बोलतविया वहिनी बीरम सुन मु गिया लौंडी
जल्दी से रसोइया लाँ करके तैयार
आ जाके न तू लौंडी जोगी से पूछ आव
कित बाबा भितरा खैहैं मोर जेवनार
कित अपने हथवा बाबा लैके बनइहै
तब फिर बोलत वा गोपीचन्दा नाई अपने हथवा
वहिनी हम बनाइव रसोई-तोहरे आज भितरा
वहिनी खइवे जेवनार
तब बरहो व्यजनवा वहिनी कइलिन रसोई
सब के खिआवे वहिनी जेतना रहले नौकर चाकर
कुतवा और बिलरिया वहिनी सब के देव खियाई
अपने कोखी भइया के वहिनी देहलिन बिसराइ
बडियन अगोरे भइया के पहरन अगोरे
तब खोल के मुरलिया गोपीचन्दा देहले बजाई
त मुरली के शवदिया तब वहिनी बिरमा सुने
तब त मु गिया लांडी के लेहलिन बोलवाइ
सोरह सौ तौलवा वहिनी दिहली चढवाइ
तब बोलत वा गोपीचन्दा, कौन अस सरपवा देई
कि वहिनी के न अखरे
जो वहिनी के लडिकवा के देई त भयनवा मरि जाइ
और रजवा में देई त वहिनी गरीब होइ जाई
तब बोलत वा गोपीचन्दा, तोहरे दीदारिया के खातिर जोगी
बन के अइली
तब नS चिन्हत वाडी कोखियन के भाई
पवले वाटू नैहर के धनवा गउल वाटू अघराई
तब फिन बोलतविया वहिन बीरम
कि भाई वहिन के जोगी नाता न लागल
नाहीं त अव्वे रानी के राजा मुनवाई
न अव्वे तोहरे हाथे हथकडी बन्हाई
खाली गभियवा जोगी तुहें बन्हाई

तब बोलत बा गोपीचन्दा,
चाहे मरवइबू बहिनी चाहे कटिवइबू
बिना भेंटिया कइले बहिनी छोड़ब ना दुआर
तब बोलल बहिनिया बीरम सुन जोगी बाबा
मा बहिनी के नाता जो लगवलऽ
केन्ना तू बिआहे में दिहले केन्ना तिलक में दिहले
केतना तू हाथी दिहले केतना तू घोड़ा दिहले
इहे एतना जोगी हम्में नाही द बताइ
तब जानी हमरे तू हवऽ कोखियन के भाई
तब फिर बोलत बा बहिनी गोपीचन्द सुन बहिन बीरम
तीन सौ नवासी गउवा तिलक के चढाई दीहली
बारह सै घोड़वा देई बहिनी के दहेज
पाच सौ हथिया दिहली हकवाई
कहली आज बहिनिया के दीहा कुनफे नाही भाई
तब बोलत बा गोपीचन्दा, और कुछ कह बहिनी देई बतलाई
तवने पर बहिनिया के नाहीं पड़ल एतबार
त फिर बोलत बा गोपीचन्दा, सुन बहिन बीरम
जेतना बरतिया तोहरे बिअहवा में अइले
सबका बदसहिया बहिनी कपड़ा पहिराई
अमीर या दुखिया के बहिनी एक्कै किसिम कइली
तवने पर बहिनिया नाही चीन्हत बाटू कोखिया के भाई।
सोने के पिनसिया बहिनी हम तोहे बैठाई
चानी के डोलिया बहिनी तोहरे लौंडिन के भेजवाई
तबने पर बहिनिया नाही चीन्हत बाटू भाई
तब फिर बोलत बा गोपीचन्दा सुन बहिनी बीरम
कइले बहिनी आके तू भेंटिया मुलाकात
जानी मोतिया ईश्वर कहाँ ले के जाई
तब बोलत बहिनिया सुन जोगी बाबा
हा जो तू बाबा गइल रहलऽ हमरे बिअहवा
इहे कुल लेत देत बाबा देख तू गइलऽ
तब्बे बाबा हम्में दिहले बतलाई
तब बोलल बहिनिया सुन जोगी बाबा
भाई के दिहल एक बौडहिया हथिया

उहे हम हथिया वावा जोगी दिहली खोलाई
जो तू हवऽ हमार कोखियन के सग भाई
तव त जोगी वावा हथिया नाही कुछ वोली
वँवी जोगी होवऽ तव अपने हथिया फार नाई
आ जो कोखिया के भाई होवऽ त कुछ नाही वोली
तव त वहिनिया दिहले सीकड खोलवाई
गोपीचन्द के हाथी नजरिया एक पडि गइले
जेतने गोपीचन्द के नैन से गिरे आंसू
ओतने उनकर हथियन रोवत अइली
अपने त सुडवा से उठाके गोपीचन्द के ले ले वैठाई
कचनपुर सहरिया विरमहि के दिहले वा घुमाई
तवने पर वहिनिया के नाही पडल विस्वास
फिर वोलत वा गोपीचन्दा सुन वहिन वीरम
जैसे हथियन देखलोलू वैसे सुन्दर सुन्दर पिलोआ दिखायी
तवने दिन वहिनवा कुवरा के सीकड दे खोलवाई
रोवत और कलपते गोपीचन्दा गइले लगवां
जैसे देहिया लइ के लोटे ओमे सुन्दर सुन्द पिलोआ लोटे
तवने पर वहिनिया नाहीं पडल विस्वास
फिर वोलत वा गोपीचन्दा, आज वहिनिया के दुअरवा कइली उपवास
ऐसन मोर वहिनिया पापी भाई नाही चीन्हें
फिर वोलल वहिनिया वीरम, एक ठो ही रामा
सुगना ले आवै निकार
लिख के चिठिया वहिनी भेजे अपने नइहरवा
कि मैया गोपीचन्द जोग कइले वाटे दुलार
तव तले के सुगवा गइले वन्कापुर सहर
देखकर पतिया मैना गिरे मुरझाई
कि वेर वेर दुलरुमिनहा कइली नाई मनलस वात
कहली वेटातीन नगरिया के फेरिया लगइहऽ
वहिनी के नगरिया वेटा गोपीचन्दा न जाये
वचन गोपीचन्दा नाहीं मनलऽ गइलऽ वहिनी दुआर
तव फिर माता चिठिया लिउ सुगवा के गले वाधे
फिन लेके वहिन के दुआर कचनपुर अइले

तब जैसे लेवरूआ टूटे गइया पर वैसे बहिनिया
वीरम टूटे भइयवा पर
तब पकड के गोडवा बहिनी वीरम लगे भेंटे
भेंटत भेंटत बहिनी प्राण छोड दिहली
तब गइल गोपीचन्ना बाबामछिन्द्रा के पास
जाके उहाँ गुरुसे हुकुम देला लगाय
कि बारह आज बरिसवा बाबा अइली ना बहिनि के दुआर
तवन आज बाबा बहिनिया प्राण छोड दिहली
तब बोलल बाटे बाबा मछिन्द्रनाथ
कि आके ना बाबा आपन कानी अँगुरी चीर के कहि जियाय
तोहार बहिनिया बच्चा जुरते ही जइहैं जिन्दा
तब उहा से गोपीचन्दा अइले बहिन के दुआर
तब कानी अँगुरिया चीर के वहिनी के दिहले चढ़ाय
तब तो बहिनिया उनके जिन्दा होइ गइली
तब फिर बहिनिया बिरमा गोडवा पकड के लगल रोवे
तब बोलतबा गोपीचन्ना सुन वहिनी बीरम
आज इ भेंटलका वहिनी नाही सुधार
अन्न बिना छुटत बाटे बोलत परान
पनिया बिना सुखल कौली करेजा
पनवा विना ओठवा गइले कुम्हिलाय
तव तो बहिनिया जल्दी रसोइया के दिहली बनवाय
तव आके ना भइया गोपीचन्दा के देतिया उठाय
कि चलऽ भइया भोजन कइलऽ रसोइया भइल तैयार
तव वोलल गोपीचन्दा कि सुन वहिन बीरम
आपन तू सगडवा (पोखर) वहिनी देतू बताय
विना असननवा कइले वहिनी भोजन नाही होई
तव वहिनिया चारि सिपहिया आगवा चारि
पिछवा देलिन लगाइ
विचवा में न अपने भइया गोपीचन्द के करे
तवतले के सगडे पर गइले करावे असनान
एक एक वुडइया मारे सव कोई देखे
दुसर वुडकिया सव कोई देखे

तीसरे बुडकिया भइया नापता होइगइले
भवरा के रुपवा धैंके गुरु मछिन्द्रा लगे गइलें
रोवे और कलपे सिपहिया बहिनी के दुअरवा गइले
कि एक बेर बुडले बहिनी सब कोइ देखल
दुसर बुडइया गब कोई देखल
तिसरे बुडइया में नापता गइले
तब जब बहिनिया बिरमा महजलिया के नवावे
जेतना रहले सूँस घरियार घोघी सेवार सब बधिगइले
बकि भइया गोपीचन्द के पता नाही लगले
तब त बहिनिया रोवत गावत घरे चलगइली
गउवाँ रैयत खबर धरावें

परिशिष्ट (ख)

: हिन्दी :

१—भोजपुरी ग्रामगीत, भाग १, सवत् २००० वि०।
भोजपुरी ग्रामगीत, भाग २, सं० २००५ वि०।
सम्पादक—कृष्णदेव उपाध्याय एम० ए० साहित्यरतन
प्रकाशक—हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

२—भोजपुरी लोकसाहित्य का अध्ययन :अप्रकाशित.
लेखक—डा० कृष्णदेव उपाध्याय एम० ए० डी० फिल्

३—भोजपुरी लोकगीत में करुणरस, स० २००१ वि०।
सम्पादक—श्री दुर्गाशकर प्रसाद सिंह
प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य सम्मेलन प्रयाग

४—कविता कौमुदी, भाग ५, ग्रामगीत, सं० १९८६ वि०।
सम्पादक—प० रामनरेश त्रिपाठी
प्रकाशक—हिन्दी मदिर, प्रयाग

५—मैथिली लोकगीत, सं० १९९९ वि०।
सम्पादक—रामइकबाल सिंह 'राकेश'
प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

६—राजस्थानी लोकगीत, सं० १९९९ वि०।
सम्पादक—श्री सूर्यकरण पारीक
प्रकाशक—हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

७—ब्रज लोकसाहित्य का अध्ययन, १९४९ ई०।
लेखक—डा० सत्येन्द्र एम० ए० पी० एच० डी०
प्रकाशक—साहित्य रत्न भडार, आगरा

८—ब्रजलोक सस्कृति, सं० २००५ वि०।
सम्पादक—डा० सत्येन्द्र
प्रकाशक—ब्रजसाहित्य मडल, मथुरा

९—बेला फूले आधी रात, धरती गाती है, चट्टान से पूछ लो, १९४८ ई०
लेखक—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
प्रकाशक—राजकमल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

१०—जीवन के तत्व और काव्य के सिद्धान्त, १९४२ ई०
लेखक—लक्ष्मीनारायण सुधांशु
प्रकाशक—युगांतर साहित्य मंदिर, भागलपुर सिटी

११—मत्स्यपुराण
संपादक—श्री रामप्रताप त्रिपाठी
प्रकाशक—हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

१२—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास-द्वितीय संस्करण १९४८
लेखक—डा० रामकुमार वर्मा एम० ए० पी० एच० डी०
प्रकाशक—रामनारायण लाल, प्रयाग

१३—कबीर, १९५० ई०
लेखक—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
प्रकाशक—हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बंबई

१४—नाथ संप्रदाय-१९५० ई०
लेखक—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
प्रकाशक—हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग

१५—हिन्दी भाषा और साहित्य-सं० १९८७ वि०
लेखक—डा० श्यामसुन्दरदास
प्रकाशक—इंडियन प्रेस, प्रयाग

१६—हिन्दी साहित्य, १९४४ ई०
लेखक—डा० श्यामसुन्दर दास
प्रकाशक—इंडियन प्रेस, प्रयाग

१७—आल्हा, १९४० ई०
लेखक—चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा
प्रकाशक—इंडियन प्रेस, प्रयाग

१८—साहित्य प्रकाश, १९३१

लेखक—डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल'

प्रकाशक—इडियन प्रेस, प्रयाग

१९—हिन्दी साहित्य का इतिहास छठा संस्करण: सं० २००७ वि०

लेखक—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

प्रकाशक—नागरी प्रचारणी सभा, काशी

२०—भारत मे अंग्रेजी राज, भाग तीसरा, १६३८ ई०

लेखक—प० सुन्दरलाल

प्रकाशक—ओकार प्रेस, इलाहाबाद

२१—१८५७ का भारतीय स्वतत्र समर, स० २००३ वि०

लेखक—बैरिस्टर विनायक दामोदर सावरकर

प्रकाशक—निर्मल साहित्य प्रकाशन, पूना

२२—सिपाही विद्रोह, सं० १९७९ वि०

लेखक—ईश्वरी प्रसाद शर्मा

प्रकाशक—राष्ट्रीय-ग्रथ रत्नाकर, कलकत्ता

२३—अमरकोष—स० १८६७ वि०

लेखक—पं० श्री मदमरसिंह

प्रकाशक—तुकाराम जावजी, बवई

२४—विनोवा के विचार, भाग १, पाचवीं बार १६५० ई०

लेखक—आचार्य विनोवा भावे

प्रकाशक—सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

२५—भक्त गोपीचन्द,

लेखक—वालकराम योगीश्वर

प्रकाशक—जवाहर बुक डिपो, गुदरी वाजार, मेरठ

२६—आल्हा, कुँवरसिंह, लोरिकायन, कुँवरविजयी, सोरठी, विहुला-विसहरी, शोभानायक वनजारा

प्रकाशक—दूधनाथ प्रेस, हवडा

२७—भरथरी चरित्र
लेखक—विधना क्या करतार
प्रकाशक—दूधनाथ प्रेस, हवड़ा

२८—पृथ्वीराज रासो, १९१० ई०
सम्पादक—मोहनलाल विष्णुलाल पड्या तथा डा० श्यामसुन्दरदास
प्रकाशक—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

२९—हिन्दी साहित्य का आदिकाल १९५२ ई०
लेखक—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
प्रकाशक—विहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना

३०—हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग १९५४ ई०
लेखक—नामवर सिंह
प्रकाशक—साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग

३१—हिन्दी नाटक, उद्भाव और विकास १९५४ ई०
लेखक—डा० दशरथ ओझा
प्रकाशक—राज्यपाल एन्ड सन्स, दिल्ली

३२—हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास १९५६ ई०
लेखक—डा० शंभूनाथ सिंह
प्रकाशक—हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

३३—भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा १९५६ ई०
लेखक—श्री परशुराम चतुर्वेदी
प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

गुजराती

१—लोकसाहित्य १९४९
लेखक—श्री झवेरचन्द मेघाणी
प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय, राणापुर काठियावाड

२—लोकसाहित्यनुं समालोचन १९४९
लेखक—श्री झवेरचन्द मेघाणी
प्रकाशक—बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई

३—धरतीनुं धावण, सौराष्ट्रनी रसधार, सौरठनुं तीरेतीरे १६२८ ई०
लेखक—श्री झवेरचन्द मेघाणी
प्रकाशक—गुर्जर ग्रन्थरत्न कार्यालय, गान्धी रोड, अहमदाबाद

बंगला

१—मनसा मङ्गल १९४९ ई०
सपादक—श्री ज्योतिन्द्र मोहन भट्टाचार्या
प्रकाशक—कलकत्ता विश्वविद्यालय प्रकाशन, कलकत्ता

पत्रिका

१—नागरी प्रचारिणी पत्रिका-भोजपुरी का नामकरण-डा० उदयनारायण तिवारी
काशी वर्ष ५३, अक ३–४ स० २००५ वि०
१—जनपद–हिन्दी जनपदीय परिषद का त्रैमासिक मुखपत्र
काशी—अक्टूबर, १९५२ ई०

English Books

1.	Folk Songs of Chhattisgarh ..	Rev Verrier Elwin, D. Sc Oxford University Press, 1946
2.	Folk Literature of Bengal .	Dr D C Sen, Calcutta University Publication, 1920
3	History of Bengal's Language and Literature .	Dr D, C Sen Calcutta University Publication, 1911
4.	English and Scottish Popular Ballads ..	F G Child—Editted by H C Sergent and G L Kitredge Published by George G Harrp & Co., London, 1914,
5.	Cambrige History of English Literature, Vol II ..	F. B Gummare, Cambridge University Press 1908
6.	Old Ballads	Frank Sidgwick, Cambridge University Press, 1908
7.	The Ballad	The same Author, Published by Martin Secker, London
8.	Encyclopedia Americana,	Louise Pond, Ph. D, Amricana Corporation, New York, 1946.
9	Encyclopedia Britanica. Vol 2—Ballad (Collections)	Ency. Brit Company. London
10.	The English Ballad—a short critical sarvey .	Edited by—Robert Graves. Earnest Bern Ltd., London 1927
11.	Old English Ballad ..	Selected and Edited by F. B Gurmmare, Ginn and Co New York
12	An Introduction to Mythology .	Lewis Spence—George G Harrop and Co. Ltd., London, 1921.
13.	Folk Lore as an Historical Science. ..	G. L. Gomme.

14	Folk Element in Hindu Culture ..	B K Sircar, Longmans Green and Co Ltd., London, 1917
15	A History of Indian Literature, Vol I .	M Winternitz, Calcutta University Publication,
16	History of Bengal	R. C Majumdar, M A, Ph D Published by University of Dacca, 1943
17	Tribes and Castes of North-Western Provinces and Oudh .	W Crooke, Office of the Supdt of Govt Printing, Calcutta, 1886
18	The Popular Religion and Folk Lore of Northern India	The same. Republished in 1926 (Oxford)
19	Castes and Tribes of South India, Vol II	Edgar Thirston—Govrenment Press, Madras, 1909
20	Hindu Tribes and Castes as reprsented in Banaras .	Rev. M A. Sherring—Trubner and Co, Bomby, 1872
21	The Lay of Alha .	W Waterfleld, Oxford University Press, 1913.
22	Hindu Folk Songs	A G Sheriff
23.	Shakesperean Tragedy	A C Bradley (Revised), Macmillan and Co, London, 1950
24	The Ocean of Story	(Translation of *Katha Saritsagara*), J, Sawyer Ltd, Griften House, London, 1924
25	The Hand Book of Folk Lore	C S Burn—Publication of Folk lore Society, 1913 Sidgwick & Jackson Ltd, 1914
26	A History of Indian Mntiny.	T R. Holmes—Macmillan and Co, Fifth Edition, 1904
27	The Origin and development.. of Bhojpuri (Unpublished)	Dr Udai Narayan Tiwari M A. D Lit

JOURNALS

1 Bulletin of the School of Oriental Studies, Vol I, Part III (1920), Pp 87—The Popular Literature of Northern India—*by*—Dr, Grierson, G A

2 Indian Antiquary, Vol XIV (1805), Pp 209—The Song of Alha's Marriage—by—Dr Grierson

3. J. A S B , Vol L III (1884), Pp. 94, The Song of Bijay Mal (Edited and Translated by Dr Grierson)

4 J A. S B , Vol LIv (1885), Part I, Pp 35—Two versions of the song of Gopichand—by—Dr Grierson

5 Z D M G Vol XLIII (1889), Pp 468—Selected Specimens of the Behari Language, Part II—The Behari Dielect, The *Git Naika Banjarwa*—by—Dr Grierson

6 Z. D M G , XX1X, Pp 617—*Git Nebarak*—by—Dr. Grierson.

7. The Eastern Anthropologist, June 1950, Vol III, No 4—Bhojpuri Folk Lore and Ballads—by—K D Upadhyaya

8 University of Allahabad Studies, Part I, Pp 21-24. English Section—Introduction to the Folk Literature of Mithila—by—Dr. Jayakant Misra

9 Repots of the Archeological Survey Part VIII, Page 79—by—J D, Beglar

---

JOURNALS

1 Bulletin of the School of Oriental Studies, Vol III (1920), Pp 87—The Popular Literature of Nc India—*by*—Dr, Grierson, G A
2 Indian Antiquary, Vol XIV (1805), Pp. 209—The Sc Alha's Marriage—by—Dr Grierson
3 J A S B, Vol L III (1884), Pp 94, The Song of Mal (Edited and Translated by Dr Grierson)
4 J A. S B, Vol LIv (1885), Part I, Pp 35—Two ver of the song of Gopichand—by—Dr Grierson
5 Z D. M G Vol XLIII (1889), Pp 468—Selected Sp mens of the Behari Language, Part II—The Behari Die The *Git Naika Banjarwa*—by—Dr Grierson
6 Z D M G, XX1X, Pp 617—*Git Nebarak*—by— Grierson
7. The Eastern Anthropologist, June 1950, Vol III, No Bhojpuri Folk Lore and Ballads—by—K D Upadhyay
8 University of Allahabad Studies, Part I, Pp 21-24 Engli Section—Introduction to the Folk Literature of Mithila by—Dr Jayakant Misra
9 Repots of the Archeological Survey Part VIII, Page 79- by—J D, Beglar